कामायनी की टीका

(एक प्रामाणिक पुस्तक)

लेखक

डॉ० दुर्गाशकर मिश्र

प्रकाशन केन्द्र

रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ-226007

Phone · 31858

प्रकाशक : प्रकाशन केन्द्र, रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ-226007

: बारह रुपये पचास पैसे (12 50) मात्र

: प्रियम्वदा प्रेस, आगरा

अपनी बात

'कामायनी' शाश्वत मानवीय महत्व का काव्य है। यह मनु और श्रद्धा की कथा कहने के साथ-साथ मानवता के विकास का रूपक भी प्रस्तुत करता है। आद्यान्त प्रतीक तत्व का निर्वाह होने के कारण छात्रो को सही अर्थ एवं भाव को समझने मे कठिनाई होती है। अत इस पुस्तक के प्रत्येक छन्द के प्रतीक तत्व को स्पष्ट करते हुए सरल एवं सुबोध व्याख्या करना मेरा ध्येय रहा है। आशा है कि यह पुस्तक छात्रो और अध्यापको के लिए सर्वथा उपयुक्त होगी।

—दुर्गाशंकर मिश्र

विषय-सूची

कामायनी की टीका

पहला सर्ग

चिन्ता

कथानक—हिमालय के एक ऊँचे शिखर पर एक शिला की शीतल छाँह में मनु चिन्ता मग्न बैठे हैं। उनकी पलकें भीगी हैं और वे अपने समक्ष प्रलयकारी बाढ को देख रहे हैं। उनका मुख चिन्ता से मुरझाया हुआ है। धीरे-धीरे जलप्रलय दूर हो रहा है और धरती भी पानी से ऊपर निकलती आ रही है। महावट से बँधी हुई नौका अब जमीन पर है और स्वय मनु यह सोच रहे हैं कि अचानक यह कितना बडा परिवर्तन हो गया। वे बार-बार यह भी सोचते है कि अब क्या होगा और एकदम से निराश हो जाते हैं। उन्हे यह एकान्त भी असहनीय जान पडता है। अभी तक उन्हें कभी चिन्ता नही हुई थी और अब वे उसी चिन्ता को सम्बोधित कर कहते हैं कि हृदय गगन के धूमकेतु सी यह चिन्ता मुझसे कहाँ तक मनन कराती रहेगी उनका कहना है कि क्या मैं उस अमर देव जाति का वशज होते हुए भी इसी प्रकार चिन्ता करते हुए मरूँगा। मनु कहते हैं कि चिन्ता के बुद्धि, मनीषा, मति और आशा आदि न जाने कितने नाम हैं।

अन्त मे इस चिन्ता से उकता कर मनु विस्मृति का आवाहन करते हैं और उनकी यही अभिलाषा होती है कि यह चेतनता किसी प्रकार दूर हो जाय। वे समझ जाते हैं कि स्मृति ही दुख का स्थायीकरण है और जो सुख चला गया है उसकी चिन्ता और स्मृति उसे पुन जीवित कर देती है। इसीलिए मनु को भी विगत विभव एव सुखो की स्मृति होने के कारण उनका दुख बढता जाता है। वे इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उनका जीवन दुखमय ही रहा और उन्हे उन देवताओ की स्मृति होती है जो कि मदोन्मत्त हो सर्वदा विलासिता की सरिता मे ही डूबे रहते थे।

मनु को यह भी याद आता है कि वे स्वय भी उन देवताओ के नेता थे परन्तु आज प्रकृति ने उससे अपना बदला ले लिया है और देव सृष्टि ध्वस हो

गयी है तथा उसका वैभव शून्य मे विलीन हो गया है । अमरत्व के अहकार मे भूले हुए देवताओ का मानमर्दन देख मनु यही सोचते हैं कि सब कुछ स्वप्न के समान शून्य ही है । मनु विगत वैभव और विलास की स्मृति करते हुए कहते हैं कि अब उन सुरबालाओ का शृगार और ऊषा सी यौवन की मुस्कराहट तथा भ्रमरो का सा निर्द्वन्द विहार कहाँ गया ? साथ ही वासना की वह उद्वेलित सरिता कहाँ सूख गयी और चिरकिशोर तथा नित्य विलासी देवो का मधुपूर्ण वसन्त भी कहाँ छुप गया ।

इस प्रकार विह्वलवासना के प्रतिनिधि देवगण अपनी अग्नि मे स्वय ही जल गये और सम्पूर्ण देव सृष्टि भयकर जलप्रलय मे निमग्न हो गयी । देवताओ का एकमात्र वशज मनु एक नौका के सहारे भाग खडा हुआ पर इस भीषण जल प्रलय मे वह नौका भी उसे निराश ही कर रही थी । तेज लहरो से नौका बार-बार उछलती थी और प्रबल थपेडों के कारण उसके बार-बार डूबने की आशका हो रही थी । साथ ही सम्पूर्ण शक्ति विकल थी और भीषण वर्षा हो रही थी तब बिजली भी चमकती थी । सभी समुद्री जीव विकल होकर उतरा रहे थे और ऐसा जान पडता था कि मानो कोई सागर का अन्दर ही अन्दर मथ रहा हो । कहीं कुछ दिखाई न देता था और चारो ओर केवल जल ही जल दिखाई पड रहा था ।

अचानक मनु की उस नौका को कही से एक धक्का लगा और वह उस आघात के कारण उत्तर गिरि के शिखर से जा टकरायी । देव सृष्टि के एकमात्र अवशिष्ट अश मनु ने उस शिखर पर आश्रय लिया और मृत्यु को सम्बोधित कर कहने लगे कि हे चिरनिद्रे, तेरा अक हिमानी सा शीतल है । तू काल समुद्र की हलचल है और जगत में जो महानृत्य चिरकाल से हो रहा है, तू ही उसका विषम सम है । मनु उसे सृष्टि के कण-कण मे व्याप्त मानते हैं और उसे चिरन्तन सत्य की भाँति मुखरित कहते हैं तथा जीवन को उसका एक क्षुद्र अग समझते है । इस प्रकार चिन्ता करते-करते मनु शिथिल और सुषुप्त हो जाते हैं ।

हिम गिरि ... ... प्रलय प्रवाह !

शब्दार्थ—हिमगिरि=हिमालय पर्वत । उत्तुग=ऊँची । शिखर=चोटी । भीगे नयनो से=अश्रुपूर्ण नेत्रो से अर्थात् आँखो मे आँसू भरकर । प्रलय प्रवाह =भीषण जल प्रवाह ।

व्याख्या—हिमालय पर्वत की ऊँची चोटी पर एक शिला की शीतल छाया मे बैठा हुआ एक पुरुष अश्रुपूर्ण नेत्रो से जल प्रलय के फलस्वरूप उत्पन्न हुई अपार जलराशि को देख रहा था। वास्तव मे 'एक पुरुष' से कवि का अभिप्राय देवताओ के वशज मनु से ही है, परन्तु यहाँ कवि ने अपनी कृति के नायक का नाम प्रकट कर 'एक पुरुष भीगे नयनो से देख रहा था प्रलय प्रवाह' नामक पक्ति द्वारा औत्सुक्यपूर्ण शैली से कौतूहलता के साथ-साथ अपने कथा कौशल मे नाटकीयता-सी ला दी है।

टिप्पणी—(१) 'कामायनी' महाकाव्य का यह प्रथम पद्य है और प्राचीन भारतीय आचार्यो ने प्रारम्भ में मगलाचरण देना आवश्यक माना है अत डॉ० रामलाल सिंह प्रभृति कतिपय समीक्षक कहते हैं कि 'इस वैज्ञानिक युग मे हिन्दी वाले उस पुरानी प्रथा को छोडने की प्रवृत्ति दिखा रहे हैं। प्रसाद जी ने भी कामायनी मे मगलाचरण का प्रयोग किए बिना ही कथा का आरम्भ पहले ही छन्द से कर दिया है।' विचारपूर्वक देखा जाय तो यह मत युक्तिसगत नही जान पडता क्योकि कामायनी के इस छन्द मे मगलाचरण की सामग्री विद्यमान है। स्वय 'हिमगिरि' नामक पहला शब्द तो देवतावाची शब्द है और इस पहले इस पद मे ऐश्वर्य एव कल्याण तथा शान्ति एव आनन्द और मनस्कामना पूर्ति आदि का सकेत भी मिल रहा है।

(२) वस्तुत अनेक भारतीय एव विदेशी ग्रन्थो मे जलप्रलय का वर्णन मिलता है परन्तु इस सम्बन्ध मे अवश्य मतभेद है कि मनु ने किस स्थान पर रहकर अपनी प्राण रक्षा की थी। इस प्रकार 'शतपथ ब्राह्मण' मे उक्त स्थान का नाम 'मनोरव-सर्पण', महाभारत मे 'नौ बन्धन', भविष्यपुराण मे 'शिखिणा', बाइबिल मे 'अरारात पर्वत और कुरान मे जूदी पर्वत बतलाया गया है।

(३) 'शिला की शीतल छाँह' कहने पर कुछ समीक्षक यह शका करते हैं कि हिमालय की चोटी पर बैठे हुए व्यक्ति के ऊपर किसी शिला की छाया कैसे हो सकती है पर इसका समाधान यह है कि मनु हिमालय की सबसे उन्नत चोटी पर अवश्य बैठे थे लेकिन इसका यह अभिप्राय नही है कि वे चोटी के सर्वोच्च भाग पर बैठे होगे। वस्तुत मनु की नौका चोटी के किसी ऐसे भाग के पास रुकी होगी जहाँ उतरने के लिए कुछ समतल भूमि होगी और समीप मे पर्वत-श्रेणी की ऊँची चोटियाँ खडी होगी तथा उन्ही पर्वतश्रेणियो मे से किसी एक पर्वत शिला के नीचे मनु बैठे होगे।

(४) भीगे नयनो से में पर्यायोक्ति अलकार और लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति है।

(५) इस पद मे १६ और १५ मात्राओ पर यति होने वाले वीर छन्द का प्रयोग हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रस्तुत पद्य मे हिमालय पर्वत की ओर सकेत किया गया है और महाकवि ने भी अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'कुमारसम्भव' का प्रारम्भ हिमालय वर्णन मे ही किया है—

अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नागाधिराज ।
पूर्वापरौ तोयनिधि वगाह्य स्थित पृथिव्या इव मानदड ॥
ये सर्वशैला परिकल्प्य वत्स मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च पृथूपादिष्टापुदुर्हरित्रीम् ॥
अनन्तरत्न प्रभवस्य यस्य हिम न सौभाग्यविलोपि जातम् ।

नीचे जल • जड या चेतन ।

शब्दार्थ—हिम=बर्फ। तरल=बहने वाला। सघन=ठोस। जड=निर्जीव। चेतन=सजीव। तत्त्व=मूल पदार्थ।

व्याख्या—वह पुरुष अपने चारो ओर जल तत्त्व की ही प्रधानता देखता था और इस प्रकार उसे पानी ही देख पड रहा था। यह अवश्य है कि शिला-खड के पास से प्रवाहित होने वाला जल ही द्रव रूप मे था अर्थात् पिघला हुआ था लेकिन वास्तव मे बर्फ भी जल ही है और वह जमकर हिम के रूप मे ठोस बन गई थी। स्मरण रहे कि कवि का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार जल तत्त्व एक होते हुए भी वह वहाँ पर तरल और सघन रूपो मे विद्यमान है उसी प्रकार ईश्वर की सत्ता भी एक होने पर भी सृष्टि विविध रूपो मे प्रति-भासित होती है। कहने का अभिप्राय यह है कि ईश्वर जड प्रकृति और चेतन आत्मा दोनो मे ही व्याप्त है तथा सृष्टि मे तो उसकी सत्ता दृष्टिगोचर होती है।

टिप्पणी—(१) प्रस्तुत पक्तियाँ शकराचार्य के अद्वैतवाद से प्रभावित जान पडती है और आचार्य बलदेव उपाध्याय ने शकराचार्य के मत को स्पष्ट करते हुए यही कहा है, "अद्वैत वेदान्त का मूल मत्र है परमार्थ सत्ता रूपी ब्रह्म की एकता तथा अनेकात्मक जगत की मायिकता। • प्राची प्रतीची आदि उपाधियो से विभक्त दिक् की एकता मे किसी प्रकार व्याघात नही होता। उसी प्रकार भिन्न-भिन्न पदार्थो की सत्ता रहने पर भी आत्मा की एकता या अद्वैतता का व्याघात

सहन नही होता । ' इसी निर्विकल्पक निरुपाधि तथा निर्विकार सत्ता का नाम ब्रह्म है । इस प्रकार अद्वैतवादियो के अनुसार समस्त विश्व मे एक ही शुद्ध और परम ब्रह्म का अस्तित्व है तथा उसी की माया से भेद की प्रतीती होती है और जड एव चेतन का विभेद दृष्टि भ्रम ही है । अतएव प्रसाद ने भी यहाँ एक ही ब्रह्म की व्यापकता को सिद्ध करने के लिए चेतन जल और और जड हिम का उदाहरण प्रस्तुत किया है ।

(२) इन पक्तियो को प्रत्यभिज्ञा दर्शन से प्रभावित भी माना जाता है । इस प्रकार प्रत्यभिज्ञा दर्शन मे कहा गया है 'तत्र आभासरूपा एव जड चेतन पदार्था' अर्थात् ससार के समस्त जड चेतन पदार्थ उसी एक परम ब्रह्म के आभास रूप हैं ।

(३) भारतीय दर्शन के अनुसार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश नामक पाँच मूल तत्त्व हैं पर प्रसाद ने 'एक तत्त्व' कहकर वहाँ जल तत्त्व की प्रधानता बतलाई है क्योकि जमी हुई बर्फ और बहता हुआ पानी दोनो एक जल तत्त्व के ही दो रूप हैं । इस मत की सृष्टि ऋग्वेद के नासदीय सूक्त से भी होती है क्योकि वहाँ पर भी 'तम असीत्तमसा गूढमग्रेऽप्रकेत सलिल सर्वमा इदम्' कहकर सृष्टि के आरभ मे सर्वत्र जल का प्रसार होने की बात कही गयी है ।

(४) 'नीचे जल था, ऊपर हिम था, एक तरल था, एक सघन' मे यथा-सख्य अलकार है ।

(५) इन पक्तियो मे १६ और १४ मात्राओ की यति से ३० मात्रा वाला ताटक छद अपनाया गया है । इस प्रकार सम्पूर्ण सर्ग मे जहाँ ३१ मात्राएँ हैं वहाँ वीर छद है और जहाँ ३० मात्राएँ हैं वहाँ ताटक छन्द है ।

तुलनात्मक दृष्टि—हिम और जल के माध्यम से सत कबीरदास ने भी अद्वैतवाद का प्रतिपादन करते हुए कहा है—

पानी ही तें हिम भया, सो भी गया बिलाय ।

इसी प्रकार प्रसाद जी ने अपने नाटक 'जनमेजय का नागयज्ञ' मे भी यही कहा है—'जिन पदार्थो की शक्ति अप्रकाशित रहती है, उन्हे लोग जड कहते हैं, किन्तु देखो, जिन्हे हम जड कहते है, वे जब किसी विशेष मात्रा मे मिलते हैं, तब उनमे एक शक्ति उत्पन्न होती है, स्पन्दन होता है, जिसे जडता नही कह सकते । वास्तव मे सर्वत्र शुद्ध चेतन है, जडता कहाँ ? यह तो एक

भ्रमात्मक कल्पना है। यदि तुम कहो कि इसका तो नाश होता है और चेतन की सदैव स्फूर्ति रहती है, तो यह भी भ्रम है। सत्ता कभी लुप्त भले ही हो जाये, किन्तु उसका नाश नहीं होता। "उन चेतन के अस्तित्व की सत्ता कहीं नहीं जाती, और न उसका चेतनमय स्वभाव उससे भिन्न होता है। वही एक अद्वैत है। यह पूर्ण सत्य है कि जड के रूप मे चेतन प्रकाशित होता है।

दूर दूर . .. . फिरता पवमान।

शब्दार्थ—विस्तृत=विस्तार के साथ फैला हुआ। स्तब्ध=सुनसान, शात। शिलाचरण=पर्वत का निचला भाग। पवमान=पवन, वायु।

व्याख्या—जिस प्रकार दूर-दूर तक फैला हुआ बर्फ बिलकुल ही जड सा जान पड रहा था अर्थात् उसमे किसी भी तरह की चेतना नही थी उसी प्रकार उस व्यक्ति का हृदय भी सर्वथा स्पन्दनहीन ही जान पडता था और वह पूर्णत निश्चेष्ट बैठा हुआ था। साथ ही चट्टानें पूर्णत शात थी और वायु के झकोरे उन्ही चट्टानो से टकराकर प्रवाहित होते थे परन्तु वे किसी भी प्रकार उनकी निश्चेष्टता को भग नहीं कर पाते थे। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु का हृदय चट्टान के ही सदृश्य था और उनकी शाति किसी भी प्रकार भग नही हो रही थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे स्वर मैत्री का प्रयोग दर्शनीय है और कवि ने 'दूर-दूर' शब्दो के प्रयोग द्वारा हिमालय पर जमी हुई बर्फ के विस्तार की सूचना दी है।

(२) यहाँ कवि ने निश्चेष्ट और स्तब्ध मन की उपमा हिम से देकर भाव का सादृश्य बोध मूर्त वस्तु से कराते हुए काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि की है।

(३) इन पक्तियो मे वैज्ञानिकता का भी निर्वाह हुआ है क्योकि आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार पर्वत के निचले भाग मे ही वायु चलती है।

(४) यहाँ प्रकृति चित्रण की मानवीकरण प्रणाली का प्रयोग हुआ है।

(५) दूर-दूर मे पुनरुक्ति अलकार है और हिम को हृदय के समान स्तब्ध कहकर पूर्णोपमा अलकार अपनाया गया है। साथ ही 'नीरवता सी शिलाचरण' मे धर्मलुप्तोपमा अलंकार है और 'हृदय-समान' तथा 'नीरवता सी मे सूक्ष्म उपमानों का प्रयोग दर्शनीय है।

तुलनात्मक दृष्टि—अथर्ववेद के पवमान सूक्त मे भी पवमान की व्याख्या

करते हुये कहा गया है—'स्तब्ध शिलामिष्टे हृदय' अर्थात उन्मन अचल हृदय ब्रह्मचारी की शोभा है। (अथ, २/२६/६)

तरुण तपस्वी ...... सकरुण अवसान।

शब्दार्थ—तरुण=युवा। सुर=देवता। श्मशान-साधन=किसी इच्छित सिद्धि की प्राप्ति के लिए श्मशान भूमि मे बैठकर भूत, प्रेत या देवी को प्रसन्न करने के लिए तान्त्रिक पद्धति से की जाने वाली साधना। प्रलय सिंधु=प्रलय के पानी से निर्मित सागर। सकरुण=करुणा से युक्त। अवसान=अत, शान्त होना।

व्याख्या—वह तरुण पुरुष तपस्वी की भाँति किसी दैवी शक्ति की साधना मे लीन जान पडता था और जल प्रलय के कारण एकत्र जल के समान प्रतीत होता था। इस प्रलय कालीन सागर की लहरें रह-रह कर शिलाखड से आकर टकराती थी और अत्यन्त करुणा पूर्ण ध्वनि उत्पन्न कर वही समाप्त सी हो जाती थी। वस्तुत श्मशान साधन तान्त्रिको की एक प्रकार की साधना ही है और इस साधना पद्धति के अनुसार तान्त्रिक लोग किसी जलाशय के समीप श्मशान भूमि मे अर्द्ध रात्रि के समय पैशाचिक क्रियाओ को करते हुए दैवी सिद्धि के लिए मन्त्र जाप आदि करते हैं। उनकी साधना सफल होने पर इच्छित शक्तियाँ प्रसन्न होकर उन्हे दर्शन देती हैं और उनकी मनोकामना पूर्ण करती हैं। यद्यपि इन पक्तियो मे तान्त्रिको की भाँति मनु किसी प्रकार की श्मशान साधना नही करते हैं परन्तु कवि ने यहाँ श्मशान साधन से केवल साधना का ही अभिप्राय ग्रहण किया है और इसीलिए उन्हे साधक ही कहा है। इस प्रकार मनु एक शात तपस्वी की भाँति जान पडते हैं और चूंकि देवताओ की सृष्टि विनष्ट हो चुकी थी अत वह स्थान श्मशान भूमि अवश्य कहा सकता है।

टिप्पणी—(१) 'तरुण तपस्वी सा' मे तरुण विशेषण साभिप्राय है और इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मनु अभी युवा हैं और उनका मन विलास एवम् वैराग्य के मध्य झूल रहा है।

(२) इन पक्तियो को पाश्चात्य काव्य शास्त्र मे वर्णित काव्य सत्य (Poetic truth) का सुन्दर उदाहरण माना जा सकता है।

(३) कवि ने 'लहरो के सकरुण अवसान' द्वारा यहाँ यह सकेत करना चाहा है कि पहले लहरें प्रचड एव उग्र थी और प्रलयकारी वातावरण का

दृश्य प्रस्तुत करती थी परन्तु अब लहरें करुणाशील होकर धीरे-धीरे शात होती जा रही थी।

(४) इन पक्तियो मे उपमा, परिकर, उत्प्रेक्षा, उदाहरण और मानवीकरण नामक अलकारो का प्रयोग हुआ है।

उसी तपस्वी ··· ···· ··· रहे अड़े।

शब्दार्थ—देवदारु=एक बहुत ही ऊँचा पेड जो कि विशेष रूप से पर्वतो पर ही उगता है और जिसकी लकडी सुगधित होती है। दो-चार=बहुत थोडे से। धवल=सफेद। ठिठुरे=सकुचित हो गये। रहे अडे=बिना तनिक भी हिले डुले खडे रहे।

व्याख्या—वहीं पर पास मे ही उस तरुण तपस्वी की दीर्घाकृति के सदृश्य लम्बे-लम्बे कुछ देवदारु के वृक्ष थे, जो कि हिमाच्छाहित हो जाने के कारण न केवल बिल्कुल सफेद जान पडते थे अपितु ऐसा प्रतीत होता था कि मानो शीत से ठिठुर जाने के कारण वे पत्थर के समान अडकर रह गये हो और उनमे अब किसी भी प्रकार की गति वा कम्पन शेष न रहा हो।

टिप्पणी—(१) यहाँ कवि ने देवदारु के वृक्षो से उस व्यक्ति के आकार की तुलना कर अपनी कॉव्यकृति के नायक मनु की शरीर-यष्टि की ओर इगित किया है और साथ ही मनु के आसपास के वृक्षो को शीत के प्रकोप से ठिठुरा हुआ अकित कर मनुष्य के दुख से प्रकृति का भी विषाद मग्न होना चित्रित किया है।

(२) इन पक्तियों से कवि ने यह भी स्पष्ट करना चाहा है कि किस प्रकार हिमपात और सर्दी की ठिठुरन सहकर भी देवदारु के वृक्ष जीवित थे उसी प्रकार प्रलय के अनेक कष्टदायक आघात सहकर भी मनु जीवित थे।

(३) यहाँ उपमा और प्रतीप नामक अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

अवयव की ·· ·· ·· ··· संचार।

शब्दार्थ—अवयव=शरीर के अग। मांसपेशियाँ=मासपिंड। ऊर्जस्वित=उमडा हुआ। वीर्य्य=शक्ति। स्फीत=समृद्ध, घनी, दृढ। शिरायें=नसें।

व्याख्या—उस व्यक्ति के शरीर का प्रत्येक अवयव सुदृढ था और वदन की कान्ति भी अपूर्व ओजमयी थी तथा वह स्वस्थ रक्त के सचार से परिपूर्ण नसो के कारण अत्यन्त आकर्षक भी प्रतीत होता था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु के शरीर की दृढता और तेज का वर्णन

प्राचीन भारतीय साहित्य की परम्परा के ही अनुकूल है। साथ ही यहाँ 'अवयव की दृढ मास पेशियाँ' से शरीर की दृढता, 'ऊर्जस्वित था वीर्य अपार' से मन का सयम एवम् ब्रह्मचर्य व्रत और 'स्फीत शिरायें स्वस्थ रक्त का होता था जिनमे सचार' से शरीर की स्वस्थता की ओर भी सकेत किया गया है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास ने भी 'रघुवश' महाकाव्य मे राजा दिलीप के अपार शक्तिशाली ओजस्वी शरीर की रम्यता का चित्रण करते हुए कहा है—

> व्यूढोरस्को वृषस्कन्ध शालप्राशुर्महाभुज।
> आत्मकर्मक्षम देह क्षात्रो धर्म इवाश्रित ॥
> सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोभिभाविना।
> स्थित सर्वोन्नतेनोर्वी क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना।

चिन्ता कातर ... मधुमय स्रोत।

शब्दार्थ—कातर=व्याकुल, उद्विग्न। वदन=मुख। पौरुष=पुरुषार्थ, पराक्रम। ओतप्रोत=परिपूर्ण, पूर्णरूप से भरा हुआ। यौवन का=युवावस्था का। मधुमय स्रोत=मधुर झरना परन्तु यहाँ पर मधुर या प्रेमपूर्ण भावनाओ से अभिप्राय है।

व्याख्या—यद्यपि वह एक परिपुष्ट और पराक्रमी युवक ही था और उसके शरीर से अनुपम पौरुष भी झलक रहा था पर साथ ही वह चिन्ता के कारण कुछ-कुछ व्याकुल भी जान पडता था। इसी प्रकार उस व्यक्ति की हृदय-स्थली मे यौवनकालीन अनेक मधुर भावनाएँ भी विद्यमान थी परन्तु वर्तमान परिस्थितियो मे वह उस ओर ध्यान नही दे पा रहा था। वस्तुत उपेक्षामय यौवन से कवि का अभिप्राय यह है कि युवक होते हुए भी मनु युवा जीवन की मादक स्मृतियो से विरत ही थे क्योकि शोक के सामने प्रेम भावनाएँ स्थिर नही रह पाती अत चिताग्रस्त मनु का अपने यौवन के प्रति उपेक्षित रहना स्वाभाविक ही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे हमे मनोवैज्ञानिकता के दर्शन होते हैं और कवि प्रसाद ने विरोधी परिस्थितियो मे भी अपने कथानायक के चरित्र का सफल चित्रण किया है। इस प्रकार मनु के मुख मडल पर चिन्ता के कारण विषाद अवश्य है पर उनका पौरुष भी स्पष्ट रूप से झलक रहा है। डा० गुलाबराय के कथनानुसार मनु जिस रूप मे हिमगिरि पर दिखाई देते हैं, वह

चिन्ताकुल होने पर भी पूर्णतया स्वस्थ और पौरुषमय है। मनु का जैसा स्वस्थ पुरुष सौन्दर्य प्रसाद जी ने अंकित किया है, वैसा अन्यत्र बहुत कम देखने को मिलता है।'

बँधी महावट · · · लगी मही।

शब्दार्थ—महावट=बरगद या वट का विशाल वृक्ष। जलप्लावन =जल प्रलय, पानी की बाढ। मही=धरती, पृथ्वी।

व्याख्या—जिस नाव का सहारा लेकर मनु ने इस घोर जल प्रलय मे अपने प्राणो की रक्षा की थी वही नाव पास ही मे सूखी जमीन पर एक विशाल बरगद के वृक्ष से बँधी हुई थी। साथ ही क्षण-प्रतिक्षण जल की बाढ भी कम होती जा रही थी और पृथ्वी भी दिखायी पड़ने लगी थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रसाद ने जो 'महावट मे नौका को बाँधने का उल्लेख किया है उसका मूल आधार शतपथ ब्राह्मण है और 'शतपथ ब्राह्मण' मे तो स्पष्ट रूप से कहा गया है। 'वृक्षे नाव प्रतिवहनीस्व। इसी प्रकार पुराणो के अनुसार प्रलय काल मे भी इस वट वृक्ष का नाश नही हुआ था और महाभारत के वन पर्व, अध्याय १८८/९०-९२ मे इस महावट के बचे रहने का उल्लेख मिलता है। साथ ही गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा है—

वटु बिस्वास अचल निज धरमा।

निकल रही — · · पहचानी सी।

शब्दार्थ—मर्म वेदना=हार्दिक व्यथा, गहरी पीडा। करुणा विकल=दर्द भरी, व्यथापूर्ण।

व्याख्या—उस व्यक्ति का हृदय वेदनापूर्ण था और अब वह अपनी करुण कहानी का वर्णन कर रहा था। उसकी इस दर्द भरी कहानी को श्रवण करने वाली और उसकी व्यथाओ की अनुभूति करने वाली केवल मात्र प्रकृति ही थी क्योंकि वह व्यक्ति तो उस स्थान पर एकाकी ही था। परन्तु वह प्रकृति भी उस कहानी को मुस्कराती हुई सुन रही थी और ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह पहले से ही इस कहानी से परिचित है तथा उसे इसमे कोई नवीनता नही दीख पड रही हो।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने मनु की कारुणिक मर्म कथा को सुनकर भी प्रकृति को हँसना-सा कहकर यह सकेत करना चाहा है कि प्रकृति यह जानती थी कि अहकार के कारण देवताओ का विनाश अवश्यम्भावी

था और वह मनु के अरण्य रोदन को सुनकर उनसे सहानुभूति न कर हँस रही थी।

(२) यहाँ 'कहानी सी' मे उपमा अलकार और 'वहाँ अकेली प्रकृति सुन रही हँसती सी पहचानी सी' मे सम्बन्धातिशयोक्ति अलकार तथा 'करुणा विकल कहानी' मे विशेषण विपर्यय है। साथ ही हँसती हुई प्रकृति को मनु की कहानी सुनने में लीन कहकर कवि ने मानवीकरण अलकार का भी प्रयोग किया है।

(३) इन पक्तियो मे कवि ने 'निकल रही थी मर्मवेदना करुणा विकल कहानी सी' से उस नाटकीय वातावरण एव प्रत्याशा की सृष्टि की है जिससे बाद का मनु का कथन सजीव हो उठता है।

ओ चिन्ता · ·· मतवाली।

शब्दार्थ—व्याली=सर्पिणी। स्फोट=फूटकर निकलना। कम्प=कामना, हलचल। मतवाली=उन्मत्त।

व्याख्या—वह व्यक्ति (मनु से अभिप्राय है) चिन्ता को सम्बोधित कर कहता है कि आज पहली बार उसके हृदय मे चिन्ता प्रवेश कर सकी है और जिस प्रकार ससार रूपी उपवन मे स्वच्छन्द विचरण करने वाले प्राणियो को सर्पिणी पग-पग पर सशकित कर देती है उसी प्रकार जिस मनुष्य का हृदय चिन्ताग्रस्त हो जाता है वह कुछ भी नही कर पाता तथा उसका मन अव्यक्त और अवाछनीय विभीषिका से आच्छन्न हो जाता है। जिस प्रकार ज्वालामुखी पर्वत का प्रथम विस्फोट ही भीषण प्रभावकारी होता है तथा वह अपने समीपवर्ती सभी पदार्थों को प्रभावित कर उन्हे नष्ट कर देता है उसी प्रकार चिन्ता का आगमन होते ही मन के अन्य समस्त क्रिया व्यापार नष्ट हो जाते हैं।

वस्तुत इन पक्तियो मे तथा इसके पश्चात की कुछ पक्तियो मे कवि ने चिन्ता की कटुता और उसके घातक प्रभाव का ही चित्रण किया है तथा विभिन्न उपमानो को प्रयुक्त कर अपनी वर्णन शैली मे सजीवता सी ला दी है। इस प्रकार 'चिन्ता की पहली रेखा' से कवि का अभिप्राय यह है कि सर्वदा सुख और विलास का जीवन व्यतीत करने वाले देवताओ को चिन्ता जैसे मनोविकार से परिचय ही न था अतएव देव जाति के वशज मनु भी इसके पूर्व कभी चिन्ताग्रस्त नही हुए थे तथा आज पहली बार उन्हे चिन्ता की

अनुभूति हो रही थी। कवि ने चिन्ता की उपमा सर्पिणी से देकर यह स्पष्ट करना चाहा है कि जिस प्रकार उपवन मे घूमते समय यदि कहीं सर्पिणी के अस्तित्व की आशका हो जाती है तो फिर मनुष्य निश्चिन्त होकर उस उपवन का निरीक्षण नही कर पाता उसी प्रकार विश्वरूपी उपवन मे विचरण करने वाला व्यक्ति भी चिन्ताग्रस्त होकर कोई भी कार्य ठीक से नही कर पाता है। साथ ही जिस तरह ज्वालामुखी पर्वत का प्रथम स्फोट ही इस बात को द्योतक है कि अब शीघ्र ही आस-पास की सभी वस्तुएँ नष्ट भ्रष्ट हो जाएँगी उसी तरह चिन्ता का प्रवेश होते ही यह आभास होने लगता है कि अब भयकर विपत्ति आने वाली है।

टिप्पणी—इन पक्तियो के सम्बन्ध मे डा० विजयेन्द्र स्नातक ने उचित ही कहा है 'कवि ने इस स्थल पर चिन्ता का बहुत ही सूक्ष्म, मार्मिक और मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है। चिन्ता से अभिभूत होने पर मानव मन समस्त क्रिया व्यापार मे उदासीन और उपरत होकर एक ऐसी विचित्र दशा मे आवद्ध हो जाता है कि उसे अपने चारो ओर जगत का ध्यान नही करता। कवि ने चिन्ता की कटुता और घातक प्रभाव का चित्रण करने के लिए व्याली का उपमान प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार वन में व्याली की स्थिति उसके सौन्दर्य को विषाक्त और विभीषिका पूर्ण बना देती है उसी प्रकार चिन्ता की उपस्थिति से मन एक अव्यक्त और अवाछनीय विभीषिका से आच्छन्न हो जाता है। कवि ने दूसरा उपमान ज्वालामुखी स्फोट के भीषण प्रथम कम्प सी म--ाली द्वारा प्रस्तुत किया है। ज्वालामुखी पर्वत का प्रथम भीषण विस्फोट जिस प्रकार अपने आस-पास के समस्त पदार्थों को प्रभावित करता है और उनके साथ दूर-दूर तक सब कुछ नष्टप्राय हो जाता है उसी प्रकार चिन्ता के आगमन के साथ मन के अन्य समस्त क्रिया व्यापार समाप्त हो जाते है और शेष रहता है मात्र चिन्ता का घातक प्रभाव।' इसी प्रकार 'अरी विश्ववन की व्याली' मे प्रयोजनवती सारोपी गौणी लक्षणा और परपरित रूपक अलकार भी हैं तथा 'प्रथम कम्प सी' मे उपमा अलकार है।

हे अभाव .... : चल रेखा।

शब्दार्थ—चपल=चचल। ललाट=मस्तक, भाग्य। खल लेखा=अशुभ रेखा। हरी-भरी-सी=थोडी सी आशा मे पूर्ण। जल-माया=जल का मिथ्या रूप, मृग मरीचिका। चल-रेखा=चचल रेखा, यहाँ तरग से अभिप्राय है।

व्याख्या—वस्तुत चिंता अभाव की चचल बालिका ही है, क्योकि मनुष्य को जब किसी वस्तु की कमी जान पडती है तभी वह (चिंता) उत्पन्न भी होती है। स्मरण रहे कि ज्यों ही मनुष्य के हृदय मे चिन्ता उत्पन्न होती है त्यो ही वह विक्षिप्त सा हो उठता है और उसका मन स्थिर नही रह पाता। इस प्रकार वह मनुष्य के दुर्भाग्य की ही द्योतक है और वह उससे मुक्ति पाने के लिए तथा अपना जीवन सुखमय बनाने के हेतु प्रयत्न करने लगता है। साथ ही जिस तरह जल मे अनेकानेक लहरें उठती रहती है उसी प्रकार चिंता भी इस मायात्मक जगत मे उठने वाली एक हलचल के समान ही है जो कि मानव को अस्थिर बना देती है तथा मरु प्रदेश मे जल की आकाक्षा से रेत के कणो को ही जल समझ कर उन्मत्त भटकते फिरने वाले मृग की भाँति मनुष्य भी इस मायात्मक ससार मे भटकने लगता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने क्रमश चिन्ता की उत्पत्ति, उसका स्वरूप और उसके कार्यो की सुन्दर व्याख्या की है।

(२) 'हे अभाव की चपल बालिके' मे प्रयोजनवती शुद्धा साध्यवसाना लक्षण-लक्षणा और मानवीकरण अलकार है तथा 'हरी-भरी सी दौड-धूप' मे प्रयोजनवती शुद्धा साध्यवसाना उपादान लक्षणा और अनुप्रास अलकार है। इसी प्रकार 'जलमाया की चल रेखा' मे निरग रूपक अलकार है।

इस ग्रहकक्षा .... बहरी।

शब्दार्थ—ग्रह कक्षा=ग्रहो के घूमने अर्थात् भ्रमण का मार्ग, यहाँ समस्त ससार से अभिप्राय है। तरल द्रव। गरल=विष, जहर। लघु लहरी=छोटी तरग। जरा=बुढापा। अमर=अविनाशी। बहरी=जिसे कुछ सुनाई न दे।

व्याख्या—मनु का कहना है कि चिन्ता समस्त ससार मे हलचल उत्पन्न करने वाली है और जिस प्रकार विष की हल्की लहर मनुष्य के शरीर मे व्याप्त होते ही उसे व्याकुल अवश्य कर देती है पर उसके जीवन का पूर्ण रूप से अन्त नही कर देती उसी प्रकार चिन्ता भी मनुष्य को केवल व्यथा मात्र ही पहुँचाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि चिन्ता साधारण व्यक्तियो को तो परेशान करती ही है परन्तु वह अपने जीवन को अमर समझने वाले देवताओं को भी वृद्ध बना देती है। कहा जाता है कि चिन्ताग्रस्त मनुष्य अपनी आयु से अधिक का प्रतीत होता है और वह तरुनाई मे तो वृद्ध जान पडता है अत कवि ने स्वाभाविक ही यहाँ चिन्ता के कारण वृद्ध हो जाने के विषय मे कहा है। साथ

ही चिन्ता इतनी स्वच्छन्द और निष्ठुर है कि जब वह किसी मानव मन मे प्रविष्ट होती है तब उसका किसी भी प्रकार का रुदन (रोना) नही सुन सकती और वहरी बनकर स्वच्छन्दता के साथ उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लेती है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने चिन्ता के द्वारा उत्पन्न होने वाली शारीरिक गतिविधियो और उसके परिणामो का अच्छा दिग्दर्शन किया है।

(२) यहाँ निरग रूपक, उपमा, उल्लेख और विरोधाभास नामक अलकारो की योजना हुई है।

अरी व्याधि • सुन्दर पाप।

शब्दार्थ—व्याधि=रोग, शारीरिक पीडा। सूत्रधारिणी—उत्पन्न करने वाली। आधि=व्यथा, मानसिक पीडा। मधुमय=मधुर। अभिशाप=अनिष्ट करने वाली। गगन=आकाश। धूमकेतु—पुच्छल तारा। पुण्य सृष्टि=मगलमय जगत। सुन्दर पाप=ऐसा अमागलिक कार्य जो केवल देखने मे सुन्दर हो।

व्याख्या—वस्तुत चिन्ता मानसिक और शारीरिक दोनो प्रकार की व्यथाओ को उत्पन्न करने वाली है क्योकि उसके कारण न केवल मन व्याकुल रहता है अपितु शारीरिक रोग भी हो जाते हैं। साथ ही चिन्ता के कारण मन हमेशा व्याकुल रहता है और वह शाप तो है ही पर इसे एक मधुर अभिशाप ही समझना चाहिए क्योकि यदि जीवन मे चिन्ता न हो तो मनुष्य के लिए यह उचित नहीं है कि वह सुख प्राप्ति के लिए प्रयत्न ही न करे और जीवन की मधुरता से वचित रह जाय। चिन्ता का उदय ठीक उसी प्रकार विध्वस का द्योतक है जिस प्रकार आकाश मे पुच्छल नक्षत्र के उदय होने पर सृष्टि मे वाह्य विनाश की आशका होने लगती है। इतना होने पर भी इस सृष्टि मे दृष्टि से चिन्ता एक अकल्याणकारी भाव होते हुए भी सुन्दर पाप के सदृश्य है क्योकि उसका परिणाम प्राय अन्त मे अच्छा ही होता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे चिन्ता के लिए विरोधी विशेषणो का प्रयोग कर भावाभिव्यक्ति को अधिक प्रभावशाली बना दिया गया है।

(२) ज्योतिषियो का कहना है कि आकाश मे धूमकेतु के उत्पन्न होने पर ससार मे भीषण सकट आते हैं, और चिन्ता होने पर मन तथा शरीर को भी अनेक प्रकार की यातनाएँ सहनी पडती है। यही कारण है कि चिन्ता को मनु ने 'हृदय गगन मे धूमकेतु सी' कहा है।

(३) हृदय गगन में रूपक और धूमकेतु-सी में उपमा अलकार है। इसी प्रकार मधुमय अभिशाप और सुन्दर पाप में विरोधाभास अलंकार की योजना हुई है।

(४) इन पक्तियो मे चिन्ता के लिए अभिशाप, धूमकेतु और पाप नामक पुल्लिग उपमानो का प्रयोग करने के कारण लिग दोष भी आ गया है क्योकि चिन्ता स्त्रीलिंग है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि ने जो शारीरिक और मानसिक रोगो के उद्भव का कारण चिन्ता को माना है वह आयुर्वेद की दृष्टि से भी उचित जान पडता है। चरक सहिता, निदान स्थान, अध्याय ८ मे कहा भी गया है 'यदा हृदयमिन्द्रियायतनानि चेरिता ... ... चिन्तोद्वेगादिभिर्भूय सहसाऽभिपूरयन्ति, तदा जन्तुरपस्मरति।'

मनन करावेगी ... ... है नीव।

शब्दार्थ—मनन करना=सोच विचार करना। निश्चित जाति=चिंता रहित देव जाति। अमर=देवता।

व्याख्या—वह तरुण तपस्वी चिन्ता को सम्बोधित कर कह रहा है कि यद्यपि तू आज इतना अधिक सोच विचार करवाकर मुझे व्यथित कर रही है पर मुझे इसकी तनिक भी परवाह नही है क्योकि मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि जीव परमात्मा का ही अश है और इसलिए वह अमर है। इसमे कोई सदेह नही कि जीवात्मा को नष्ट करने की शक्ति किसी मे नही है और मनु का यही कहना है कि चिन्ता के कारण मुझे चाहे कितना दुःख क्यो न हो परन्तु इससे मेरे जीवन का अन्त किसी भी प्रकार नही हो सकता।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे मनु का अदम्य आत्म विश्वास अकित हुआ है और यहाँ दार्शनिकता की भी झलक दीख पडती है। इस प्रकार कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि जीवात्मा तो अजर अमर है और हमारा वाह्य शरीर ही नष्ट होना है तथा जीवात्मा को किसी भी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचती।

(२) यहाँ 'निश्चित जाति के जीव' का मनन करना और 'अमर मरेगा क्या' आदि पक्तियो मे विरोधाभास अलकार की योजना हुई।

आह! घिरेगी ... ... घन सी।

शब्दार्थ—लहलहे=हरे भरे। करका घन=ओलो से परिपूर्ण वादल। अंतरतम=हृदय। निगूढ़=छिपा हुआ।

व्याख्या—जिस प्रकार हरे-भरे खेतो पर जब ओलो से परिपूर्ण बादल घिर आते हैं तब यह आशका सी होने लगती है कि वे बरस कर हरी-भरी खेती को नष्ट कर देंगे उसी प्रकार हृदय मे चिन्ता के उदय होते ही मानव मन आशकित हो उठता है। वस्तुत यहाँ चिन्ता को आशकाओं की जननी माना गया है और केवल ओलो से भरे हुए मेघो का घिरना ही अकित किया गया है क्योकि यदि वे बादल बरस गए तो फिर स्वाभाविक ही हरी-भरी खेती नष्ट हो जायगी। इसी प्रकार चिन्ता भी मनुष्य को अमगल की सूचना देकर केवल व्यथित ही करती है और उसे पूर्णत निष्क्रिय नही कर देती। मनु का कहना है कि जिस प्रकार पृथ्वी मे छुपे हुए धन का पता उसी व्यक्ति को रहता है जो कि उसे वहाँ छिपाता है उसी प्रकार चिन्ता भी मनुष्य के अन्त करण मे छिपी रहती है और उसका पता वही जान पाता है जो कि चिन्ताक्रान्त होता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो की विवेचना करते हुए डॉ० विजयेन्द्र स्नातक ने यही कहा है 'कवि ने प्रकृति के स्थूल उपमान प्रस्तुत करके चिन्ता के घातक और विध्वसक रूप का अच्छा चित्रण किया है। जिस प्रकार लहलहाते हुए खेतो पर उपल वृष्टि करने वाले मेघ घिर आते है उसी प्रकार चिन्ता का हृदय मे आवागमन भी 'करका घन' के समान विनाशकारी है। चिन्ता को निगूढ धन शब्द से व्यवहृत करने मे कवि की विशिष्ट आर्थी व्यजना है।

(२) यहाँ 'हृदय लहलहे खेत' मे रूपक अलकार और 'करका घन सी' तथा 'निगूढ धन सी' मे उपमा अलकार है।

बुद्धि मनीषा .. तेरा काम।

शब्दार्थ—मनीषा—प्रतिभा। मति—आगामी विषयो पर मनन करने वाली शक्ति।

व्याख्या—मनु का कहना है कि चिन्ता के न जाने कितने नाम हैं और चिन्ता अर्थात् चिन्तन द्वारा ही मनुष्य सत असत् का निर्णय कर पाता है। इसीलिए वह बुद्धि कहलाती है, और वह हृदय मे ज्ञान उत्पन्न करती है अतः उसे मनीषा भी कहा जाता है। चिन्ता ही मति भी कहलाती है क्योकि मनुष्य उसी की सहायता से किसी विवाद ग्रस्त विषय के सम्बन्ध मे अपनी कोई निश्चित धारणा बना सकता है और मनुष्य की शोकावस्था मे चिन्ता ही आशा के रूप मे सात्वना प्रदान करती है। मनु का यह भी कहना है कि चिन्ता के इतने रूप होते हुए भी वह जिस रूप मे उनकी हृदय मे उदय हुई है वह

अत्यन्त अशुभ है और उसे अब उनके हृदय से शीघ्र ही हट जाना चाहिए क्योंकि उसका अब यहाँ पर कुछ भी काम नही है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे चिन्ता को पापिनी न कहकर पाप कहने के कारण लिंग दोष आ गया है।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रस्तुत छन्द मे प्रयुक्त चिन्ता के विभिन्न नामो मे से प्राय सभी ऐतरेय उपनिषद मे प्राप्त हो जाते हैं—यदेतद्धृदय मनस्चैतत्। सज्ञानमज्ञान विज्ञान प्रज्ञान मेधा दृष्टिर्धृतिर्मति मनीषा जूति स्मृति सकल्प-क्रतरसु कामोवश इति सर्वाण्येवैतानि प्रज्ञानास्य नामधेयानि भवन्ति।

विस्मृति आ • • • • भर दे।

शब्दार्थ—विस्मृति=भूलना। अवसाद=शिथिलता, थकावट। नीरवता =सूनापन, शान्ति। चेतनता=सज्ञानता, होश। जडता=बेहोशी, अज्ञानता। शून्य=खाली स्थान, सूना हृदय।

व्याख्या—चिन्ता से व्याकुल मनु का कहना है कि विस्मृति को आकर उनके मस्तिष्क मे छा जाना चाहिए जिससे कि वे अतीत की उन समस्त सुखद स्मृतियो को भुला सके जिन्हे स्मरण कर आज उन्हे रह रहकर पीडा हो उठती है। साथ ही मनु यह भी चाहते हैं कि अब उनके शरीर मे शिथिलता सी आ जाय और उनमे तनिक भी सोचने-विचारने का उत्साह न रहे। इसी प्रकार शान्ति की भावना को सम्बोधित कर मनु अपने हृदय मे उठने वाली समस्त हलचलो को शान्त करना चाहते हैं और अपनी समस्त चेतना को विलुप्त होती हुई भी देखना चाहते हैं जिससे कि उन्हे किसी प्रकार की शारीरिक या मानसिक व्यथा की अनुभूति न हो सके। वस्तुत सज्ञानता की अवस्था मे ही मानव को सुख दुःख की अनुभूतियाँ हो पाती हैं अत दुःख की अवस्था मे मनुष्य स्वाभाविक ही यह अभिलाषा करने लगता है कि चेतना की अपेक्षा जड़ता ही उचित है क्योंकि जड प्रकृति को दुःख का भान नहीं होता।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे मानव-मन का स्वाभाविक निरूपण हुआ है और कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि सुख और दुःख की अनुभूति स्वाभाविक ही है। तथा चेतनता और जडता दोनो को ही रुचिकर समझना चाहिए।

(२) प्रस्तुत छन्द मे कामायनी की कथावस्तु का 'बीज' विद्यमान है क्योंकि इन पंक्तियो मे मनु चिन्ता को दूर भगाकर, विस्मृति और जडता का

आवाहन करते हुए अपने हृदय मे शून्यता भरना चाहते हैं जिससे कि उनके हृदय की समस्त हलचल शान्त हो जाय और उन्हे चिरशान्ति या आनन्द प्राप्त हो सके। यहाँ यह स्मरणीय है कि प्रसाद की कामायनी का मुख्य कार्य भी आनन्द की प्राप्ति करना है और इन पंक्तियो मे मनु इसी आनन्द के लिए व्याकुल जान पड़ते हैं अत. यहाँ बीज नामक अर्थ प्रकृति हो है।

(३) इन पंक्तियो मे शोक नामक स्थायी भाव है और 'चेतनता चल जा, जडता' मे छेकानुप्रास अलंकार है।

चिन्ता करता · ··· ···· ···· दुःख की।

शब्दार्थ—अतीत=भूत काल, बीता हुआ समय। अनन्त=यहाँ हृदय से अभिप्राय है।

व्याख्या—चिन्ता की अवसन्न स्थिति से मनु का ध्यान स्वाभाविक ही उस अतीत की ओर गया जब कि देवतागण वासना की उपासना मे लीन होकर अपने को ही सब कुछ समझकर विलासिता के मद मे निमज्जित रहते थे। इस प्रकार अब मनु कहते हैं कि बीते दिनो की उन मनोहर स्मृतियो के सम्बन्ध मे वे जितना ही अधिक सोचते हैं उतना ही अधिक दुःख उन्हे होता है। वस्तुत चिन्ताक्रांत मानव मन मे अतीत की स्मृतियो का उभरना स्वाभाविक ही है और वे स्मृतियाँ व्यथित चित्त को और भी अधिक दुखी कर देती हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे अनन्त शब्द का प्रयोग लाक्षणिक है और यहाँ लक्षणलक्षणा शब्द शक्ति तथा परिकरांकुर अलंकार है।

आह सर्ग · ···· ·· · मीन हुए।

शब्दार्थ—सर्ग=सृष्टि, संसार। अग्रदूत=पहले आने वाला या पहले उत्पन्न होने वाला। भक्षक=नाश करने वाला। मीन=मछली।

व्याख्या—मनु अब देव जाति के पतन की कहानी सुनाते हुए कह रहे हैं कि जिन देवताओं का जन्म इस धरती पर सबसे पहले हुआ था और जिन्हे कि इस सृष्टि का अग्रदूत कहा जाता था उन्हीं का आज अस्तित्व ही समाप्त हो गया और वे इस अपार जल राशि में विलीन हो गये। जिस प्रकार मछलियाँ स्वयं ही अपनी जाति का विस्तार करती हैं परन्तु एक अवसर ऐसा भी आता है जबकि वे परस्पर एक दूसरे को खाकर अपनी जाति स्वयं ही नष्ट कर देती हैं उसी प्रकार जिन देवताओं ने अपनी जाति का उत्थान किया था उन्होंने अब आठो पहर विलास में ही लीन रहकर स्वयं ही अपने आपको नष्ट कर डाला।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे 'सर्ग के अग्रदूत' से कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि मानव सृष्टि के पूर्व यहाँ देव सृष्टि थी और यह पहली सृष्टि थी। इस सम्बन्ध मे शतपथ ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण, वायु पुराण, मार्कण्डेय पुराण और श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थो मे प्रमाण भी मिलते है तथा मनुस्मृति के प्रथम श्लोक मे ही देवताओ को 'अग्रजन्मा' कहा गया है।

(२) 'केवल अपने मीन हुए' मे कवि का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार बडी मछली छोटी मछली को खा जाती है उसी प्रकार बडी शक्ति छोटी शक्ति को नष्ट कर देती है।

(३) 'अग्रदूत' मे परिकर अलकार है और 'भक्षक या रक्षक' मे छेकानुप्रास अलकार है।

अरी आँधियों ·· ··· प्रत्यावर्तन।

शब्दार्थ—दिव-रात्रि=दिन रात। नर्तन=नाच, चमक। वासना की उपासना=भोग विलास मे लीन रहना। प्रत्यावर्तन=बार-बार लौट कर आना।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि जल प्रलय के पूर्व दिन रात आँधियो और बिजलियो का भयकर नृत्य होता रहा अर्थात् दिन रात आँधियाँ चलती थी और रह-रह कर बिजलियाँ भी गिराती थी परन्तु देवतागण भोग विलास मे ही लीन रहे तथा वे इस विलासिता पूर्ण जीवन से विरत नही हुए। यद्यपि प्रकृति ने इस प्रकार आँधी चलाकर और बिजली गिराकर देवताओ को वासना से विमुख करने का भरसक प्रयास किया था परन्तु जब वे सचेत न हुए तब उसने पुन अपना भीषणतम रूप धारण कर उन्हे सर्वथा नष्ट कर दिया।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण, विरोधाभास और रूपक नामक अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्रीमद्भागवत के अष्टम स्कन्ध के चौबीसवें अध्याय मे भी कहा गया है—

तत समुद्र उद्वेल सर्वत प्लावयन् महीम्।
वर्धमानो महामेघैर्वर्षद्भि समदृश्यत॥

मणि दीपो ··· ··· ·· ···· गया हविष्य।

शब्दार्थ—मणिदीप=मणियो के दीपक। देवदम्भ=देवताओ का घमड। महामेध=महायज्ञ। हविष्य=आहुति।

व्याख्या—जिस देव जाति को अभी तक इस बात का अहकार था कि उसका विनाश कोई भी नही कर सकता वही अब इस जल प्रलय के कारण नष्ट हो गयी। वस्तुत देवताओ के अहकार के ही कारण इस प्रकार उनका नाश हुआ और अब मनु को अपना भविष्य भी निराशापूर्ण तथा अधकारमय ही जान पड़ने लगा। उनका कहना है कि जिस प्रकार घोर अधकारपूर्ण स्थान मे रखा हुआ मणि का एक दीपक केवल अपने आसपास ही थोडा सा प्रकाश कर पाता है और अपने चारो ओर व्याप्त तिमिर राशि को सर्वथा नष्ट कर देने की शक्ति उसमे नही रहती उसी प्रकार आज वह स्वय भी अपने भविष्य के विषय मे कुछ भी सोचने विचारने मे असमर्थ है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि देव गण अत्यत समृद्धिशाली थे परन्तु प्रलय मे नष्ट हो जाने पर देवताओ का भविष्य अधकारमय हो गया।

(२) 'मणि दीपो के अधकारमय' मे विरोधाभास और 'देवदम्भ के महा मेघ' मे रूपक अलकार है।

अरे अमरता .... दीन-विषाद।

शब्दार्थ—अमरता=अनश्वरता। चमकीले पुतले=वैभव सम्पन्न देवता। जयनाद=विजय का स्वर। विषाद=शोक, दुख।

व्याख्या—आज तक जिन देवताओ का जयघोष चारो ओर गूंजा करता था अब देव जाति का पतन हो जाने पर वे ही जय ध्वनियाँ दीनता और दुखपूर्ण स्वरो मे प्रतिध्वनित हो रही है। कहने का अभिप्राय यह है कि जहाँ कभी विजयघोष होता था वही अब दीनता और शोक की सघन छाया दीख पड रही है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने देवताओ को 'अमरता के चमकीले पुतले' कहकर यह सकेत करना चाहा है कि अनन्त शक्ति एव अतुलित वैभव के कारण देवताओ को यह घमण्ड हो गया था कि वे अमर हैं पर उनका यह गर्व चूर-चूर हो गया।

(२) इन पक्तियो मे मानवीकरण और उत्प्रेक्षा अलकार हैं।

(३) 'पुतलो! तेरे वे जयनाद' मे च्युत सस्कृति दोष है क्योकि तेरे के स्थान पर 'तुम्हारे' होना चाहिए था।

प्रकृति रही .... नद में।

शब्दार्थ—दुर्जेय=जिसे जीता न जा सके, अजेय। पराजित=हारे हुए। मद=अहंकार। तिरते=पानी पर तैरते। नद=नदी।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि अन्त में प्रकृति की ही विजय हुई और घमंड के वशीभूत होकर देवताओं को पराजय स्वीकार करनी पड़ी। इस प्रकार देवता यह भूल गए कि विलासिता की अधिकता से उनका नाश हो जायगा और अज्ञानतावश वे हमेशा भोग-विलास की नदी में ही डूबे रहे तथा यह कभी न सोचा कि डूबने पर क्या परिणाम होगा ?

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में कवि ने आधुनिक वैज्ञानिकों को भी सचेत करना चाहा है कि उन्हें हमेशा यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रकृति पर विजय प्राप्त करना सर्वथा असम्भव है।

(२) 'विलासिता के नद' में रूपक अलंकार है।

वे सब डूबे .... नाद अपार।

शब्दार्थ—विभव=वैभव, ऐश्वर्य। पारावार=समुद, सागर। जलधि =समुद्र, सागर। नाद=ध्वनि, गर्जन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि न केवल वे सभी देवगण जो कि हमेशा भोग-विलास में ही लीन रहते थे वे नष्ट हो गए बल्कि उनका समस्त ऐश्वर्य भी नष्ट हो गया और आज इस जलप्लावन के कारण जो उमड़ता हुआ समुद्र चारों ओर दीख पड़ रहा है वह ऐसा प्रतीत होता है मानो कि अब देवताओं का वैभव ही पानी बनकर इस अगाध सागर के रूप में चारों ओर फैला हुआ है और वह उनके समस्त सुखों को अपने में लीन कर भारी दुःख ध्वनि कर रहा है।

टिप्पणी—'बन गया पारावार' में परिकरांकुर और 'दुःख जलधि' में रूपक अलंकार है।

वह उन्मत्त .... कलना थी।

शब्दार्थ—उन्मत्त=मदान्ध, यहाँ संयमहीन। छलना=भ्रम, भ्रांति, धोखा। विभावरी=रात, रजनी। कलना=चमक।

व्याख्या—मनु अब देवताओं के विलासपूर्ण जीवन की कटु आलोचना करते हुए कह रहे हैं कि आखिर अब देवताओं का वह निर्बाध, उच्छृंखल भोग विलास आज कहाँ चला गया ? क्या यह सब केवल स्वप्न मात्र या भ्रम ही

था ? मनु का कहना है कि देवताओ के ससार की वह सुख रात्रि ताराओं से परिपूर्ण थी और जिस प्रकार इन तारागणो की कोई गिनती ही नही हो पाती उसी प्रकार देवताओ के भोग-विलास की भी कोई सीमा न थी ।

टिप्पणी—'स्वप्न रहा या छलना थी' मे सदेह और 'सुख विभावरी' मे रूपक अलकार है ।

चलते थे .. .. सुख विश्वास ।

शब्दार्थ—सुरभित=सुगन्धित । सुरभित अचल=सुगन्धित वस्त्र, यहाँ सुवासित शरीर से अभिप्राय है । मधुमय=मधुर, आनन्द एव उल्लास से पूर्ण । निश्वास=साँस । मुखरित=ध्वनित, अभिव्यक्त ।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि नारियो के सुगन्धित आँचलो की छाया मे देवगण मादकता पूर्ण साँसे लिया करते थे अर्थात् वे हमेशा विलास मे ही रहते थे और विलास एव वैभव के वातावरण मे सुख तथा स्वच्छन्दता के साथ अपना जीवन व्यतीत करना ही उनका लक्ष्य था ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रयोजनवती लक्षणा शब्द शक्ति है और कवि ने देवताओ की विलासप्रियता का स्वाभाविक चित्रण किया है । डॉ० विजयेन्द्र स्नातक के शब्दो मे 'देवताओ की निर्बाध वासना तुष्टि का वर्णन करते हुए कवि ने उनकी विलास क्रीडाओ का बडा ही सजीव और मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है । सुरागनाओ के प्रेमालिगन, चुम्बन, हास-परिहास आदि का जैसा विवरणात्मक अकन कवि ने किया है, वह हर्ष पुलक के साथ पाठक के मन को शृगार भावना से ओत-प्रोत करने मे पूर्ण रूप से समर्थ है । रूप, ध्वनि, चेष्टा, विलास आदि का सागोपाग वर्णन इन पक्तियो मे मिलता है ।'

सुख केवल .... होना जितना ।

शब्दार्थ—केन्द्रीभूत= एकत्र । छाया-पथ=आकाश गगा । तुषार= वर्फ-कण, कुहासा या कुहरा । सघन=गहरा, घना ।

व्याख्या—वास्तव मे देवताओ के जीवन का एकमात्र लक्ष्य सुखोपभोग ही था और उन्होने विविध सुखो को अपने पास उसी प्रकार एकत्र कर लिया था जिस प्रकार नवीन वर्फ कणो की भाँति चमकने वाले अनेकानेक तारे आकाश गगा मे गुँथे हुए जान पडते है ।

टिप्पणी—(१) वस्तुत सुख को केन्द्रीभूत करने की यह प्रवृत्ति सूक्ष्म

मानम व्यापार है और कवि ने इसे स्थूल प्राकृतिक दृश्य से व्यजित कर उक्ति मे मनोहरता ला दी है ।

(२) इन पक्तियो मे दृष्टान्त अलकार है और प्रयोजनवती साध्यवसाना गौणी लक्षणा है ।

सब कुछ • •• सुख सचार ।

शब्दार्थ—स्वायत्त=अपने अधिकार मे । उद्वेलित=उछलती हुई । समृद्धि =वैभव, उन्नति । सचार=गमन ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि ससार को समस्त बल-वैभव और आनन्द देवताओ के ही अधिकार मे होने के कारण उनका जीवन अपूर्व सुखमय और समृद्धिशाली हो गया था । जिस प्रकार आज समुद्र की लहरे उमड घुमड कर अपनी सत्ता एव व्यापकता का परिचय दे रही है उसी प्रकार देवता भी अपनी समृद्धि का परिचय देते थे ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा और तुल्योगिता अलकार है ।

कीर्ति, दीप्ति •• आनन्द विभोर ।

शब्दार्थ—कीर्ति=यश । दीप्ति=तेज, कान्ति । नचती थी=सर्वत्र फैली हुई थी । अरुण-किरण=सूर्य की किरणें । सप्त सिन्धु=सात समुद्र पर यहाँ प्रदेश विशेष से अभिप्राय है । द्रुम=वृक्ष । आनन्द विभोर=आनन्द मे लीन ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि देवताओ का यश, तेज और शोभा प्रात कालीन सूर्य की किरणो के समान चारो ओर व्याप्त थी । इतना ही नही देवता सप्त सिन्धु के तरल कणो और वृक्षो के झुण्ड मे आनन्द मग्न होकर घूमा करते थे ।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे दीपक, उपमा और मानवीकरण अलकार हैं ।

शक्ति रही • •• आक्रान्त ।

शब्दार्थ—पदतल मे=पैरो के नीचे । विनम्र=झुकी हुई । विश्रात= थकी हुई, शान्त । धरती=धरती, पृथ्वी । आक्रांत=पराजित, दबा हुआ ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि देवताओ मे अपूर्व शक्ति विद्यमान थी और प्रकृति भी पराजित होकर नम्रता के साथ उनके चरणो मे झुक गई थी तथा धरती भी उनके चरणो से पद दलित होकर प्रतिदिन काँपती रहती थी । वस्तुत प्रकृति के पराजित होने का अभिप्राय यह है कि देवताओ ने समस्त

प्राकृतिक वस्तुओं पर अधिकार कर लिया था और कंपित धरणी का तात्पर्य यह है कि देवता जहाँ भी आक्रमण करते वहीं के निवासी भयभीत होकर अपनी पराजय स्वीकार कर लेते थे।

टिप्पणी—वास्तव में कामायनी का यह वर्णन इतिहास सम्मत ही है और हमें देवताओं की शक्ति सम्पन्नता का विस्तृत वर्णन ऋग्वेद में भी उपलब्ध होता है। देखिए—'द्यावा चिदस्मै पृथिवी नमेते शुष्माच्चिदस्य पर्वता भयन्ते' अर्थात् इन्द्र के चरणों में द्यौ और पृथ्वी दोनों झुक जाते थे और उसकी प्रचंडता को देखकर पर्वत भी भयभीत रहते थे। इसी प्रकार 'शक्ति रही हाँ शक्ति' में वीप्सा अलंकार है।

स्वयं देव थे .... की वृष्टि।

शब्दार्थ—विश्रृंखल=अव्यवस्थित। आपदाओं=आपत्तियों, मुसीबतों।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि देवताओं में अहंकार भी उत्पन्न हो गया और जब उन्होंने यह समझ लिया कि अब वे स्वयं ही अपने कर्मों के नियामक हैं तथा जो कुछ चाहें करने को स्वतन्त्र हैं तब स्वाभाविक ही उनमें संयम-हीनता के कारण संसार की व्यवस्था ही छिन्न-भिन्न होने लगी और उन पर आपत्तियों की भयंकर वर्षा भी हुई अर्थात् उन्हें अनेक विपत्तियां झेलनी पड़ीं।

टिप्पणी—प्रथम दो पंक्तियों में काकुवक्रोक्ति अलंकार है।

गया सभी .... निश्चिन्त विहार।

शब्दार्थ—सुरबालाओं=देव कन्याओं। ज्योत्स्ना=चाँदनी। स्मित=हँसी। मधुप=भ्रमर, भँवरा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि देवताओं का समस्त ऐश्वर्य और आनन्द विहार नष्ट हो गया तथा देवबालाओं का शृंगार और उषा सा उनका यौवन, चाँदनी सी उनकी मुस्कानें तथा मतवाले भँवरे के समान उनका निश्चिन्त भोग विलास आदि सभी कुछ नष्ट हो गया।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में भाव साम्य और रंग साम्य के आधार पर उपमाओं का अत्यन्त सुन्दर प्रयोग किया गया है। साथ ही 'गया सभी कुछ गया' में पुनरुक्ति, ज्योत्स्ना सा और मधुप सदृश में उपमा अलंकार है।

भरी वासना सरिता .... कराह।

शब्दार्थ—वासना सरिता=भोग विलास की नदी। मदमत्त=मादक, मतवाला। प्रलय जलधि=प्रलय का समुद्र। संगम=मिलन, संयोग।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि देवताओ के जीवन मे उमडती हुई वासना रूपी नदी कुछ ऐसे मतवाले और तीव्र वेग के साथ प्रवाहित हुई कि अन्त मे यह नदी विनाश के समुद्र मे ही विलीन हो गई। कहने का अभिप्राय यह है कि देवताओ के घोर भोग विलास के कारण ही यह भीषण जल प्रलय हुआ और समस्त देव जाति नष्ट हो गई तथा उनके इस अन्त से अव मनु का हृदय कराह उठता है।

टिप्पणी—यहाँ 'वासना सरिता' मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

चिर किशोर वय • • •• वसत।

शब्दार्थ—चिर किशोर वय=सदैव किशोर अवस्था। दिगन्त=दिशाएँ। सुरभित=सुगन्धित। तिरोहित=छिपना, लुप्त होना। अनत वसत=चिर वसत, पर यहाँ सदैव रहने वाला यौवन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि आज जीवन के वे मधुर दिन, जवकि युवावस्था की ही अनुभूति होती थी, नित्य ही भोग विलास और वासना मे मग्न रहने के सुअवसर मिलते थे तथा जीवन मे हमेशा ही वसत ऋतु छाई रहती थी अर्थात् जीवन मादकता पूर्ण था, कहाँ चले गये और मधुरतापूर्ण वसत ऋतु भी कहाँ चली गई।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे छायावाद की लाक्षणिक पदावली एव प्रतीकात्मक शब्दो की योजना हुई है और 'अनन्त वसत' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है तथा 'मद से पूर्ण अनन्त वसत' मे प्रयोजनवती साध्यवसाना गौणी लक्षणा शब्द शक्ति है।

कुसुमित कुजो •• अब बीन।

शब्दार्थ—कुसुमित=खिले हुए फूलो से युक्त। पुलकित=रोमाचित। प्रेमालिगन=प्रेमियो का परस्पर प्रेमपूर्वक आलिगन करना। विलीन=लुप्त, मूर्च्छित। तानें=सगीत की तानें। बीन=वीणा।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि फूलो से लदे हुए लतामडपो मे होने वाले आलिगनो के दृश्य भी अव वही नही दीख पडते और सुन्दर सुरीली स्वर लहरी भी कही नही सुन पडती तथा वीणा भी अव शान्त सी है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे देवताओ की जिस सगीतप्रियता की ओर सकेत किया गया है वह इतिहास सम्मत ही है क्योकि ऋग्वेद मे भी देवताओ द्वारा वीणा बजाने का उल्लेख मिलता है।

(२) पुलकित प्रेमालिगन मे विशेपण विपर्यय और 'मौन हुई है मूर्च्छित ताने' मे मानवीकरण अलकार हैं ।

तुलनात्मक दृष्टि—चित्र साम्य के लिए हरिऔधजी की 'रस कलश' का यह छन्द दर्शनीय है—

सजि सजि सुमन समूह सो वनि वसत की वेलि ।
पुलकि पुलकि ललना करति निज लालन ते केलि ॥
अव न कपोलो · · · माप ।

शब्दार्थ—कपोल=गाल । भुजमूल=वगल । शिथिल वसन=शरीर से खिसके हुए कपडे । व्यस्त=इधर उधर पडे हुए या विखरे हुए । माप= परिमाण ।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि अव इन जल प्रलय के कारण देवताओ और देववालाओ को न तो चुम्बन सुख ही प्राप्त हो पाता है और न वे प्रेमालिगन ही कर पाते हैं । पहले तो इस जल प्लावन के पूर्व जव देवता उन रूपवती नारियो के कपोलो का चुम्वन लेते थे तव उन्हे उनके शरीर से निकलने वाली फूलों की सी मधुर सुगन्ध का सा आनन्द प्राप्त होता था । साथ ही वासना के आवेग मे जव देववालाएँ देववालाओ का आलिगन करती थी तव उनके वस्त्र अस्त व्यस्त होकर देवताओ की वगलो तक आकर विखर जाते थे परन्तु अव ये सभी दृश्य समाप्त हो चुके हैं ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे शृगार रस की अभिव्यक्ति हुई है और देवताओ की विलास भावना का सुन्दर चित्रण हुआ है । साथ ही 'छाया सी' मे उपमा अलकार है ।

कंकण क्वणित ·· ·· होता अभिसार ।

शब्दार्थ—क्वणित=वजना । नूपुर=घुंघरू । रणित=वजना । मुखरित =शब्द करना । कलरव=कोमल ध्वनि । अभिसार=मिलन ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि देववालाएँ जव देवताओ का आलिगन करती थी तव उनके कगन मधुर ध्वनि करते, घुँघरू वज उठते और उनके वक्षस्थल पर हार हिलने लगते तथा चारो ओर सगीत की मधुर ध्वनि गूंजने लगती जिसमे स्वर और लय परस्पर मिले रहते थे ।

टिप्पणी—ये पक्तियाँ शब्द योजना का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती हैं और इनमे ध्वन्यर्थ व्यजना (Onomatopoeia) अलकार प्रयुक्त हुआ है ।

सौरभ से .... समीर।

शब्दार्थ—**सौरभ**=सुगधि । **दिगन्त**=दिशाएँ । **आलोक अधीर**=प्रकाश से परिपूर्ण । **समीर**=वायु, हवा ।

व्याख्या—देवताओ के विगत भोग विलास का उल्लेख करते हुए मनु कह रहे हैं कि उन दिनो सभी दिशायें सुगध से परिपूर्ण रहती थी और आकाश मे चारो ओर अपूर्व प्रकाश व्याप्त रहता था। साथ ही देवताओ मे एक ऐसी गति विद्यमान थी जिसके समक्ष वायु का वेग भी तुच्छ जान पडता था। इस प्रकार वे प्रतिदिन अत्यन्त तीव्र गति के साथ उत्कर्ष प्राप्त कर रहे थे और उनकी यह गति पवन से भी तेज थी।

टिप्पणी—यहाँ 'अचेतन गति' से कवि का अभिप्राय यह है कि देवता भोग विलास मे निरन्तर लीन रहने के कारण अपनी सुधबुध खो बैठे थे और उन्हे अपने भविष्य का तनिक भी होश नही रहता था।

(२) अन्तिम दो पक्तियो मे व्यतिरेक अलकार है।

वह अनत • •• • अवर्तन।

शब्दार्थ—**अनग पीडा**=काम-पीडा । **अग भगियो**=अगो की चेष्टाएँ । **मधुकर**=भ्रमर, भौंरा । **मरन्द**=मकरन्द । **अवर्त्तन**=घूमता ।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि विलासिनी देव बालाएँ जब अपने विविध अगो को मोडकर भाँति भाँति के हाव भाव प्रदर्शित करती थी तब यह स्पष्ट हो जाता था कि उन्हे काम पीडा की अनुभूति हो रही है और उनकी इन चेष्टाओ को देखकर देवता भँवरो के समान उनके यौवन रस का पान करने मे रत हो जाते। यहाँ देवताओ की उपमा भ्रमर से दी गयी है, जिस प्रकार भ्रमर एक फूल से दूसरे फूल का रस लेता फिरता है उसी प्रकार देवताओ को भी रस पान करने वाला कहा गया है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे देवताओ की तीव्र विलास भावना अभिव्यक्त हुई है और उपमा अलकार का प्रयोग हुआ है।

सुरा सुरभिमय पीत पराग।

शब्दार्थ—**सुरा**=शराब । **सुरभिमय**=सुगधि से युक्त । **वदन**=मुख । **अरुण**=लाल । **अनुराग**=प्रेम । **कल**=सुन्दर । **विछलता**=फिसलता । **पीत**=पीला ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि देवबालाओ के मुख से हमेशा शराब की

सुगंध निकला करती थी और रात मे अधिक देर तक जागने के कारण आलस्य और अनुराग से पूर्ण उनके नेत्र हमेशा लाल रहते थे। इस प्रकार उनकी आलस्यपूर्ण पलको से वासना झाकती सी प्रतीत होती थी और उनमे मादकता भी अधिक बढ गयी थी। यद्यपि देवबालाओ के कपोल लाल थे पर अत्यधिक चुम्बनो के लिए जाने से गालो मे पीलापन आ गया था। इतना होते हुए भी उनके कपोलो की पीली आभा के सामने कल्प वृक्ष के फूलो का पीला पराग भी उज्ज्वलता और सुन्दरता की दृष्टि से तुच्छ जान पडता था।

टिप्पणी—यहाँ अन्तिम दो पंक्तियो मे व्यतिरेक अलकार की योजना हुई है।

विकल वासना .. . . . गये।

शब्दार्थ—विकल वासना=व्याकुल कर देने वाली विलास भावना। मुरझाये=शक्तिहीन हो गये। ज्वाला=आग।

व्याख्या—मनु का कहना है कि अतृप्त वासना के प्रतीक देवताओ का आज नाश हो गया है और उन्होने स्वय ही अपने आपको अपने ही द्वारा प्रज्वलित की गयी वासना की आग मे जलाकर राख कर दिया तथा इनके पश्चात वे इस अपार जल राशि मे हमेशा के लिए विलीन हो गए।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे पदार्थों के क्रमिक विनाश की मनोहर व्यजना हुई है।

अरी उपेक्षा .. .. दर्शन की प्यास।

शब्दार्थ—उपेक्षा भरी=तिरस्कार से पूर्ण। अतृप्ति=असतुष्टि, तृप्त न होना। निर्बाध=निरन्तर। द्विधा=दुविधा, चिन्ता। अपलक=बिना पलक गिराए।

व्याख्या—देवताओ ने यह समझकर कि वे अमर हैं अपने जीवन मे सभी की उपेक्षा कर निरतर भोगविलास को ही जीवन का साध्य समझा परन्तु उनकी तृष्णा शात नही हुई और वे उत्तरोत्तर विलासिता मे लीन रहने लगे। उन्हे किसी भी बात की चिन्ता न थी और उच्छृङ्खल काम-क्रीडा के अतिरिक्त उन्हे अन्य कोई कार्य भी न था। इस प्रकार वे हमेशा प्रेम की प्यास लिए वासना पूरित नेत्रो से देव बालाओ के दर्शनो के लिए उत्सुक रहते।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे लाक्षणिक पदावली का प्रयोग हुआ है।

बिछुरे तेरे .. . .. . सता रही।

शब्दार्थ—स्पर्श=अगो को छूना। कातरता=अधीरता, व्याकुलता।

व्याख्या—देवताओ के विगत भोग विलासो का स्मरण करते हुए मनु कह रहे हैं कि आज वे सभी दृश्य समाप्त हो गए और देवबालाओ का का आलिंगन करते समय जो रोमाच उनके शरीर मे हो जाता था वह भी अब समाप्त हो गया। यहाँ यह स्मरणीय है कि प्रेमाकुल होकर देवगण देवबालाओ के अधरो का मधुर चुम्बन लेने के लिए छटपटाया करते थे और बार-बार उनसे उसके लिए विनय करते थे परन्तु चुम्बनो की अधिकता से कामनियाँ तग हो उठती थी और उनका अनुरोध अस्वीकार कर देती थी अत देवताओ के मुख पर कातरता झलक उठती थी लेकिन ये सभी दृश्य अब नही देख पडते।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रेम क्रीडा का स्वाभाविक चित्रण हुआ है और कवि ने शारीरिक हाव भाव तथा चेष्टाओ का कुशलतापूर्वक वर्णन किया है।

रत्न सौध · · भीड अधीर।

शब्दार्थ—**रत्न सौध**=रत्नो से जडे हुए महल। **वातायन**=झरोखा, खिडकी। **मधु मदिर समीर**=शराब के समान मतवाला कर देने वाली हवा। **तिमिंगल**=एक प्रकार की समुद्री मछली।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जल प्रलय के कारण देव सृष्टि विनष्ट हो चुकी है और जिन रत्न जटित भवनो के झरोखो मे से सदा सुगधित पवन बहा करता था आज उन्ही मे तिमिंगल नामक अनेक समुद्री मछलियाँ टकरा रही होगी।

टिप्पणी—'मधु मदिर समीर' मे उपमा अलकार योजना हुई है।

देवकामिनी · · ·· ·· भीषण वृष्टि।

शब्दार्थ—**देवकामिनी**—देवकामिनी=देवताओ की स्त्रियाँ, देव बालाएँ **नील नलिन**=नीले कमल। **प्रलयकारिणी**=सर्वनाश करने वाली।

व्याख्या—मनु विगत स्मृतियो मे लीन हो सोचने लगते हैं कि उन सुन्दर देवबालाओ के नेत्र नीले कमल के समान थे और वे जिस ओर भी दृष्टि फेरती थी उधर ही नीले कमलो का ससार सा झलक उठता था परन्तु आज जल प्रलय के कारण इनका विनाश हो गया है और अब उन नील कमलो के स्थान पर भीषण प्रलयकारी वर्षा हो रही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने देवबालाओ के नेत्रो की अपार सुन्दरता का वर्णन किया है और व्यतिरेक अलकार की योजना भी हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—नेत्रो मे कमल उत्पन्न होने का वर्णन हिन्दी के कई प्राचीन कवियो ने भी किया है और मलिक मोहम्मद जायसी ने 'पद्मावत मे पद्मावती के नेत्रो की प्रशसा करते हुए कहा भी है—

नयन जो देखा कमल भा, निरमल नीर सरीर।

इसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने सीता के नेत्रो की प्रशसा करते हुए 'राम चरित मानस मे लिखा है—

जहँ विलोक मृगसायक नैनी। जनु तहँ बरसि कमल सित श्रेनी।

वे अम्लान सुरबालायें।

शब्दार्थ—अम्लान=खिले हुए। कुसुम=फूल, पुष्प। मणिरचित=मणियो से बनी हुई। शृङ्खला=जजीर, बेडियाँ। सुरबालायें=देवागनायें, देवबालायें।

व्याख्या—खिले हुए सुगधित फूलो और मणियो की जो मनोहर मालायें अभी तक देव बालाओ के शरीर पर शृगार सज्जा का काम देती थी वे ही आज जजीर के समान प्रतीत हो रही है और ऐसा जान पडता है कि उन पुष्पमालाओ रूपी जजीरो ने वे जकड दी गयी हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे विभावना अलकार है।

देव यजन . .. . माला।

शब्दार्थ—देवयजन=देवताओ के यज्ञ। पशुयज्ञ=वे यज्ञ जिनमे पशुओ का वध कर उनके मास की आहुति दी जाती है। जलनिधि=सागर, समुद्र।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि जिस प्रकार यज्ञ की समाप्ति पर पशुओ की आहुति से यज्ञ की ज्वाला भभक उठती थी उसी प्रकार अब ये सागर की भीषण लहरे ही आग की लपटो के समान जान पडती है अर्थात् जहाँ कि कभी यज्ञ होते थे वही आज समुद्र लहरा रहा है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे देवताओ के विध्वस का कारण पशुयज्ञ को भी माना गया है। कवि का कहना है कि देवो ने पहले पशुओ का वध कर उनके मास की आहुति दी थी और आज प्रलय ने उन्ही देवताओ का विनाश कर दिया।

(२) यज्ञ सम्बन्धी वृत्तान्तो को इतिहास सम्मत ही समझना चाहिए और ऋग्वेद मे तो स्पष्ट रूप से कहा गया है 'यज्ञेन' यज्ञमयजन्त देवा। इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण और जैमिनीय ब्राह्मण आदि ग्रन्थों मे पशुयज्ञो का भी विस्तृत वर्णन मिलता है।

(३) इन पक्तियो मे रूपक अलकार है ।

उनको देख ... हलाहल नीर ।

शब्दार्थ—अधीर=दुखी । प्रलेय=प्रलय का । हलाहल=जहर, विप ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि देवताओ के भोग विलास के इस भीषण परिणाम को देखकर ही शायद आकाश से कोई रो पडा है और उसके नेत्रो से प्रवाहित होने वाली अश्रु धारा ही आज इस प्रलयकारी भीषण वर्षा के रूप मे जान पडती है ।

टिप्पणी—(१) कुछ विचारक इन पक्तियो का यह अर्थ भी करते हैं कि यज्ञ मे किये गये पशुओ की बलि को देखकर अन्तरिक्ष से दैवी शक्ति दुखी होकर रोयी होगी और उनके इस रुदन से ही आँसुओ का यह प्रलय सागर तैयार हुआ होगा ।

(२) यहाँ हेतूत्प्रेक्षा अलकार है ।

हाहाकार ... ... क्रूर ।

शब्दार्थ—क्रुन्दन=रोना, विलाप । कुलिश=वज्र या बिजली । बधिर=बहरे या बहरी । भीषण रव=भयकर ध्वनि । क्रूर=डरावनी, भयानक ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि जलप्लावन होते ही चारो ओर भयकर हाहाकार मच गया और बिजलियो के टकराने से इतनी अधिक भीषण आवाजें होने लगी कि अब प्रतिक्षण केवल कोलाहल ही सुनायी पडता है और इसके कारण सभी दिशाएँ भी बहरी सी हो गयी है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास के महाकाव्य 'कुमार सभव' मे प्रलय का रूपक इस प्रकार अकित हुआ है—

घोरान्धकार-विकार-प्रतियो युगान्त-कालानल प्रबल धूमनिभो नभोन्ते
गर्जीरवैर्विघटयन्नवनीधराणा शृगाणी मेघनिवहो घनमुज्जगाम
विधुल्लता वियति वारिदवृन्द मध्ये गभीरभीषण रवैं कपिशीकृताशा
घोरा युगान्त चलितस्य भयकराय कालस्य लोलरसेनव चमच्चकार

दिग्दाहो ... चलते झटके ।

शब्दार्थ—दिग्दाह=दिशाओ मे आग लगना । जलधर=बादल । क्षितिज=वह स्थान जहाँ धरती और आकाश मिले हुए जान पडते है । धूम=धुआँ । जलधर=बादल । भीम=भयकर । प्रकम्पन=अत्यधिक काँपना । झझा=तेज आँधी ।

व्याख्या—प्रलय काल का वर्णन करते हुए मनु कह रहे है कि सभी दिशाओ मे आग सी लग जाने के कारण चारो ओर धुआँ ही धुआँ दिखाई पडता और कभी-कभी तो यही प्रतीत होता कि मानो आकाश मे बादल ही घिर आये हैं। साथ ही तेज आँधी के भयकर झोको के चलने से सारा आकाश ही रह रहकर डोलने लगता।

टिप्पणी—यहाँ सदेह अलकार की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है और 'भीम प्रकपन' मे प्रकरण समवा अभिधामूला व्यजना है।

अधकार मे पीन हुई।

शब्दार्थ—मित्र=यहाँ सूर्य। आभा=ज्योति, प्रकाश। वरुण=जल देवता। घनी कालिमा=सघन अधकार। पीन=सघन, मोटी।

व्याख्या—मनु प्रलय का वर्णन करते हुए कहते हैं कि सूर्य का प्रकाश पहले तो धुँधला सा दीख पडने लगा पर कुछ ही क्षण पश्चात् सूर्य उस अधकार मे ही अदृश्य सा हो गया और अब चारो ओर अधकार ही अधकार छा गया। साथ ही जल देवता वरुण भी क्रुद्ध होकर भयकर वर्षा करने लगे और चारो ओर धुँए से उत्पन्न कालिमा की एक मोटी तह सी जम गयी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अधकार की क्रमिक सघनता का सुन्दर वर्णन हुआ है और 'मलिन मित्र' मे प्रकरण समवा अभिधामूला व्यजना है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने अपने 'करुणालय' मे भी वरुण को अतरिक्ष और समुद्र दोनो का देवता कहा है—

हे समुद्र के देव ! देव आकाश के !
शान्त हूजिए, क्षमा कीजिए दीन को।

पंचभूत ... . खोया प्रात।

शब्दार्थ—पचभूत=पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि नामक पाँच तत्व। भैरव=भयानक, भयकर। मिश्रण=मिल जाना। शपाओ=बिजलियो। शकल=टुकडे। निपात=गिरना। उल्का=मशाल। अमर शक्तियाँ=प्राकृतिक दिव्य शक्तियाँ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जिन पच भूतो (पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि) के मिश्रण से यह सम्पूर्ण सृष्टि बनी है आज उन्ही का मिश्रण भयकर प्रलयकारी दृश्य प्रस्तुत कर रहा था और अब वे परस्पर मिलकर सहारक परिणाम उपस्थित कर रहे थे। इस प्रकार बिजलियाँ टूट टूट

कर गिर रही थी और वे विद्युत खड ऐसे प्रतीत होते थे मानो कि वास्तविक अमर शक्तियाँ, जो कि इन देवताओ से विभिन्न ही थी, अधकार मे छिपे हुए प्रात काल को मशाल लेकर ढूँढ रही है।

टिप्पणी—यहाँ 'खोज रही जो खोया प्रात' मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार है।

वार-वार • • हेतु अशेष।

शब्दार्थ—व्योम=आकाश। अशेप=सम्पूर्ण।

व्याख्या—प्रलय काल का वर्णन करते हुए मनु कहते हैं कि लगातार होने वाले भयकर कोलाहल के कारण धरती भी काँप उठती थी और चारों ओर जो नीला अधकार दृष्टिगोचर होता था। उसे देखकर यही जान पडता था कि मानो काँपती हुई धरती को देखकर उसे छाती से लगाकर धीरज बँधाने के लिए नीला आकाश ही नीचे उतर आया हो।

टिप्पणी=इन पक्तियो में हेतूत्प्रेक्षा अलकार है।

उधर गरजती •• • व्यालो सी।

शब्दार्थ—सिन्धु लहरियाँ=सागर की लहरें। कुटिल काल=विकराल मृत्यु। व्यालो सी=सप या साँप की तरह।

व्याख्या—मनु का कहना है कि उधर क्रूर मृत्यु के जालो अर्थात् मृत्यु पाश के समान दिखायी देने वाली सागर की भीषण लहरें गरजती हुई इस प्रकार आगे बढती थी मानो कि अपने-अपने फन फैलाकर अनेक जहरीले सर्प बढे चले आ रहे हो। लहरो की उपमा सर्प से देते हुए यहाँ यह कल्पना की गयी है कि लहरो से उठने वाला फेन ऐसा प्रतीत होता था मानो कि वह उन सर्पों के मुख से निकला हुआ जहर हो।

टिप्पणी—यहाँ उपमा और उत्प्रेक्षा अलकार प्रयुक्त हुए है।

तुलनात्मक दृष्टि—इन पक्तियो मे गरजती हुई लहरो का जैसा वर्णन किया गया है, वैसा ही वर्णन महाभारत के 'वन पर्व' मे भी मिलता है, देखिए—

नृत्य मानमिवोर्मिभि गर्जमानमिवाम्भसा।
क्षोभ्यमाणमहावर्तै सा नौस्तस्मिन्महोदधौ॥

धँसती धरा •••• •••• •••• ••• था ह्रास।

शब्दार्थ—धरा=पृथ्वी। निश्वास=आहे, पर यहाँ आग की लपटें। सकुचित=सिमटे हुए। अवयव=अश, भाग। ह्रास=नाश, क्षीणता।

व्याख्या—जब प्रलय की भयानकता का वर्णन करते हुए मनु कह रहे हैं कि धीरे-धीरे धरती नीचे की ओर धँसने लगी और उनके अंतर की आग ऊपर प्रकट हुई जो कि ज्वालामुखी पर्वत में स्फुटित होने वाली आग की भीषण लपटों के समान जान पडती थी। इस प्रकार पृथ्वी का भूभाग क्रमश सकुचित होने लगा।

टिप्पणी—इन पक्तियो की शब्द योजना सराहनीय है और इनमे ध्वन्यर्थ अलकार तथा नाद सौन्दर्य है।

सबल तरगाघातो ·· ·· विकलित सी।

शब्दार्थ—सबल=शक्ति-शाली। तरंगाघातो=लहरो के थपेडो। कच्छप =कछुआ। ऊभ चूभ=क्षुब्ध।

व्याख्या—मनु प्रलय काल का वर्णन करते हुए कहते हैं कि कुछ समुद्र की शक्ति-शाली तरगो के भीषण थपेड़ो के कारण पृथ्वी अत्यधिक विचलित और क्षुब्ध जान पडने लगी तथा ऐसा प्रतीत हुआ मानो कि दीर्घकाय कछुए के समान धरती लहरो के चपेटो से घबडाकर ऊपर की ओर सरक आयी हो। कहने का अभिप्राय यह है कि पृथ्वी का अधिकांश भाग जलमग्न हो गया और कुछ थोडा सा ही भाग लहरो के थपेडे खाता हुआ डूबने से अवशिष्ट बचा।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार है।

बढने लगा ·· — प्रतिघात।

शब्दार्थ—विलास वेग-सा=भोग विलास की तीव्रता के समान। जल-सघात=जल राशि। तिमिर—अधकार। प्रतिघात=घात के बदले किया गया आघात अथवा झौंके पर झौंके लगना।

व्याख्या—मनु जल प्रलय का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि जिस तरह देवताओ की वासना अत्यन्त तीव्र गति से बढती चली गयी थी उसी प्रकार अब जल प्रलय भी अत्यन्त वेग पूर्वक बढने लगा और चारो ओर भयकर जलराशि एकत्र होने लगी। साथ ही चारो ओर फैले हुए अधकार की सघन परतो पर भयकर पवन बार-बार आकर टकराता था और ऐसा प्रतीत होता था कि उन दोनो मे भीषण घात प्रतिघात चल रहा है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा और समासोक्ति अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

वेला क्षण ···· ·· ··· ···· हीन हुआ।

शब्दार्थ—वेला—समय, पर यहाँ सागर का किनारा। लीन=पूर्णतया

लुप्त होना या छिप जाना । उदधि=सागर । अखिल धरा=सम्पूर्ण पृथ्वी । मर्यादाहीन=असीम, सीमारहित ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि धीरे-धीरे सागर का किनारा क्षण-प्रतिक्षण समीप जाने लगा अर्थात् अभी तक जो पृथ्वी डूबने से बच रही थी वह भी जल में डूबने लगी । साथ ही सुदूर क्षितिज के पास की पृथ्वी के भी जलमग्न हो जाने के कारण अब जल और आकाश मिले हुए दीख पड़ने लगे । यहाँ यह स्मरणीय है कि समुद्र की यह मर्यादा परम्परागत ही है कि वह अपने तट को नहीं डुबाता परन्तु प्रलयकालीन सागर के विषय में यह बात नहीं है क्योंकि उस समय वह अपनी मर्यादा का परित्याग कर देता है । अतएव इन पंक्तियों में भी यही कहा गया है कि प्रलयकालीन समुद्र ने अपनी मर्यादा का परित्याग कर समस्त धरती को डुबो दिया और वह सीमाहीन होगया ।

तुलनात्मक दृष्टि—वाल्मीकि रामायण में भी समुद्र द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वी को जलमग्न कर देने का प्रसंग अंकित हुआ है, देखिए—

सहसाभूत ततो वेगाद् भीमवेगो महोदधि ।
योजन व्यतिचक्रामे वेलामन्यत्र सम्प्लुवात् ।।

करका क्रन्दन ·· कब का ।

शब्दार्थ—करका=ओले । ताडवमय नृत्य=विनाशकारी कार्य ।

व्याख्या—प्रलयकालीन भयानकता का वर्णन करते हुए मनु कहते हैं कि चारों ओर से भयंकर आवाजें करते हुए ओले बरसने लगे और उनके नीचे सब कुछ दबने लगा तथा पंचभूतों का यह भीषण ताडव नृत्य अर्थात् विनाशकारी कार्य न जाने कब तक चलता रहा ।

टिप्पणी—कहा जाता है कि संसार का संहार करते समय, भगवान शंकर ताडव नृत्य करते हैं और इसी आधार पर कवि ने यहाँ ताडव नृत्य को विनाशकारी कार्य माना है ।

एक नाव थी ··· ··· बारम्बार ।

शब्दार्थ—डाँड=नाव खेने का बल्ला या बाँस । पतवार=नाव के पीछे की ओर लगी हुई लकड़ी का वह तिकोना भाग जो आधा जल में और आधा बाहर रहता है तथा जिसके द्वारा नाव को इधर-उधर घुमाया अथवा मोड़ा जा सकता है । तरल=चंचल ।

व्याख्या—इस भीषण जल प्रलय मे समस्त देव जाति विनष्ट हो गयी थी और देवताओ का एकमात्र वशज मनु ही शेष बच रहा था। अब मनु अपने जीवित बच रहने की कथा सुनाते हुए कह रहे है कि इस जल प्लावन मे सभी प्रकार के ऐश्वर्य समाप्त हो गए और मनु को एक ऐसी नौका मिली जिसमे कि बाढ के समय डाँड और पतवार भी नहीं लगा सकते थे, मनु उसी नौका पर बैठ गए और वह नौका चचल लहरो के बीच से होती हुई आगे की ओर बढने लगी। वह नौका पगली की भाँति इधर-उधर चक्कर काटती हुई आगे की ओर बढ रही थी और कभी तो वह ऊपर की ओर उठती और कभी नीचे की ओर चली जाती।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे ऐतिहासिकता है और पुराणो मे यह स्वीकार किया गया है कि एक नौका के सहारे ही जलप्लावन से आदि पुरुष बच सका था। साथ ही 'बहती पगली बारम्बार' प्रयोजनवती सारोपी गौण लक्षणा और मानवीकरण अलकार भी है।

लगते प्रबल · · ···· बनी वही।

शब्दार्थ—थपेडे=लहरो के धक्के। कातरता=व्याकुलता, विवशता। नियति=भाग्य। पथ बनी=मार्ग दिखाने वाली बन गयी।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि मै जिस नाव पर सवार था उस नाव पर रह-रह कर बार-बार लहरे भीषण आघात करती थीं और समुद्र के धूमिल तट का कही पता भी न चलता था। मनु का कहना है कि मेरे हृदय मे घोर निराशा सी व्याप्त होने लगी और मुख से व्याकुलता भी झलकने लगी परन्तु यह सोचकर कि अब तो मै भाग्य के ही अधीन हूँ, वे शान्त बैठे रहे और विश्व की वह नियामिका शक्ति ही पथ-प्रदर्शिका बनी।

टिप्पणी—यद्यपि 'नियति' से भाग्य का अभिप्राय ही ग्रहण किया जाता है पर अभिनव गुप्त ने अपने 'तत्रालोक' मे लिखा है कि 'नियतियोजना' धत्ते विशिष्टे कार्य-मडले। इस प्रकार नियति विश्व-भर का नियमन करती है और उसके शासन मे अखिल ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण कार्य चलता है। अन्य कई ग्रन्थो मे भी नियति को विश्व के सम्पूर्ण कार्यकलापो की योजना करने वाली शक्ति कहा गया है अत प्रसाद की 'कामायिनी' नियति 'भाग्य की केवल पर्यायवाची न होकर परब्रह्म की एक शक्ति है और वह समस्त ब्रह्माण्ड का नियमन एव शासन करने वाली है।

लहरें व्योम ... रचतीं ।

शब्दार्थ—व्योम=आकाश । चपलायें=बिजलियाँ । गरल जलद=जहर के समान विनाशकारी जल बरसाने वाला बादल । खडी झडी=तेज मूसलाधार वर्षा । ससृति=ससार ।

व्याख्या—प्रलयकालीन जलप्रवाह का वर्णन करते हुए मनु कह रहे हैं कि समुद्र मे ऊँची-ऊँची लहरें उठ रही थी और ऐसा जान पडता था कि मानो जब वे आकाश का चुम्बन कर रही हो । साथ ही हजारो बिजलियाँ आकाश मे नृत्य कर रही थी और प्रलयकारी बादल भी उमड-उमड कर बरस रहे थे तथा इस भीषण वर्षा को देखकर यही प्रतीत होता था कि यह ससार मानव प्राणियो का निवास स्थल न रहकर बूँदो का निवास लोक बन गया है अर्थात् चारो ओर वर्षा की बूँदे देख पडती थी ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे चित्र भाषा का प्रयोग हुआ है और लहरो के आकाश चूमने तथा चपलाओ के नाचने मे मानवीकरण अलकार की योजना हुई है ।

चपलायें ... रोती थीं ।

शब्दार्थ—जलधि विश्व=जलमय ससार । विराट बाडव ज्वाला=विशाल सागर के अन्दर रहने वाली तीव्र अग्नि ।

व्याख्या—मनु प्रलयकालीन वातावरण का वर्णन करते हुए कहते हैं कि उस विशाल फैले हुए सागर के जल पर आकाश मे चमकने वाली बिजलियो का प्रतिबिम्ब ऐसा जान पडता था । मानो कि समुद्र के अन्तर की अग्नि विभिन्न अशो मे विभाजित होकर रो रही हो ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि की नवोन्मेषशालिनी कल्पना शक्ति के दर्शन होते हैं और वस्तूत्प्रेक्षा अलकार का प्रयोग हुआ है ।

जलनिधि ... सुख पाते ।

शब्दार्थ—जलनिधि=सागर । तलवासी=निचले भाग मे रहने वाले । जलचर=जल के जीव जतु । विलोडित=मथित, खलबली से पूर्ण ।

व्याख्या—प्रलयकालीन भयकरता का वर्णन करते हुए मनु कह रहे हैं कि जल प्रलय मे ससार के भीतर निवास करने वाले जल जतु व्याकुल होकर ऊपर की ओर उतराने लगे थे और इस प्रकार जब जल से भीतर रहने वाले ही व्याकुल हो गए थे तब भला दूसरा और कौन एक क्षण को भी सुख पा

सकता था। कहने का अभिप्राय है कि कोई भी निवास स्थान उसी समय तक अपने निवासियों को सुख पहुँचा सकता है जब तक कि वह स्वयं सुरक्षित है अतः जब आज जलप्लावन के कारण स्वयं समुद्र ही क्षुब्ध हो उठा है तब वह दूसरों को शरण कहाँ से दे सकता है ?

टिप्पणी—अंतिम दो पंक्तियों में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

घनीभूत हो .... क्रुद्ध।

शब्दार्थ—घनीभूत=सघन, एक ही स्थान पर एकत्र होना। रुद्ध= रुकना। चेतना=ज्ञान, होश। बिलखाती=बेचैन, व्यथित। दृष्टि विफल होती=कुछ दिखाई न पड़ना। क्रुद्ध=क्षुब्ध, क्रोधित।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जो पवन अभी तक अत्यन्त वेग के साथ प्रवाहित हो रहा था वह भी अब जल प्रलय के कारण रुक-सा गया अर्थात् वायु एक ही स्थान पर एकत्र होने लगी और साँस लेना भी मुश्किल हो गया। इतना ही नहीं शरीर की समस्त चेतना भी शिथिल पड़ने लगी और इतना अधिक अंधकार हो गया कि नेत्र भी कुछ नहीं देख पाते थे।

टिप्पणी—वस्तुतः मनु की यह दशा स्वाभाविक ही प्रतीत होती है क्योंकि अंधकार पूर्ण प्रदेश में श्वास न चलना, दम घुटने लगना और दृष्टि से कुछ भी न दिखायी पड़ना स्वाभाविक ही है।

उस विराट् .... से जगते।

शब्दार्थ—आलोड़न=मथना, उथल-पुथल। बुदबुद=बुलबुले। प्रखर= तीव्र, भयंकर। ज्योतिरिंगण=जुगनू।

व्याख्या—प्रलयकालीन जल प्रवाह का वर्णन करते हुए मनु कह रहे हैं कि घोर हलचल के कारण, विशाल समुद्र के ऊपर चमकने वाले नक्षत्र और तारे कभी तो पानी के बुलबुलों के समान जान पड़ते और कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता था कि मानों उस प्रलयंकारी घोर वर्षा में जुगनुओं की भाँति इधर-उधर चमक रहे हों।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में उपमा अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

प्रहर दिवस .... पा सकता।

शब्दार्थ—प्रहर=तीन घंटे का समय। सूचक=संकेत करने वाले या बतलाने वाले। उपकरण=साधन।

व्याख्या—मनु प्रलयकालीन भयंकरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि

इस प्रकार की प्रलयकारी दशा को कितने पहर और कितने दिवस बीत गए, इसे कोई नही बता सकता था क्योकि घोर अधकार और वर्षा के कारण दिन और रात्रि के सूचक उपकरण सूर्य एव चन्द्र आदि का कुछ भी पता न था अत अब तक कितने दिन और कितनी राते व्यतीत हो गई हैं, यह जानना असभव ही था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काव्यलिंग अलकार है।

काला शासन ... . . मरण रहा।

शब्दार्थ—महामत्स्य=बडी मछली। चपेटा=धक्का, टक्कर। पोत—नौका।

व्याख्या—प्रलयकालीन भयकरता का वर्णन करते हुए मनु कहते हैं कि मृत्यु का वह क्रूरतापूर्ण साम्राज्य न जाने कब तक छाया रहा, ठीक-ठीक नही कहा जा सकता परन्तु इसी बीच अचानक ही एक दीर्घकाय मछली का आघात उस नाव पर लगा जिस पर मैं सवार था। मनु का कहना है कि उस बडी मछली का धक्का नाव पर लगने से उस समय तो यही डर था कि यह मेरी कमजोर नाव टूट कर कही चकनाचूर न हो जाय।

टिप्पणी—यहाँ 'दीन पोत मरण' मे मानवीकरण अलकार है।

किन्तु उसी . फिर से।

शब्दार्थ—उत्तर गिरि=हिमालय पर्वत। शिर=सबसे ऊँची चोटी। देव-सृष्टि का ध्वस=देव जाति का विनाश। श्वास लेने लगा=फिर से जीवित हो उठा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि यद्यपि बडी मछली के चपेटे मे मेरी नाव को बिना किसी सन्देह के अवश्य टूट जाना चाहिए था परन्तु ऐसा नही हुआ और नौका बच गयी। इतना अवश्य है कि वह आघात के कारण हिमालय की ऊँची चोटी पर पहुँच गयी और देवताओ का सम्पूर्ण वश नष्ट होते-होते बच गया।

टिप्पणी—अन्तिम दो पक्तियो मे प्रयोजनवती शुद्धा-लक्षण लक्षणा है और विरोधाभास अलकार है।

आज अमरता . .. . विष्कभ।

शब्दार्थ—अमरता=देव-जाति। जर्जर=बलहीन, तुच्छ। दम्भ=अहकार, गर्व। सर्ग=सृष्टि, अध्याय। विष्कम्भ=नाटक का वह दृश्य जिसमे

बीती हुई अथवा आगामी घटनाओ की सूचना किसी साधारण पात्र द्वारा दी जाती है।

व्याख्या—मनु को अब अपने आप पर ग्लानि हो रही है और उनका कहना है कि मैं उन्ही देवताओ का एकमात्र वशज बच रहा हूँ जो किसी समय अमरता के अभिमान मे फूले नही समाते थे। मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार नाटक के प्रथम अक का कोई पात्र विगत घटनाओ को दुहराता है उसी प्रकार अब वे भी देवताओ के विनाश की करुणापूर्ण कहानी सुनाने के लिए बच रहे हैं।

टिप्पणी—(१) कवि ने 'अमरता का भीषण जर्जर दम्भ' नामक उक्ति से यह सकेत करना चाहा है कि देवता अपनी अमरता के झूठे गर्व मे अपने को भूल गये थे, और यही झूठा गर्व देवताओ के विनाश का कारण बना।

(२) सस्कृत के नाट्याचार्यो ने विष्कम्भ की परिभाषा देते हुए कहा है कि विष्कम्भ देते हुए या आगामी कथाशो का सक्षेप मे दिग्दर्शन कराता है और यहाँ मनु देव जाति के पतन की कहानी सुना रहे है अत वे भी विष्कम्भ के पात्र-सदृश्य ही है।

(३) यहाँ 'भीषण जर्जर दम्भ' मे रूपक, 'सर्ग' मे श्लेष और' अधम पात्रमय सा विष्कम्भ मे उपमा अलकार है।

ओ जीवन .... अवसाद।

शब्दार्थ—मरु मरीचिका=मृग तृष्णा, भ्रम। अलस=आलस्यपूर्ण। विषाद=शोक, दुख। पुरातन=प्राचीन। अमृत=अमर, अमरता की भावना। अगतिमय=उन्नतिहीन, बुरी दशा वाला। मोहमुग्ध=मोहपूर्ण। जर्जर=दुर्बल, निर्बल। अवसाद=दुख, निराशा, शिथिलता।

व्याख्या—मनु का कहना है कि न केवल जीवन के समस्त सुख बल्कि स्वय जीवन ही मृग तृष्णा है और जीवन एक भुलावा तथा छल मात्र ही जान पडता है। मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार मरुभूमि मे तेज सूर्य रश्मियो की चमक से मृग को जल का भ्रम हो जाता है और वह उसी की आशा मे दूर दौडता चला जाता है उसी प्रकार मनुष्य जीवन मे भी सुख कही नही हैं और जिसे हम सुख समझते हैं वह केवल भ्रम मात्र है। वस्तुत मनु को अब अपने आप पर अत्यन्त ग्लानि हो रही है और वे स्वय को कायर आलसी और शोक-ग्रस्त समझते हैं तथा उनका कहना है कि अपने को अत्यन्त प्राचीन और अमर

समझने वाली देव जाति का वशज होते हुए भी उन्हे मोह ग्रस्त तथा दु खो से जर्जरित होना पड रहा है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु की मनोभावनाओ का सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है और 'पुरातन अमृत', 'मरु मरीचिका', 'अलस विषाद' एव 'जर्जर अवसाद' मे रूपक तथा 'अमृत के अगतिमय' मे विरोधाभास अलकार है। साथ ही अमरता की भावना के लिए मरीचिका एव विषाद आदि कहकर साभिप्राय विशेषणो का प्रयोग करने के कारण परिकर अलकार की योजना भी हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि ड्रमण्ड ने भी इसी प्रकार कहा है—

Because it erst was nought and it turns to nought

इस सम्बन्ध मे प्रसिद्ध कवि बाइरन की भी निम्नलिखित पक्तियाँ दर्शनीय हैं—

What then remains but that we still should cry
Not to be born or being born to die

मौन ! नाश ... = अब ठाँव।

शब्दार्थ—मौन=चुप रहना। विध्वस=विनाश, सब कुछ नष्ट हो जाना। अभाव=कमी। ठाँव=स्थान।

व्याख्या—मनु जो कुछ प्रत्यक्ष देखते हैं उसे ही सत्य समझते हैं और इस प्रकार उन्हे चारो ओर व्याप्त नीरवता, नाश, विध्वस, अन्धकार तथा सभी कुछ नष्ट हो जाने के कारण स्पष्ट दिखाई देने वाला यह अभाव आदि सब कुछ सत्य ही जान पडता है। साथ ही मनु का अब यही कहना है कि आज तक देवगण जो अमरत्व का दावा करते थे वह मिथ्या ही था क्योकि यदि वह वास्तविक होता तो फिर इस प्रलय मे वे नष्ट क्यो हो जाते। अतएव मनु महानाश को सत्य समझते हैं और इस अभाव को भी सत्य मानते हैं जो कि आज शून्य बनकर सर्वत्र दिखाई दे रहा है। साथ ही वे यही कहते हैं कि अरी अमरते, अब तेरे लिए यहाँ कोई स्थान नही है।

टिप्पणी—वस्तुत प्रत्यक्ष मे ही यथार्थता का बोध होता है अत मनु भी अब स्वाभाविक ही इस जल प्लावन के कारण परिवर्तित प्राकृतिक दशाओ को सत्य समझते हैं। इस प्रकार इन पक्तियो मे मनु की विषादपूर्ण अवस्था का सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।

मृत्यु अरी .... हलचल ।

शब्दार्थ—चिर निद्रा=सदैव को सुलाने वाली । अंक=गोद । हिमानी =हिमराशि या बर्फ का ढेर । शीतल=ठंडी, शांतिदायिनी । अनन्त= व्यापक, सम्पूर्ण ब्रह्मांड । लहरी बनाती=क्रमश: विनाश कार्य करती रहती है ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मृत्यु न जाने कितने प्राणियों को हमेशा के लिए इस जीवन से छुटकारा दिला देती है और उसकी गोद बर्फ के समान शीतल है अत: जो कोई भी मृत्यु की गोद में आता है। वह चेतनाहीन हो जाता है । जिस प्रकार सागर में हलचल होने पर लहरें उठने लगती हैं उसी प्रकार मृत्यु भी इस संसार रूपी समुद्र में भयंकर हलचल उत्पन्न करती है और असंख्य प्राणियों का प्राण ले लेती है । इसका अभिप्राय यह है कि नित्य प्रति न जाने कितने प्राणी मृत्यु को प्राप्त होते हैं ।

टिप्पणी—वस्तुत: मृत्यु चिर निद्रा का ही पर्याय है और उसकी अंकशय्या हिम राशि की वह शीतल सेज है जहाँ चैतन्य विहीन प्राणी सर्वदा के लिए विजड़ित होकर सो जाता है । इसीलिए कवि का कहना है कि जिस प्रकार सागर में उद्वेलन होने से लहरें उत्पन्न होती हैं और वे उस समुद्र को क्षुब्ध कर देती हैं उसी प्रकार मृत्यु भी इस विराट विश्व में अपने आगमन से एक प्रकार का उद्वेलन और हलचल पैदा कर देती है ।

(२) यहाँ 'चिर निद्रा' एवं 'काल जलधि' में रूपक अंलकार है और 'हिमानी सा शीतल' में पूर्णोपमा है तथा 'अनन्त' में श्लेष है ।

महानृत्य का .... अभिशाप ।

शब्दार्थ—महानृत्य=विनाशकारी तांडव नृत्य । सम=संगीत में वह स्थान जहाँ लय की समाप्ति और ताल का आरम्भ होता है। अखिल= सम्पूर्ण, समस्त । स्पंदन=गतिशीलता । माप=सीमा । विभूति=ऐश्वर्य, धूल या राख । अभिशाप=शाप ।

व्याख्या—वस्तुत: संगीत और नृत्य में सम एवं विषम नामक दो अवस्थाएँ होती हैं और जब नर्तक या नर्तकी के चरणों का पूरा दबाव पृथ्वी पर पड़ता है तब 'सम' दशा होती है। इस प्रकार मनु ने यहाँ मृत्यु को एक ऐसी नर्तकी कहा है जो कि महानृत्य में लीन है और जब-जब वह 'सम' ताल पर धरती को अपने चरणों से दबाती है तब जहाँ कहीं भी उसके चरणों का दबाव पड़ता है वहीं की वस्तु नष्ट हो जाती है । अर्थात् वह प्राणियों को

प्राणो से रहित कर देती है। मृत्यु मनुष्य की समस्त चेतना का अन्त करने वाली है और उसका आगमन इतना अहितकारी है कि वह आते ही सृष्टि का नाश करने लग जाती है परन्तु इतना होते हुए भी उसका यह महत्व है कि उसी के कारण सृष्टि का नवीन रूप भी विकसित होता है। इस प्रकार मृत्यु के अहितकारी और उज्ज्वल दोनो ही पक्ष होते है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे नृत्य की पारिभाषिक शब्दावली मे मृत्यु का स्वरूप उपस्थित किया गया है और इसे कवि की सूक्ष्म कल्पना ही समझना चाहिए। यहाँ यह स्मरणीय है कि नृत्य मे जब नर्तकी नाचते-नाचते एक साथ प्रबल वेग से चरणो को पृथ्वी पर पटक कर रुक जाती है तब वह स्थिति सम कहलाती है और महानृत्य अर्थात् मृत्युकालीन नृत्य की समस्थिति ही मृत्यु है। वस्तुत यह कल्पना सूक्ष्म होने के साथ-साथ एक विशेष कला से गृहीत भी हुई है और मृत्यु को अखिल स्पन्दनो की माप कहना भी समीचीन है। स्पन्दन शब्द जीवन या चेतना का द्योतक है और मृत्यु समस्त चैतन्य की माप को समाप्त करने वाली है।

(२) यहाँ 'विषम सम' मे विरोधाभास और विभूति मे श्लेष अलकार है तथा मृत्यु को 'विषम-सम' और 'माप' कह कर रूपक अलकार की भी योजना की गयी है।

अधकार के • है नित्य।

शब्दार्थ—अट्टहास=जोर की हँसी। मुखरित=ध्वनित। सतत=लगातार, निरतर। चिरतन=सनातन, सर्वकालीन। नित्य=हमेशा रहने वाला।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार घोर अधकार मे यदि कोई व्यक्ति जोर से हँसे तो उसका वह हँसना तो सुनाई देता है परन्तु हम उस हँसने वाले को नही देख सकते उसी प्रकार मृत्यु का आकार तो दिखाई नही देता लेकिन उसके विनाशकारी कर्म स्पष्ट रूप मे दीख पडते हैं। इस प्रकार मृत्यु एक चिरतन सत्य है और वह हमेशा विद्यमान रहती है तथा सृष्टि के प्रत्येक कण मे निहित है अर्थात ससार की प्रत्येक वस्तु नाशवान है।

टिप्पणी—(१) कुछ व्याख्याकार लक्षणा के सहारे 'अधकार के अट्टहास सी' का अर्थ अधकार की अधिक व्यापकता से ग्रहण कर कहते हैं कि मृत्यु सर्वत्र व्याप्त सघन अधकार के समान है।

(२) इन पक्तियो मे उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—'अध्यात्म रामायण' में भी मृत्यु की नित्यता और अनिवार्यता का निरूपण करते हुए कहा गया है—

जन्मवान यदि लोकेऽस्मिंस्तर्हि तं मृत्युरन्वगात् ।
तस्मादपरिहार्योऽयं मृत्युर्जन्मवतां सदा ॥

जीवन तेरा .... उजाला में ।

शब्दार्थ—क्षुद्र=तुच्छ । अंश=भाग । व्यक्त=प्रकट, प्रत्यक्ष । नील घनमाला=नीले बादलों की घटाएँ । सौदामिनी=बिजली । संधि=दरार ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जीवन तो वास्तव में मृत्यु का एक छोटा-सा अंश है और जिस प्रकार नीले आकाश में बादलों के मध्य बिजली क्षण भर के लिए चमक कर फिर उसी में लुप्त हो जाती है उसी प्रकार मानव जीवन भी उस सुन्दर प्रकाश के समान कुछ समय तक ही प्रकाशयुक्त रह पाता है और बाद में वह मृत्यु में ही विलीन हो जाता है। इस प्रकार यहाँ मृत्यु की व्यापकता और जीवन की लघुता का चित्रण किया गया है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने जीवन की सार्थकता का आभास देने के लिए प्राकृतिक दृश्य प्रस्तुत किया है और उसका कहना है कि वर्षा काल में जिस प्रकार नील वारिद खंडों में बिजली क्षण भर के लिए अपनी प्रकाश रेखा फैलाकर लुप्त हो जाती है वही दशा मृत्यु रूपी व्यापक मेघमाला में जीवन विद्युत की होती है। साथ ही यहाँ पूर्णोपमा अलंकार भी है।

तुलनात्मक दृष्टि—जीवन की क्षण भंगुरता के सम्बन्ध में 'अध्यात्म रामायण' में भी कहा गया है—

ब्रह्मांडकोटयो नष्टाः सृष्टयो बहुशो गताः ।
शुष्यन्ति सागराः सर्वे कैवास्था क्षणजीविते ।
चलपत्रान्तलग्नाम्बु बिन्दुवत् क्षणभंगुरम् ।

पवन पी रहा .... पास ।

शब्दार्थ—पवन पी रहा=वायु में शब्द विलीन हो रहे थे। निर्जनता की उखड़ी साँस=नीरवता समाप्त हो रही थी। दीन प्रतिध्वनि=विवशता या लाचारी से पूर्ण आवाज ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के मुख से निकले हुए उपर्युक्त शब्द वायु मंडल में गूँज रहे थे परन्तु उन्हें सुनने वाला कोई भी न था। यह अवश्य है कि उनकी ध्वनि से चारों ओर सूनापन दूर हो गया था क्योंकि

ये शब्द जब हिम शिलाओ से टकराते थे तब एक करुणा प्रतिध्वनि सी वहाँ गूँज उठती थी ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार है ।

घू घू करता . मृत्यु ।

शब्दार्थ—घू घु करता= धू धू की विनाशकारी ध्वनि करता हुआ । अनासीत्व—विध्वस, सब कुछ मिट जाना । ताडव नृत्य= विनाशकारी कार्य । विद्युत्कण=अणु परमाणु आदि । भारवती=बोझा ढोने वाले । भृत्य=सेवक नौकर ।

व्याख्या—वस्तुत अब सब कुछ नष्ट हो चुका था परन्तु विनाश का ताडव नृत्य अभी भी हो रहा था । साथ ही विद्युत के परमाणुओ मे भी आकर्षण शक्ति नही थी और वे शून्य मे इधर से उधर उसी प्रकार चक्कर काट रहे थे जिस प्रकार कि बोझा ढोने वाला नौकर बोझा लादे हुए इधर-उधर फिरता है ।

टिप्पणी—आधुनिक विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि सभी वस्तुएँ परमाणुओ के सयोग से निर्मित हैं और परमाणु बिजली के कणो (Electrons) के मिलने से बनते है । प्रलय और नाश की अवस्था मे विद्युत के ये कण पृथक्-पृथक् हो जाते हैं । इस प्रकार इन पक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रसाद जी को विज्ञान की सूक्ष्मताओ का भी पूर्ण ज्ञान था । साथ ही यहाँ रूपक अलकार का प्रयोग हुआ है ।

मृत्यु सदृश्य . थी वृष्टि ।

शब्दार्थ—शीतल=अवसादपूर्ण । परम व्योम=विशाल आकाश । भौतिक=स्थूल । कुहासा=कुहरा । वृष्टि=वर्षा ।

व्याख्या—वस्तुत मृत्यु के कारण उत्पन्न होने वाली अवसादपूर्ण निराशा ही चारो ओर देख पड रही थी और जिस प्रकार आकाश से छोटे-छोटे स्थूल कण बरसते है उसी प्रकार चारो ओर कुहरा बरस रहा था । वास्तव मे आलिंगन से कवि का अभिप्राय यहाँ एक वस्तु द्वारा दूसरी वस्तु को पूर्ण रूप से स्पर्श करना ही है और इस प्रकार दृष्टि भी निराशा ही निराशा देख पाती थी । कहने का अभिप्राय यह है कि चारो ओर घना कुहरा छा गया था और विशाल आकाश मे धरती पर जल के स्थूल कणो की भाँति कुहरे की वर्षा हो रही थी ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में उपमा अलंकार है और 'आलिंगन पाती थी दृष्टि' में प्रयोजनवती शुद्धा लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति है।

वाष्प बना .. .... होता प्रात।

शब्दार्थ—वाष्प=भाप। अति भैरव=अत्यन्त भयंकर। जल संघात=जल राशि। सौर चक्र=ग्रह-उपग्रहों का मंडल। आवर्त्तन=चक्कर लगाना। प्रलय निशा=सृष्टि का विनाश करने वाला घना अंधकार।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि आकाश से गिरने वाली कुहरों की परतों को देखकर कभी-कभी यह संदेह भी होने लगता था कि कहीं यह भीषण जल-राशि ही तो भाप बनकर नहीं उड़ी जा रही है और इसीलिए चारों ओर कुहरा दृष्टिगोचर हो रहा था। इधर अब मंगल, चन्द्र, सूर्य और ग्रह-उपग्रह भी अपनी पूर्व गति के अनुसार आकाश में चक्कर लगाने लगे थे और प्रलय रूपी रात्रि के अंत तथा प्रभात की सुन्दर वेला के उदय की आशा हो चली थी।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में रूपक अलंकार है और 'प्रलय निशा का होता प्रात' में प्रयोजनवती शुद्धा उपादान लक्षणा है।

दूसरा सर्ग

आशा

कथानक—'कामायनी' के प्रथम सर्ग 'चिन्ता' के अन्त में प्रातःकाल के आगमन का संकेत है और 'कामायनी' का दूसरा सर्ग 'आशा' उषा के वर्णन से आरंभ होता है। इस प्रकार पराजित काल रात्रि समाप्त हो जाती है और जयलक्ष्मी सी सुनहली उषा का आगमन होता है। साथ ही त्रस्त प्रकृति के विवर्ण मुखड़े पर पुनः हंसी आ गई और हिम जटिल शिखर कोमल प्रकाश में चमकने लगे। सुनहली धूप फैल गई और हिम खंडों के गलने से जल से धुली वनस्पतियाँ साफ-साफ दिन में दिखाई देने लगीं और ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो समस्त प्रकृति सोने के बाद उठकर प्रबुद्ध हो रही हो। इसके बावजूद पृथ्वी का बहुत ही थोड़ा सा भाग जल के बाहर हुआ।

अब उस सुन्दर प्राकृतिक एकान्त प्रदेश में मनु का मस्तिष्क भी सजग हो उठा और उन्हें वह जिज्ञासा सी होने लगी कि आखिर ये सूर्य, चन्द्र,

'पवन, वरुण आदि किसकी इच्छा से अपना कार्य कर रहे हैं और किसके क्रोध ये प्राकृतिक शक्ति चिह्न विवर्ण पड गये है। वे सोचने लगे कि हम भले ही अपनी शक्ति पर थोडी देर के लिए गर्व कर ले अन्यथा हम सभी परिवर्तन के पुतले है। मनु विचार कर रहे है कि इन महानील विराट् आकाश चक्र मे ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण किसे खोजते फिर रहे हैं तथा यह कौन है जिसका अस्तित्व सभी मौन होकर स्वीकार करते हैं ?

शनै शनै सृष्टि से मनु का सम्बन्ध स्थापित सा होने लगता है और उनसे हृदय मे आशा उत्पन्न होती है तथा जीवन की पुकार भी पुन उनके अतरतम मे उठने लगती है। अपने अस्तित्व की भावना से वे यह सोचने लगती हैं कि जीवन धारा तो कभी छिन्न-भिन्न होने वाली नही हैं और लालसा क्यो इतनी प्रवल होती जा रही है तथा यह जीवन किसकी सत्ता को इतनी प्रबलता से स्थापित करता है।

मनु उस हिम खड से उठकर थोडी दूर नीचे एक अत्यन्त स्वच्छ गुफा मे अपना निवास स्थान बनाते हैं। उस गुफा के पास ही सागर लहराता था। अब मनु का अग्निहोत्र निरतर चलने लगता है और वे तप-साधना मे ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। रह-रह कर वे यह भी सोचते है कि जिस प्रकार मैं बच गया सभवत उसी प्रकार कोई और भी बच सकता है। अतएव वे अग्निहोत्र का थोडा सा अन्न कुछ दूर पर उस सभावित अपरिचित व्यक्ति के लिए रख आते है। उनकी यह क्रिया चलती रहती है और अब उनकी वह उन्मत्तता भी दूर हो चुकी थी जो कि जल-प्रलय के पश्चात उनमे दीख पडती थी तथा उसके स्थान मे सहानुभूति का भाव जाग्रत हो रहा था।

मनु अग्निहोत्र के सामने बैठे-बैठे ही निरतर मनन किया करते और रह-रह कर उनका मन अशात एव अस्थिर हो जाता। उनके मन मे नित्य नवीन जिज्ञासायें उत्पन्न हो और नवीन प्रश्न उठते परन्तु उत्तर कुछ भी नही सूझता था। इतना होते हुए भी अपने अस्तित्व की रक्षा मे वे अपने जीवन को व्यस्त बनाए रखते और नियमित रूप से अपना कार्य करते। शनै शनै उनका कर्मक्षेत्र विस्तृत होने लगा और नियति के शासन से बाध्य हो उन्हें जीवन-पथ पर चलने के लिए अग्रसर होना पडा।

चाँदनी रात का आगमन हुआ और शीतल, मद समीर प्रवाहित होने

लगी। उस प्राकृतिक एकात मे अपने कर्म मे लीन मनु मे न जाने किस अतीन्द्रिय स्वप्नलोक का रहस्य बार-बार उलझने लगा। उनके हृदय मे एक प्रकार की पिपासा व अनादि वासना मधुर प्राकृतिक बुभुक्षा की भाँति जाग्रत होने लगी और उन्हे यह अकेलापन दुखदायी प्रतीत हुआ तथा वे किसी चिर परिचित की अभिलाषा करने लगे। इस प्रकार तप और सयम से सचित बल व्याकुल हो उठा और उन्हे रिक्तता की अनुभूति होने लगी। सवेदनशील मनु का विकल मन कुछ विस्मृत सी वह वस्तु खोजने लगा जो युगो से उनके जीवन से सम्बन्ध रखती है।

शब्दार्थ—सुनहले तीरो=सुनहले ती ो के समान किरणे। जय लक्ष्मी=विजयश्री। कालरात्रि=प्रलयकालीन घोर रात्रि। अन्तर्निहित हुई=छिप गई।

व्याख्या—कवि ने इन पक्तियो मे सक्षेप मे ही युद्ध का पूर्ण चित्र अकित किया है और इस युद्ध करने वालो मे एक ओर तो प्रलय कालीन रात्रि है तथा दूसरी ओर उपा है। इस युद्ध मे उषा ने स्वर्णिम किरणो रूपी तीरो को बरसा कर प्रलय रात्रि को इतना अधिक विचलित कर दिया कि अन्त मे उसे पराजय ही स्वीकार करनी पडी और वह जल मे ही समा गयी तथा उपा साक्षात लक्ष्मी ही जान पडने लगी।

टिप्पणी—(१) कवि ने इस छन्द में व्यजना शक्ति की सहायता से उपा और प्रलयकालीन रात्रि मे परस्पर युद्ध का भावग्राही चित्रण किया है।

(२) यहाँ 'जय लक्ष्मी सी' मे उपमा अलकार है और 'उषा सुनहले तीर बरसती' मे प्रयोजनवती साध्यवसाना गौणी लक्षणा है।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद मे भी सर्वत्र फैले हुए अन्धकार को हटाते हुए एक दैदीप्यमान देवी के सदृश्य उपा को ज्योतिपूर्ण आभा के साथ उदित होते हुए अकित किया गया है।

इदमुत्यपुरुतम पुरु पुरस्ताज् ज्योतिस्तमसो वायुनावदस्थात्।
नून दिवो दुहितरो विभातीर गातु कृणवन्नुपसो जनाय॥

वह विवर्ण .... .. सिर से।

शब्दार्थ—विवर्ण=शोभाहीन। त्रस्त=भयभीत। शरद विकास=शरद् ऋतु का आगमन। नए सिर से=नवीन ढग से।

व्याख्या—प्रलय के कारण प्रकृति का जो मुखडा भयातुर और कातिहीन जान पड़ता था आज वह पुन. उसी प्रकार मुस्करा उठा जिस प्रकार कि वर्षा

के समाप्त होने पर शरद् ऋतु के आते ही ससार मे चारो ओर आनन्द छा जाता है।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे 'वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का' मे प्रयोजनवती शुद्धा साध्यवसाना लक्षण-लक्षणा है और सम्पूर्ण छन्द मे मानवीकरण अलकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

नव कोमल .. . . पिंग पराग।

शब्दार्थ—नव कोमल आलोक=प्रभातकालीन नवीन एव सौम्य प्रकाश। हिम ससृति=वर्फ का ससार, वर्फीला प्रदेश। सित=सफेद। अनुराग=प्रेम। सरोज=कमल। पिङ्ग=पीला।

व्याख्या—उषा का आगमन होने पर उस वर्फीले प्रदेश पर सूर्य रश्मियो का नवीन प्रकाश प्रेम पूर्वक इस प्रकार फैलने लगा मानो कि सफेद कमल पर मकरन्दपूर्ण पीला पराग विखर गया हो।

टिप्पणी—वस्तुत यहाँ हिमराशि के लिए सफेद कमल, सुनहले प्रकाश के लिए पीले पराग और अनुराग के लिए मकरन्द नामक शब्दो का प्रयोग कर उपमालकार की सुन्दर योजना की गयी है। यहाँ यह स्मरणीय है कि जल प्रलय के कारण काफी समय वाद सूर्य उदय हुआ है अत उसके प्रकाश को नवीन और कोमल कहना स्वाभाविक ही है। इस प्रकार श्री गगाप्रसाद ने इन पक्तियो के सम्बन्ध मे उचित ही कहा है 'वालारुण किरणो की उपमा कवि ने पीले पराग से देकर कितना सुन्दर निर्वाह किया है। इसमे उपमान तथा उपमेय के वचन तथा लिग तक का ध्यान रखा गया है अत इसका चमत्कार और भी वढ गया है।'

धीरे-धीरे .. .... जल से।

शब्दार्थ—हिम आच्छादन=वर्फ की परत या तह। धरातल=पृथ्वीतल। अलसाई=आलस्ययुक्त।

व्याख्या—पृथ्वी पर जो बर्फ की तहे जमी हुई थी वे भी अव शनै-शनै गलकर लुप्त होने लगी और उनके नीचे दवे हुए पेड पौधे पुन वाहर स्पष्ट होने लगे तथा कुछ जल से भीगी हुई वनस्पतियो को देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो वे जागने पर अव शीतल जल से अपना मुख धोकर आलस्य दूर कर रही हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने प्रकृति मे सर्वत्र चेतनता के दर्शन

किए हैं अत मानवीकरण अलकार की योजना हुई है और जड प्रकृति में चेतनता का आरोप करने के फलस्वरूप उपचार वक्रता की भी अभिव्यक्ति हुई है।

नेत्र निमीलन ... ... जाती सोने।

शब्दार्थ—निमीलन = पलको का खोलना-बन्द करना। प्रबुद्ध = सचेत। लहरियो की अँगडाई = लहरो का ऊँचा उठना।

व्याख्या—इन पक्तियो मे किसी नवविवाहिता रमणी के प्रात काल सोकर उठने का रूपक अकित करते हुए प्रकृति सौन्दर्य की झाँकी अकित की गयी है। इस प्रकार कवि का कहना है कि जिस प्रकार पूर्ण रूप से जागने से पहले कामिनी अपनी सुकुमार पलकें खोलती और वन्द करती है उसी प्रकार प्राकृतिक वस्तुएँ अब पहले तो शनै-शनै उत्पन्न हुई और तत्पश्चात् पूर्णत. विकसित होने लगी। अतएव प्रकृति मे भी अब चेतनता सी आ गयी और समुद्र की लहर अब आलस्य पूर्ण अगडाई लेकर सोने लगी अर्थात् सागर की लहरें अब शात हो गयी।

टिप्पणी—यह छन्द मानवीकरण का सुन्दर उदाहरण है और हमे इसमे कवि की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचय भी मिलता है। साथ ही 'नेत्र निमीलन करती मानो प्रकृति प्रबुद्ध लगी होने' मे उत्प्रेक्षा और 'जलधि लहरियो की अँगडाई बार-बार जाती सोने' में विशेषण विपर्यय अलकार है तथा इस पक्ति में जतत्स्वार्था लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति भी है।

सिन्धु सेज ... ... ऐंठी सी।

शब्दार्थ—सिन्धु = सागर, समुद्र। सेज = शैय्या। धरा = पृथ्वी, धरती। वधू = बहू या दुलहिन। सकुचित = सिकुडी हुई। मान किये = रूठी हुई। ऐंठी = अकडी हुई।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जल प्रलय कम हो जाने के कारण उस भीषण जल राशि से थोडी सी पृथ्वी भी बाहर निकल आयी थी और वह ऐसी प्रतीत होती थी मानो कि समुद्र रूपी सेज पर पृथ्वी रूपी नववधू सिकुडी हुई बैठी हो। वस्तुत धरती पर का जल जब अचानक ही हट जाता है तब जो भू भाग देख पडता है उनमे सिकुडने सी पड जाती हैं और नववधुएँ भी लज्जा के कारण कुछ सिकुड कर ही बैठती हैं अत यहां पृथ्वी की उपमा नव वधू से उचित ही दी गयी है। साथ ही जिस प्रकार कोई नवविवाहिता पूर्व

रात्रि मे प्रियतम द्वारा किए किमी व्यवहार के कारण स्वाभाविक ही लज्जा-वश ऐंठ मे आकर मान करने लगती है उसी प्रकार पृथ्वी रूपी वधू भी प्रलयकालीन रात्रि की हलचलो को स्मरण कर रूठी हुई सी जान पडती है ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो को मानवीकरण का श्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है और कवि ने यहाँ व्यजना द्वारा प्रथम मिलन रात्रि के पश्चात् प्रात काल शय्या पर बैठी हुई वधू का वर्णन किया है जो कि रात्रि के मिलन की हलचल के बाद कुछ क्षुब्ध सी और मान मे भरी बैठी है ।

(२) यहाँ रूपक और समासोक्ति अलकार हैं ।

देखा मनु जडता सा श्रान्त ।

शब्दार्थ—अतिरजित=अत्यत सुन्दर । विजन=निर्जन । नवएकान्त=नवीन नीरवता । श्रान्त=थका हुआ ।

व्याख्या—मनु ने उस जन हीन, नवीन, मनोहर, एकान्त स्थान को देखा और वहाँ की नीरवता देखकर उन्हे ऐमा प्रतीत हुआ मानो कि सारा कोलाहल ही शीतल बर्फ से ठिठुर कर जड हो गया हो तथा वही कही थककर सो रहा हो और चारो ओर शान्ति छा गयी हो ।

टिप्पणी—अन्तिम दो पक्तियो मे क्रमश हेतूत्प्रेक्षा और उपमा अलकार है तथा सपूर्ण छन्द मे प्रयोजनवती गौणी लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति है ।

इन्द्रनील मणि • • गया खटका ।

शब्दार्थ—इन्द्रनील मणि=नीले रग का एक प्रसिद्ध रत्न नीलम पर यहाँ नीले आकाश से अभिप्राय है। महाचषक=बडा प्याला। सोम=चन्द्रमा, रस।

व्याख्या—प्रात कालीन चन्द्रमा रहित नीला आकाश ऐसा जान पडता था । मानो कि जैसे किसी ने नीलम के किसी बहुत बडे प्याले को, जिसका कि सोम रस खाली कर दिया गया हो, उल्टा लटका दिया है । साथ ही जिस प्रकार आसन्न विपत्ति के टल जाने पर मनुष्य सुख की साँस लेने लगता है उसी प्रकार प्रलयकालीन भयानक वातावरण के समाप्त हो जाने के कारण पवन भी निश्चितता के साथ साँस लेने लगा अर्थात् वायु मथर गति से चारो ओर बहने लगी ।

टिप्पणी—प्रथम दो पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति और शेष पक्तियो मे हेतूत्प्रेक्षा अलकार है तथा वायु के मृदु साँस लेने मे मानवीकरण अलकार और लक्षण-लक्षणा भी है ।

वह विराट .... का था राज ।

शब्दार्थ—विराट=महान, सर्वज्ञ व्यापक शक्ति । हेम=सुनहरी रग ।। कुतूहल=आश्चर्य । राज=विस्तार ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सुख और शान्ति का अवसर देखकर उस महान शक्ति अर्थात् भगवान ने पृथ्वी को नवीन रग से अनुरंजित करने के लिए अर्थात् सृष्टि मे आनन्द का सचार करने के हेतु सुनहली उषा के रूप मे सुनहरा रग घोलना प्रारम्भ किया । इसका अभिप्राय यह है कि सम्पूर्ण सृष्टि सूर्य के प्रकाश से जगमगा उठी । इस प्रकार मनु ने जब यह दृश्य देखा तो अचानक उनके हृदय मे यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि प्रकृति मे इतनी नवीनता और मादकता लाने वाली यह कौन सी विराट सत्ता है तथा इस प्रश्न के उठते ही उनके हृदय मे कौतूहल की वृद्धि होने लगी ।

टिप्पणी—यहाँ पहली दो पक्तियो मे फलोत्प्रेक्षा अलकार है ।

विश्व देव ... . अम्लान ।

शब्दार्थ—सविता—सूर्य । पूषा=एक देवता । मरुत=वायु, पवन । पवमान=आँधी । अम्लान=प्रसन्न होकर ।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि आखिर वह कौन सी शक्ति है जिसके कि कभी भग न होने वाले शासन मे विश्वदेव, सूर्य, पूषा, पवन, आँधी और वरुण आदि सभी देवता बिना विश्राम किए ही निरतर चक्कर काट रहे है अर्थात् अपना सारा कार्य कर रहे हैं ।

टिप्पणी—यहाँ प्रथम तुल्योगिता अलकार है ।

किसका था .... निबल रहे ।

शब्दार्थ—भ्रूभग=भौहे टेढी करना । प्रकृति के शक्तिचिन्ह=प्राकृतिक शक्तियो के प्रतीक ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि आखिर वह कौन-सी शक्ति है जिसके कि जरा सी भौंह टेढी करने पर अर्थात् क्रुद्ध होने पर प्रलय मच गई और सभी घबडा उठे । अभी तक तो ये देवता प्राकृतिक शक्ति कहे जाते थे अर्थात् ये प्रकृति को क्रियाशील बनाते थे लेकिन अब ये ही उस विराट् शक्ति के सामने असहाय और दुर्बल सिद्ध हो चुके है । कहने का अभिप्राय यह है कि सूर्य, चन्द्र, पूषा, पवन और वरुण आदि शक्तियो से वह विराट् शक्ति अधिक शक्तिवान है ।

टिप्पणी—यहाँ 'भ्रूभग प्रलय सी' मे उपमा अलकार है और अन्तिम दो पक्तियो मे विरोधाभास अलकार है।

विकल हुआ · निरुपाय।

शब्दार्थ—सकल भूत चेतन समुदाय=ससार के सभी चेतन प्राणी। निरुपाय=जिनके पास कोई उपाय न हो।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि इस भयकर प्रलय के समय क्या जड और क्या चेतन—सभी विकल होकर काँप उठे तथा उनकी दशा अत्यधिक शोचनीय हो गई और वे विवश एव निरुपाय से हो गये अर्थात् उनसे कुछ भी करते धरते न बना।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे विराट् शक्ति को सर्वोपरि सिद्ध करते हुए देव सृष्टि के विनाश अर्थात् भयकर जल प्रलय का कारण उस विराट् को ही माना गया है।

देव न थे · ··· जुते।

शब्दार्थ—गर्व=अहकार। तुरग=घोडा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि वास्तविकता तो यह है कि न तो ये सूर्य, चन्द्र और वरुण आदि प्राकृतिक शक्तियाँ ही देवता थी और न वे स्वय और उनके पूर्वज ही देवता थे बल्कि वे सभी परिवर्तन के पुतले थे। कहने का अभिप्राय यह है कि वे सब परिवर्तन के आधीन थे, अर्थात् परिवर्तनशील थे और इस तरह जिस प्रकार रथ को खीचने वाला घोडा यदि यह समझकर कि रथ उसी की इच्छा से चल रहा है अपने आप पर अभिमान कर बैठे उसी प्रकार उन्होने भी अर्थात् मनु आदि देवताओ ने अहकार वश यह समझ लिया था कि यह ससार उन्ही की इच्छा पर निर्भर है परन्तु वास्तविकता तो यह है कि रथ मे जुते हुए घोडो को जिस तरह चाबुक चलाता है उसी तरह उन सबको भी वह विराट् शक्ति कार्यरत करती है। इस प्रकार यथार्थरूप मे तो वह महान् शक्ति ही देवता है क्योकि उसी के इच्छानुसार कार्य करना पडता है।

टिप्पणी—यहाँ अन्तिम दो पक्तियो मे रूपक और उपमा का सकर है।

महानील · सधान।

शब्दार्थ—व्योम=आकाश। ज्योतिर्मान=प्रकाश से युक्त। ग्रह=चन्द्र, मगल आदि। नक्षत्र=अश्विनी, भरिणी आदि छोटे तारे। सधान=खोज, तलाश।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि वह कौन-सी ऐसी विराट् शक्ति है जिसकी खोज करने के लिए महाकाश और अन्तरिक्ष में सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह और अन्य असंख्य तारे तथा अणु-परमाणु आदि प्रकाश से युक्त होकर घूमते रहते हैं।

टिप्पणी—यहाँ हेतूत्प्रेक्षा अलंकार है।

छिप जाते .... सिंचे हुए।

शब्दार्थ—तृण=घास। वीरुध=लता, पौधे आदि।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि न जाने वह कौन-सी विराट् शक्ति है जिसके आकर्षण के कारण ये ग्रह और नक्षत्र आदि कभी तो छिप जाते हैं और कभी निकलकर चमकने लगते हैं। वस्तुतः मनु के कथन का अभिप्राय यह है कि ये सभी ग्रह, नक्षत्र आदि उस विराठ् सत्ता को खोजते हुए कभी तो अदृश्य हो जाते हैं पर उन्हें फिर से उसे खोजने के लिए आना पड़ता है और यही कारण है कि वे बार-बार अस्त होने तथा उदय होते हैं। मनु पुनः कहते हैं कि वह कौन-सी शक्ति है जिसके रस से सिंचित होकर ये पेड़ पौधे लहलहा रहे हैं और इस प्रकृति को हरी भरी करने का श्रेय किसे है?

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने आधुनिक वैज्ञानिकों के 'गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त' की ओर संकेत किया है।

सिर नीचा .... अस्तित्व कहाँ।

शब्दार्थ—सत्ता=शासन, शक्ति। प्रवचन=गुणगान करना। अस्तित्व=विद्यमानता।

व्याख्या—मनु का कहना है कि वह कौन-सी विराट् शक्ति है जिसकी कि आधीनता सभी ने स्वीकार कर ली है और मूक भाव से उसकी महिमा का गुण-गान किया है। मनु कह रहे है कि उस सत्ता का अस्तित्व कहाँ है जिसकी अनन्त महिमा का गुण-गान संसार के सभी पदार्थ हमेशा मौन होकर निरन्तर किया करते हैं?

टिप्पणी—यहाँ 'मौन हो प्रवचन करते' में विरोधाभास अलंकार है।

हे अनन्त रमणीय .... सह सकता।

शब्दार्थ—अनंत रमणीय=अपार सौन्दर्यशाली। विचार भार न सह सकता=इस बात पर विचार नहीं हो सकता।

व्याख्या—मनु का कहना है कि उनमें स्वयं इतनी शक्ति नहीं है कि वे

यह बता सकें कि वास्तव मे वह अत्यन्त मनोहर शक्ति कौन है और वे यह भी नहीं जानते कि आखिर उस विराट् शक्ति का स्वरूप किस प्रकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—इन पंक्तियों मे कवि ने उस विराट् शक्ति का वर्णन उसी प्रकार किया है जिस प्रकार उपनिषदो मे आत्मा का वर्णन मिलता है। कठोपनिषद् की यह पंक्ति दर्शनीय है—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।

हे विराट् .. .. सागर गान।

शब्दार्थ—भान=प्रतीत, ज्ञात।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि इस सम्पूर्ण सृष्टि पर शासन करने वाली हे विराट् शक्ति, तुम कुछ अवश्य हो और इस चराचर जगत मे तुम्हारा अस्तित्व अवश्य है क्योंकि सागर भी अपनी धैर्यपूर्ण मन्द और गम्भीर ध्वनि मे तुम्हारे अस्तित्व की सूचना देता हुआ तुम्हारा गुणगान कर रहा है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे परिकर अलकार है।

यह क्या ... प्राण समीर।

शब्दार्थ—मधुर स्वप्न सी=आनन्ददायक स्वप्न के समान। झिलमिल=रह-रहकर प्रकट होना। सदय=कोमल। व्यक्त=प्रकट। प्राण समीर=जीवनदायिनी वायु।

व्याख्या—मनु स्वय अपने आपसे प्रश्न करते हुए पूछने लगा कि उनके कोमल हृदय मे सुमधुर स्वप्न के समान मादकता एव अधीरता उत्पन्न करने वाली यह कौन सी शक्ति है। सभवत यह आशा ही है जो कि प्राणो की पोषिका सी बनकर उनके हृदय मे व्याकुलता भी उत्पन्न कर रही है। यहाँ यह स्मरणीय है कि जिस व्यक्ति का हृदय जितना ही अधिक कोमल रहता है उसे उतना ही अधिक दुःख होता है। अतएव मनु का हृदय कोमल होने के कारण ही अधिक दुखी हो रहा था और आशा को वे इसीलिए 'मधुर स्वप्न' मानते हैं क्योंकि आशा कभी पूरी होती है और कभी पूर्ण नही होती लेकिन उसका उद्भव सुखकारी ही होता है। साथ ही आशा भावी सुख एवम् कामना पूर्ति की सभावना तो जाग्रत करती ही है वह इस सुख को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त करने की प्रेरणा भी देती है अत उसके कारण अधीरता और व्याकुलता का होना स्वाभाविक ही है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

यह कितनी .... मधुमय तान ।

शब्दार्थ—स्पृहणीय=वाञ्छनीय, रमणीय । मधुर जागरण=सुखपूर्ण रातो का आन्ददायक जागना । छविमान=शोभायमान । स्मित=मुस्कराहट । मधुमय तान=मधुर या मीठी तान ।

व्याख्या—वस्तुत. जिस प्रकार सुख की रातो मे जागना अत्यधिक प्रिय लगता है उसी प्रकार मधुर जागरण की भाँति आशा भी प्रत्येक व्यक्ति को प्रिय लगती है और सभी यह चाहते हैं कि वह सर्वदा ही हृदय मे निवास करती रहे । साथ ही हृदय मे आशा का उदय ठीक उसी प्रकार धीरे-धीरे होता है जिस प्रकार कि अधरो पर मुस्कान की लहरें उठती हैं और जिस तरह कोई सुरीली तान नृत्य करती सी अर्थात् चक्कर काटती हुई प्रतीत होती है ठीक उसी तरह आशा हृदयस्थली मे प्रविष्ट होती है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मालोपमा अलकार है ।

जीवन ... . शुभ उत्साह ।

शब्दार्थ—खेल रहा=प्रकट हो रहा है । शीतल दाह=शाति-पूर्ण ईर्ष्या या दूसरो को मालूम न पडने वाली हृदय की जलन ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि पहले जहाँ प्रलय और मृत्यु का भयकर दृश्य उपस्थित था वहाँ अब चारो ओर से जीवन की पुकार सुनाई पड रही है। इसका यह अर्थ है कि मनु के हृदय मे एक मधुर जलन और मीठी कसक सी हो रही थी । साथ ही इस भीषण जल प्रलय मे नष्ट होने से बचने के कारण अब स्वाभाविक ही उन्हें जीवित रहने की अभिलाषा भी होती है । इस प्रकार उषा काल मे नव प्रभात के दर्शन कर, उनके हृदय मे उत्साह की भावना जागृत होने लगी और वे यही सोचने लगे कि आखिर यह नव प्रभात का शुभ उत्साह किसके चरणो मे नत हो रहा है ।

टिप्पणी—यहाँ 'जीवन ! जीवन' मे वीप्सा और 'शीतलदाह' मे विरोधाभास तथा अतिम दो पक्तियो मे विशेषण विपर्यय अलकार है । साथ ही 'खेल रहा है शीतलदाह मे प्रयोजनवती शुद्धा लक्षणा है ।

मैं हूँ . . .. गानो मे ।

शब्दार्थ—शाश्वत=अमर, सदैव रहने वाला । नभ के गानों=आकाश मे गूँजने वाले शब्दो मे, सृष्टि के इतिहास मे ।

व्याख्या—वस्तुत प्रलय के समय मनु का जीवन स्वय उनके लिए भार

तो उठा था और चिन्ता सर्ग मे तो उन्होने जीवन से निराश होकर मृत्यु की ही कामना की थी परन्तु अब मनु के हृदय मे आशा के उदय होते ही जीवित रहने की इच्छा भी बलवती हो उठी और उन्हे यह प्रतीत होने लगा कि अब उनकी भी सत्ता है। जिस प्रकार भक्त के कर्ण कुहरो मे आराध्य द्वारा दिए गए वरदान की अनुपम ध्वनि गूँज उठती है उसी प्रकार मनु के हृदय मे भी ईश्वर के अस्तित्व की पुकार गूँज रही है और उनके हृदय मे इच्छा उत्पन्न हो रही है कि उनका यश भी हमेशा इस सृष्टि के इतिहास मे गूँजता रहे।

टिप्पणी—यहाँ 'वरदान सदृश' मे उपमा अलकार है।

यह सकेत • •• विलासमयी।

शब्दार्थ—सत्ता=अस्तित्व। विकासमयी=फैली हुई, विस्तृत। जीवन की लालसा—जीने की इच्छा। प्रखर=तेज, तीव्र। विलासमयी=आनद से परिपूर्ण।

व्याख्या—मनु के हृदय मे आशा के उत्पन्न होते वे अब यह सोचने लगे कि वस्तुत किसकी सरल विकाममयी सत्ता इस तरह के सकेत कर रही है और क्या कारण है कि आज पुन उन्हे जीवित रहने की तथा विलासमय जीवन व्यतीत करने की इच्छा होरही है। इस प्रकार अब मनु को निज जीवन विकसित कर अपने उद्देश्यो की पूर्ति ओर कर्त्तव्य करने की इच्छा हो रही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने विकासमयी सत्ता के सकेत द्वारा यह स्पष्ट करना चाहा है कि जल प्रलय के उपरान्त सृष्टि मे जो विकाम हुआ है उसमे किसी अज्ञात शक्ति का हाथ है और वही आज मनु को प्रेरित कर रही है कि उन्हे जीवन विकास के पथ पर अग्रसर होना चाहिए। साथ ही विलास-मयी लालसा' से कवि ने यह सकेत किया है कि जो मनु अभी तक जीवन को उपेक्षामय समझ रहे थे उन्हे अब जीवन को विलासपूर्ण बनाने की इच्छा हो रही है।

तो फिर मरना होना।

शब्दार्थ—अमर वेदना=जीवन मे लगातार रहने वाली व्यथा या चिन्ता।

व्याख्या—वस्तुत मनु को अभी तक अत्यधिक पीडा सहन करनी पडी थी अत मन मे जीवन के प्रति आशा उत्पन्न होने के बाद वे रह-रह कर यह भी सोचने लगते हैं कि आखिर उनके जीवित रहने से क्या लाभ है और उन्हें जीवित रहकर क्या करना होगा ? इस प्रकार मनु कभी-कभी ईश्वर से यह

प्रार्थना भी करने लगते थे कि उन्हे यह बता दिया जाय कि इस अमर वेदना को लिए हुए कब उनकी मृत्यु होगी ।

टिप्पणी—यहाँ अंतिम दो पंक्तियो मे विरोधाभास अलकार है ।

तुलनात्मक—अँग्रेजी के एक कवि ने कहा है—

Here is the pleasant place

And nothing wanting is Save She alas

एक यवनिका ... भी वैसी ।

शब्दार्थ—यवनिका=पर्दा । पट=पर्दा । आवरण मुक्त=ढकी हुई वस्तु का खुलना ।

व्याख्या—हवा के झोको से जैसे कोई माया का परदा उठ गया हो उसी प्रकार प्रलय का पर्दा अब हट गया है और प्रलय का अंत होते ही प्रकृति का वह स्वाभाविक सौन्दर्य, जो कि अभी तक ढँका हुआ था, पुन पूर्ववत् प्रकट हो गया और वह पुन पहले के समान हरी भरी हो गयी ।

टिप्पणी—यहाँ माया-पट मे रूपक अलकार है ।

स्वर्ण शालियो ... गैल रही ।

शब्दार्थ—स्वर्ण शालियो की कलमे=धान के छोटे-छोटे सुनहरी पौधे । शरद इंदिरा=शरद् लक्ष्मी । गैल=मार्ग, रास्ता ।

व्याख्या—चारो ओर सोने के समान चमकते हुए धान के पौधे फैले हुए थे और उन्हे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह शारदीय लक्ष्मी का कोई मार्ग हो । कहने का अभिप्राय यह है कि दूर से वे धान के खेत ऐसे जान पडते थे मानो कि शरद् लक्ष्मी तक पहुँचने का वह कोई सुन्दर मार्ग है ।

टिप्पणी—यद्यपि इस छन्द मे 'गैल' शब्द के प्रयोग से ग्रामत्व दोष आ गया है पर कोमलकांत पदावली एव शब्द माधुर्य की दृष्टि से यह पद निर्विवाद रूप से प्रशसनीय है साथ ही यहाँ 'दूर-दूर' मे पुनरुक्ति, 'शरद् इदिरा' मे रूपक और अंतिम दोनो पंक्तियो मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है ।

विश्व कल्पना .... रत्न-निधान ।

शब्दार्थ—विश्व कल्पना=यह कल्पना कि इस ससार की रचना कैसे हुई । निदान=कारण । अचला=पृथ्वी, धरती । अवलम्बन=आश्रय, सहारा देने वाला । निधान=खजाना कोष ।

व्याख्या—इन पंक्तियो मे हिमालय का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि सृष्टि की रचना कैसे हुई इस सत्य तक पहुँचने की कल्पना जितनी उत्कृष्ट होगी उतना ही ऊँचा हिमालय पर्वत है अर्थात् हिमालय विश्व-सृष्टि की कल्पना के समान ही ऊँचा व महान् है और वह सुख, शीतलता तथा सतोष का कारण भी है। जिस प्रकार जल प्रवाह आदि मे डूबने वाला व्यक्ति किसी न किसी वस्तु या व्यक्ति का सहारा लेकर ही डूबने से बच पाता है उसी प्रकार भीषण जल प्रलय मे डूबती हुई पृथ्वी के लिए हिमालय ही सहारा देने वाला सिद्ध हुआ और वह उसी का मणि-रत्न-जटित अचल पकडकर डूबने से बच गयी। स्मरण रहे कि इससे जहाँ यह सिद्ध होता है कि हिमालय के कारण पृथ्वी अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकी वही यह भी सिद्ध होता है कि हिमालय पर्वत मे मणियो और रत्नो की खाने है।

टिप्पणी—यहाँ 'विश्व कल्पना सा' मे उपमा और 'अचला का अवलम्बन' मे रूपक तथा मानवीकरण अलकार हैं।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास ने भी 'कुमार सभव' मे हिमालय को पृथ्वी का अवलम्बन कहा है—

यज्ञागयोनित्वमवेक्ष्य यस्य सार धरित्रीधरणक्षम च।
प्रजापति कल्पितयज्ञ भाग शैलाधिपत्य स्वयमन्वतिष्ठत्॥

अचल हिमालय ... हुआ अधीर।

शब्दार्थ—अचल=सुदृढ, शात। शोभनतम=अत्यधिक सुन्दर। लता कलित=लताओ या बेलो से ढका हुआ। शुचि=पवित्र। सानु शरीर=शृगरूपी शरीर या चोटियो वाला शरीर। पुलकित=रोमाचयुक्त।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय पर्वत का शरीर सुदृढ पवित्र एव अत्यधिक सुन्दर और उसकी चोटियाँ भी हिमाच्छादित थी तथा उस पर लताएँ फैली हुई थी जिन्हे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो यह पर्वत निद्रा मे मग्न हो और किसी मधुर स्वप्न को देखकर रोमाचित हो उठा हो। यहाँ कवि ने हिमालय पर्वत को एक व्यक्ति के रूप मे अकित किया है और इस प्रकार उसका कहना है कि जैसे किसी मनुष्य के शरीर के रोम-रोम किसी मधुर स्वप्न को देखने के कारण खडे हो जाते हैं उसी प्रकार हिमालय पर्वत के विशाल शरीर मे उत्पन्न लताओ को देखकर यही जान पडता था कि वह निद्रा मे सुख स्वप्न देखता हुआ पुलकित हो रहा है।

टिप्पणी—यहाँ सम्पूर्ण पद मे मानवीकरण की सुन्दर योजना हुई है और 'सानु शरीर' मे रूपक तथा तीसरी पक्ति मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार है।

उमड रही .... जीवन अनुभूति।

शब्दार्थ—चरणो में=तलहटी मे। नीरवता की विमल विभूति=शाति का पवित्र वैभव। जीवन=जल, जिन्दगी। अनुभूति=ज्ञान।

व्याख्या—हिमालय की तलहटी मे नीरवता का निर्मल ऐश्वर्य उमड रहा था और चारो ओर स्तब्धता का पवित्र साम्राज्य छाया हुआ था अर्थात् वहाँ अपूर्व शाति थी। साथ ही हिमालय पर्वत से शीतल झरनो की जो धाराएँ फूट रही थी वे मानो जीवन की अनुभूतियाँ बिखेर रही थी और उन्हे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो गिरिराज हिमालय ने अपने जीवन भर के सचित अनुभव को ही दूसरो के लिए बिखेर दिया है। वस्तुत यहाँ जीवन शब्द श्लिष्ट ही है और इस प्रकार शीतल झरनो की धाराओ से जो जल प्रवाहित हो रहा था उसे लक्ष्य कर कवि का कहना है कि वह जल क्या था मानो जीवन भर का सचित अनुभव था?

टिप्पणी—यहाँ 'जीवन' शब्द मे श्लेष अलकार है।

उस असीम . .. कल गान।

शब्दार्थ—असीम=सीमा रहित, विशाल। नीले अंचल=नीला आकाश। मृदु=कोमल। कल गान=मधुर ध्वनि।

व्याख्या—हिमालय पर्वत पर बहने वाले झरनो का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि झरनो की उन शुभ्र धाराओ को बहता हुआ देखकर, कभी-कभी ऐसा भी प्रतीत होता था कि मानो उस असीम नीलाकाश के अचल मे किसी को मद-मद मुस्कराते हुए देखकर स्वय हिमालय ही हस पडा हो और उसकी वह हँसी ही इन अगणित धाराओ का रूप धारण कर कल-कल ध्वनि करती हुई बह रही हो।

टिप्पणी—सामान्यतया किसी को हँसते हुए देखकर ही हँसी आती है अत हिमालय का हँसना साभिप्राय ही है परन्तु यहाँ प्रभातकाल का वर्णन किया जा रहा है अत आकाश की हँसी का अभिप्राय इस स्थान पर पूर्व की उज्ज्वल आभा से है। साथ ही यहा उत्प्रेक्षा अलकार भी है।

शिला सधियो .... सहृश्य प्रचार।

शब्दार्थ—शिला संधियो=पर्वतो की चट्टानों के बीच में हो जाने वाली

दरारो के मध्य मे । **दुर्भेद्य**=जो कठिनाई से भेदा जा सके । **अचल**=अटल । **दृढ़ना**=मजबूती, सुस्थिरता । **चारण**=राजाओ का गुणगान करने वाले कवि ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय पर्वत की चट्टानो के बीच मे जो रिक्त स्थान था उसमे से जब सनसन करता हुआ पवन बहता था उससे एक अपूर्व मधुर ध्वनि निकलती थी और उस ध्वनि को सुनकर जान पडता था कि मानो वह पवन एक प्रशस्ति गायक—चारण—के रूप मे हिमालय रूपी राजा का गुणगान करता हुआ यह कह रहा है कि इस पर्वत राज को कोई भेद नही सकता और यह तो अडिग है तथा अपूर्व दृढता का प्रतीक भी है ।

टिप्पणी—यहाँ 'चारण सदृश' मे उपमा और 'पवन के गूँजने व प्रचार करने मे मानवीकरण अलकार है ।

सध्या घन माला • तुषार किरीट ।

शब्दार्थ—**सध्या घनमाला**=सध्याकालीन रगीन बादल । **छीट**=एक प्रकार का वस्त्र जिस पर रग विरगे बिन्दु होते हैं । **गगन चुम्बिनी**=आकाश को छूने वाली बहुत ऊँची । **शैल श्रेणियाँ**=हिमालय पर्वत की चोटियाँ । **तुषार**=बर्फ । **किरीट**=मुकुट ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय पर्वत की चोटियाँ आकाश को स्पर्श कर रही थी अर्थात् ऊँची थी और उन पर घिरे हुए सध्याकालीन रगीन बादल ऐसे जान पडते थे मानो कि उन चोटियो ने रग-विरगी छीट की चादर ओढ ली है तथा उनके ऊपर बर्फ ऐसा लगता था मानो कि उन्होने मुकुट पहन लिया हो । इस प्रकार इन पक्तियो मे कवि ने हिमालय पर्वत की चोटियो की कल्पना सध्याकालीन रग-विरगे बादलो रूपी ओढनी तथा बर्फ का मुकुट पहनने वाली रानी के रूप मे की है । यहाँ पर 'ओढे रग विरगी छीट से' यह भी जान पडता है कि वे रग-विरगे बादल पर्वत की चोटियो से नीचे ही छाये हुए है ।

टिप्पणी—यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार है ।

तुलनात्मक दृष्टि—पाश्चात्य कवि शैली ने भी कहा है—

—'As clouds of even,
Flecked with fire and asure, be
In the unfathomable sky'

विश्व मौन .... मौन सभा ।

शब्दार्थ—मौन=शान्त । गौरव=गरिमा, ऐश्वर्य । विभा=कांति । अनंत प्रांगण=विस्तृत आकाश ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि बर्फ से ढँकी हिमालय की पर्वत श्रेणियाँ ऐसी प्रतीत होती थी कि मानो वे समस्त संसार के मौन, गौरव और महत्व की प्रतिमूर्तियाँ हो तथा हिमालय के इस विस्तृत प्रागण मे एकत्र होकर चुपचाप कोई सभा कर रही हो। इसका तात्पर्य यह है कि हिमालय पर्वत की चोटियो मे अपूर्व नीरवता थी और उनमे अनूठा गौरव तथा महत्व भी था।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे 'प्रतिनिधियो सी' मे उपमा और मौन सभा की उन्नत कल्पना मे वस्तूत्प्रेक्षा तथा विरोधाभास अलकार है।

वह अनन्त नीलिमा .. . . भ्रांत रही।

शब्दार्थ—अनन्त नीलमा=आकाश का असीम नीलापन । व्योम=आकाश । भ्रांत=भटकती हुई।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अनन्त नीलाकाश इतना शात जान पडता था कि मानो उसमे जडता सी आ गयी हो परन्तु वह न केवल पृथ्वी से अत्यधिक ऊँचा होने के कारण पहुँच से परे था बल्कि उसकी व्यापकता की भी कोई सीमा न थी। इसके बावजूद उसे देखकर यही आभास होता था कि उसे कोई न कोई अभाव अवश्य खटक रहा है और भ्रान्ति के कारण वह भटकता हुआ इतनी ऊँचाई पर पहुँच गया है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे सरल शब्दो मे अनूठी भाव व्यजना की गयी है।

उसे दिखाती . .. . उठान।

शब्दार्थ—जगती=धरती, पृथ्वीतल । अजान=अनभिज्ञ, अपरिचित । तुंग तरग=ऊँची ऊँची लहरें। सुंदर उठान=सुन्दर ढग से ऊपर उठी हुई चोटियाँ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय की सुन्दर पर्वत श्रेणियाँ कभी-कभी ऐसी प्रतीत होती थी मानो कि वे समस्त सृष्टि से व्याप्त आनन्द की ऊँची-ऊँची लहरें ही हो जो कि अभावमय आकाश को यह दिखाना चाहती हों कि इस पृथ्वीतल मे कितना सुख, कितनी हँसी और कितना उल्लास है जबकि उसमे (आकाश मे) जडता और अभाव ही है।

टिप्पणी—यहाँ 'तुग तुरग' मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार है।

थी अनन्त ··· ··· वरणीय।

शब्दार्थ—सदृश=समान। गुहा=गुफा। रमणीय=सुन्दर। वरणीय=अपनाने योग्य, रहने के लिए उचित।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय पर्वत मे पास ही मे एक सुन्दर और विशाल गुफा थी जो कि उस विशाल पर्वत को गोद के समान जान पडती थी। मनु ने उसमे अपने रहने के लिए एक सुन्दर एव स्वच्छ स्थान बनाया तथा वही रहने लगे।

टिप्पणी—प्रथम दो पक्तियो मे उपमा अलकार है।

पहला सचित फिर से।

शब्दार्थ—सचित=एकत्र। द्युत=आभा, चमक, प्रकाश। रविकर=सूर्य की किरणें। चिन्ह=प्रतीक। धधकना=प्रज्वलित होना।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस गुफा मे पास ही पहले से एकत्र की गयी अग्नि मन्द-मन्द जल रही थी जिसका कि प्रकाश सूर्य की धुँधली किरणो के समान था। मनु ने उस अग्नि को पुन प्रज्वलित किया और अब वह अनके द्वारा सुलगायी जाने पर बडी तेजी के साथ धधकने लगी मानो कि वह शक्ति और जागृति की सूचक हो। यहाँ हम अग्नि को उत्साह का प्रतीक मानकर यह भी कह सकते हैं कि अब मनु मे शक्ति और उत्साह की वृद्धि हो गयी।

टिप्पणी—यहाँ 'शक्ति और जागरण चिन्ह सा' मे पूर्णोपमा अलकार है।

जलने लगा ·· होकर धीर।

शब्दार्थ—अग्निहोत्र=यज्ञ, हवन। तीर=किनारे। होकर धीर=धैर्य पूर्वक। समर्पण किया=लगा दिया।

व्याख्या—मनु अब नित-प्रति वही सागर के किनारे यज्ञ करने लगे और इस तरह अत्यत धैर्य पूर्वक उन्होने अपने जीवन को तप मे ही लगा देने का निश्चय किया।

टिप्पणी—वस्तुत इन पक्तियो मे कवि ने मनु द्वारा किये गये उस प्रारभिक यज्ञ की ओर सकेत किया है जिसका आभास शतपथ ब्राह्मण के प्रथम काण्ड के पाँचवें अध्याय मे मिलता है।

सजग हुई · ·· शीतल छाया।

शब्दार्थ—सजग=जाग्रत। सुर संस्कृति=देव जाति। यजन=यज्ञ

वर माया=श्रेष्ठ जादू । कर्ममयी=कर्मकाड से परिपूर्ण । शीतल छाया=आनन्दमय प्रभाव ।

व्याख्या—मनु द्वारा किये यज्ञो मे देव सस्कृति पुन सजग हो उठी अर्थात् मनु के दैवी सस्कार फिर जाग्रत हो उठे तथा ज्यो ही उन्होने यज्ञ प्रारम्भ किया त्यो ही देव यज्ञो का सात्विक आकर्षण उन पर कर्मकाण्ड की मधुर छाया डालने लगा अर्थात् मनु के हृदय मे कर्म करने की भावना उत्पन्न हुई ।

टिप्पणी—वस्तुत यज्ञादि क्रियाओ को कर्मकाड ही कहा जाता है और यज्ञ करने से मन शुद्ध होता है तथा हृदय मे कर्म करने की भावना भी उत्पन्न होती है ।

उठे स्वस्थ मनु मनोहर शान्त ।

शब्दार्थ— स्वस्थ=आशा और स्फूर्ति से पूर्ण । अरुणोदय=सूर्योदय । कान्त=सुन्दर । लुब्ध=लालसा या तृष्णा से पूर्ण । प्रकृति विभूति=प्राकृतिक सौन्दर्य ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार क्षितिज मे सुन्दर अरुण प्रकाश वाला बाल सूर्य उदित होता है उसी प्रकार मनु भी अब स्वस्थ और स्फूर्तियुक्त होकर उठे तथा लालसा पूर्ण दृष्टि से प्रकृति के मनोहर और शात सौन्दर्य को देखने लगे ।

टिप्पणी—पहली दो पक्तियो मे उदाहरण अलकार हैं ।

पाक यज्ञ . . . . चुनने ।

शब्दार्थ—पाक यज्ञ=वह यज्ञ जिसमे स्वय पकाए हुए अन्न की आहुति दी जाती है । शक्तियाँ=धन या चावल । वन्हि=आग । धूम=धुआँ । पट=वस्त्र । धूमपट=धूम समूह ।

व्याख्या—मनु ने अब यह निश्चय किया कि पाक यज्ञ करेगे और वे धान चुनने लगे । उन्होने आग को भी तेज किया जिसके फलस्वरूप अग्निकुड से जो लपटें उठने लगीं उन पर धुआँ की एक सघन तह सी जम गई ।

टिप्पणी—इस पद मे वर्णित पाक यज्ञ का उल्लेख शतपथ ब्राह्मण मे भी मिलता है अत यह प्रसग ऐतिहासिक ही है ।

शुष्क डालियो . ... समृद्ध ।

शब्दार्थ—शुष्क डालियाँ=सूखी हुई डालो । अचियाँ=लपटें । समिद्ध=प्रज्वलित, उद्दीप्त । नव धूम गध=नवीन धुएँ की सुगधि ।

व्याख्या—मनु ने वृक्षो की सूखी डालियो को यज्ञकुण्ड मे डालना शुरू किया और इन डालियो के कारण आग की लपटें और भी अधिक तेज हो उठी। इस प्रकार आहुतियाँ देने पर जो धुआँ उठा उसकी नवीन सुगन्ध आकाश और वन मे चारो ओर व्याप्त हो गई।

टिप्पणी—यहाँ नवीन सुगन्ध से कवि का अभिप्राय यह है कि मनु द्वारा किये गये पाकयज्ञ से अन्न की सुगन्धि से भरा हुआ जो नवीन धुआँ उठा उसमे अन्न की सुगन्धि भी थी।

और सोच .. .. . . रचे हुए।

शब्दार्थ—जीवन लीला रचे हुए=जीवित हो या जीवित प्राणियो की भाँति सचेष्ट हो।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु ने अपने मन मे सोचा कि इस भयकर जल प्रलय से जिस प्रकार से बच गया हूँ उसी प्रकार कोई आश्चर्य नही कि यदि कोई दूसरा प्राणी भी जीवित बच रहा हो।

अग्नि होत्र ... ... पाते थे।

शब्दार्थ—अग्नि होत्र=यज्ञ। अवशिष्ट=बचा हुआ। तृप्त=सतुष्ट।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के मन में यह विचार उत्पन्न होते ही कि उनके समान शायद कोई दूसरा प्राणी भी जीवित बच रहा हो, मनु यज्ञ की समाप्ति के पश्चात् जो भी अन्न बचता उसमें से कुछ अश कही दूर रख आते थे। यह सोचकर कि इस अन्न से कोई अपरिचित प्राणी सतुष्ट होगा मनु को स्वाभाविक ही सुख की अनुभूति होती थी।

दुःख का गहन .... रहते थे।

शब्दार्थ—दुःख का गहन पाठ पढ़कर=अनेक प्रकार के कष्टो को भोग कर अर्थात् भारी दु.ख झेलकर। नीरवता=निर्जनता, शान्ति। मग्न=लीन, डूबे हुए।

व्याख्या—वस्तुत. निष्काम भाव से जो भी उपकार किये जाते हैं उससे हृदय को हार्दिक आनन्द प्राप्त होता है अत मनु को भी इस बात से अपूर्व सतोष हो रहा था कि वे पाकयज्ञ के पश्चात् अन्न का कुछ अश कही दूर रख आते है। इसी प्रकार यह भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जो स्वय भारी दुख उठाता है उसकी मनोवृत्तियाँ भी कोमल हो जाती है और उसमें सहानुभूति की मात्रा भी अधिक रहती है। अतएव चूकि मनु स्वय ही दुख झेल चुके थे

और उन्हे पर्याप्त आपत्तियाँ भी सहन करनी पडी थी इसलिए वे अब यह समझ चुके थे कि सहानुभूति क्या है और वह किस प्रकार प्रकट की जाती है। किसी अपरिचित के प्रति मनु की सहानुभूति का मूल कारण यही था और वे उस शान्तमय वातावरण मे अकेले ही प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन किया है और 'मग्न' शब्द मे श्लेषालकार है।

मनन किया • वास रहा।

शब्दार्थ—मनन=चिन्तन, सोचना-विचारना। ज्वलित=जलती हुई। पतझड़=नीरव तथा उदास वातावरण।

व्याख्या—कवि का कहना है कि प्रज्ज्वलित यज्ञकुड के समीप बैठकर मनु विभिन्न विचारो मे लीन रहते थे और लगातार चिन्तन करने मे ही उनका काफी समय बीत जाता। इसी प्रकार उस शून्य स्थान पर बैठे हुए मनु ऐसे प्रतीत होते थे मानो कि स्वय तप ही शरीर धारण कर उस पतझड अर्थात् सूने एव निर्जीव प्रदेश मे निवास कर रहा हो।

टिप्पणी—अंतिम दो पक्तियो मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार है।

फिर भी • • • • • — दिन-दिन दीन।

शब्दार्थ—धड़कन=बेचैनी। अस्थिर=अनिश्चित, विचलित। दिन-दिन =प्रति दिन, रोज-रोज। दीन=निस्सहाय, अभावो से पूर्ण।

व्याख्या—यद्यपि मनु प्रज्ज्वलित यज्ञ कुंड के समीप बैठकर बहुत कुछ सोचते विचारते थे परन्तु कभी-कभी उनके हृदय मे इच्छाएँ जाग उठती और नवीन चिन्ताओ के उत्पन्न होने पर उनका चित्त विचलित होने लगता। इस प्रकार मनु का अभावपूर्ण एवम् अस्थिर जीवन शनै शनै दिन-प्रति-दिन व्यतीत होने लगा।

टिप्पणी—यहाँ अतिम पक्ति मे वृत्यानुप्रास अलकार है।

प्रश्न उपस्थित • ... ... छाया मे।

शब्दार्थ—अधकार की माया=एकाकी जीवन, अनिश्चित जीवन। रंग बदलते=नवीन रूप धारण करते। विराट्=महान शक्ति।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु का भावी जीवन अनिश्चित एव अधकारमय ही था अत उनके मन मे स्वाभाविक ही नये-नये प्रश्न उठते रहते

थे तथा जब वे अपने हृदय मे उन पर विचार करते तो उनका रूप थोडी ही देर मे कुछ से कुछ हो जाता। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु के सामने समस्याएँ तो कई थी परन्तु वे उन पर ठीक से विचार नही कर पाते थे।

अर्ध प्रस्फुटित .. .... था व्यस्त।

शब्दार्थ—अर्ध प्रस्फुटित=अस्पष्ट। सकर्मक=क्रियाशील। व्यस्त=सलग्न, लीन।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु को अपनी समस्याओ का कोई भी स्पष्ट समाधान न दीख पड रहा था पर समस्त प्रकृति तो क्रियाशील ही थी अर्थात् निरतर कर्म मे प्रवृत्त थी और प्रत्येक मौसम अपने निश्चित समय पर ही आता था। अतएव ऐसी दशा मे मनु के समक्ष केवल यही एक महत्वपूर्ण प्रश्न था कि अपने जीवन की रक्षा किसी न किसी प्रकार की जाय।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि प्रकृति की कर्मशीलता को देखकर मनु के मन मे भी अपने जीवन को बनाये रखने की लालसा उत्पन्न हुई।

तप मे .... हो घिरने।

शब्दार्थ—निरत हुए=लीन हो गये, लग गये। नियमित=नियमानुसार। विश्वरग=सासारिक रग।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु पुन: तप मे लीन हो गये और अपने नियमित कर्म करने लगे। जिस प्रकार आकाश मे अनेक बादल एकत्र हो जाते है उसी प्रकार सासारिक रग मे रगे हुए उनके कर्मजाल के सूत्र घने होकर घिरने लगे अर्थात् अब उन्हें अनेक सासारिक कर्मों मे रत हो जाना पडा। यहाँ यह स्मरणीय है कि मनु को अपना अस्तित्व रखने के लिए विभिन्न कार्य करने पडते होगे अत अनेक सासारिक कर्मों की सख्या बढ जाना स्वाभाविक ही है।

टिप्पणी—कुछ टीकाकारो ने 'विश्वरग' का अर्थ ससार रूपी रगमच मानकर यह अर्थ भी किया है कि विश्वरूपी रगमच पर कर्मसमूह अपना गहरा सूत्र बनाकर घिरने लगे परन्तु यह अर्थ उचित नही ज्ञात पडता।

उस एकान्त .. .. सागर तीरे।

शब्दार्थ—स्पदन=कम्पन, यहा कार्य करने से अभिप्राय है। सागर तीरे=समुद्र के किनारे।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु अब नित्य ही अपने नियमित कार्यों में लीन रहते और जिस प्रकार समुद्र के किनारे पवन से प्रेरित होकर लहरें धीरे-धीरे नृत्य किया करती हैं उसी प्रकार मनु भी उस एकांत नीरव प्रदेश में नियति को ही सब कुछ मानकर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में प्रयुक्त नियति शब्द शैव दर्शन का एक विशिष्ट शब्द है और तंत्रालोक में कहा गया है कि 'नियति योजनां धत्ते विशिष्टे कार्य मंडले।' वस्तुतः नियति के कारण ही सृष्टि के सभी कार्य सम्पन्न होते हैं और 'काव्य-प्रकाशकार' मम्मट ने भी अपने ग्रंथ के प्रारंभ में नियति शब्द का प्रयोग करते हुए यही कहा है—विजयिनी है कवि की वह वाणी जो ऐसी सृष्टि का निर्माण करती है, जो नियति कृत नियमों से रहित है—

नियतिकृत नियमरहितांह्लादकमयीमनन्यपरतंत्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितमादधती भारती कवेर्जयति॥

यहाँ यह स्मरणीय है कि कतिपय विचारकों ने प्रसाद की इन पंक्तियों का अर्थ करते समय नियति का अर्थ भाग्य माना है और इस प्रकार उनका कहना कि प्रसाद भाग्य को ही सब कुछ मान बैठे हैं, परन्तु प्रसाद की कृतियों में नियति का अर्थ भाग्य मानना युक्तिसंगत नहीं है क्योंकि 'नियम्यन्ते धर्मा अनया इति नियतः' अर्थात् वस्तुओं के धर्मों की नियामिका शक्ति का नाम ही नियति है। श्री नंददुलारे वाजपेयी ने तो स्पष्ट रूप में यही कहा है 'प्रसाद की दृष्टि में प्रकृति का नियमन और विश्व का संतुलन करने वाली शक्ति नियति है, जो मानव अतिवादों की रोकथाम करती है और विश्व का संतुलित विकास करने में सहायक होती है; प्रसाद का यह नियति सिद्धान्त साधारण भाग्यवाद या प्रारब्धवाद से भिन्न है। नियति एक अज्ञेय शक्ति है किन्तु वह जड़ और अज्ञानमूलक नहीं है। उसका प्रवाह मानवता की सृष्टि और कल्याण के लिए है। मनुष्य को उससे विद्वेष न कर उस पर विश्वास रखते हुए अपना जीवन क्रम निर्धारित करना चाहिए। वह जीवन के प्रति आस्था और अविरोध उत्पन्न करती है तथा मानव अविचारों को रोककर विश्व का अबाध प्रगति का मार्ग प्रशस्त करती है। इसे भाग्यवाद नहीं कहा जा सकता।'

तुलनात्मक दृष्टि—श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि प्राणी प्रतिक्षण जो कार्य करता है उसको प्रेरणा देने वाली वही नियामिका शक्ति है, जो विश्व भर का नियमन करती है—

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वं प्रकृतिजैर्गुणैः ॥

विजन जगत · तनता अपना ।

शब्दार्थ—विजन=निर्जन, सुनसान । तन्द्रा=आलस्य । ग्रह पथ =नक्षत्रो का मार्ग । आलोक वृत्त=प्रकाश मण्डल ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस निर्जन मे निश्चेष्ट व्यक्ति की भाँति मनु अपना जीवन व्यतीत करते हुए असफल कल्पनाएँ कर रहे थे । इस प्रकार इधर मनु अत्यन्त शिथिलता एव उत्साहहीनता से पूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे और उधर सूर्य चन्द्र आदि नक्षत्र अपने-अपने पथ पर बढे चले जा रहे थे । कहने का अभिप्राय यह है कि मनु का समय धीरे-धीरे बीतता जा रहा था ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु की शिथिल, उमगहीन एव आलस्य-पूर्ण स्थिति का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है और अन्तिम दो पक्तियो मे स्वभावोक्ति अलकार है ।

प्रहर दिवस आरम्भ नवीन ।

शब्दार्थ—सदेश विहीन=बिना कुछ कहे सुने । विरागपूर्ण ससृति= विरागियो का ससार अर्थात् इस भौतिक जगत् से कुछ भी सम्बन्ध न रखने वालो का जीवन । निष्फल=व्यर्थ, बेकार । नवीन आरम्भ=नवीन योजनाएँ अथवा नये-नये कार्यारम्भ ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि प्रहर, दिन और रात बीतते चले गए लेकिन उनसे मनु को किसी प्रकार की प्रेरणा न हुई और उस निर्जन स्थान मे मनु का जीवन बीतता चला गया । वास्तव मे उनका जीवन एक ऐसा विरक्तिपूर्ण जीवन था जहाँ कि किसी भी नवीन कार्यक्रम या किसी भी नवीन योजना का कोई अर्थ ही नही रह जाता । वस्तुत जब मन उत्साहहीन हो जाता है तब कोई भी नवीन कार्य करने की इच्छा नही होती और चारो ओर निष्क्रियता ही निष्क्रियता दीख पडती है । इस प्रकार मनु की यह दशा स्वाभाविक ही थी ।

टिप्पणी—यहाँ 'प्रहर दिवस रजनी आती थी' मे तुल्ययोगिता अलकार है ।

धवल मनोहर · ··· पावन उद्गीथ ।

शब्दार्थ—धवल=सफेद । चन्द्रबिंब=चाँदनी । निशीथ=आधी रात परन्तु यहाँ केवल रात से अभिप्राय है । पावन=पवित्र । उद्गीथ=सामगान ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यद्यपि मनु के हृदय मे उदासीनता छाई

हुई थी पर प्रकृति सौन्दर्य को देखकर उनकी मनोदशा में धीरे-धीरे परिवर्तन सा आने लगा। कवि कह रहा है कि उस समय सुन्दर स्वच्छ रात्रि चाँदनी से युक्त होने के कारण बडी ही मनोहर जान पडती थी और शीतल पवन जब सन-सन ध्वनि करता था तब ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वायु पुलकित होकर पवित्र सामवेद के गीतों को गा रही है।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार है।

नीचे दूर ... निधि गम्भीर।

शब्दार्थ—विस्तृत=फैला हुआ। उर्मिल=लहरों से युक्त लहराता हुआ। अधीर=चचल। चन्द्रिका निधि=चाँदनी का सागर या समुद्र।

व्याख्या—कवि कहता है कि नीचे की ओर दूर तक लहरों से युक्त व्याकुल और अधीर समुद्र फैला हुआ था। साथ ही ऊपर की ओर आकाश में भी वैसा ही गम्भीर अथाह सागर लहरा रहा था।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे कवि ने प्रकृति को एक सचेतन सत्ता के रूप मे ग्रहण किया है और यहाँ मानवीकरण तथा अलकार की योजना हुई है।

खुली उसी ... भीगी आँखें।

शब्दार्थ—रमणी=सुन्दर। अलस चेतना की आँखें=अलसाई चेतना जाग्रत हो उठी। हृदय कुसुम=हृदय रूपी फूल। पाखें=पखडियों।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि प्रकृति के इस सुन्दर दृश्य को देखकर मनु के चित्त का आलस्य जाता रहा और उनकी जो चेतना अभी तक सुप्त थी वह जाग उठी। जिस प्रकार इस दृश्य को देखते ही मनु के हृदयरूपी कुसुम की कली अचानक खिल उठी अर्थात् उनके हृदय मे विभिन्न प्रकार की सरस भावनाएँ जागत होने लगी।

टिप्पणी—इस पद की अन्तिम दो पक्तियों मे प्रयोजनवती शुद्धा साध्यवासना लक्षणा है। और परम्परित रूपक तथा वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की स्वाभाविक योजना भी हुई है।

व्यक्त नील ... उलझता था।

शब्दार्थ—नील=नीला आकाश। चल प्रकाश=चन्द्रमा की चचल किरणों का प्रकाश। कम्पन=सिहरन। सुख बन बजता=सुखमय प्रतीत होता। अतीन्द्रिय=इन्द्रियों से परे, अलौकिक। स्वप्न लोक=कल्पना लोक। मधुर =आनन्ददायक।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि विस्तृत नीले आकाश से आने वाली चन्द्रमा की सुन्दर और चचरा किरणें मनु के शरीर मार्ग को स्पर्श कर एक प्रकार की सिहरन सी उत्पन्न करती थी तथा उनका मन एक अलौकिक, मधुर एव रहस्यपूर्ण प्रेम के स्वप्न लोक मे पहुँच जाता था ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने आधुनिक वैज्ञानिको के प्रकाश सिद्धान्त की ओर सकेत किया है ।

नव हो उठी • • करके अनुमान ।

शब्दार्थ—अनादि=हृदय मे हमेशा रहने वाली । वासना=भोग विलास की इच्छा । प्राकृतिक भूख=भोजन करने की अत्यन्त स्वाभाविक इच्छा । द्वद्व =युग्म, जोडा ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार भूख का लगना स्वाभाविक है और वह शरीर के अनुकूल ही है उसी प्रकार हृदय मे स्थायी रूप से रहने वाली अनादि वासना भी मनु के हृदय मे पुन जाग्रत हो उठी और वे यही सोचने लगे कि यदि कोई दूसरा प्राणी भी उनके साथ इस गुफा मे रहता तो निश्चय ही उन्हे अपूर्व सुख मिलता । इस प्रकार मनु यह सोचकर कि दो प्राणियो के एक साथ रहने से एक दूसरे को अत्यन्त सुख मिलता होगा, यह इच्छा करने लगे कि उन्हें भी कोई साथी प्राप्त हो ।

टिप्पणी—वास्तव मे अनादि वासना से कवि का अभिप्राय 'रति' से ही है और यह रति काम की सहचरी है तथा इस रति भावना को हमारे शास्त्रो मे मैथुन कहा गया है और वह भूख, प्यास, नीद भय आदि की भाँति सभी प्राणियो मे समान रूप से विद्यमान रहती है—'आहार, निद्रा-भय मैथुनञ्च सामान्यमेत् पशुभिर्नराणाम् ।

तुलनात्मक दृष्टि—योग दर्शन मे भी वासनाओ को अनादि माना गया है—

तामामनादित्व चाशिषो नित्यत्वात् ।

दिवा रात्रि • उस पार ।

शब्दार्थ—दिवा=दिन । मित्र=सूर्य । वाला—पत्नी, स्त्री । अक्षय= अनन्त, जो हमेशा विद्यमान रहता हो, अविनाशी । शृगार=सौन्दर्य । मित्रवाला=दिवा । वरुणबाला=रात्रि । जीवन का उर्मिल सागर=अनन्त अभिलाषाओं से पूर्ण जीवन-रूपी समुद्र ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु दिन मे उषा और रात्रि मे चन्द्रमा

के अनन्त सौन्दर्य को अभिलषित नेत्रों से देखते और यहीं सोचने लगते कि जीवन का उर्मिल समुद्र पार करते ही उन्हे मिलन-सुख प्राप्त होगा। वस्तुत यहाँ जीवन की उपमा सागर से दी गयी है और इस प्रकार मनु यही अनुमान करते हैं कि लहरो के समान जीवन मे भी उलझनें हैं तथा जिस प्रकार समुद्र की लहरो को पार करने पर किनारो पर पहुँचकर ही सम्मिलन सुख मिलता है उसी प्रकार जीवन की उलझनो को सुलझाने पर ही वे अपने लिए प्रियतमा को प्राप्त कर सके।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे यथासख्य या क्रम और रूपक अलकार का प्रयोग हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—तैत्तिरीय ब्राह्मण मे भी मित्र को दिवस का स्वामी सूर्य और वरुण को रात्रि का स्वामी चन्द्रमा माना गया है तथा मैत्र को दिवस और वारुणी को रात्रि कहा गया है—

> मित्रोऽसि वरुणोऽसीत्याह। मैत्र वा अह। वारुणी रात्रि।
> अहोरात्राभ्यामेवैनमुपावहरति।

तप से संयम ... सूना राज।

शब्दार्थ—सचित=एकत्रित शरीरिक शक्ति। तृषित=प्यासा, अत्यन्त उत्सुक। अट्टहास कर उठा=अत्यधिक हँमी उडाने वाला, यहाँ व्याकुल करने से अभिप्राय है। रिक्त=अभाव, सूनापन। अधीरतम सूना राज- बेचैन बनाने वाला भविष्य का अन्धकार।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु ने अपना जीवन तपस्या मे व्यतीत किया था अत सयम से रहने के कारण उनमे शारीरिक बल की वृद्धि भी हुई और उनकी प्रेम तृष्णा तथा तज्जन्य व्याकुलता भी बढ गयी। वस्तुत उनका मन किसी प्रेमिका के अभाव मे कई दिनो से शून्य सा था और वे जीवन मे एक प्रकार के अभाव का अनुभव कर रहे थे तथा अब तो उनकी अधीरता दिन प्रतिदिन और भी अधिक बढने लगी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु के हृदय में उद्दीप्त होने वाली मनोभावनाओ का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। साथ ही यहाँ मानवीकरण अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास ने भी 'मेघदूत' मे एकाकी जीवन की अधीर अवस्था का चित्रण करते हुए कहा है—

तस्य स्थित्वा कथमपि पुर कौतुकाधान हेतो—
रन्तवर्ष्पिचिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालोके भवति सुखिनो ऽप्यन्यथावृत्ति चेत
कण्ठाश्लेष प्रणयनि जने किं पुनर्दूरसस्थे।

धीर समीर ... गध अधीर।

शब्दार्थ—धीर समीर—मन्द पवन। परस=स्पर्श। पुलकित=रोमांचित श्रान्त=थका हुआ। अलक=बाल। मधु गध=मदिरा के समान मतवाला बना देने वाली गंध।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के स्फूर्ति हीन थके हुए शरीर से ज्यो ही मद-मद वायु का स्पर्श हुआ त्यो ही वह (शरीर) रोमाचित सा हो उठा और वे एक प्रकार की व्याकुलता का अनुभव करने लगे। कवि कहता है कि जिस प्रकार उलझे हुए बालो को सुलझाते समय उनसे एक प्रकार की मधुर गध सी निकलती है उसी प्रकार अब मनु के मन मे आशा का सचार होने पर सुख की लहरें सी उठने लगी अर्थात् उन्हे अपूर्व सुख प्राप्त हुआ।

टिप्पणी—प्रस्तुत छन्द मे सम्पूर्ण पदावली लाक्षणिक है और मानवीकरण अलकार का प्रयोग भी हुआ है।

मनु का मन ... देता घोट।

शब्दार्थ—विकल=व्याकुल, बेचैन। सवेदन=भाव की अनुभूति, यथार्थ ज्ञान। कटुता=कठोरता। देना घोट=कुचल देना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु इसलिए व्याकुल थे कि उन्हे भी कोई ऐसा साथी मिलता जो कि दुःख मे उनसे सहानुभूति प्रकट करता। इस प्रकार प्रकृति के सुखद दृश्य को देखकर मनु अपने अभाव को स्मरण कर अत्यत व्याकुल हो उठे और सहानुभूति प्राप्त करने की यह लालसा उनके हृदय को अत्यधिक व्यथित करने लगी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने जीवन की दुःखात्मक अनुभूति का यथार्थ चित्रण किया है और यहाँ अर्थान्तरन्यास अलकार प्रयुक्त हुआ है।

आह! कल्पना ... जगता सोता।

शब्दार्थ—कल्पना का जगत=यथार्थ जीवन मे परे केवल भावो का अलौकिक जगत। सुख स्वप्नो का दल=सुखद स्वप्नो का समूह।

व्याख्या—कवि कहता है कि मनु यही सोचने थे कि यदि उनकी मधुर

कल्पना पूर्ण हो जाती तो निस्सदेह उनका ससार सुखमय हो जाता और सुख स्वप्नो के इस साम्राज्य के स्थापित होने पर उनका हृदय प्रसन्नता से फूला न समाता ।

टिप्पणी—प्रस्तुत पद की प्रथम दो पक्तियो मे सम्भावना अलकार है और शेप दो पक्तियो मे प्रयोजनवती गौणी लक्षणा है ।

सवेदन का • • कहाँ बकता ।

शब्दार्थ—सघर्ष—द्वन्द्व । गाथा=कहानी । बकता=कहता, सुनाता ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु यही सोचते है कि यदि उनकी कल्पनाओ का सुखद साम्राज्य वास्तविक ही होता तो फिर सवेदनामय हृदय मे इस प्रकार का विरोध न हो पाता और धरती मे कही भी कोई अपने अभावो एव असफलताओ की कहानियाँ न सुनाता फिरता । कहने का अभिप्राय यह है कि मानव के लौकिक जीवन मे अनेक अभाव होने के कारण मनुष्य को दुखद अनुभूति होती है और उस अनुभूति के कारण मानव हृदय मे हमेशा अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है तथा मनुष्य अपने अभावो की कथा अपने परिचितो को सुनाता रहता है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनोवैज्ञानिकता का निर्वाह हुआ है ।

कब तक • व्यर्थ खोलो ।

शब्दार्थ—निधि=खजाना, यहाँ प्रतीकार्थ से व्यथा ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु अपने अभाव जन्म दु ख की अनुभूति मे अत्यधिक व्यथित हो उठे और कहने लगे कि हे मेरे जीवन, मुझे अभी कितने दिनो तक अकेले रहना पडेगा और मै अपनी यह कथा किसे सुनाऊँ या फिर मुझे किसी साथी के न मिलने पर चुप ही रहना पडेगा ? मनु यह भी कहते हैं कि जब उनकी इस व्यथा को कोई सुनने वाला ही नही है तब यही अच्छा होगा कि वे अपने हृदय के रहस्य को किसी के भी सामने न व्यक्त करें ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे वियोग शृङ्गार की अभिव्यक्ति हुई है और आक्षेप अलकार है तथा 'अपनी निधि न व्यर्थ खोलो' मे प्रयोजनवती साध्यवस[illegible]णी लक्षणा है ।

[illegible]ट—कवि प्रसाद ने अपनी 'आत्मकथा' मे भी कुछ ऐसे ही उद्गार व्यक्त किये हैं—

उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊँ मधुर चाँदनी रातो की
अरे खिलखिलाकर हँसते होने वाली उन बातो की।
मिला कहाँ वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया
आलिंगन मे आते आते मुसक्या कर जो भाग गया।

× × ×

छोटे से जीवन की कैसी वडी कथाएँ आज कहूँ
क्या यह अच्छा नही कि औरो की सुनता मैं मौन रहूँ।
सुनकर क्या तुम भला करोगे मेरी भोली आत्मकथा
अभी समय भी नही थकी सोयी है मेरी मौन व्यथा।

तम के • रस सारा।

शब्दार्थ—तम=अन्धकार। सुन्दरतम रहस्य=अत्यन्त सुन्दर आश्चर्य। कांति किरण रंजित=सुन्दर किरणो से सुशोभित। सात्विक=सतोगुणी। नव=नवीन।

व्याख्या—अपने एकाकी जीवन से व्यथित मनु का ध्यान आकाश मे बिखरे हुए तारो की ओर जाता है और वह एक तारे को सम्बोधित करते हुए कहते है कि हे आभा और प्रकाश से युक्त तारे तुम इस अन्धकार के सुन्दरतम रहस्य हो। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि इस घोर अधकार मे इतना उज्ज्वल प्रकाश देने वाले तारे की सत्ता रहस्यमय ही है। मनु पुन उस तारे से कहते हैं कि तुम नव रस से पूर्ण उस बूँद के समान हो जो कि इस सतप्त ससार को शान्ति और शीतलता प्रदान करने मे सक्षम है अर्थात् तुम दु ख दग्ध जीवन को सुख की शातिमयी शीतलता पहुँचाते हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे तारे को 'तम का सुन्दरतम रहस्य' इसलिए कहा गया है क्योकि अन्धकार मे प्राय सभी वस्तुएँ रहस्यमयी हो जाती हैं और उन्हे जानना असभव हो जाता है। यद्यपि तारा चमकता है और वह सुन्दर भी जान पडता है पर कोई भी नही जानता कि वह वास्तव मे क्या है। इसलिए यहाँ तारे को अधकार का सुन्दर रहस्य कहा गया है। साथ ही इस पद मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—अपनी प्रसिद्ध कृति 'आँसू' मे भी प्रसाद ने कहा है—

कितनी निर्जन रजनी मे तारो के दीप जलाये।
स्वर्गंगा की धारा मे उज्ज्वल उपहार चढाये।

आतप तापित • मधुमय संदेश ।

शब्दार्थ—आतप तापित=धूप मे व्यथित, कष्टो से दुखी । छाया के देश=छाया के स्थान, आश्रय दाता । अनन्त=असीम । मधुमय संदेश=सुखद या आनन्द संदेश ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि तारे की शीतल छाया मे प्राणी अपने कष्टमय जीवन को भूल कर अपूर्व सुख शांति पाता है और गिनती मे भी ये तारे असंख्य हैं । वस्तुत अनन्त की गणना का अर्थ यह है कि आकाश मे उदित तारो को देखकर हमे असख्य का ही बोध होता है । साथ ही मनु यह भी कहते है कि तारे उदय होते ही समस्त प्राणियो को सुखद संदेश प्रदान करते है और जिस प्रकार सघन अधकार मे भी वे चमकते रहते हैं उनसे यही प्रेरणा मिलती है कि बडी से बडी विपत्तियो मे भी आशा की किरण छिपी हुई है ।

टिप्पणी—(१) इस पद में कवि ने तारे को 'छाया का देश' कहकर यह स्पष्ट करना चाहा है कि जिस प्रकार धूप से पीड़ित व्यक्ति को छाया का स्थान सुखद एवं शांतिमय प्रतीत होता है उसी प्रकार विरह-व्यथित व्यक्ति को तारे सुख एवं शाति से पूर्ण जान पड़ते हैं ।

(२) इन पक्तियो में 'तारे को मधुमय सदेश' देने वाला कहकर कवि ने यह सकेत किया है कि तारा अधकार मे भी प्रकाश देकर अर्थात् घोर आपत्तियो मे भी कर्मशील रहकर मनुष्य को आपत्तियो मे भी हँसते रहने और सदैव कर्मशील बने रहने का संदेश प्रदान करता है ।

(३) इस पद मे रूपक अलकार की योजना हुई है ।

आह शून्यते ••• ••• • मधुर हुई ?

शब्दार्थ—शून्यता=सूनापन, नीरवता । इन्द्रजाल=जादू को उत्पन्न करने वाली । रजनी=रात्रि । मधुर=सुखद, शांतिदायक ।

व्याख्या—मनु रात्रि को सम्बोधित कर कह रहे हैं कि हे शून्य रात्रि, तू इतनी चालाक क्यो है और तूने यह चुप रहने की चतुराई क्यो ग्रहण की है । साथ ही ये इन्द्रजाल के खेल रचने वाली जादूगरी रात्रि तू आज मुझे इतनी मधुर क्यो लग रही है ? वस्तुत चुप रहने से न केवल रहस्य ही खुलता है अपितु आकर्षण भी बढता है इसलिए चुप रहना भी एक प्रकार का कौशल ही है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण, रूपक, परिकर और विरोधाभास

आदि अलकारो की योजना हुई है तथा प्रकृति का उद्दीपन रूप मे चित्रण हुआ है।

जब कामना • •• • अरी प्रतीप ?

शब्दार्थ—कामना=इच्छा, रगीन सुनहरी भावना परन्तु यहाँ कवि का अभिप्राय सध्या से है। सिधु तट=सागर का किनारा। तारा दीप=तारा रूपी दीपक। सुनहली साडी=सुनहरी साडी पर यहाँ कवि का अभिप्राय सध्या-कालीन रग विरगे वादल से है। हँसती=चाँदनी छिटकती। प्रतीप=विपरीत आचरण।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जब इस नीले आकाश रूपी समुद्र मे सध्या सुन्दरी तारा रूपी दीपक को प्रवाहित करने आती है तब वह रात्रि उसकी सुनहली साडी को फाडकर हँसने क्यो लगती है ? वस्तुत इन पक्तियो का अर्थ यह है कि पश्चिम के सिंधुराभ साध्यगगन मे एक तारा टिमटिमाया करता है और उसे लक्ष्यकर कवि यह कल्पना करता है कि सध्यारूपी सुन्दरी ने आकाश रूपी समुद्र मे अपनी किसी विशिष्ट इच्छा की पूर्ति के लिए दीपक प्रवाहित कर दिया है। साथ ही सायकाल के स्वर्णिम वादलो को सध्या सुन्दरी की सुनहली साडी मानकर कवि ने कहा है कि रात्रि ने उन्हे फाडकर चाँदनी के रूप मे हँसना प्रारम्भ कर दिया है। इस प्रकार रात्रि का यह विपरीत आचरण ही है।

टिप्पणी—कवि ने यहाँ सध्या के स्थान पर कामना शब्द का प्रयोग कर अपनी नवोन्मेपशालिनी प्रतिभा शक्ति का परिचय दिया है। साथ ही इसमे रूपकातिशयोक्ति, रूपक, मानवीकरण एवम् समासोक्ति आदि अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी अपनी प्रसिद्ध काव्यकृति 'यशोधरा' मे राहुल जननी गोपा को प्रिय-प्राप्ति की कामना से रोहिणी नदी मे दीप-दान करते हुए लिखा है—

तुझे नदीश मान दे। नदी, प्रदीप-दान ले।

इस अनन्त काले •• •••• • मृदु हास।

शब्दार्थ—अनन्त काले शासन=नियति के कठोर एव दु खपूर्ण शासन। उच्छृखल=निरकुशता से पूर्ण। आँसू=यहाँ ओस से अभिप्राय है। मृदुहास=कोमल हँसी, यहाँ चाँदनी।

व्याख्या—वस्तुत सध्या के समय थोडी देर पश्चात ही रात्रि अपने समस्त वैभव के साथ छा जाती है और सध्या का साम्राज्य समाप्त हो जाता है। इस प्रकार कवि यहाँ यह कल्पना कर रहा है कि सध्या की भाँति इस धुधले जीवन मे तारे के समान आशा उदय होती है परन्तु स्वर्गीय कल्पना को भग करती हुई शीघ्र ही निराशा रूपी रात्रि भी आ जाती है और जीवन मे विपमता ही देख पडती है। इतना ही नही जब सध्या अधकार रूपी स्याही को ताराओ रूपी आँसुओ से घोलकर चारो ओर व्याप्त इस काले शासन अर्थात् चारो ओर छाई हुई कालिमा का क्रूर एव उच्छृखल इतिहास लिखना प्रारम्भ करती है तब यही रात्रि चाँदनी के रूप मे मद मद मुस्कराने लगती है और उसे लिखने नही देती। यहाँ काले शासन से अभिप्राय चारो ओर व्याप्त अधकार से है और इसे हम नियति का अत्याचारपूर्ण शासन भी कह सकते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने 'अनन्त काले शासन' पदावली द्वारा मनु की मानसिक अवस्था का चित्रण किया हे और सध्या के इतिहास लिखने मे मानवीकरण की योजना हुई है। साथ ही यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार भी है।

विश्व कमल . . .. टोने से।

शब्दार्थ—विश्व कमल=ससार रूपी कमल। मृदुल=कोमल। मधुकरी=भ्रमरी। टोना=जादू।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार कोई भ्रमरी कमल के कोमल फूल को चूमकर और उसे मोहित कर चली जाती है उसी प्रकार यह रात्रि भी न जाने किस कोने से आकर विश्व का चुम्बन करती हे तथा इस मधुर चुम्बन का स्पर्श पाते ही समस्त जगत निद्रामग्न हो जाता है और इसे देखकर यही आभास होता है कि मानो कही दूर बैठा हुआ कोई जादूगर तेरे बहाने ससार को मोहित करने वाला मत्र पढ रहा है।

टिप्पणी—इस पद मे कवि ने अत्यन्त मार्मिक कल्पना की है और परम्परित रूपक अलकार की योजना भी हुई है।

किस दिगन्त . . . किसके पास ?

शब्दार्थ—दिगन्त रेखा=दिशा का कोना या क्षितिज का कोना। संचित=एकत्र। समीर=वायु, पवन। मिस=बहाने।

व्याख्या—वस्तुत इस शीतल वायु को देखकर यही जान पडता है कि मानो

रात्रि ने दिशा के किसी कोने मे अपनी सिसकियो रूपी साँसें एकत्र कर ली हैं। इसलिए जब यह वायु पवाहित होती है तब यही प्रतीत होता है कि रात्रि भी अपने किसी प्रेमी से मिलने के लिए तीव्र गति से जा रही हो और शायद अधिक तेजी से चलने के कारण वह थक कर हाँफने लगी हो। इस प्रकार मनु रात्रि से पूँछते हैं कि हे रात्रि तू यह बता कि वास्तव मे तू किससे मिलने जा रही है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे कवि ने रात्रि का मानवीकरण किया है और कैतवापन्हुति एवम् समासोक्ति अलकार की योजना हुई है।

विकल ... फिर अँधेर।

शब्दार्थ—विकल=व्याकुल, यहाँ जोर। खिलखिलाती=हँसती। तुहिन कण=ओस के कण। फेनिल लहरो=चाँदनी के समय समुद्र में उठने वाली ऊँची-ऊँची लहरें जिन पर झाग छाए रहते हैं। फिर से अँधेर मचना=पुन प्रलयकाल की सी हलचल होना।

व्याख्या—मनु का कहना है कि आखिर यह रात्रि चाँदनी के रूप में क्यो इतनी जोर से खिलखिलाकर हँस रही है? इस प्रकार उनका यही विचार है कि रात्रि को चाँदनी के रूप मे व्यर्थ ही इतनी हँसी न बिखेरनी चाहिए क्योकि उसके इतना अधिक हँसने से ओसकणो व समुद्र की लहरो में व्याकुलता बढ जायगी। यहाँ यह रमणीय है कि चाँदनी छाते ही ओस की बूँदें झलकने लगती है और वे काँपती हुई जान पडती हैं तथा चन्द्रमा की किरणा का स्पर्श पाते ही समुद्र भी उमडने लगता हे अत रात्रि में छिटकी हुई चाँदनी को देखकर यह कल्पना करना कि इससे ओस की नन्ही-नन्ही बूँदें और समुद्र की लहरें व्याकुल हो उठेंगी, उचित ही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे रात्रि का मानवीकरण किया गया है और भाषा मे लाक्षणिक एव सुन्दर व्यजना शक्ति भी है।

घूँघट उठा ... . मे लाती।

शब्दार्थ—घूँघट=चाँदनी का अवगुठन। ठिठकती=चलते-चलते रुक जाना और फिर चलना। विजन=निर्जन, सुनसान। स्मृति पथ मे लाती=स्मरण करती, याद करती।

व्याख्या—वस्तुत बादलो में से निकलता हुआ चन्द्रमा ऐसा जान पडता है मानो कि रात्रि ने अपने मुख पर से घूघट हटा लिया हो। इस प्रकार मनु

रात्रि से यह पूछते हैं कि आखिर वह अपने इस घूघट को हटाकर किसे देख रही है और उसका ऐसा कौन-सा प्रेमी है जिसे देखकर वह मुस्कराने लगती है तथा रुक-रुककर चलने सी लग जाती है। उसे इस प्रकार ठिठकते हुए देखकर यह अनुमान होता है कि मानो इस नीरव आकाश में उसे अपने किसी विस्मृत प्रेमी की स्मृति हो आती है और वह किसी भूली हुई बात को स्मरण करना चाहती है लेकिन चूँकि वह स्पष्टता से याद नही कर पाती अत रुक-रुककर ही आगे बढती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो में कवि ने रात्रि को शुक्लाभिसारिका नायिका के रूप मे अकित किया है और समासोक्ति, उपमा एव रूपकातिशयोक्ति आदि अलकारो की भी योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद मे भी रात्रि के आगमन की नायिका के रूप में कल्पना की गई है—

रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यऽक्षभि । विश्वा अधि श्रियोऽधित ॥
ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युऽद्वत । ज्योतिषा बाधते तम ॥
निरु स्वसारमस्कृतोषस देव्यायती । अपेदु हासते तम ॥

रजत कुसुम .... जावेगी भूल।

शब्दार्थ—रजत=चाँदी। कुसुम=फूल। रजत कुसुम=चन्द्रमा। धूल=पुष्प धूल, पराग यहाँ कवि का अभिप्राय चाँदनी से है। ज्योत्स्ना=चादनी। बावली=वैभव में उन्मत।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि अरी बावली रात, तू चन्द्रमा रूपी चांदी के फूल से नवीन पुष्प रस सी चाँदनी जैसी धूल न उडा अन्यथा दूसरो की तो बात ही क्या है तू स्वय भी इसमें खो जायगी।' इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार राह में धूल का ववण्डर छाते ही लोग अपना पथ भूल जाते हैं और उनका रास्ता पार करना कठिन हो जाता है उसी प्रकार यदि रात्रि भी चाँदनी रूपी धूल बिखरायेगी तो वह स्वय भी बेसुध होकर अपने आपको भूल जायेगी। इन पक्तियो से यह अर्थ भी ध्वनित होता है कि चाँदनी रात मे मादकता और भी अधिक बढ जाती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो में प्रकृति चित्रण की उपदेशात्मक प्रणाली प्रयुक्त हुई है और रूपकातिशयोक्ति एव उपमा अलकार का प्रयोग भी हुआ है।

पगली .. .. बेसुध चंचल।

शब्दार्थ—अंचल=वस्त्र का छोर पर यहाँ आकाश से अभिप्राय है। मणिराजी=मणियों का समूह पर यहाँ तारागण। बेसुध=बेखबर।

व्याख्या—मनु का कहना है कि रात्रि अपनी मस्ती मे ही लीन होकर इस प्रकार पागल हो गई है कि उसे अपने आकाश रूपी आँचल का भी ध्यान न रहा और वह यह भी न जान पाई कि उसका आँचल अचानक कैसे छूट पडा है तथा इस आँचल की मणियाँ ताराओं के रूप मे कैसे बिखर रही हैं। मनु कहते हैं कि अपनी सुध-बुध भूली हुई चचल रात्रि को अपनी इन मणियों को समेट लेना चाहिए।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे कवि ने मानवीकरण अलकार की सहायता से रात्रि को एक अल्हड नायिका के रूप मे अकित किया है। साथ ही यहाँ प्रयोजनवती गौणी साध्यवसाना लक्षणा भी है।

फटा हुआ · · · भोली भाली।

शब्दार्थ—नील वसन=नीला वस्त्र, यहाँ नीला आकाश। अकिंचन=दरिद्र।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि अपने यौवन मे ही मस्त रहने वाली रात्रि का वस्त्र जगह-जगह से फट गया है और इन फटे हुए स्थानों से तारों के रूप में उसका शारीरिक सौन्दर्य चमक उठता है तथा वह दरिद्र जगत, जिसने कि कभी भी रम्य रूप के दर्शन नही किए थे, रात्रि की इस भोली भाली मोहनी छवि को देख रहा है परन्तु उसे इस बात का आभास नही होता कि यह निर्धन ससार उसकी छवि को लूट रहा है। स्मरण रहे कि यदि रूपवती नारी की साडी या वस्त्र किसी स्थान पर जीर्ण होकर फट जाय तो उस स्त्री के शरीर के वे अग, जो कि साडी से ढके रहते हैं, स्वाभाविक ही बाहर दिखाई देने लगेंगे और जिस व्यक्ति ने कभी भी नारी का सौन्दर्य नही देखा है, वह शिष्टता का ध्यान छोडकर उसे बार-बार देखने लगेगा। इसी तथ्य को लेकर यहाँ पूर्व कथित कल्पना की गयी है।

टिप्पणी—यहाँ 'नील वसन' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है और सम्पूर्ण पद मे मानवीकरण अलकार है।

ऐसे अतुल · ·· ·· .... ·· · के दाग।

शब्दार्थ—अतुल अनत विभव=चाँदनी के रूप मे फैला हुआ अपार वैभव।

विराग=उदासीनता। जीवन की छाती के दाग=जीवन की प्रेम सम्बन्धी पुरानी बातें।

व्याख्या—मनु रात्रि को सम्बोधित कर कह रहे हैं कि हे रात्रि, तेरे पास चाँदनी के रूप में असीम सौन्दर्य और अद्वितीय वैभव होते हुए भी तू उदास क्यों जान पड़ती है तथा तेरे मुख पर पहले जैसी चमक क्यों नहीं है? मनु रात्रि से कहते हैं कि तू एक दम से विरक्त क्यों हो गई है और क्या तू भूली हुई सी अपने जीवन की प्रेम सम्बन्धी पुरानी बातें याद कर रही है जिससे तेरी कांति फीकी पड़ गई है।

टिप्पणी—इस पद में मानवीकरण अलंकार है।

मैं भी · · ··· ·· सोता था।

शब्दार्थ—भ्रांति=भ्रम। सुख सोता था=सुख में लीन रहता था।

व्याख्या—रात्रि को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि हे रात्रि, जिस प्रकार तू अपनी प्रेम सम्बन्धी पुरानी बातें भूल गई है उसी प्रकार मैं भी अपनी सभी पुरानी बातें भूल गया हूँ और मुझे यह याद नहीं रहा कि जिस भावना में डूबकर मेरा मन सुख निद्रा में मग्न था वह वास्तव में प्रेम भावना थी या वेदना थी या फिर भ्रांति थी या कोई ऐसी वृत्ति थी, जिसका कि नामकरण नहीं किया जा सकता।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में प्रकृति के उद्दीपनकारी स्वरूप का अंकन हुआ है।

मिले कहीं · · · ···· · · भुला देना।

शब्दार्थ—भुला देना=गँवा देना। उसे=मनु का प्रणय-पात्र।

व्याख्या—मनु रात्रि से कहते हैं कि हे रात्रि! तुझे यदि जाते हुए अचानक कहीं मेरा सुख मिल जाए तो उसे अपनी सौन्दर्य राशि की तरह गँवा मत देना बल्कि कृपापूर्वक उसे मेरे पास ले आना और मैं तेरी इस कृपा के प्रतिकार स्वरूप तुझे तेरा भाग अवश्य दूँगा पर तू मेरे प्रणय पात्र को भूल न जाना।

टिप्पणी—कवि प्रसाद ने इन पंक्तियों में आगामी सर्ग की कथा का संकेत चतुरतापूर्वक दिया है।

तीसरा सर्ग
श्रद्धा

कथानक—हिमालय के एकान्त प्रदेश मे विचारो मे लीन मनु को अचानक ही किसी नारी-कंठ से निकला हुआ यह मधुर प्रश्न सुनाई दिया—'अरे ! संसार-समुद्र के इस तट पर तरंगो द्वारा फेंकी गयी मणि के समान तुम कौन हो' और इस प्रश्न को सुनकर मनु का हृदय एक मधुर रस से ओतप्रोत हो गया। उन्होंने देखा कि उनके सामने गाधार देश के मुलायम नील रोम वाले भेड़ो के चर्म से ढकी हुई एक सुन्दर बाला खडी है। मनु ने उसे यह उत्तर दिया कि इस आकाश और धरती पर के मध्य अपने विवश जीवन को लिए वे भ्रात ज्वलित उल्का की भाँति असहाय घूम रहे हैं और उनका जीवन पहेली की भाति उलझा हुआ है तथा वे अनजाने मे मार्ग पर चले जा रहे हैं। वे यह बता नही सकते कि आखिर वे कौन हैं परन्तु बसत के दूत की भाँति तुम कौन हो ?

मनु का यह प्रश्न सुनकर उस बाला ने कहा—"मेरे मन मे गधर्वों के के देश मे रहकर ललित कलाएँ सीखने का उत्साह था और मैं हमेशा इधर-उधर घूमा करती थी तथा मन कौतूहलपूर्ण मानस के सुन्दर सत्य को खोजना चाहता था। इसीलिए घूमती फिरती मैं इधर चली आयी और हिमालय की इस सुन्दरता ने मुझे आकृष्ट किया तथा पैर उधर ही बढ चले। शैलमालाओ का यह शृगार देखकर मेरे नेत्रो की प्यास बुझ गयी और मैं यहीं रहने लगी। एक दिन अचानक ही अपार सागर पहाड से टकराने लगा तथा यह जीवन निरुपाय सा हो गया। यहाँ समीप ही यज्ञ बलि का कुछ अन्न पडा देख मैं सोचने लगी कि प्राणियों की कल्याण चिन्ता मे रत यह किसका दान है और तभी मैं इस निष्कर्ष पर पहुँची कि अवश्य कोई प्राणी जीवित बचा है।"

वह बाला मनु से पूछती है कि "तुम इतने थके, व्यथित और हताश से क्यो हो तथा अज्ञात दुखो के भय से अनायास जटिलताओ का अनुमान कर कामना से क्यो दूर भागना चाहते हो ? यह कामना तो सर्ग इच्छा का ही परिणाम है और विषमता की पीडा से व्यस्त होकर यह महान विश्व स्पदित हो रहा है तथा यह दुख ही के विकास का सत्य है।"

उस बाला की यह मधुर वाणी सुनने के पश्चात मनु विषाद पूर्ण स्वरों में कहने लगे कि तुम्हारी ये बातें मन मे उत्साह की तरगें उत्पन्न अवश्य करती है लेकिन यह जीवन तो निरुपाय सा है। यह सुनकर उस आगतुक ने पुनः अत्यन्त स्नेह के साथ कहा कि तुम इतने मे ही अधीर हो रहे हो। मर कर वीर पुरुष जिसे जीतना चाहते है उसी जीवन का दाँव तुम अनायास ही हार बैठे हो। वह बाला कहती है कि केवल तप ही जीवन का सत्य नही है और नवीनता एवम् सृष्टि ही इसके रहस्य है तथा प्रकृति के यौवन का शृगार कभी भी बासी फूल नही करते।

उस बाला का कहना है कि कर्म का भोग और भोग का कर्म, यही तो सृष्टि का कर्म है तथा यही जड चेतन का आनन्द है। आकर्षणहीन होने के कारण ही तुम आत्मविस्तार मे असमर्थ रहे हो और तुम्हे अपने ही बोझ मे दबा हुआ देख सहयोग देना मैं अपना कर्त्तव्य समझती हूँ। मेरा हृदय तुम्हारे लिये उन्मुक्त है और दया, माया, ममता, मृदुता तथा विश्वास के रत्न ग्रहण कर तुम सृष्टि के मूल रहस्य बन जाओ।

मनु को सम्बोधित कर वह बाला कह रही है क्या तुम्हे विधाता का यह मगलमय वरदान नहीं सुनाई पड रहा कि शक्तिशाली हो विजयी बनो। तुम अमृतसतान हो अत तुम्हे डरना नही चाहिए और मन के चेतन राज को पूर्ण कर शक्ति के बिखरे विद्युत्कणो का समन्वय इस प्रकार करना चाहिए कि मानवता विजयिनी हो जाय।

कौन तुम . अभिषेक ?

शब्दार्थ—ससृति जलनिधि=ससार रूपी समुद्र, भवसागर। तीर=किनारा, तट। प्रभा की धारा=काति की किरणे। अभिषेक=आलोकित करना, सुशोभित करना।

व्याख्या—एक दिन जब मनु विभिन्न विचारो मे लीन थे तब अचानक उन्हे ऐसा जान पडा कि कोई उनसे यह कह रहा है—"जिस प्रकार समुद्र की लहरें समुद्र मे भीषण उथल पुथल मचाकर सतह से मणियो को निकालकर फेंक देती हैं उसी प्रकार इस ससार रूपी समुद्र की लहरो अर्थात् सासारिक आघातो से ठुकराए हुए मणि के समान तुम कौन हो ? साथ ही जिस प्रकार समुद्र तट पर पडी हुई वह मणि अपनी आभा से समीपवर्ती प्रदेश को पूर्णत जगमगा देती है और उस शून्य स्थान मे उसका प्रकाश फैल जाता है उसी

प्रकार इस सागर के समीप चुपचाप बैठे, अपने अपूर्व व्यक्तित्व की आभा प्रकट करने वाले तुम कौन हो।'

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे न केवल आगन्तुक का औत्सुक्यपूर्ण हृदय स्पष्टत अंकित हुआ है अपितु मनु की उपमा भी सार्थक ही जान पडती है क्योकि भीषण जलप्रलय मे ससार का सब कुछ नष्ट हो चुका था लेकिन मनु शेष बच रहे थे। इस प्रकार ससार रूपी सागर की लहरो द्वारा फेंकी गई मणि के सदृश्य ही वे जान पडते थे और देवताओ का वशज होने के कारण इन्हे अपूर्व व्यक्तित्व वाला समझना भी उचित ही है।

(२) यहाँ परपरित रूपक एव परिकर अलकार है और लक्षणा शक्ति भी है।

(३) कामायनी के उस सम्पूर्ण सर्ग मे १६ मात्राओ का शृगार छन्द प्रयुक्त हुआ है।

मधुर मन का आलस्य।

शब्दार्थ—मधुर विश्रान्त=मधुरता से पूर्ण थकावट। मौन=शाति, नीरवता। करुणामय=करुणा से पूर्ण।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस आगतुक ने मनु से यह पूछा कि "तुम इस एकान्त स्थान मे क्यो बहुत थके हुए और आलस्य से भरे हुए बैठे हो तथा तुम्हारी शातिपूर्ण मनोहर आकृति पर जो एक अपूर्व माधुर्य-सा दीख पडता है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि मानो तुमने इस जगत का रहस्य भली भाति जान लिया है। साथ ही तुम्हारी मौनता न केवल तुम्हारे बाह्य सौन्दर्य का बोध कराती है बल्कि उससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि तुम्हारा हृदय करुणाशील है, अर्थात् कोमल भावनाओ से पूर्ण है और उसमे चचलता का लेश मात्र भी नही है।" वास्तव मे इन पक्तियो मे कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनु वहाँ एकाग्र-चित्त हो किसी बात पर विचार कर रहे थे और उनकी मुखाकृति मे व्यग्रता झलक उठती थी तथा यह भी आभास होता था कि उनके अतरतम मे कोई व्यथा छिपी हुई है।

टिप्पणी—(१) कामायनी के इस सर्ग का यह आरम्भ नाटकीय ही है और कवि ने इन पक्तियो मे आगन्तुक का परिचय नही दिया है पर उसकी कोमल भावनाओ से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रश्नकर्त्ता कोई नारी ही है। साथ ही कवि यह भी स्पष्ट करना चाहता है कि कामायनी का चरित्र-नायक अब परिस्थितियो से आक्रान्त हो सवेदनशील हो चला है।

(२) इन पंक्तियों में निरंग रूपक, गम्योत्प्रेक्षा, विशेषण विपर्यय और विरोधाभास आदि अलंकारों की योजना हुई है।

सुना यह .... सुन्दर छन्द।

शब्दार्थ—मधु गुंजार=मधुर गूंज, मनोहर स्वर। मधुकरी=भ्रमरी। प्रथम कवि=आदि कवि महर्षि वाल्मीकि।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब उस आगंतुक ने कमल के समान कोमल मुख को झुकाए हुए भ्रमरी की मधुर गुञ्जार की भांति वाणी में ये पंक्तियाँ मनु से कहीं तब मनु का हृदय स्वाभाविक ही आनंदित हो उठा। यहाँ यह स्मरणीय है कि कवि ने अभी तक इन दस पंक्तियों में कहीं भी आगंतुक का परिचय नहीं दिया है परन्तु यहाँ इन दो पंक्तियों से यह अनुमान हो जाता है कि वह कोई सुन्दर, मृदुभाषिणी, लज्जाशील, करुणामयी नारी ही है क्योंकि उसका मुख कमल के समान तथा वाणी भ्रमरी की गुंजार जैसी मधुर कही गयी है और साथ ही कवि यह भी कहता है कि उसने अपना सिर नीचे झुका लिया था। इन पंक्तियों मे स्वाभाविकता भी है क्योंकि जब आगंतुक के मुख को कमल माना गया है तब उसकी वाणी को भ्रमरी की गूंज मानना युक्तिसंगत ही है। कवि पुनः कहता है कि आगंतुक की वाणी मनु को उसी प्रकार अनायास निकली हुई जान पड़ी जैसा कि आदि कवि के मुख से अनायास ही मधुर छंद निकल पड़ा था।

टिप्पणी—(१) यद्यपि डॉ. फतहसिंह ने 'प्रथम कवि का ज्यों सुन्दर छन्द' की व्याख्या करते हुए इसे प्राचेतस आदि से सम्बद्ध किया है परन्तु परम्परा प्राप्त मान्यताओं के अनुसार कवि प्रसाद ने यहाँ आदि कवि वाल्मीकि की ओर ही संकेत किया है। कहा जाता है कि महर्षि वाल्मीकि जब एक बार स्नान कर लौट रहे थे तब उन्होंने देखा कि एक व्याध ने क्रौंच पक्षी के युग्म में से एक पक्षी को अपने बाणों से मार गिराया है। उस समय वाल्मीकि के करुणाशील मानस से यह श्लोक निःसृत हुआ—

मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेक वधीः काममोहितम् ॥

कहते हैं देवर्षि नारद ने उसी समय प्रकट हो उन्हें रामायण लिखने की प्रेरणा दी।

(२) इन पंक्तियों में प्राकृतिक उपमानों द्वारा सजीव बिम्बविधान किया गया है और उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है।

एक झिटका ... फिर मौन।

शब्दार्थ—झिटका सा लगा=बिजली सी दौड़ गई। चुके से=आश्चर्य चकित होकर। कुतूहल= आश्चर्य।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि आगंतुक की मधुर वाणी को सुनते ही मनु के रोम-रोम में हर्ष की विद्युत लहर-सी प्रवाहित होने लगी और वे अत्यधिक प्रसन्न हुए तथा उन्हें ऐसा भान हुआ कि मानो कोई उनके हृदयरूपी धन को लूट लिए जा रहा है। कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि मनु को अपना हृदय उस ओर आकृष्ट होता सा जान पड़ने लगा और वे मुग्ध तथा आश्चर्य-चकित हो उसी की ओर देखने लगे जिस ओर उन्हें यह वाणी सुनाई पड़ी थी। मनु का मन यह जानने को उत्सुक हो उठा कि आखिर किस कोमल कंठ से यह वाणी निःसृत हुई है पर उन्हें अपने मन की कौतूहलता अधिक देर तक दबाकर नहीं रखनी पड़ी।

टिप्पणी—यहाँ 'कुतूहल सा रह गया फिर मौन' में विशेषण विपर्यय अलंकार है।

और देखा ... लिपटा घनश्याम।

शब्दार्थ—सुन्दर दृश्य=अत्यन्त रूपवान दर्शनीय वस्तु। नयन का=नेत्रों के लिए। इन्द्रजाल=जादू। अभिराम=सुन्दर। कुसुम वैभव=फूलों का वैभव अर्थात् फूल। चन्द्रिका=चाँदनी। घनश्याम=काले बादल।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु को अपने सामने एक सुन्दर नारी मूर्ति दिखाई दी जो कि उनके नेत्रों पर मोहक जादू सा डाल रही थी अर्थात् उन्हें अत्यधिक आकर्षक प्रतीत हो रही थी और यही कारण है कि ज्योंही उन्होंने उसे देखा त्योंही वे उसकी ओर आकृष्ट हो गए। कवि कहता है कि उस रमणी का शरीर ऐसा जान पड़ता था कि मानो वह फूलों से पूर्ण कोई लता हो या फिर काले-काले बादलों से घिरी हुई श्वेत शुभ्र चाँदनी हो। यहाँ यह स्मरणीय है कि कवि ने जो 'चन्द्रिका से लिपटा घनश्याम' कहा है उसका अर्थ यह नहीं है कि वह बाला श्यामवर्ण की थी और इसलिए इसका अर्थ यह करना कि 'कोई श्याम बादल जो कि चाँदनी से लिपटा हुआ हो' उचित नहीं है। वस्तुतः कवि यह कहना चाहता है कि वह रमणी नीला परिधान धारण

किए हुए थी और इसलिए यहाँ नीले वस्त्र की उपमा मेघ से तथा उसके गौर-वर्ण की उपमा चाँदनी से दी गयी है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि प्रसाद ने रूप चित्रण की नवीन पद्धति को अपनाया है और रूपक, उपमा तथा रूपकातिशयोक्ति आदि अलकारो की योजना हुई है।

हृदय की · ··· ··· ···· सौरभ संयुक्त।

शब्दार्थ—अनुकृति=प्रतिमूर्ति, नकल। बाह्य=बाहरी अङ्ग या सम्पूर्ण शरीर। काया=शरीर। उन्मुक्त=स्वच्छन्द, खुला हुआ। मधु पवन=वसती वायु। क्रीडित=खेलता हुआ, झूमता हुआ। शिशु शाल=शाल का छोटा वृक्ष। सौरभ सयुक्त=सुगन्धपूर्ण।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि रमणी का बाह्य तन उसके हृदय की ही अनुकृति था अर्थात उसका शरीर बाहर से जितना मनोहर जान पडता था उतना ही उसका हृदय भी उदारता से ओतप्रोत था। कवि का कहना है कि यदि उस रमणी का शरीर लम्बा एव कोमल था तो हृदय भी विशाल और सुकुमार ही था अर्थात् उसका बाह्य तन और अन्तर्मन दोनो ही सरल एवम् सकीर्णता रहित थे। कवि कह रहा है कि जिस प्रकार कोई लघु शाल वृक्ष सुन्दर सुरभि युक्त पवन के झोको से हिलारें-सी लेता हमेशा प्रिय लगता है उसी प्रकार उस वाला के शरीर से भी अत्यन्त भीनी-भीनी गन्ध आ रही थी वह लावण्यता की प्रतिमा सहज सी प्रिय जान पड़ती थी। कवि ने इन पक्तियो मे उस रमणी को अपूर्व रूपवती कहा है और 'मधुपवन क्रीडित' कहने से समवत उसका अभिप्राय यही है कि उस रमणी के शरीर से सुमधुर वायु अठखेलियाँ सी कर रही है। साथ ही यह भी कह सकते हैं कि उसके हृदय मे मधुर भावनायें विद्यमान थी और वह अनेक उत्तम गुणो से पूर्ण भी जान पडती थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कि वे आगन्तुक रमणी अर्थात श्रद्धा को 'हृदय की अनुकृति वाह्य उदार एक लम्बी छाया उन्मुक्त' कहकर उसके बाह्य एव आन्तरिक गुणो की ओर सकेत किया है। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा हृदय पक्ष का प्रतीक है और उसमे उदारता, विशालता, गम्भीरता, पर-दु खकातरता, मधुरिमा एव ममता आदि भी गुण हैं। यहाँ यह स्मरणीय है कि ऋग्वेद मे भी श्रद्धा का सम्बन्ध हृदय से माना गया है—

श्रद्धाहृदय्य याकूत्या श्रद्धया विदन्ते वसु ।

(२) यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है ।

मसृण गाधार ... कोमल वर्म ।

शब्दार्थ—मसृण=कोमल, चिकना । मेष=मेढा, भेड । चर्म=खाल, चमडा । वपु=शरीर, तन । कात=सुन्दर । वर्म=आवरण, कवच ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस नारी का कोमल सुन्दर शरीर गाधार देश के चिकने नील रोम वाले भेडो के चमडे से आच्छादित था अर्थात युवती ने जो वस्त्र अपने शरीर पर धारण किया था वह गाधार देश की नीले रोयें वाली भेडो के चिकने चमडे से बना था । इस प्रकार वह वस्त्र उसके सुन्दर शरीर पर सुकोमल आवरण के समान था ।

टिप्पणी—कवि ने यहाँ यह स्पष्ट करना चाहा है कि वह बाला इतनी सुकुमार थी कि वस्त्र भी उसने अपने कोमल तन के अनुरूप ही धारण कर रखे थे । साथ ही यहाँ गम्योत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई ।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद मे भी इस प्रकार के सकेत मिलते हैं कि वैदिक युग मे भेडो के रोम वाले चर्मों को धारण करने की प्रथा थी—

सर्वाहमस्मि रोमशा गधारीणामिवाविका ।

नील परिधान गुलाबी रग ।

शब्दार्थ=परिधान=वस्त्र । सुकुमार=अत्यन कोमल । मृदुल=कोमल, सुन्दर ।

व्याख्या—कवि मनु से प्रश्न करने वाली आगतुक रमणी (श्रद्धा) का रूप वर्णन करते हुए कह रहा कि उस रमणी के नीले वस्त्र मे से उसका सुकुमार एव सुन्दर शरीर कही खुला हुआ था अर्थात् परिधान युक्त स्थानो के अतिरिक्त उसके शरीर के अन्य अग खुले हुए थे और वे ऐसे जान पडते थे कि मानो काले बादलो रूपी वन मे गुलाबी रग के बिजली के फूल खिले हुए हो । इन पक्तियो मे कवि ने नीले परिधान के लिए बादल और रमणी के अधखुले अगो के लिए बिजली के फूल नामक उपमाओ का प्रयोग कर यह स्पष्ट करना चाहा कि उसका शरीर अपूर्व सौन्दर्यशाली था और उसका वर्ण गुलाबी रग का था ।

टिप्पणी—इन पक्तियो कामायनी की नायिका श्रद्धा के अपूर्व सौन्दर्य का चित्रण किया गया है और वस्तूत्प्रेक्षा एव रूपक अलकार की योजना हुई है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास ने भी उर्वशी का रूप वर्णन करते हुए कहा है—

> सुसूक्ष्मेणोत्तरीयेण मेघवर्णेन राजता ।
> तनुरभ्रवृता व्योम्नि चन्द्रलेखेव गच्छति ॥

आह ! वह मुख . . . छविधाम ।

शब्दार्थ—व्योम=आकाश । घनश्याम=काले बादल । अरुणरवि मंडल लाल रंग का सूर्य मण्डल । छवि धाम=अपार सौन्दर्य से युक्त ।

व्याख्या—कवि अब उस बाला के मुख का वर्णन करते हुए कहता है कि उसका मुख इतना अधिक सुन्दर था कि उसका वर्णन करना सहज नही है । इस प्रकार कवि प्रारम्भ मे ही यह स्वीकार कर लेता है कि उस रमणी अर्थात् श्रद्धा के सुन्दर मुख की तुलना किसी भी पदार्थ से नही की जा सकती और उसकी सुन्दरता अवर्णनीय है । कवि कह रहा है कि उस रमणी के मुख की शोभा वैसी ही थी जैसी कि सध्या के समय आकाश के पश्चिमी भाग मे काले-काले बादलो से घिरे हुए लाल सूर्यमण्डल की रहती है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के मुख को अरुण रवि मण्डल कहा है और काले बालो को घनश्याम मानकर यह कहना चाहा है कि श्रद्धा का मुख अरुण सूर्य मण्डल की भाँति जगमगा रहा है । साथ ही यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा अलकार प्रयुक्त हुआ है ।

या कि नव . . . अश्रान्त ।

शब्दार्थ—इन्द्रनील लघु शृंग=नीलम के पहाड की छोटी चोटी । कात =सुन्दर । अचेत=शान्त, विस्फोट रहित । माधवी रजनी=वसन्त की रात्रि । अश्रान्त=लगातार, निरन्तर ।

व्याख्या—कवि श्रद्धा के मुख का वर्णन करते हुए कहता है कि जिस प्रकार नवीन नीलम के छोटे से पहाड की चोटी पर वसन्त की रात मे ज्वालामुखी की लपटें अन्दर ही अन्दर धधकती रहती हैं उसी प्रकार उसका मुख भी शोभायमान है । चूँकि आगन्तुक रमणी अभी युवा ही थी और नीला परिधान पहने हुए थी अत कवि ने यहाँ लघु आकार के नीलम की कल्पना की है । यहाँ यह स्मरणीय है कि पुराने नीलम मे धब्बे पड जाते हैं और वह उतना आकर्षक नही जान पडता इसलिए कवि ने यहाँ 'नव इन्द्रनील' शब्द का प्रयोग किया है । साथ ही यह उस रमणी की यौवनावस्था ही है अत उसे

वसन्त की रात्रि मे धधकता हुआ ज्वाला मुखी कहा गया है और उसकी मुख कांति को ज्वालामुखी की लपटें माना गया है परन्तु पूर्णानुराग की भावना से रहित होने के कारण उसके अन्तर के ज्वालामुखी को उचित माना गया है।

घिर रहे . . . के पास

शब्दार्थ—अस अवलम्बित=कन्धे पर पडे हुए। घन शावक=छोटे-छोटे वादल। सुधा=अमृत। विधु=चन्द्रमा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस नवयुवती के मुखडे पर घुंघराले वाल इस प्रकार विखरे हुए थे कि मानो काले वादलो के सुकुमार शिशु ही चन्द्रमा के समीप पीयूष पान करने के लिए पहुँच गए हो। कवि यहाँ घुंघराले वालो की उपमा वादलो के छोटे-छोटे सुकुमार बच्चो से दे रहा है तथा मुख को चन्द्रमा मानता है। इस प्रकार उसकी दृष्टि मे जिस तरह काले-काले वादल चन्द्रमा के समीप एकत्र हो जाते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वे उसका सुधा रस पान करना चाहते हो उसी प्रकार उस वाला के कंधे तक लटकने वाले घुंघराले केशो को देखकर यही आभास होता था कि मानो वे भी उसके चन्द्रमा सदृश्य सुन्दर मुख का पियूष पान करने के लिए एकत्र हुए हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे सर्वथा उपयुक्त, सुन्दर एव चित्ताकर्षक सादृश्य योजना के दर्शन होते हैं और पूर्णोपमा अलकार का प्रयोग हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने अपनी काव्यकृति 'आँसू' मे भी मुख सौन्दर्य का चित्रण सर्वथा नवीन पद्धति से किया है—

बाँधा था विधु को किसने इन काली जजीरो से।
मणिवाले फणियो का मुख क्यो भरा हुआ हीरो से॥

और उस मुख . . . हो अभिराम।

शब्दार्थ—मुसक्यान=मुस्कराहट। रक्त=लाल। किसलय=नवीन एव कोमल पत्ती या कोपलें। अरुण=प्रभातकालीन उगता हुआ सूर्य। अम्लान=उज्ज्वल। अभिराम=सुन्दर।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस नवयौवना के मुख पर मद-मद हँसी को देख यही अनुमान होता था कि सम्भवत प्रभातकालीन बालारुण अर्थात् वाल-रवि की कोई आभायुक्त किरण ही किसी लाल कोपल पर विश्राम करती हुई वही टिक गयी है और इस दशा मे यह अत्यत सुन्दर जान पडती है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे कवि ने अरुण अधरो को लाल कोपल और मुस्कान को सूर्य की किरण माना है तथा रग साम्य एव प्रभाव साम्य की दृष्टि से यह साहश्य योजना अत्यंत स्वाभाविक एव मार्मिक है। साथ ही इस पद मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

नित्य यौवन · ···· जड़ मे स्फूर्ति।

शब्दार्थ—नित्य यौवन छवि=हमेशा रहने वाले यौवन की सुन्दरता। दीप्त=सुशोभित, चमकता हुआ। करुण कामना मूर्ति=करुणा से भरी हुई कामना की मूर्ति अर्थात् इच्छाओ को पूर्ण करने वाली। जड़=चेतना हीन, भावना हीन। स्फूर्ति=चेतन्य।

व्याख्या—कवि उस आगतुक रमणी का रूपवर्णन करते हुए कह रहा है कि उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो सम्पूर्ण सृष्टि की करुण भावना ने ही एकत्र होकर शरीर धारण कर लिया हो अर्थात् वह बाला अनन्त करुणामयी ही जान पडती थी। साथ ही उनका यह यौवन शाश्वत ही है अर्थात् हमेशा बने रहने वाला है और उसकी देह द्युति जिस तरह आज आभायुक्त है उसी तरह हमेशा ऐसी बनी रहेगी तथा उसके शरीर की शोभा कभी भी कम न होगी। कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि वह बाला न केवल अपूर्व सुन्दरी है अपितु करुणामयी भी है और उसके इस लौकिक सौन्दर्य को देखते ही मन इस प्रकार उसकी ओर आकृष्ट हो उठता है कि स्वाभाविक ही उसे स्पर्श करने की आकाक्षा होने लगती है। इतना ही नही वह इतनी सुन्दर थी कि जड पदार्थों मे भी स्फूर्ति जाग्रत करने की अर्थात् चेतना उत्पन्न करने की शक्ति रखती थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा को अलौकिक सौन्दर्य से ओत-प्रोत दिखाकर 'उसे विश्व की करुण कामना मूर्ति मानकर यह सकेत किया है कि श्रद्धा ससार की समस्त कामनाओ को पूर्ण करने वाली देवी है। साथ ही यहाँ रूपक एवं वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

उषा की पहली · ··· · ·· की गोद।

शब्दार्थ—लेखा=किरण। कांन=सुन्दर। माधुरी=माधुर्य, शोभा। भर मोद=आनन्द या उल्लास से पूर्ण। सलज्ज=लज्जायुक्त, लजीली। भोर=प्रात काल। द्युत=चमक, आभा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार प्रभातकालीन तारे की अपूर्व शोभा युक्त अकशय्या से मधुरिमा मे ओत-प्रोत उल्लास पूर्ण अपूर्व मादकता भरी और लज्जायुक्त उषा की पहली सुनहली किरण उठती है उसी प्रकार उस बाला के सुन्दर मुख पर हल्की सी मुस्कराहट छा रही थी। कवि ने यहाँ-प्रियतम की गोद मे रात्रि भर सोने के पश्चात् प्रभातकाल मे उठने वाली किसी नारी की कल्पना की है और उसका कहना है कि उस नारी के मुख पर जो हर्ष, मादकता एव लज्जा दीख पडती है वही उस बाला के मुख पर भी दिखाई देती थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के अरुणिम अधरो पर छाई शुभ्र मुस्कान का सजीव चित्र अकित किया है और इस पद मे वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

(२) यहाँ यह स्मरणीय है कि उस रमणी अर्थात् श्रद्धा को अब तक कभी भी प्रिय सयोग का अवसर न प्राप्त हुआ था अत इस पद मे प्रयुक्त उपमा को त्रुटिपूर्ण भी कहा जा सकता है पर कवि का उद्देश्य तो उस रमणी के मुख की शोभा का वर्णन करना मात्र था अत यह कल्पना त्रुटिपूर्ण नही है।

कुसुम कानन ... सदृश अबाध।

शब्दार्थ—कुसुम कानन अचल=फूलो से पूर्ण वन प्रदेश। मद पवन प्रेरित सौरभ=मन्द-मन्द वायु द्वारा लायी गयी सुगन्धि। परमाणु पराग रचित=फूलो के सुगन्धित पराग के परमाणुओं से रची गयी। मधु=फूलो का रस पराग। शुभ्र=उज्ज्वल, निर्मल। नवल=नवीन। मधु राका=वसन्त पूर्णिमा की चाँदनी रात। मद विह्वल प्रतिबिम्ब=मस्ती एव चचलता से पूर्ण मूर्ति या प्रतिमा। मधुरिमा=माधुर्य। अबाध=निर्विघ्न।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि वह सुकुमार नारी इतनी सुन्दर जान पडती थी कि मानो फूलो की वाटिका मे मन्द पवन के झकोरो से प्रेरित हो मकरन्द का आधार लिए हुए फूलो के इस अर्थात् पराग के कणो का समूह ही साक्षात देह धारण कर शोभायमान प्रतीत हो रहा हो और उन कणो पर मन को रुचिकर प्रतीत होने वाली सुन्दर स्वच्छ नव वसत की पूर्ण चाँदनी रात का प्रकाश पड रहा हो। इतना ही नही उस बाला के सुन्दर मुखडे पर रभस क्रीडायुक्त अर्थात् मधुरता से ओत-प्रोत मन्द-मन्द उठने वाली मुस्कराहट की स्वाभाविक झलक भी दीख पडती थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के सौन्दर्य का अतीन्द्रिय एव अपार्थिव चित्र अकित किया है और उपमा एव वस्तूत्प्रेक्षा अलकारो की सफल सयोजना भी हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रसिद्ध सूफी कवि मंझन ने भी 'मधुमालती' मे इसी प्रकार अपार्थिव शरीर-सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कहा है—

वर कामिनि तोहि प्रीति कै नीरन। माहि पानि भा सानि सरीरू॥
पूर्व दिनन मो जानहि, तुम्हरी प्रीत कै नीर।
मीहि माटी मधु समान कै, तौ यह वोला सरीर॥

सुपरिचित कवि गोस्वामी तुलसीदास ने भी 'रामचरित मानस' मे सीता के दिव्य एव अलौकिक रूप सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कहा है—

जो छवि सुधा पयोनिधि होई। परम रूपमय कच्छपु सोई॥
सोभा रजु मन्दर सिंगारू। मथै पानि पकज निज मारू॥
एहि विधि उपजै लच्छि जव सुदरता सुख मूल।
तदपि सकोच समेत कवि कहहि सीय सम तूल॥

कहा मनु ने .... असहाय।

शब्दार्थ—नभ धरणी=आकाश और पृथ्वी। निरुपाय=जिसके पास कोई उपाय न हो। उल्का=टूटा हुआ तारा। भ्रात=इधर-उधर भटकने वाला। शून्य=आकाश, निर्जन प्रदेश।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस आगतुक अर्थात् श्रद्धा की वातें सुनकर मनु ने उससे कहा कि इस आकाश और पृथ्वी के मध्य उनका जीवन एक रहस्य वनकर रह गया है अर्थात् वे इस प्रकार अनगिनती उलझनो से घिरे हैं कि उन्हे यही नही समझ मे आता कि इन उलझनो को कैसे सुलझाया जाय। मनु का कहना है कि जिस प्रकार अतरिक्ष से टूटा हुआ तारा जलते-जलते शून्य मे असहाय सा हो इधर-उधर भटकता फिरता है उसी प्रकार उन्हे भी अव व्यथा रूपी जलन को लेकर इस निर्जन प्रदेश मे विना किसी सहारे के इधर-उधर भटकना पड रहा है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु की दयनीय स्थिति का सुन्दर निरूपण हुआ है और पूर्णोपमा एव श्लेष अलकारो की योजना हुई है।

शैल निर्झर ... ... पाखड।

शब्दार्थ—शैल=पर्वत। निर्झर=झरना। हतभाग्य=भाग्यहीन,

अभागा । हिमखण्ड=बर्फ का टुकड़ा । जल निधि=समुद्र । अक=गोद । पाखड=ठगा हुआ, व्यर्थ का जीवन विताने वाला ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि उनका जीवन तो अब एक प्रकार से पाखड मात्र ही रह गया है अर्थात उसमे किसी भी प्रकार की वास्तविकता या गति के चिन्ह नही रहे तथा उन्हे यह जीवन विलकुल व्यर्थ विताना पड रहा है । इस प्रकार मनु का यही कहना है कि जिस प्रकार पर्वत के अस्तित्व की सार्थकता झरनो के रूप मे प्रवाहित होने मे ही है अन्यथा वह तो जड ही कहा जाता है उसी प्रकार मेरा जीवन भी उसी पर्वत खड के समान ही है कारण कि उससे अभी तक किसी भी प्रकार का स्रोत निर्झरित नही हो सका । इतना ही नही मनु अपने जीवन को उस हिमखड जैसा मानते हैं जो कि सरिता बनकर सागर मे नही मिल सका ।

टिप्पणी—(१) वस्तुत एकाकी जीवन मे किसी प्रकार की सार्थकता नही रहती और मानव जीवन की पूर्णता, सहृदय होने तथा प्रेम पात्र प्राप्त करने मे ही है, अत मनु अपने इस अभावग्रस्त जीवन को स्वाभाविक ही निरर्थक मानते हैं ।

(२) इन पक्तियो मे मालोपमा अलकार है ।

पहेली सा . . कर अनजान ।

शब्दार्थ—व्यस्त=उलझा हुआ । अभिमान=अहकार या झूठा घमड । विस्मृति=भूल । चल रहा हूँ=जीवन व्यतीत कर रहा हूं । अनजान=अभिमत ।

व्याख्या—मनु उस आगतुक अर्थात् श्रद्धा से कह रहे हैं कि मेरा जीवन तो पहले के समान उलझा हुआ है और मैं उसे भरसक प्रयत्न करके भी सुलझा नही पाता और यह भी समझ मे नही आता कि आखिर उसका क्या कारण है ? मनु का कहना है कि इस प्रकार मैं विना सोचे समझे अनजान सा बनकर अपना जीवन व्यतीत कर रहा हूं ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु की मनोदशा का स्वाभाविक चित्रण किया है और पूर्णोपमा अलकार की योजना भी हुई है ।

भूलता ही . . . यह सगीत ।

शब्दार्थ—सजल=सुन्दर, कोमल । फलित=युक्त । अतीत=वह समय जो बीत चुका है, विगत । तिमिर गर्भ=अधेरी गुफा, निराशा अधकार । दीन=निस्सहाय, दुखी ।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि मैं दिन रात अपने कोमल अभिलाषाओं से पूर्ण विगत युग को भुलाने का प्रयत्न कर रहा हूँ क्योंकि मुझे अब वैसा उल्लास और आनद शायद ही मिल सके। मनु का कहना है कि मैं तो यही चाहता हूँ कि जिस प्रकार घोर अधकारपूर्ण गुफा मे सगीत की मधुर स्वर लहरी दूर तक गूंजकर वही रह जाती है उसी प्रकार अब उनके व्यथापूर्ण जीवन की सभी सुखद कल्पनाएँ शनैं शनैं निराशा रूपी अधकार मे मिटती सी जा रही हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'सजल अभिलाषा' मे विशेषण विपर्यय और 'दीन-जीवन का यह सगीत' मे रूपक अलकार है।

क्या कहूँ .... . . उजड़ा सा राज।

शब्दार्थ—उद्भ्रान्त=लक्ष्य भ्रष्ट, भटकता हुआ। विवर=गुफा। नील गगन का विवर=अतरिक्ष, आकाश।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि चारो ओर निरुद्देश्य भटकने के कारण मैं यह भी नही कह पाता कि आखिर मैं स्वय क्या हूँ क्योंकि मुझे अपने जीवन मे सार्थकता के कुछ भी अश नही दीख पडते। मनु का कहना है कि मुझे तो यही जान पडता है कि मानो मैं नीले आकाश के रिक्त स्थानो मे भटकी हुई वायु की एक तरग के समान हूँ और मेरा जीवन उस उजडे हुए राज्य की भाँति है जिसमे शून्यता सी व्याप्त है।

टिप्पणी—मनु के इस चित्रण मे मनोवैज्ञानिकता है और यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

एक विस्मृति .... .. संकलित विलम्ब।

शब्दार्थ—स्तूप=स्तम्भ। अचेत=जडतायुक्त। सकलित=सचित, समूह। विलब=देरी।

व्याख्या—मनु अपने जीवन को जडता से पूर्ण विस्मृतियो का स्तम्भ भी कहते हैं और उन्हे वह ज्योति की धुँधली सी छाया जैसा लगता है। इसका अर्थ यह है कि मनु अपने आपको कीर्तिमान देवजाति का क्षुद्र वशज ही समझते हैं और वे रह-रह कर यही सोचते हैं कि सफलता प्राप्त करने मे न जाने अभी कितना समय और लगे क्योंकि उन्हे चारो ओर विलम्ब ही विलम्ब देखना पड रहा है।

टिप्पणी—इस पद मे मालोपमा अलकार की अनूठी अभिव्यक्ति हुई है।

" " कौन हो तुम, मन्द बयार ।

शब्दार्थ—वसत के दूत=वसन्तागमन की सूचना देने वाली कोयल, यहाँ जीवन मे आशा प्रदान करने वाले से अभिप्राय है। विरस=नीरस। घन तिमिर=गहन अधकार, घोर निराशा। चपल=बिजली, आशा। तपन= गर्मी, वेदना। बयार=मद हवा, कोमल एव मधुर वाणी।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि आगतुक को अपने दयनीय एव अभाव-ग्रस्त जीवन से परिचित कराने के पश्चात मनु ने यह जानना चाहा कि आखिर वह रमणी कौन है ? इस प्रकार मनु आगतुक से कहते हैं कि वे तो अपने जीवन को पतझड के समान मानते हैं और उस नारी को वसत का दूत समझते हैं तथा यह स्पष्ट कर देना चाहते है कि उन्हे उसकी बाते सुनकर यह आशा हो चली है कि उनके जीवन मे शीघ्र ही सरसता और मधुरता का आगमन होगा। मनु उस आगतुक से कह रहे हैं कि उनके जीवन मे वसन्त के समान उल्लासमय वातावरण प्रस्तुत करने की आशा उत्पन्न करने वाले तुम कौन हो ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रतीकात्मकता एव लाक्षणिकता है और उल्लेख, रूपकातिशयोक्ति एव परपरित रूपक आदि अलकारो की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रसाद जी ने 'आँसू' मे भी यही कहा है—

पतझड था झाड खडे थे सूखी सी फुलवारी मे ।
किसलय नव कुसुम बिछाकर आये तुम इस क्यारी मे ।।

नखत की " हलचल शात ।

शब्दार्थ—नखत=नक्षत्र, तारागण। लहरी=लहर। कात=उज्ज्वल, रमणीय। दिव्य=महान। मानस=हृदय, मान सरोवर।

व्याख्या—मनु कहते है कि जैसे सघन अधकार मे विद्युत की क्षीण रेखा चमक उठती है वैसे ही आज उनके निराशारूपी अन्धकारपूर्ण जीवन मे वह आगन्तुक आशा की सुनहली किरण के समान जान पडता है और उसे देखकर उन्हे वैसी ही शाति प्राप्त होती है जैसी ग्रीष्म ऋतु मे शीतल मन्द पवन के प्रवाहित होने से मानव मात्र को प्राप्त होती है। इतना ही नहीं मनु उस आगन्तुक को अन्धकार मे नक्षत्र की किरण के समान मानते हैं अर्थात् उनकी दृष्टि मे वह रमणी उनके नैराश्यपूर्ण हृदय मे आशा की किरण के समान है। इसलिए उसका आगमन होते ही उनके मानस प्रदेश की समस्त हलचल शात

हो गई है और उन्हें वैसी ही अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त हो रहा है जैसा कि किसी कोमल भावनाओ वाले कवि को दिव्य मनोहर कल्पना के उदय होने पर प्राप्त होता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे विशेषण वक्रता है और उपमा, रूपक एव श्लेष आदि अलकारो की योजना हुई है।

लगा कहने . ... मधुमय सदेश।

शब्दार्थ—आगन्तुक व्यक्ति=नवागत व्यक्ति अर्थात् श्रद्धा। उत्कठा= उत्सुकता। सविशेष=तीव्र। सानद=आनन्दपूर्वक। सुमन=फूल, सुन्दर मन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के उद्गारो को सुनने के पश्चात् वह आगन्तुक व्यक्ति, उनकी जिज्ञासा शात करने के लिए, अपनी मधुर वाणी से अपना परिचय उसी प्रकार देने लगा जिस प्रकार कोयल प्रसन्न होकर फूल को वसन्तागमन की सूचना देती है। वस्तुत इन पक्तियो मे फूल और मधुमय नामक दोनो ही शब्द श्लिष्ट हैं तथा सुमन का अर्थ फूल के साथ-साथ सुन्दर मनवाला और मधुमय का अर्थ वसन्तमय एव मधुर दोनो ही माना जाना चाहिए। इस दूसरे अर्थ के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उस आगन्तुक ने सुन्दर मन वाले मनु को भावी जीवन की मधुर आशा बँधाई।

टिप्पणी—इस पद मे श्लेष एव वस्तूत्प्रेक्षा अलकार हैं।

भरा था मन .. .. प्यारी संतान।

शब्दार्थ—ललित कला=वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, सगीतकला और काव्यकला आदि को ललित कला कहा जाता है। गंधर्व=एक जाति विशेष।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी अपना परिचय देते हुए कह रही है कि मैं अपने पिता की अत्यन्त प्यारी सतान हूँ और मेरे मन मे हमेशा से ललित कलाओ का ज्ञान प्राप्त करने की उत्कट अभिलाषा रही है। इस प्रकार मैं इधर गधर्वो के देश मे रहकर अपनी अभिलाषा पूर्ण कर रही हूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने ललित कला के प्रति श्रद्धा का अनुराग दिखलाकर यह स्पष्ट करना चाहा है कि उसके हृदय मे कोमलता, उदारता एव सहृदयता आदि भावनायें थी।

घूमने का ... . सुन्दर सत्य।

शब्दार्थ—मुक्त व्योम तल=खुले आकाश के नीचे। कुतूहल=जिज्ञासा, आश्चर्य।

व्याख्या—उस आगन्तुक रमणी का कहना है कि स्वच्छन्द प्रकृति की होने के कारण मैं इस विस्तृत उन्मुक्त आकाश के नीचे दिनप्रतिदिन इधर-उधर घूमती रहती थी और इस प्रकार मेरी यह आदत सी पड गई कि चारो ओर घूमकर प्रकृति की सुन्दर छवि देखी जाय। वह बाला कहती है कि इस प्रकार प्रकृति के विभिन्न दृश्यो की मनोहर सुषमा को देख, आश्चर्यचकित हो मैं अपने हृदय मे उठने वाले रहस्यो को सुलझाने की चेष्टा करती और हमेशा यह जानने को उत्सुक रहती कि आखिर इन सुन्दर वस्तुओ मे विद्यमान सत्य क्या है?

टिप्पणी—यहाँ अन्तिम दो पक्तियो मे विशेषण विपर्यय और मानवीकरण अलकार है।

दृष्टि जब · · · क्या है पीर ?

शब्दार्थ—हिमगिरि=हिमालय पर्वत। अधीर=उत्सुक होकर। धरा=धरती, पृथ्वी। पीर=पीडा, व्यथा।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी कह रही है कि मेरा मन प्राकृतिक दृश्यो की सुषमा निहार कर रहस्य से पूर्ण हो जाता था और कुतूहल मिटाने के लिए भी वह स्वाभाविक ही अधीर हो उठता था अतएव हिमालय पर्वत को देखकर ही कभी-कभी मैं यह सोचने लगती कि आखिर धरती के हृदय मे ऐसी कौन-सी पीडा है या उसे कौन-सा कष्ट है कि इसके कारण उसके मस्तक पर चिन्ता की सिकुडन पड गई है। यहाँ यह स्मरणीय है कि जब कोई भी प्राणी किसी व्यथा से पीडित होता है और उसके मन मे चिन्तायें सी उठने लगती हैं उस समय स्वाभाविक ही उसके मस्तक पर सिकुडन सी आ जाती है। अत इन पक्तियो मे वह बाला हिमालय को धरती के ललाट की सिकुडन ही मानती है और उसका अनुमान है कि कदाचित किसी आन्तरिक व्यथा के कारण पृथ्वी के मस्तक पर सिकुडन सी पड गई है और यही सिकुडन हिमालय के रूप मे दीख पडती है।

टिप्पणी—(१) इस पद मे हिमालय को धरती के माथे की सिकुडन कहकर कवि ने अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा शक्ति का परिचय दिया है।

(२) इन पक्तियो मे मानवीकरण और समासोक्ति अलकार हैं।

मधुरिमा मे · · · अनजान।

शब्दार्थ—मधुरिमा=सौन्दर्य। सोया सदेश=छिपा हुआ सदेश। चेतना मचल उठी अनजान=स्वयमेव हृदय अधीर हो उठा।

व्याख्या—वह आगन्तुक बाला कहती है कि हिमालय पर्वत के मौन सौन्दर्य की ओर देखने पर कभी-कभी यह भी आभास होने लगता कि उसकी इस नीरव सुषमा मे कोई न कोई महान और गुप्त सदेश अवश्य है। इस प्रकार मेरे मन मे यह जानने की इच्छा बलवती हो उठी कि आखिर वह सदेश क्या है।

टिप्पणी—'एक सोया संदेश महान्' मे विरोधाभास अलकार है।

बढ़ा मन ··· ·· ··· ···· सम्भार।

शब्दार्थ—शैल मालाओं=पर्वत की श्रेणियो। शृंगार=सौन्दर्य, सुन्दरता। आँख की भूख=देखने की तीव्र इच्छा। सम्भार=साज-सज्जा, भण्डार।

व्याख्या—इस रमणी का कहना है कि ज्यो ही मेरे मन मे हिमालय के मौन सौन्दर्य मे विद्यमान गुप्त सन्देश को जानने की उत्सुकता जाग्रत हुई त्यो ही मेरे चरण भी आगे बढ चले। इस प्रकार रमणीय पर्वत शृखलाओ मे अनेक मनोहर दृश्यो को देख मेरे नेत्रो की प्यास बुझ गयी और मैं इसी निष्कर्ष मे पहुँची कि यह पर्वत अपार वैभवशाली है तथा उसकी साज-सज्जा भी मनोहारिणी है।

टिप्पणी—यहाँ 'आँख की भूख मिटी' मे प्रयोजनवती लक्षणा शब्द शक्ति है।

एक दिन सहसा ·· ·· · विश्रब्ध।

शब्दार्थ—सहसा=अकस्मात्, अचानक। सिन्धु=समुद्र सागर। अपार=अनन्त। नगतल=हिमालय पर्वत की तलहटी। क्षुब्ध=आन्दोलित, अपने पूरे वेग से उमडकर। अकेला यह जीवन=मैं अकेली। विश्रब्ध=शान्त, निर्भीक।

व्याख्या—उस बाला ने मनु से पुन कहा कि एक दिन अचानक इसी हिमालय पर्वत के नीचे अपार सागर अपने पूरे वेग से उमड उठा और वह गरजता हुआ पर्वत की तलहटी से टकराने लगा। वस्तुत इन पक्तियो मे उस रमणी ने भीषण जल प्रलय की ओर सकेत किया है और उसका कहना है कि एक दिन हिमालय पर्वत के चारो ओर जल ही जल दीख पडने लगा तथा उसी समय से मैं निरुपाय सी हो इधर-उधर अकेली निश्चित घूम रही हूँ।

टिप्पणी—इस पद मे कवि ने यदि एक ओर श्रद्धा को निरुपाय कहकर उसके असहाय एव विवश जीवन की ओर सकेत किया है तो दूसरी ओर

'विश्रब्ध' विशेषण द्वारा श्रद्धा की दृढ, निर्भीक एव निश्चल मानसिक स्थिति की ओर भी सकेत किया है। इस प्रकार वह एकाकी एव निरुपाय होकर भी एक साहसी बाला के रूप मे मनु के समक्ष आती है।

यहाँ देखा ... मन मे अनुमान।

शब्दार्थ—बलि=यज्ञ विशेष। भूत हित रत=प्राणियो के कल्याण मे लगे हुए। सजीव=जीवित।

व्याख्या—वह आगतुक रमणी मनु से कह रही है कि अकेले घूमते-घूमते मै इस ओर निकल आई और मैंने जब यहाँ पास मे ही यज्ञ से बचा हुआ कुछ अन्न देखा तब मुझे यह अनुमान सा होने लगा कि प्राणियो के हित साधन मे तत्पर कोई न कोई प्राणी अवश्य जीवित है। इस प्रकार मुझे यह विश्वास हो गया कि जल प्रलय के पश्चात् मेरे समान कोई दूसरा प्राणी भी जीवित बच रहा है अन्यथा यह अन्न यहाँ न दिखाई देता।

तुलनात्मक दृष्टि—वस्तुत इस पद मे निस्वार्थ भाव से किये जाने वाले सात्विक यज्ञ की ओर सकेत किया गया है और श्रीमद्भगवद्गीता मे भी कहा गया है—

अफलाकाक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते।
यष्टव्यमेवेति मन समाधाय स सात्विक॥

तपस्वी ... कैसा उद्वेग।

शब्दार्थ—क्लात=दु खी, व्यग्र, व्याकुल। हताश=निराश। उद्वेग=अशाति।

व्याख्या—वह बाला मनु को सम्बोधित कर कहती है कि हे तपस्वी! तुम क्यो इतने दु खी और निराश जान पडते हो तथा तुम्हें इतनी अधिक व्यथा क्यो हो रही है। उसे मनु को इतना अधिक निराश देखकर आश्चर्य होता है और वह उनसे पूछती है कि तुम्हारी इस अशाति का कारण क्या है?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु की व्यथापूर्ण निराश स्थिति का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।

हृदय मे ... सुन्दर वेश।

शब्दार्थ—अधीर=धैर्यहीन। लालसा=इच्छा, चाह। निश्शेष=अवशिष्ट, बाकी। वचित=अलग।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी मनु से कह रही है कि क्या अब तुम्हारे

हृदय मे और अधिक दिन जीवित रहने की चाह तथा जीवन के प्रति कुछ भी मोह नही रहा जो तुम इस प्रकार निराश से बैठे हो ? कही ऐसा तो नही है कि तुम्हारे हृदय की विराग भावना ही सुन्दर आकर्षक रूप धारण कर तुम्हें धोखा दे रही हैं अर्थात् तुम्हे जीवन से एकाएक विरक्त बना रही है और कही तुम अनुराग के अभाव मे विवश होकर त्याग की ओर तो उन्मुख नही हो गए। उस रमणी का कहना है कि यदि वास्तव मे यही कारण है तो फिर तुम्हे पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिए और इन अनुमानित प्रवादो को भुलाकर जीवन से पुन अनुराग करना चाहिए अन्यथा हो सकता है कि तुम हमेशा के लिए जीवन के वास्तविक सुखो से वचित हो जाओ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे जीवन के प्रति प्रेम रखने और सघर्षों से विचलित न होने की प्रेरणा दी गयी है।

दु ख के डर • •••• अनजान।

शब्दार्थ—जटिलताओ=कठिनाइयो। काम=कर्म।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी मनु को सम्बोधित कर कहती है कि कही तुम पहले से ही अज्ञात उलझनो का अनुमान कर उनसे उत्पन्न होने वाले दु खो की कल्पना मात्र से ही तो घवडा कर कर्मक्षेत्र से विमुख नही हो गए। इसका अभिप्राय यह है कि बहुत मनुष्य स्वय ही अज्ञात कल्पनाओ के भय से डर कर जीवन मे प्रगति करना छोडकर पलायन की प्रवृत्ति धारण करते है और कभी भी प्रगति नही कर पाते। वस्तुत भय तो मन की अनुभूति ही है और अज्ञात भय की कल्पना से ही कभी-कभी बहुत से लोग साहस खो बैठते हैं अत वह बाला मनु को स्वाभाविक ही यह प्रेरणा देना चाहती है कि वे व्यर्थ ही न घबडायें और जीवन से प्रेम करना सीखें। इसलिए वह कहती है कि कही इस भय से कि जीवन दु खमय न हो, वे अज्ञात उलझनो की कल्पना कर कर्मक्षेत्र से पीछे तो नही हट रहे हैं। उनका कहना है कि वे यह क्यो भूल जाते हैं कि कल्पनाओ मे वास्तविकता नही रहती और हम जो भी अनुमान करते है वह कभी भी पूर्ण सत्य नही होता अत यह भी सभव है कि आज जिस भविष्य की कल्पना से हम भयभीत हो रहे हो वह उससे सर्वथा भिन्न हो और हम केवल आशकाओ से ही भयभीत हो रहे हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनु आज अपने भविष्य को जो उलझनपूर्ण समझते हैं वह युक्तिसगत नही जान पडता

और यह भी सभव है कि वह ठीक इसके विपरीत सर्वथा सुखमय ही हो, अत उनका व्यर्थ की जटिलताओ का अनुमान कर कर्मक्षेत्र से पीछे हटना उचित नही है।

कर रही लीलामय ... .. . अनुरक्त।

शब्दार्थ—लीलामय=क्रीडापूर्ण अर्थात् सृष्टि, स्थिति, सहार, अनुग्रह एव तिरोधान आदि कार्यों मे लीन होकर। महाचिति=विराट् चेतना शक्ति। उन्मीलन=विकास। अभिराम=सुन्दर। अनुरक्त=मोहित।

व्याख्या—वह बाला कह रही है कि यह सृष्टि जो कि अत्यत सुन्दर एव आकर्पक प्रतीत होती है और जिसमे सभी अनुरक्त है, वास्तव मे चेतन ब्रह्म अर्थात् परमात्मा की लीला का ही व्यक्त रूप है। अतएव जब ईश्वर स्वय ही कर्म मे लीन है तब उसके द्वारा निर्मित मानव का कर्म से विमुख होना अनुचित ही है। यहाँ यह स्मरणीय है कि सृष्टि निर्माण के सम्बन्ध मे यह मत प्रचलित है कि जब परमात्मा एकाकीपन के भार से ऊब गया तब उसकी इच्छा एक से अनेक हो जाने की हुई और इसी अभिलाषा से उसने अपनी माया शक्ति से इस ससार को रच दिया। इसलिए यह अनुमान किया जा सकता है कि परमात्मा की आनन्दपूर्ण लीला से ही सृष्टि निर्माण होने के कारण यह ससार अत्यधिक सुन्दर और आकर्पक प्रतीत होता है। यही कारण है कि वह आगन्तुक रमणी भी मनु को यह प्रेरणा देती है कि मानव मात्र को कर्म मे रत रहने पर ही सच्चा सुख मिल सकता है।

टिप्पणी—इस पद मे कर्म भावना पर दृढ रहने की प्रेरणा दी गयी है और वह काश्मीरी शैवागम के दार्शनिक पक्ष अर्थात् प्रत्यभिज्ञा दर्शन से प्रभावित भी है। डॉ० कन्हैयालाल सहल के शब्दों मे "महाचित अथवा चैतन्य काश्मीरी शैवागम का पारिभाषिक शब्द है। परासवित, परमेश्वर, शिव, परमशिव आदि चैतन्य के ही नामातर है। चैतन्य के अतिरिक्त परमार्थत किसी की भी सत्ता नहीं। 'इहहि सर्वत्र अप्रतिहत शक्ति परमेश्वर एव वभूपुस्तथा भवति न तु अन्यः कश्चित् परमार्थत' अस्ति।' विश्वोत्तीर्ण और विश्वात्मक उसी के रूप हैं। 'चिदेव भगवती वत्तदनन्तजगदात्मना स्फुरति।' अनन्त जगत भगवती चित् के ही स्फुरण हैं। पराशक्ति रूपा चिति और शिव भट्टारक मे वस्तुत कोई अन्तर नहीं हैं। 'पराशक्ति रूपाचितिरेव भगवती ... शिव भट्टारक भिन्ना।' यद्यपि शक्ति के असख्य रूप होते हैं किन्तु शैवागम

दर्शन मे परमेश्वर की निम्नलिखित ५ शक्तियो का उल्लेख हुआ है—(१) प्रकाशरूपा चित शक्ति (२) स्वातन्त्र्य (आनन्द शक्ति) (३) तच्चमत्कार (इच्छा शक्ति) (४) आमर्षात्मकता ज्ञान शक्ति और सर्वाकार योगित्व क्रिया शक्ति। महेश्वर की स्तुति करते हुए अभिनवगुप्त कह गये हैं—

प्रपचोत्तीर्णरूपाय नमस्ते विश्वमूर्तये ।
सदानन्द प्रकाशाय स्वात्मनेऽनन्त शक्तये ॥
त्वत्स्वरूपे श्रम्ममाणे त्व चाह चाखिल जगत ।
जाते तस्य तिरोधनि न त्व नाह न वै जगत् ॥
त्वत्प्रबोधात् प्रबोधोऽस्य त्वनिद्रानो लयोऽस्य यत् ।
अस्तत्त्वदात्मक सर्व विश्व सदसदात्मकम् ॥

महाचिति लीलामय आनन्द कर रही है। उसके सजग सी होने पर, उसके नेत्र खोलने पर ही विश्व का सुन्दर उन्मीलन होता है। उसके तिरोहित होने पर न तो यह जगत है, न तू है, न मैं हूँ।" इसीलिए श्रद्धा ने मनु से कहा था कि सृष्टि के इस रहस्य को समझने वाला सृष्टि मे अनुरक्त होगा और वह कभी भी उससे विरक्त नही हो सकता।

काम मंगल .... भवधाम।

शब्दार्थ—**मंगल से मडित**=कल्याण से सुशोभित। **श्रेय**=वाछनीय। **सर्ग**=सृष्टि विश्व। **इच्छा**=कामना। **तिरस्कृत कर**=अस्वीकार कर, उपेक्षा करते हुए। **भवधाम**=ससार।

व्याख्या—वह बाला मनु से कह रही है कि जब हम इस सृष्टि की उत्पत्ति पर विचार करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उसकी उत्पत्ति काम अर्थात् इच्छा से हुई है और यह उसका ही परिणाम है। इस प्रकार कवि ने श्रद्धा द्वारा सृष्टि के निर्माण को ही सर्वोपरि सिद्ध किया है और वास्तव मे जब मनुष्य को किसी वस्तु की आकाक्षा होती है तभी वह कर्म मे प्रवत्त होता है। वास्तव मे इस सृष्टि मे भाँति-भाँति की कामनाएँ ही उत्पन्न होकर जगत कर्मक्षेत्र मे प्रवृत्त करती हैं अन्यथा सृष्टि का विकास असम्भव था। यह तो निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जा सकता है कि शुभ कर्म करने से कल्याण होता है अत काम का तिरस्कार करना युक्ति सगत नही है। इस प्रकार श्रद्धा मनु से कहती है कि तुम वैराग्य धारण कर काम अर्थात् इच्छा का तिरस्कार

कर बडी भारी भूल कर रहे हो और इससे तुम्हारा सासारिक जीवन असफल ही सिद्ध होता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रसादजी ने काम का महत्व प्रतिपादित किया है और उन्होने अपने एक निबन्ध मे काम के सम्बन्ध मे अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए यही कहा है "काम का धर्म मे अथवा सृष्टि के उद्गम मे बहुत बडा प्रभाव ऋग्वेद के समय मे ही माना जा चुका है—कामस्तऽने समवर्तऽतिधि मनसोरेत प्रथम यदासीत। यह काम प्रेम का प्राचीन वैदिक रूप है और प्रेम से वह शब्द अधिक व्यापक भी है। जब से हमने प्रेम को Love या इश्क का पर्याय मान लिया, तभी से 'काम' शब्द की महत्ता कम हो गयी। सभवत विवेकवादियो की आदर्श भावना के कारण, इस शब्द मे केवल स्त्री पुरुष के अर्थ का ही भान होने लगा। किन्तु काम मे जिस व्यापक भावना का समावेश है, वह इन सब भावो को आवृत कर लेता है।"

तुलनात्मक दृष्टि—श्री रामधारीसिह 'दिनकर' ने भी 'कुरुक्षेत्र' मे निवृत्ति मार्ग की घोर निन्दा करते हुए प्रवृत्ति मार्ग का ही समर्थन किया है—

> जनाकीर्ण जग से व्याकुल हो निकल भागना वन मे,
> धर्मराज, है घोर पराजय नर की जीवनरण मे।
> यह निवृत्ति है ग्लानि, पलायन का यह कुत्सित क्रम है,
> नि श्रेयस यह श्रमित, पराजित, विजित बुद्धि का भ्रम है।

दु ख की पिछली भूल।

शब्दार्थ—नवल प्रभात=नवीन प्रात काल झीना=बारीक।

व्याख्या—वह रमणी अर्थात् श्रद्धा मनु से कह रही है कि जिस प्रकार रात्रि के समाप्त होते ही सुखद सवेरा आ जाता है उसी प्रकार दु ख के पश्चात् सुख का आगमन स्वाभाविक ही है और जैसे कि उषा का सुन्दर तन अन्धकार के भीगे आवरण मे ढका रहता है उसी तरह दु ख-सुख दोनो एक दूसरे से सम्बन्धित है और जीवन मे दु ख स्थायी नही है बल्कि उसकी भी एक अवधि है। अतएव दु ख-सुख दोनो ही जीवन मे क्रमानुसार आते-जाते रहते हैं और प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह धैर्य धारण करे तथा कभी भी दु ख मे अपना साहस न खो बैठे। इस प्रकार मनुष्य को यह विश्वास रखना चाहिए कि जिस प्रकार साधन अन्धकार मिटते ही सुखद प्रभात की शुभ्र आभा दृष्टिगोचर

होती है उसी प्रकार दुःख रूपी परदा हटते ही सुख का नवीन ससार झलक उठता है ।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे परम्परित रूपक और रूपकातिशयोक्ति अलकार हैं ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि भास ने अपनी प्रसिद्ध नाट्यकृति 'स्वप्नवासवदत्तम्' मे लिखा है कि पहिए के समान दुःख-सुख हमेशा परिवर्तित होते रहते हैं—

चक्रार इव परिवर्तन्ते दुःखानि सुखानि च ।

इसी प्रकार महाकवि कालिदास का कहना है—

कस्यात्यन्त सुखमुपगत दुःखमेकान्ततो वा
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण ।

जिसे तुम .... जाओ भूल ।

शब्दार्थ—**अभिशाप**= अमगल । **ज्वालाओ**—आपदाओ, आपत्तियो । **मूल** =उद्गम । **ईश**=परमात्मा, ईश्वर । **रहस्य**=गुप्त ।

व्याख्या—वह बाला अर्थात् श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम जिस दुःख को अपने लिए अमगल समझते हो और जिसे तुम ससार की सभी आपत्तियो का मूल समझ बैठे हो वह वास्तव मे ईश्वर द्वारा ही प्रदत्त है अर्थात् ईश्वर ही हमे दुःख-सुख दोनो प्रदान करता है । इस प्रकार यह सृष्टि तो ईश्वर की एक रहस्यपूर्ण देन ही है और यहाँ दुःख मे ही सुख समाया है तथा मनुष्य को कभी भी दुःख मे अपना साहस न खोना चाहिए बल्कि साहसपूर्वक कठिनाइयो का सामना करना चाहिए ।

तुलनात्मक दृष्टि—यद्यपि दुःख को अमगलकारी और समस्त आपदाओ का मूल कहा जाता है पर हमारे कवियो ने उसे ईश्वर की देन मानकर हर्षपूर्वक उसे सहन करने का अनुरोध किया है । इस प्रकार यदि एक ओर बिहारी का कहना है—

दीरघ साँस न लेहि दुख, सुख साँइहिं न भूलि ।
दई-दई क्यो करतु है, दई-दई सु कबूलि ।।

तो दूसरी ओर श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने भी जीवन को दुःख-सुख का संधिस्थल माना है—

यह साँझ उषा का आँगन आलिगन विरह मिलन का ।
चिर हास अश्रुमय आनन रे इस मानव जीवन का ।।

विषमता की पीडा .... मधुमय दान ।

शब्दार्थ—विषमता=समता का अभाव । स्पन्दित=कम्पित, गतिमान । भूमा=वह अखण्ड विराट शक्ति जिसमे सभी कुछ आ जाता है । मधुमय दान =सुन्दर दान ।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी अर्थात् श्रद्धा मनु को समझाते हुए कहती है कि यह विशाल विश्व वैषम्य से पीडित होने के कारण ही स्पन्दनशील है अर्थात् यदि इस जगत मे इतनी अधिक विषमता न होती तो फिर उसमे सुख का सर्वत्र अभाव ही हो जाता । कहने का अभिप्राय यह है कि विषमता ही इस जगत का जीवन है और उसी के कारण सुख एव सहानुभूति की भावना इस जगत मे दीख पडती है । वास्तव मे स्वय पीडा सहने पर ही मनुष्य को दूसरे का दु ख समझ मे आ पाता है और यह विशाल जगत आपदाओ से उत्पन्न होने वाली पीडा को सहन कर ही सहृदय बन सका है । इस प्रकार दु ख ही मानव मात्र के सुख एव उसकी उन्नति का कारण है और इसे भूमा अर्थात् परमात्मा का सुन्दर दान समझकर ग्रहण करना चाहिए क्योकि यही मानव जीवन को कोमल, उदार और विशाल बनाकर जीवन मे मधुरता ला देता है तथा इसी से जीवन मे क्रियाशीलता की भावना भी उत्पन्न होती है जिससे कि मनुष्य प्रगति करने मे सफल हो पाता है ।

टिप्पणी—वस्तुत कामायनी मे जो दार्शनिक पद दीख पडते हैं उनमे यह पद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं और इस पद मे प्रयुक्त विषमता एव भूमा आदि शब्दो का अभिप्राय स्पष्ट करते हुए डॉ० द्वारिकाप्रसाद सक्सेना ने यही कहा है—

(१) विषमता—प्रसाद ने इस शब्द का प्रयोग समरसता के विरुद्ध किया है । समरसता जीवन की वह साम्यावस्था है, जिसमे सुख दु ख सब लीन हो जाते हैं, पाप और पुण्य घुल मिल जाते हैं तथा एक मात्र आनन्द रूप परमार्थ तत्व ही शेष रह जाता है । अत विषमता जीवन की वह स्थिति हुई जिसमे सुख और दुख का भेद बना रहता है, पाप-पुण्य पृथक रहते हैं, जो भेदपूर्ण सृष्टि का स्वरूप कहलाती है तथा जिसमे सुख, दुख, ग्राह्य, ग्राहक, मूढ भाव आदि विद्यमान रहते हैं, किन्तु इसके विरुद्ध समरसता परमार्थ सत्ता की स्थिति है, जहाँ उक्त सभी बातें नही रहती, जैसाकि 'स्पदशास्त्र' मे लिखा भी है—

न दु ख न सुख यत्र न ग्राह्य ग्राहको न च ।
न चास्ति मूढभावोऽपि तदस्ति परमार्थत ।। —स्पदकारिक १/५

(२) भूमा—यह शब्द महानता का द्योतक है। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार की गई है 'अतिशयेन बहु इति भूमा' अर्थात् भूमा शब्द अतिशयता, बहुलता या बहुत्व का द्योतक है। 'बहु' शब्द को 'भू' आदेश करके 'इमनिच्' प्रत्यय लगाने पर यह भूमा शब्द बनता है। छादोग्य उपनिषद् मे नारद तथा सनत्कुमार के प्रसग मे इस 'भूमा' शब्द का विवेचन मिलता है। वहाँ पर बताया गया है कि 'यो वै भूमा तत्सुखम्', 'नाल्पे सुख मस्ति, भूमा वै सुखम्' अर्थात् जो भूमा है वही सुख है, अल्प मे सुख नही है, अपितु भूमा ही सुख है। इतना ही नही, आगे यह भी लिखा है 'जो भूमा है वही अमृत है और जो अल्प है वह मर्त्य है।' इससे यह सिद्ध है कि भूमा अल्प के विरुद्ध बहुत्व, विराट् ब्रह्म का वाचक है। इसके अतिरिक्त इस विषमता को 'भूमा का मधुमय दान' इसलिए कहा है कि इस माधुर्यपूर्ण सृष्टि का निर्माण भूमा या विराट् सत्ता द्वारा हुआ है और यह सृष्टि उसी समय उत्पन्न हुई जब वह विराट् सत्ता (भूमा) अपनी समरसता की अवस्था को छोडकर विषमावस्था को प्राप्त हुई। किन्तु यह कार्य उसकी इच्छा से हुआ। जैसाकि प्रत्यभिज्ञाशास्त्र मे लिखा है कि वह 'स्वेच्छया स्वभित्ती विश्वमुन्मीलयति।' अत इस विषमता को उस विराट् सत्ता ने इसलिए अगीकार किया कि वह एक से अनेक होना चाहती थी, जैसाकि उपनिषदो मे भी लिखा है—'एकोऽह बहुस्याम।' अथवा यो कह सकते है कि इस अनन्त वैभव सम्पन्न विश्व का निर्माण करने के लिए ही 'भूमा' ने इस 'विषमता' को धारण किया था। इसी प्रकार प्रसाद ने इस 'विषमता को भूमा का मधुमय दान कहा है।

नित्य समरसता ... द्युतिमान।

शब्दार्थ—समरसता=सामरस्य, आनन्द की स्थिति। जलधि=सागर, समुद्र। व्यथा=दु ख। मणिगण=मणियो का समूह। द्युतिमान=दैदीप्यमान, कातिमान।

व्याख्या—वह आगन्तुक रमणी अर्थात् श्रद्धा मनु से कहती है कि यदि मानव मे वैषम्यता अर्थात् उतार चढाव न हो तो मनुष्य स्वाभाविक ही इस एक रसता अर्थात् जीवन से ऊब उठेगा। इस प्रकार जीवन मे उतार चढाव आवश्यक है क्योकि एकरसता कभी भी प्रिय नही होती। श्रद्धा का कहना है कि ईश्वर भी प्राणियो को एक रस नही रहने देता और जो हमेशा सुख प्राप्त ... रहा है उसके जीवन मे एक दिन वह भी आता है जबकि उसके मानस

मे भीषण हलचल सी मच जाती है तथा जिस प्रकार समुद्र की लहरो मे हलचल मचते ही उसकी सतह मे छिपी मणियाँ ऊपर आकर नीली लहरो मे बिखरी जान पडती हैं उसी प्रकार सुख भी पीडा से छिन्न-भिन्न हो जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि व्यक्ति को समरसता की प्राप्ति न होने के कारण ही सुख और दुख से पूर्ण विषमता के थपेडे सहन करने पडते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा से पुष्ट सागरूपक और रूपकातिशयोक्ति अलकार है तथा यह पद न केवल दार्शनिक विचारधारा से ओत प्रोत है अपितु कवि प्रसाद के दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करता है। वस्तुत समरसता ही प्रसाद साहित्य का मूल स्वर है और डा० विजयेन्द्र स्नातक के शब्दो मे "समरसता शब्द और समरसता का सिद्धान्त प्रसादजी ने शैव दर्शन से ग्रहण किया। शिवतत्व और शक्ति तत्व का सामरस्य शैव दर्शन की आधारभूत मान्यताओ मे है और इसका प्रतिपादन स्थान-स्थान पर किया गया है। समस्त सुख दुख के बीच एक रस रूप शिव विद्यमान हैं जिनकी प्रत्याभिज्ञा से समरसता आती है तथा सामरस्य की प्रतीति होने पर द्वैत भी आनन्द निष्पद हो जाता है—

जाते समरसानन्दे द्वैतमप्यमृतोपमम्।
मित्रयोरिव दम्पत्यो जीवात्मा परमात्मनो॥

शैवागमो की इन समरसता का वर्णन शिव के विभिन्न रूपो को लेकर किया गया है और उसके द्वारा जगत के वैषम्य को सार्थक बनाते हुए यह प्रदर्शित किया गया है कि इस वैषम्य मे समत्व किस प्रकार स्थापित करके शिवत्व प्राप्त किया जाय। समरसता का यह सिद्धान्त केवल आध्यात्मिक पक्ष मे ही चरितार्थ नहीं होता वरन् लौकिक पक्ष मे भी व्यावहारिकता की दृष्टि से यह पूर्णरूपेण उपादेय सिद्ध होता है। · · श्रद्धा कहती है—वैषम्य से आगे बढने पर तुम्हे सदा एक रस रहने वाले शिव का दर्शन प्राप्त होगा। प्रत्येक जीव का शिव स्वरूप होने की समरसता (शिवत्व) मे नित्य अधिकार है। जिस प्रकार कारण व्यापक रहकर प्रत्येक कार्य मे अनुस्यूत रहता है उसी प्रकार समरसता व्यापक होकर सबके मूल मे स्थित है। जैसे समुद्र परम व्यापक होने के कारण चारो ओर से उमडता हुआ दिखाई पडता है और उसमे उठने वाली लोल लहरियो के मध्य ज्योतिष्मान मणि समूह बिखरते हुए दिखाई देते है, वैसे ही अत्यन्त व्यापक समरसता मे उठने वाली दुख की नील लहरियो के बीच मणि गण के समान चमकीले सुख स्वप्न भग होते रहते हैं।

अत. तुम्हें क्षणिक सुख दुःख की चिन्ता छोड़कर समरसता की ओर बढ़ना चाहिए। शैवागमों के अनुसार यही लोक का कल्याण भी है।

लगे कहने मनु ··· ···· ···· कल्पित गेह।

शब्दार्थ—सहित विषाद=दुःख पूर्वक। मधुर मारुत=वायु के सुन्दर या आनंददायक झकोरे। उच्छ्वास=प्रेरणा देने वाले विचार। मानस=मानसरोवर, हृदय। सविलास=क्रीडा के साथ, उमंग के साथ। निरुपाय=विवश, असहाय। कल्पित गेह=कल्पना का घर।

व्याख्या—उन आगंतुक रमणी अर्थात् श्रद्धा के उद्गारों को सुनकर मनु ने व्यथापूर्ण वाणी से उनसे कहा कि जिस प्रकार वायु के मधुर झकोरे मानसरोवर में एक प्रकार की हलचल सी उत्पन्न कर देते हैं उसी प्रकार तुम्हारी इन बातों को सुनकर मेरे हृदय में उत्साह एवं आनन्द के अनेक भाव उठ रहे हैं परन्तु इन भीषण जल प्रलय को देखकर मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि मानव जीवन अत्यन्त विवशतापूर्ण है और जीवन में सफलता की आशा करना व्यर्थ ही है कारण कि उनका अंत निराशा पूर्ण ही होता है। मनु का विचार है कि सफलता प्राप्त करना तो इस धरती में कल्पना मात्र ही है और जीवन की सफलता तो कल्पित घर के समान अयथार्थ जान पड़ती है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में उपमा, श्लेष और रूपक आदि अलंकारों की योजना हुई है।

कहा आगंतुक ···· ···· ···· ·· जिसको वीर।

शब्दार्थ—आगंतुक=वह नारी जो मनु से वार्तालाप कर रही है। सस्नेह=प्रेमपूर्वक। जीवन का दाँव=जीवन की बाजी।

व्याख्या—मनु की बातों को सुनने के पश्चात् उन आगन्तुक अर्थात् श्रद्धा ने अत्यन्त स्नेह के साथ उनसे कहा कि अरे तुम तो यहाँ तक अधीर हो गए कि अपने जीवन की बाजी ही हार बैठे और जहाँ कि वीर पुरुष अपने प्राणों को भी उत्सर्ग कर जिस जीवन की बाजी को जीतने के लिए तैयार रहते हैं वहाँ तुमने तुम यों ही निराश हो गए हो। इस प्रकार श्रद्धा ने यहाँ यही कहना चाहा है कि इस विश्व में वही विजयी होता है जो बिना किसी भय के अपने प्राणों की बाजी लगाने के लिए तैयार रहता हो और जो पहले से ही हताश होकर पराजय स्वीकार कर लेता है वह कभी भी कर्मवीर नहीं कहला सकता। वस्तुतः सफलता प्राप्त करने के लिए दृढ़ता अपेक्षित है और

जो पहले से ही पराजय स्वीकार कर लेता है, भला वह कभी भी प्रगति कैसे कर सकता है ।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के माध्यम से यह स्पष्ट करना चाहा है कि पलायनवादी प्रवृत्ति कभी भी श्रेयस्कर नही हो सकती और जो जीवन से हताश होकर पलायन करना चाहता है वह कभी भी मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता । इस प्रकार श्रद्धा मनु को पलायन से विमुख कर जीवन पथ पर आगे बढने के लिए प्रेरित कर रही है और बहुत से विचारक जो छायावादी कवियो पर पलायनवादी होने का आरोप लगाते है उसका निराकरण भी इन पंक्तियो से हो जाता है ।

तप नहीं • .... आल्हाद ।

शब्दार्थ—करुण=दुखी । क्षणिक = अस्थायी । अवसाद=वेदना, दुख । तरल आकांक्षा=उन्नति की अभिलाषा । आल्हाद=प्रसन्नता, हर्ष ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि एकमात्र तपस्या ही जीवन का सत्य नहीं है अर्थात् जगत से विरक्त हो जाना अनुचित ही है और मनुष्य को चाहिए कि इस ससार मे लीन रहे । कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य वह है जो इस जगत की भव-बाधाओ से भयभीत न हो और हमेशा साहस के साथ प्रत्येक प्रकार की परिस्थितियो का सामना करता रहे । श्रद्धा का विचार है कि मनु मे, जो दीनता से पूर्ण मानसिक शैथिल्य आ गया है, वह न आना चाहिए था और यदि किसी प्रकार की शिथिलता आ भी गयी तो उसके वशीभूत होना अनुचित ही है क्योकि वह तो क्षणिक भाव है । श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम यह क्यो भूल जाते हो कि तुम्हारे हृदय मे अनेक मधुमय आशाएँ छिपी हुई हैं और तुम्हारा हृदय अनेक मधुर आशाओ का ससार है अत स्वय शक्तिशाली होकर निराशा से घबडा उठना कदापि उचित न समझा जाएगा । श्रद्धा मनु से कहती हैं कि तुम्हारे हृदय मे तरल आकाक्षाओ से पूर्ण आशा का आल्हाद सुप्तावस्था मे है अत उसे जाग्रत कर कर्मशील बनने की प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए ।

टिप्पणी—वस्तुत श्रद्धा के कहने का अभिप्राय है कि मनु की इच्छायें ठोस होकर जडवत् नही हो गयी वल्कि उनमे तारल्य है अर्थात् वे स्पन्दनशील हैं । यहाँ तरल शब्द भी द्रष्टव्य है कारण कि जब कोई वस्तु तरल होती है तो हम उसको जैसा चाहे वैसा रूप प्रदान कर सकते हैं परन्तु ठोस हो जाने पर

तो फिर उसका एक ही रूप रह जाता है। इस प्रकार तरल से अभिप्राय यह है कि अभी मनु अपनी अभिलाषाओ की पूर्ति कर सकते हैं।

प्रकृति के यौवन · · · उनकी धूल।

शब्दार्थ—बासी फूल = मुरझाये हुए फूल। उत्सुक = लालायित।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि यह प्रकृति भी अपना यौवन अर्थात् अपनी सुन्दरता बनाए रखने के लिए उसी प्रकार हमेशा नवीन फूल धारण करती है जिस प्रकार कि युवतियाँ शृगार कर रही हो अर्थात् प्रकृति रूपी युवती नवीन फूलो से शृगार कर अपना यौवन अक्षुण्ण बनाए रखना चाहती है। वस्तुत बासी या मुरझाए हुए फूल तो धूल मे मिल जाने के लिए ही हैं और उनसे कभी भी शृगार नही हो सकता अत मनुष्य को भी चाहिए कि वह अपने हृदय मे आलस्य और निराशा की भावनाएँ न उठने दे क्योकि वे तो जीवन के अनुपयोगी तत्व ही हैं तथा उनके कारण मनुष्य कभी भी प्रगति नही कर सकता। इस प्रकार मुरझाए हुए फूल जिस प्रकार धूल मे मिलकर नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार मनुष्य को भी अपने हृदय मे निराशा को स्थान न देना चाहिए।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण और उदाहरण अलकार है।

पुरातनता का यह ··· परिवर्तन मे टेक।

शब्दार्थ—पुरातनता = प्राचीनता, रूढिवादिता। निर्मोक = केचुली। नूतनता = नवीनता। टेक = आश्रय, टिकना, विद्यमानता।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि प्रकृति कभी भी प्राचीनता के इस आवरण को क्षण भर के लिए भी सहन नही कर सकती और अनुपयोगी तत्वो को तो वह नष्ट ही कर देती है। वास्तव मे परिवर्तन का अर्थ ही नवीनता है और उसका आगमन अनुपयोगी या असामयिक तत्वो को नष्ट करने के लिए होता है तथा इस विनाश के पश्चात जिन नवीन तत्वो की उत्पत्ति होती है उन्हें ही परिवर्तन कहा जाता है। इस प्रकार परिवर्तन आनन्द का ही सूचक है और बिना परिवर्तन आनन्द प्राप्ति भी असम्भव ही है।

टिप्पणी—यहाँ 'पुरातनता के निर्मोक' मे रूपक अलकार है।

युग की ···· ···· ··· ···· उसे अधीर।

शब्दार्थ—पद चिन्ह = पैरो के निशान, छाप। अनुसरण करती = पीछे-पीछे चलती।

व्याख्या—वस्तुत जिस प्रकार एक यात्री एक चट्टान से दूसरी चट्टान पर अपने पैर रखते हुए आगे बढता चला जाता है उसी प्रकार यह सृष्टि भी युगो की चट्टानो पर अपने पद चिन्हो की छाप छोडती हुई आगे बढ रही है और उसका विकास ही हो रहा है। कहने का अभिप्राय यह कि युग पर युग बीतते चले जाते है पर सृष्टि के विकास की गति अवरुद्ध नही होती अर्थात् विश्व की सभी वस्तुएँ नाशवान हैं तथा एक जाति के नष्ट होने के पश्चात् दूसरी जाति अवश्य उत्पन्न होती है और जब यह नष्ट हो जाती है तब दूसरी जाति पैदा होती है। इस प्रकार सृष्टि का विकास निरन्तर होता रहता है और प्रकृति हमेशा विकासशील ही रही है। इस प्रकार यह जगत परिवर्तनशील ही है और हमे कभी भी दुखो से घबडा कर विचलित न होना चाहिए।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक और मानवीकरण अलकार है। साथ ही यहाँ जो देव, गधर्व और असुर सभी को नाशवान कहा गया है उसके सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि कामायनी मे देव शब्द दो विभिन्न अर्थों मे प्रयुक्त हुआ है। डॉ० फतहसिंह के शब्दो मे "देव शब्द एक तो मनुष्यो की देव जाति के लिए प्रयुक्त हुआ है, दूसरे प्रकृति की शक्तियो के लिये और इन सबका नियामक तथा इन सबको निमित्त बनाकर कर्म करने वाला कोई और 'विराट' है, वही वास्तव मे अमर है और ये दोनो तो परिवर्तन के पुतले हैं।" इस प्रकार 'कामायनी की जो सभ्यता जल प्लावन मे नष्ट हो गई, वह असुरत्व विशिष्ट देव सभ्यता थी शुद्ध देवत्वपूर्ण नही।

एक तुम .. चेतन आनन्द।

शब्दार्थ—विस्तृत भूखण्ड=विशाल पृथ्वी। अमन्द=प्रचुर, बहुत।

व्याख्या—श्रद्धा ने मनु से कहा कि एक ओर तो तुम हो जिसने जीवन से निराश होकर इस प्रकार मन मानकर बैठने का निश्चय किया है और दूसरी ओर यह विशाल पृथ्वी है जो कि विपुल प्राकृतिक ऐश्वर्य से पूर्ण है। यहाँ यह स्मरणीय है कि परम्परा से यह धारणा चली आ रही है कि मनुष्य पूर्व जन्म मे जिस प्रकार के शुभ अथवा अशुभ कर्म करता है उसी प्रकार के परिणाम भी उसे दूसरे जन्म मे सहन करने पडते हैं और फिर उस दूसरे जन्म मे वह जैसे कर्म करता है वैसे ही परिणाम उसे अगले जन्म मे भी सहने पडते हैं। इसी नियम के अनुसार चेतन प्राणी जड प्रकृति का आनन्द ले पाता है और यही कारण है कि इस ससार मे कही तो प्राणी कर्मो का आनन्द ले पाते है और कही वे कर्म किये

जा रहे हैं परन्तु इतने पर भी उन्हें आशातीत सफलता प्राप्त नही होती। लेकिन वे कर्म से पीछे नही हटते।

टिप्पणी—अन्तिम पक्ति मे विरोधाभास अलकार है।

अकेले तुम .... आत्म विस्तार।

शब्दार्थ—यजन=यज्ञ, परन्तु यहाँ सृष्टि-निर्माण। आत्म विस्तार=अपना विकास।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि तुमने जो एकाकी जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया है वह अत्यन्त तुच्छ विचार है और वह न केवल सृष्टि के नियमो के प्रतिकूल है अपितु मानवता के अनुकूल नही है। वास्तव मे कोई भी प्राणी अकेले कोई भी कार्य नही कर सकता अत. मनु भी एकाकी रहकर बिना किसी दूसरे की सहायता लिए जीवन यज्ञ करने मे असमर्थ ही रहेंगे और उनका आकर्षणहीन एकाकी जीवन आत्म-विस्तार की सम्भावनाएँ भी दूर कर देगा अर्थात् वे अपनी आत्मा का विकास भी न कर पायेंगे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे आत्म-विस्तार से अभिप्राय सासारिक उन्नति से है और श्रद्धा ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि जीवन रूपी यज्ञ अकेले नही हो सकता बल्कि उसके लिए पति-पत्नी दोनो का सहयोग आवश्यक है। यही कारण है कि उसने मनु के एकाकी जीवन की आलोचना करते हुए उन्हे आत्म-विस्तार के हेतु किसी सहयोगी का अवलम्ब लेने की प्रेरणा प्रदान की है।

दबे रहे .... बिना विलम्ब।

शब्दार्थ—अवलम्ब=सहारा, सहायक। सहचर=साथी। उऋण होना=अपने कर्त्तव्यो का पालन करना।

व्याख्या—श्रद्धा ने मनु से कहा कि एक ओर तो तुम्हें स्वय ही अपने दु ख का बोझ उठाना पड रहा है और दूसरी ओर तुम किसी का सहारा भी नही ले रहे हो अत तुम्हारी इस दशा को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि तुम्हारे कार्यों मे हाथ बँटाने वाला कोई साथी तुम्हारे पास अवश्य हो जिससे तुम्हे अपना जीवन भार स्वरूप न जान पडे। श्रद्धा पुन कहती है कि सब बातो को सोचने विचारने के पश्चात मैंने यह निश्चय किया है कि बिना किसी विलम्ब के तुम्हे अपना सहयोग प्रदान कर अपने कर्तव्य का पालन करूँ। उसका कहना है कि मुझे तुम्हारा साथी बनकर अपने आपको उऋण ही कर लेना चाहिए क्योकि यही मेरा धर्म है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कामायनी की नायिका श्रद्धा के आदर्श चरित्र की झाँकी दीख पडती है ।

समपर्ण लो •• • •••• विगत विकार ।

शब्दार्थ—समर्पण=अपना सर्वस्त्र अर्पण करना । लो=स्वीकार करो । सजल ससृति=जलमय जगत या भवसागर । उत्सर्ग=न्योछावर बलिदान । पदतल मे=चरणो मे, आपकी सेवा मे । विगत विकार=बिना किसी विकार के, निश्छल रूप से ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को सम्बोधित कर कहती है कि मैंने यह निश्चय कर लिया है कि विना किसी विलम्ब के तुम्हे अपना सहयोग प्रदान कर अपने कर्त्तव्य का पालन करूँ अत मैं अब तुम्हारी सेवा मे लगी रहूँगी । श्रद्धा का कहना है कि आत्म-समर्पण ही समस्त सेवाओ का सार है अर्थात् सबसे बडी सेवा है इसलिए मैं आज विलकुल निस्वार्थ भावना से तुम्हारे चरणो मे अपना जीवन अर्पित कर रही हूँ और मेरा यह आत्म-समर्पण दु खपूर्ण जगती मे पडी हुई तुम्हारी जीवन नौका को पार लगाने के लिए पतवार के समान सिद्ध होगा ।

टिप्पणी—इस पद मे परम्परित रूपक अलकार है ।

दया माया • खुला है पास ।

शब्दार्थ—माया=मोह । मधुरिमा=माधुर्य । अगाध=अथाह । रत्न-निधि=रत्नो का भडार, सुन्दर भावो से पूर्ण । स्वच्छ=निर्मल । तुम्हारे लिए खुला है=समर्पित है ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम मेरे हृदय की दया, माया, ममता, माधुर्य और अगाध विश्वास के अधिकारी हो अत इनमे से जिसे भी चाहो स्वेच्छा से ग्रहण कर सकते हो तथा तुम्हारे लिए इसमे कुछ भी रुकावट न होगी । श्रद्धा का कहना है कि मेरा हृदय तो स्वच्छ भाव रत्नो का खजाना है अर्थात् उसमे असख्य निर्मल भावनाएँ हैं और वे सब तुम्हारे लिए ही हैं अत तुम जो भी चाहो सुगमता से प्राप्त कर सकते हो ।

टिप्पणी—यहाँ 'हृदय रत्ननिधि' मे रूपक अलकार है और श्रद्धा के कथन का अभिप्राय यह है कि उसकी इच्छा है कि मनु का हृदय दया, माया, ममता, माधुर्य और अगाध विश्वास आदि गुणो से पूर्ण हो जाय तथा वे विश्व कल्याण मे ही अपना जीवन अर्पित करें । यहाँ यह भी ध्यान मे रखना होगा कि इन

उद्गारो को प्रकट करने वाली श्रद्धा ही 'कामायनी' महाकाव्य की नायिका है और इन पंक्तियो मे हमे उसके आदर्श नारी हृदय की झाँकी दीख पडती है।

बनो संसृति . .. ... सुन्दर खेल।

शब्दार्थ—संसृति=सृष्टि, संसार। मूल रहस्य=मूल कारण। बेल=लता। सौरभ=सुगंधि, यश। सुमन=फूल।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को सम्बोधित कर कहती है कि मेरी अभिलाषा यह है कि तुम इस सृष्टि के मूल रहस्य अर्थात् मूलाधार बनो और भावी संस्कृति की यह लता तुम्ही से फले-फूले अर्थात् तुम्हारे द्वारा ही सृष्टि का विकास हो। साथ ही जिस प्रकार लता के फूल वातावरण को सुरभित बनाए रखते हैं उसी प्रकार मेरी यही मनोकामना है कि फूलो की भाँति तुम्हारी सुन्दर सतति के सुकार्यों से तुम्हारा यश समस्त सृष्टि मे व्याप्त हो उठे।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे श्रद्धा ने बेल का उदाहरण देकर मनु को यह समझाना चाहा है कि जिस प्रकार बेल मे विकसित फूलो की सुगंधि से सारा वातावरण सुरभित हो जाता है उसी प्रकार तुम्हे अब मानव सृष्टि के विकास के लिए अग्रसर होना होगा।

(२) इस पद मे सागरूपक, यमक और रूपकातिशयोक्ति आदि अलकारो की व्यजना हुई है।

और यह क्या .. ... जयगान।

शब्दार्थ—विधाता=सृष्टि का रचयिता, ईश्वर। मंगल वरदान=शुभ या कल्याणकारी वरदान।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अपने उद्गारो को व्यक्त करते समय श्रद्धा ने मनु को कर्म क्षेत्र मे प्रवृत्त होने की प्रेरणा देते हुए कहा है कि तुम विधाता के इस कल्याणकारी वरदान को नही सुन रहे कि शक्तिशाली होकर विजयश्री प्राप्त करो! इसका अभिप्राय यह है कि ईश्वर भी यही चाहता है कि मानव प्राणी शक्तिवान होकर विजयी बने और मनुष्य हाथ पर हाथ धरे न बैठा रहे। श्रद्धा मनु से कहती है कि तुम्हे हमेशा यह याद रखना चाहिए कि आज समस्त सृष्टि मे देवताओ की यही वाणी गूँज रही है और जब वे स्वय देव सतान है तो उन्हे इस प्रकार कर्म से विमुख होकर पलायनवादी दृष्टिकोण न अपनाना चाहिए।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे पलायनवादी विचारधारा की कटु आलोचना

की गयी है और जैसा कि डॉ० गुलाबराय का कहना है 'नैराश्य परम दुख वाले हतोत्साह करने वाले सिद्धान्तो के विरुद्ध यह आशावादी सदेश देश के लिये आवश्यक है। भगवान के मगलमय वरदान मे विश्वास रखकर ही हम दुनिया के सघर्ष मे आगे बढ जाते है।'

डरो मत ... सकल समृद्धि।

शब्दार्थ—अमृत सतान=देव पुत्र। मगलमय वृद्धि=कल्याणकारी उन्नति। सकल=सपूर्ण।

व्याख्या—श्रद्धा मनु मे कह रही है कि जब तुम स्वय देव पुत्र हो तो तुम्हे निडर होकर कर्म पथ पर अग्रसर होना चाहिए और किसी भी प्रकार का आलस्य दिखाना या अज्ञात आशकाओ से भयभीत होना उचित नही है। श्रद्धा मनु से कहती है कि तुम्हारा भविष्य अधकारपूर्ण नही है बल्कि मगलमय वृद्धि अर्थात् कल्याणकारी विकास तुम्हारे सामने है और जब तुम अपने जीवन को आकर्षण का शक्तिशाली केन्द्र बनाओगे तब तुम्हारे सामने विश्व का समस्त सुख एव वैभव खिचता चला आएगा। इस प्रकार तुम्हे भयभीत होकर या आलस्यवश कर्तव्य क्षेत्र से विमुख होकर पलायन के प्रति प्रेम न दिखाना चाहिए।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रसादजी की प्रसिद्ध नाट्य कृति 'स्कदगुप्त विक्रमादित्य' मे भी अपने को निराश, असहाय एव एकाकी समझने वाले स्कदगुप्त को कर्मपथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देते हुए कमला कहता है—

"कौन कहता है तुम अकेले हो? समग्र ससार तुम्हारे साथ है। स्वानुभूति को जाग्रत करो। यदि भविष्यत् से डरते हो कि तुम्हारा पतन ही समीप है, तो तुम उस अनिवार्य स्रोत से लड जाओ। तुम्हारे प्रचड और विश्वासपूर्ण पदाघात से विध्य के समान कोई शैल उठ खडा होगा, जो उस विघ्न स्रोत को लौटा देगा।"

देव असफलताओ ... चेतन राज।

शब्दार्थ—ध्वस=विनाश। उपकरण=साधन, सामग्री। मन का चेतन राज=मन का ससार।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि जिस प्रकार जीर्ण-शीर्ण पुरानी वस्तुओ को गलाकर नवीन वस्तुओ का निर्माण किया जाता है उसी प्रकार देवताओ की असफलताओ के कारणो अर्थात् जिन कारणो से उनका विनाश हुआ है उन

पर विचार कर इस नवीन विचारधारा के आधार पर मानव संस्कृति का निर्माण किया जा सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस मार्ग का अवलव ग्रहण करने से देव जाति का विनाश हुआ है उस पथ से हटकर यदि मनुष्य दूसरे मार्ग को ग्रहण करे तो निस्सदेह मानव-मन की चेतना का राज्य पूर्ण हो जायगा अर्थात् मन का ससार पूर्ण रूप से निर्मित हो सकेगा। अतएव मानव सस्कृति का विकास करते समय हमे इस बात पर ध्यान देना होगा कि देवताओ की असफलताओ के क्या कारण थे और क्यो वे विनाश की अवस्था को प्राप्त हुए।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा ने यही सकेत किया है कि देवताओ का पतन घोर विलास भावना के कारण ही हुआ था और उनके इस मार्ग का अवलम्ब ग्रहण करने से मानव जाति कभी भी सच्ची सुखशाति नही प्राप्त कर सकती। साथ ही यहाँ प्रथम पक्ति मे रूपक अलकार है।

चेतना का सुन्दर .... . हो नित्य।

शब्दार्थ—**अखिल**=सम्पूर्ण, सभी। **हृदय पटल**=हृदय रूपी परदा, यहाँ हृदय रूपी आधार। **दिव्य अक्षर**=वे अलौकिक अक्षर जो कभी न मिटें। **अंकित हो**=लिखा जाए।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि वास्तव मे सम्पूर्ण मानव-भावो का जो सत्य है वही चेतना का सुन्दर इतिहास है अर्थात् समस्त मानवता की सम्पूर्ण अनुभूतियो की सत्यता ही चेतना का इतिहास कहला सकती है लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि सृष्टि के समस्त प्राणियो के मानस पटल पर यह मानव भावो की सत्यता नित्य दिव्य अक्षरो मे अकित होती रहे और इस प्रकार चेतना का एक सुन्दर इतिहास निर्मित किया जाय। कहने का अभिप्राय यह है कि विश्व के समस्त प्राणी यह बात भली भाँति समझ लें कि मनोभावनाओ को उनके प्राकृतिक रूप मे ग्रहण करना ही वास्तविक जीवन है अर्थात् कभी भी किसी भी प्रकार के सकोच या भय से किसी प्राकृतिक इच्छा का दमन न होना चाहिए। इस प्रकार जब मनोभावनाओ को यथार्थ रूप मे ग्रहण कर उन्हे अनुकूल वातावरण मे विकसित किया जाएगा तभी उनका चेतना से पूर्ण होना भी समव है।

टिप्पणी—यहाँ 'हृदय पटल' मे रूपक अलकार है और 'विश्व के हृदय' मे लक्षणा है।

विधाता की · .... हो चूर्ण।

शब्दार्थ—कल्याणी सृष्टि=कल्याणमय जगत। भूतल=पृथ्वी।

व्याख्या—श्रद्धा ने पुन कहा कि मेरी हार्दिक अभिलाषा तो यही है कि ईश्वर द्वारा रची गयी यह मगलमयी सृष्टि इस ·पृथ्वी पर पूर्ण रूप से सफल हो और चाहे सभी स्थानो पर समुद्र ही दिखाई पडे अर्थात् जल फैल जाय और सूर्य, चन्द्र व तारे आदि ग्रह अपने स्थानो से विचलित हो उठें तथा चाहे अनेक ज्वालामुखी पर्वत फटने लगें परन्तु मनुष्य को कभी भी किसी भी प्रकार विचलित न होना चाहिए। इस प्रकार भयकर से भयकर परिस्थितियो मे भी मानव प्राणी को अविचलित रह उसे मगलमयी सृष्टि की सत्ता को सार्थक सिद्ध करना चाहिए।

उन्हें चिनगारी ... . रहे न बन्द।

शब्दार्थ—सदृश=समान। सदर्प=गर्वपूर्वक।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि जिस प्रकार हम गर्व और आनद के साथ अपने पद तल से आग की भयकर चिनगारी को कुचल देते हैं उसी प्रकार हमे आपदाओ को तुच्छ समझ कर उल्लासपूर्वक अपना मस्तक ऊँचा उठाए प्रगति पथ पर अग्रसर होना चाहिए जिससे कि मानवता का यश जल, थल और पवन सभी मे व्याप्त हो जाय।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना है।

जलधि के .... उपाय।

शब्दार्थ—उत्स=स्रोत, झरने। कच्छप=कछुआ। दृढ़=अचल। अभ्युदय=उन्नति, प्रगति।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को प्रोत्साहित करते हुए कह रही है कि समुद्र चाहे कितनी ही जलधाराओ के रूप मे बहने लगे और कछुए की भाँति द्वीप समूह चाहे उनमे कितनी ही बार डूबें या बाहर आयें लेकिन मनुष्य को दृढतापूर्वक अपने स्थान पर डटे रहना चाहिए और मानव जाति के अभ्युदय का उपाय सोचना चाहिए। वस्तुत मनु जल प्लावन की भयकरता को देख हताश हो गए थे अत स्वाभाविक ही उन्हें प्रेरणा देने के लिए श्रद्धा ने उनसे कहा कि उन्हें पृथ्वी को जल मग्न देख हताश न होना चाहिए क्योकि यह जल प्लावन तो सृष्टि के नियमानुकूल ही है और इसमे परिवर्तन का नियम लागू होता है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है।

विश्व की दुर्बलता .... क्रीड़ामय संसार।

शब्दार्थ—सविलास=प्रसन्नतापूर्वक। क्रीडामय=सुखदायिनी।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि जगत के सभी प्राणियो को अपनी कमजोरियो से निराश न होना चाहिए बल्कि उन्हे यही समझना चाहिए कि कमजोरी ही शक्ति के रूप मे परिणित हो उठती है और हम ज्यो-ज्यो अपनी दुर्बलता पर विजय प्राप्त करते हैं त्यो-त्यो हमारे हृदय मे अपूर्व बल भी बढता जाता है। यदि मानव जीवन मे बार-बार पराजय ही मिले तो भी भयभीत या निराश होकर पलायनवादी विचारधारा को अपनाना बुद्धिमानी नही है बल्कि प्रसन्नतापूर्वक हृदय मे शक्ति एकत्र कर प्रत्येक कठिनाई का सामना करने को तैयार रहना चाहिए और चाहे कितनी ही भयानक से भयानक परिस्थिति क्यो न आए लेकिन कभी भी साहस न खोना चाहिए।

टिप्पणी—यहाँ 'दुर्बलता बल बने' मे विरोधाभास अलकार है।

शक्ति के विद्युत्कण .... मानवता हो जाय।

शब्दार्थ—विद्युत्कण=बिजली के कण। समन्वय=एकत्र। मानवता=मानव सृष्टि।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि जिस प्रकार विद्युत्कण शून्य मे इधर-बिखरे पडे रहने पर कुछ भी करने मे असमर्थ रहते हैं परन्तु ज्यो ही उनका एकीकरण हो जाता है त्यो ही वे सब मिलकर अगणित लोको की सृष्टि करते हैं उसी प्रकार जब तक मनुष्य की शक्ति इधर-उधर बिखरी रहती है तब तक वह अशात और असहाय सा जान पडता। इस प्रकार मनुष्य को चाहिए कि वह बिखरी हुई शक्ति को एकत्र कर शक्ति समन्वित हो जाय और ऐसा करने पर तो मानवता की विजय निर्विवाद रूप से होगी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने आधुनिक विज्ञान के इलेक्ट्रॉन सिद्धात (Electron Theory) की ओर सकेत किया है।

चौथा सर्ग

काम

कथानक—मनु बैठे-बैठे यह सोचने लगते हैं कि यौवन शरीर मे न जाने कितने विलक्षण परिवर्तन ला देता है और रूपाकर्षण, मादकता, भाव-विकास, जीवनोल्लास आदि इसी के कारण सम्भव है तथा अब उनके मन मे अनादि वासना का स्फुरण होने लगता है। उन्हे चारो ओर प्रकृति मे अनूठा सौन्दर्य दीख पडता है और सुधाशु आकुल-सा घूमते हुए जान पडता है तथा नीलाकाश सरोरुहो सा रम्य। सुखद समीर गध युक्त प्रतीत होती है और सृष्टि का प्रत्येक अणु नृत्य मे रत जान पडता है तथा वे सोचने लगते हैं कि यह अनन्त सौन्दर्य क्या सर्वथा मिथ्या है और ईश्वर क्या इस सुन्दरता के अतिरिक्त अन्य किसी तत्व का नाम है ? यदि ऐसा है तो फिर वह प्रत्यक्ष क्यो नही है और आकाश तथा चाँदनी के अवगुठन मे क्यो छिपा हुआ है ? मनु सोचते हैं कि क्या इस सौन्दर्य के प्रति मेरा उदासीन हो जाना उचित है तथा वे इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शरीर छूने के लिए, रूप निहारने के लिए, रस आस्वादन हेतु और गन्ध सूँघने के लिए बनी है अत मुझे भी प्रवृत्ति पथ का ही अनुगमन करना चाहिए।

इस प्रकार मनु के मन मे आकर्षण का भाव उदय होने लगता है और इसी बीच उन्हे तन्द्रा की स्थिति मे एक स्पष्ट ध्वनि सुनाई देती है—"मेरा नाम काम है तथा रति मेरी पत्नी है और हम दोनो इस सृष्टि से भी प्राचीन हैं। सूक्ष्म प्रकृति के मानस मे हम दोनो वासना रूप मे रहते थे और उस वृत्ति के उभरते ही उपयुक्त समय पर उस पुरुष—ईश्वर—के समागम से सर्व-प्रथम दो अणु उत्पन्न हुए तथा वे बढते-बढते असख्य होगये और इन्ही अणुओ से सयुक्त होकर सृष्टि का विकास भी हुआ। जब इस धरती पर देवजाति उत्पन्न हुई तब हम दोनो ने भी शरीर धारण किया तथा रति और काम हमारे उसी समय के नाम हैं। हम दोनो के सामने ही देवजाति नष्ट हो गई और वे देवगण तो मेरी उपासना ही करते थे तथा मेरा सकेत उनके लिए विधान सदृश्य था। न केवल मेरा विस्तृत मोह ही उनके विलास की वृद्धि करता था बल्कि देवताओ का सम्पूर्ण जीवन हमारी इच्छाओ के अनुकूल व्यतीत होने से उनमे विलासिता की अति हो गई और वे हमेशा के लिए नष्ट हो गए।

प्रलय में ही हम दोनों—रति और काम—भी नष्ट होगये तथा हमारी भावना मात्र ही अवशिष्ट बची। अब मैं अनंग बना, अपना अस्तित्व लिए भटक रहा हूँ तथा मेरी यही अभिलाषा है कि आगामी मानव जाति वासना से भले ही पूर्णतः विमुख न हो क्योंकि यह वृत्ति भूख और प्यास के समान स्वाभाविक है लेकिन इतना तो आवश्यक है कि वह संयमशील बने तथा संयमपूर्ण जीवन ही उन्नतिशील बन सकता है। देवों का विनाश तो असंयम के कारण ही हुआ था परन्तु वैराग्य भी कर्मशील जीवन में उचित नहीं है क्योंकि इस जगत में वही प्राणी रुक सकता है जो इसे अनुराग की दृष्टि से देखे और स्वयं को शक्तिशाली सिद्ध करे।

यद्यपि मैं उद्गम की प्रारम्भिक भँवर हूँ लेकिन अब संसृति की प्रगति बन रहा हूँ और मानवीय सृष्टि की शीतल छाया में अपने विस्मृत कृतित्व का परिमार्जन करने का विचार है। रति और मैंने पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा जीवन में शुद्ध विकास का रूप ग्रहण किया तथा इस जल प्लावन के पश्चात् प्रेरणाएँ अधिक स्पष्ट हो गयीं। वस्तुतः इस जगत की रचना प्रेम से हुई है और उसी का संदेश सुनाने के लिए हम दोनों की पुत्री—श्रद्धा—यहाँ आई है और वह सुन्दर, भावमयी तथा शांतिदायिनी है। उसे पाने के लिए उसके अनुकूल बनना होगा, अतः यदि तुम्हारे हृदय में उसकी चाह हो तो तुम्हें उसके योग्य बनना होगा।"

इतना कहकर काम चुप हो गया और मनु आश्चर्याभिभूत हो पूछने लगे कि उसे प्राप्त करने का उपाय क्या है तथा कौन-सा रास्ता उस तक पहुँचाता है? परन्तु अब वहाँ उनके अतिरिक्त इन प्रश्नों का उत्तर देने वाला कोई भी न था। मनु ने जब आँख खोली तो उन्होंने देखा कि प्राची से अरुणोदय हो रहा है।

मधुमय वसंत .... पहरों में !

शब्दार्थ—मधुमय=रसीला, मधुर। वसंत=वसंत ऋतु और युवावस्था या यौवन। अंतरिक्ष=शून्य। रजनी=रात्रि।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि एक दिन मनु बैठे-बैठे कुछ सोच रहे थे कि उन्होंने देखा कि पृथ्वी पर वसंत ऋतु छाई हुई है और इस प्रकार सृष्टि में व्याप्त अपूर्व मादकता से प्रभावित हो वे वसंत ऋतु की तुलना यौवन काल से करने लगे। अतएव मनु सोचते थे कि जिस प्रकार वसंत ऋतु पतझड़ की

अतिम रात्रि के चौथे प्रहर की समाप्ति पर सुन्दर सुरभियुक्त समीर के हिलोरो मे प्रवाहित होती हुई चुपके से उपवन मे व्याप्त हो जाती है उसी प्रकार किशोरावस्था के पूर्ण होते ही यौवन भी अचानक ही आगमन करता है और हम यह भी जान नही पाते कि उसने कब प्रवेश किया था। साथ ही जिस प्रकार वसत ऋतु उपवन मे चारो ओर रमणीयता ला देती है उसी प्रकार यौवन भी जीवन में मधुरता ला देता है।

टिप्पणी—(१) कवि ने इन पक्तियो मे तथा इसके आगे की कुछ पक्तियो मे वसत ऋतु और यौवन का तुलनात्मक चित्रण किया है।

(२) कामायनी के इस चौथे सर्ग 'काम' का प्रारम्भ यौवन के वर्णन से हुआ है और इसका मूल कारण यह है कि यौवनावस्था ही काम को अपनाने की उचित अवस्था है।

(३) इन पक्तियो मे सागरूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार है और प्रतीकात्मकता भी है।

(४) इस पद मे सोलह मात्राओ का पादाकुलक छन्द प्रयुक्त हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि कालिदास ने भी वसत के प्रभाव का वर्णन करते हुए लिखा है—

मधुद्विरेफ कुसुमैकपात्रे पपौ प्रिया स्वामनुवर्त्तमान
शृगेण च स्पर्शनिमीलिताक्षी मृगीमकडूयत कृष्णसार
ददौ रसात् पकजरेणुगधि गजाय गडूषजल करेणु
अर्द्धोपभुक्तेन विसेन जाया सभावयामास रथागनामा
पर्याप्त पुष्पस्तवकस्तनाभ्य स्फुरत् प्रवालोष्ठमनोहराभ्य
लतावधूभ्यस्तरवोऽप्यवापुर्विनम्र शाखाभुजवधनानि ।

क्या तुम्हे देख .. खोली थी।

शब्दार्थ—नीरवता=शून्यता, शैशव की सरलता।

व्याख्या—मनु यौवन को सम्बोधित करते हुए कह रहे है कि तुम मुझे यह तो बताओ कि जब तुमने मेरे जीवन मे प्रवेश किया तब क्या मतवाला सौन्दर्य उसी प्रकार मुखरित हो उठा था जिस प्रकार वसत का आगमन होते ही मतवाली कोयल बोलने लगती है। कहने का अभिप्राय यह है कि किशोरा-वस्था मे न तो अपने शारीरिक सौन्दर्य का ही ज्ञान हो पाता है और न मन की मादकता का परन्तु यौवन का पदार्पण होते ही प्रेम की सुप्त भावनायें

जाग्रत होने लगती हैं तथा मन कुछ चाहने लगता है अतएव जिस प्रकार वसंत-आगमन पर कोयल मस्ती से कूक उठती है उसी प्रकार युवावस्था प्रारम्भ होते ही हृदय मे भी न जाने कितनी मधुर भावनायें उत्पन्न होती हैं। मनु पुन: कहते हैं कि शून्य वातावरण मे सुप्त कलियाँ जिस तरह वसंत ऋतु के आते ही विकसित होने लगती हैं उसी प्रकार यौवनागमन होते ही हृदय की समस्त सुप्त भावनायें जाग्रत हो उठती हैं और हृदय एक प्रकार की अपूर्व मादकता से पूर्ण हो जाता है।

टिप्पणी—यहाँ प्रतीकात्मक शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है और रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

जब लीला . .. .. . सच कहना।

शब्दार्थ—लीला=खेल, क्रीड़ा। कोरक=कली, नवयुवती। सुरभि=सुगंधि।

व्याख्या—यौवन को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि हे यौवन, तुम मुझे यह बात सच-सच बतलाना कि जिस प्रकार जब खेल-खेल मे ही वसंत ऋतु कलियो के अन्दर प्रविष्ट हो जाती है तब उन कलियो के विकसित होते ही मंद-मंद सुगंधि फैलकर आसपास की धरती पर एक प्रकार की फिसलन अर्थात् मादकता उत्पन्न कर देती है उसी प्रकार क्या तुम भी प्रेम की उमगो ने आँख मिचौनी का खेल नही सीख रहे थे और हृदय को आकर्षित करने वाली भावनाओ को उत्पन्न नही कर रहे थे? कहने का अभिप्राय यह है कि यौवन नवयुवक और नवयुवतियो की प्रेम भावनाएँ उभारता है तथा उनके हृदय मे जो मस्ती भरी उसाँसें उठती हैं उनसे चारो ओर मादकता छा जाती है।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

जब लिखते .... . . कल-काल मे।

शब्दार्थ—सरस=आनद देने वाली। कलकंठ=सुन्दर कंठ, मधुर ध्वनि।

व्याख्या—मनु वसंत ऋतु की तुलना यौवन से करते हुए कह रहे हैं कि जिस प्रकार वसंत ऋतु के आते ही फूलो की पखुड़ियाँ विकसित हो उठती हैं और उनमे मधुरता-सी आ जाती है उसी प्रकार यौवनागमन के साथ ही किशोर बालाओ के अग विकसित होने लगते हैं तथा उनमे मधुरता एव लावण्य छा जाता है। साथ ही किशोर बालाओ के अग विकसित होने लगते हैं तथा उनमे मधुरता एव लावण्य छा जाता है। साथ ही जिस प्रकार वसंत मे झरनो से

कोमल कल-कल ध्वनि उठा करती है उसी प्रकार यौवन काल मे नवयुवतियो के कोमल कण्ठ से मधुर वाणी उमड उठती है ।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार की योजना हुई है ।

निश्चिन्त आह • •• अम्बर मे।

शब्दार्थ—काकली=कोयल, कोकिला पर यहाँ युवक या युवती की मधुर ध्वनि से भी अभिप्राय है । दिगत=दिशाओ के कोने । अम्बर=आकाश ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि जैसे वसत ऋतु मे कोयल का मधुर स्वर विशाल आकाश के कोने-कोने मे गूँज उठता है और उसे सुनकर यही अनुमान होता है कि वह निश्चितता एव उल्लास के साथ गा रही है वैसे ही यौवन काल मे युवक-युवतियो का जीवन आनन्द से सराबोर हो उठता है तथा उनकी सुमधुर प्रणय वाणी से उनकी आतरिक प्रसन्नता ही झनक उठती है ।

टिप्पणी—यहाँ प्रथम दो पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति और अतिम पक्ति मे रूपक अलकार है ।

शिशु चित्रकार • •• • आँखो मे भरते ।

शब्दार्थ—अस्पष्ट=जो स्पष्ट न हो, जिसे दूसरे सरलतापूर्वक न जान सकें । ज्योतिर्मयी=प्रकाशपूर्ण, उज्ज्वल भविष्य से युक्त ।

व्याख्या—मनु सोच रहे है कि जिस प्रकार कोई चचल बालक जब चित्र बनाता है तब उसके मन मे जो भावनाएँ उठती है उन्हे वह उसी प्रकार बना देता है भले ही उसे चित्रकला का ज्ञान हो या न हो और वह उन टेढी सीधी रेखाओ को ही चित्र समझता है उसी प्रकार नवयुवतियाँ और नवयुवक भी अल्हडतावश अनेक प्रकार के सुख स्वप्नो के काल्पनिक चित्र बनाते है तथा वे अपने भावी जीवन के विषय मे न जाने कितनी आशायें करते हैं परन्तु उनकी ये कामनाये एक प्रकार से पूर्णत अस्पष्ट ही होती हैं । कहने का अभिप्राय यह है कि नवयुवक नवयुवतियो की दशा उन बच्चो के समान होती है जो कि अपने द्वारा बनायी आडी टेढ़ी रेखाओ मे ही रग भरकर यह समझने लगते है कि चित्र तैयार हो रहा है और इसी प्रकार युवक युवतियाँ भी अपने भविष्य को तो देख नही पाते लेकिन अगणित कल्पनाएँ अवश्य करते है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे यौवन काल मे उत्पन्न होने वाली नवीन आशाओ एवम् आकाक्षाओ का सजीव चित्र अकित किया गया है और शिशु, चित्रकार मे रूपकातिशयोक्ति तथा जीवन की आँखो मे रूपक अलकार है ।

लतिका घूँघट ··· ··· ···· विश्व वैभव सारा।

शब्दार्थ—लतिका घूँघट=लताओ का घूँघट। कुसुम दुग्ध=फूलों का दूध, पर यहाँ पुष्प-रस अर्थात् मकरद या पराग से अभिप्राय है। मधु धारा =आनन्द की धारा। प्लावित करती=रस मग्न करती। अजिर=आँगन।

व्याख्या—मनु मन ही मन विचार कर रहे हैं कि जिस प्रकार पुष्प लताएँ पत्तो रूपी अवगुठन को उठाकर पुष्प सदृश अपनी मादक चितवन से समस्त वातावरण मे एक ऐसी मादकता सी उत्पन्न कर देती है कि उसके सामने समस्त सृष्टि का ऐश्वर्य नगण्य जान पडता है उसी प्रकार सुन्दर नवयुवतियाँ भी जब घूँघट की ओट मे अपनी मादक चितवन से ताकती है तब मन अपूर्व प्रेम रस मे परिपूर्ण हो जाता है और उस एक चितवन का मूल्य विश्व के वैभव से अधिक जान पडता है।

टिप्पणी—इस पद मे सागरूपक और उपमा अलंकार हैं।

वे फूल ···· ·· एकात बना।

शब्दार्थ—फूल=फूल के समान कोमल नवयुवतियाँ। कलरव=प्रेमालाप।

व्याख्या—यौवन और वसत ऋतु की तुलना करने मे मग्न मनु का ध्यान अब देव सृष्टि के विनाश की ओर जाता है और वे सोचते हैं कि जिन फूल-सी सुकुमार नवयुवतियो और उनकी मुस्कान रूपी सुमन की गध के समान सुरभित साँसो आदि की मस्ती मे मनुष्य अपने आपको खो बैठता था वह अब कुछ भी शेष नही रहा और न उनका मधुर प्रेमपूर्ण सम्भाषण तथा सुरीले कठो से निकला मोहक सगीत ही सुनायी पडता है। इस प्रकार सर्वत्र एक प्रकार की नीरवता सी छा गयी है और समस्त हलचल इस शात वातावरण के रूप मे परिवर्तित हो गई है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे वैदर्भी रीति की मधुर योजना है और रूपकातिशयोक्ति, उपमा एव सागरूपक अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कहते-कहते ···· ···· ···· अभिलाषा की।

शब्दार्थ—प्रगति अभिलाषा की=विचारो का ताँता या विचारधारा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु जब यौवन के सम्बन्ध मे बहुत-सी बातो पर विचार कर रहे थे तब अचानक ही उन्हे अतीत की किसी बात का स्मरण हो आया और फिर उन्होंने निराशापूर्ण साँस ली लेकिन उनकी विचार-धारा का अंत न हुआ और वे उसी प्रकार पुन सोच विचार मे लीन होगए।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनोवैज्ञानिक सत्यता के दर्शन होते हैं।

ओ नील आवरण .. .. जितना।

शब्दार्थ—नील आवरण=नीला आकाश। दुर्बोध=कठिनाई से समझ मे आने वाला।

व्याख्या—मनु का कहना है कि ससार के लिए एक नीले परदे के समान पडे हुए नीलाकाश को देखकर यह नही जान पडता कि आखिर उसके पीछे क्या है क्योकि अधकार रूपी परदा सभी वस्तुओ को अपने पीछे छिपा लेता है। इतना ही नही प्रकाश के फैलने से भी ये सभी वस्तुएँ हमे नही दीख पडती क्योकि प्रकाशपूर्ण पदार्थों अर्थात् सूर्य, चन्द्र आदि की चकाचौंध मे हम आकाश से परे कुछ भी नही देख पाते।

टिप्पणी—इस पद मे रूपकातिशयोक्ति एव विरोधाभास अलकार हैं।

तुलनात्मक दृष्टि—प्रसिद्ध कवि मिल्टन ने भी लिखा है :—

Whose saintly visage is too bright
To hit the sense of human sight
And therefore to our weaker view
Overlaid with black staid wisdom's hue

चल चक्र .... असफलता तेरी।

शब्दार्थ—चल चक्र वरुण का=नक्षत्र मण्डल। तारो के फूल=तारागण।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे नक्षत्र मण्डल, तू प्रकाश से पूर्ण होकर आकाश मे क्यो चक्कर लगाता है और तू किसकी खोज मे इस प्रकार व्याकुल होकर रातदिन चक्कर लगाता रहता है पर शायद तुझे अब तक अपनी इस खोज मे सफलता नही प्राप्त हुई। सम्भवत यही कारण है कि इन तारो के फूलो के रूप मे तुम्हारी असफलता ही आकाश मे चारो ओर बिखरी हुई दिखाई देती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत किया है कि आकाश मे जो ये फूल जैसे तारे चारो ओर बिखरे हुए दिखाई देते हैं वे नक्षत्रमण्डल की असफलता के ही सूचक हैं। साथ ही यहाँ रूपक, मानवीकरण एव अपह्नुति अलकार की भी योजना है।

नव नील कुज . .... . मकरन्द हुई।

शब्दार्थ—नीलकुज=नील लता-गृह के समान आकाश। झीम रहे=झूम रहे है, मस्ती मे लहलहा रहे हैं। कुसुम=फूल, पर यहाँ तारे। कथा बन्द

न हुई=वातचीत वन्द नही हुई, ज्योति क्षीण नही हुई। आमोद=सुगन्धि, प्रसन्नता, चाँदनी। हिम कणिका=ओस की बूंद।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि आकाश ऐसा प्रतीत होता है मानो कि नीली लताओ वाले कुज परस्पर सयुक्त होकर वायु के झको ो द्वारा इधर-उधर घूम रहे हो और काँपते हुए तारे ऐसे जान पडते हैं मानो कि कलियाँ चटख रही हो। साथ ही वायुमण्डल मे व्याप्त सुगन्ध इन्ही ताराल्पी फूलो से निकली हुई जान पडती है और धरती पर पडी ओस की बूँदे ऐसी प्रतीत होती है जैसे कि आकाश से मकरन्द झर रहा हो।

टिप्पणी—इस पद मे लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता एव उपचार वक्रता आदि विशेषताओ के रहने से छायावादी काव्य-शिल्प का उत्कृष्ट रूप दृष्टिगोचर होता है। साथ ही इन पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति एव सागरूपक अलकार एव लक्षण-लक्षणा की योजना भी हुई है।

इस इन्दीवर ·· ···· · मोहिनी की कारा।

शब्दार्थ—इन्दीवर=कमल, पर यहाँ चन्द्रमा। मधु की धारा=मकरन्द की धारा, चाँदनी का प्रकाश। मधुकर=भ्रमर। कारा=जेल, वन्दीगृह।

व्याख्या—मनु आकाश मे चमकते हुए चन्द्रमा को देखकर कहते हैं कि यह चन्द्रमा आकाश रूपी उपवन मे फूल के समान चमक रहा है और जिस प्रकार फूल अपने रस से वातावरण को मादक एव सुगन्धिमय वना देता है उसी प्रकार चन्द्रमा ने भी अपनी चाँदनी का प्रकाश फैलाकर सम्पूर्ण प्रकृति को मादक वना दिया है। साथ ही जिस प्रकार कमल भौंरे के लिए प्रेमपूर्ण और मन को मोहने वाला वन्दीगृह वन जाता है उसी प्रकार मन रूपी भ्रमर के लिए यह वातावरण आकर्षक बन्दीगृह वना हुआ है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि-कल्पना का अत्यन्त स्वाभाविक एव समीचीन रूप देख पडता है और रूपकातिशयोक्ति एव रूपक अलकार तथा लक्षण-लक्षणा की योजना भी हुई है।

आँसुओ को ···· · ·· हुआ कितना।

शब्दार्थ—स्फूर्तिमय वेग=गतिशीलता। अविराम=निरतर, लगातार।

व्याख्या—मनु कह रहे है कि सृष्टि का प्रत्येक अणु मादक वातावरण के कारण इतना अधिक चचल है कि उसे विश्राम करने की आवश्यकता ही नही

होती और इससे यही शिक्षा मिलती है कि प्रकृति तो रात-दिन क्रियाशील रहती है जबकि मनुष्य को रात्रि मे विश्राम लेने का अवसर भी मिल जाता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे आधुनिक विज्ञान के अणु परमाणु एव विद्युत्कण सम्बन्धी सिद्धान्त की ओर सकेत किया गया है और अन्तिम दो पंक्तियों मे विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है।

उस नृत्य शिथिल ... की छाया।

शब्दार्थ—नृत्य शिथिल=नाच के कारण थके हुए। मोहमयी माया=मोहित करने वाला जादू या मोहक आकर्षण। समीर=वायु। प्राणो की छाया=प्राणो को शीतलता या शांति प्रदान करने वाला।

व्याख्या—मनु अणु परमाणुओ को दिन रात चक्कर काटते हुए देखकर यह कल्पना करते है कि जिस प्रकार कोई नर्तकी नाचते-नाचते थक जाती है और उसकी सांस न केवल दर्शकों को अत्यत आकर्षक प्रतीत होती है अपितु वह दर्शकों को आनद भी प्रदान करती है उसी प्रकार इस सुनसान रात्रि मे निरतर नृत्य करने वाले अणु परमाणुओ मे भी आकर्षण भरा हुआ है तथा यह मद-मद गति से प्रवाहित होने वाली वायु मेरे व्याकुल प्राणो को अत्यत शीतलता प्रदान करती है।

टिप्पणी—(१) वस्तुत आकाश के नक्षत्र भी अणुओ से ही बने हैं अत. कुछ व्याख्याकार इस पद की व्याख्या करते हुए यही अर्थ करते है कि मनु आकाश मे निरन्तर घूमते हुए नक्षत्र मडल को सबोधित कर अपने उद्गार प्रकट कर रहे हैं।

(२) इन पंक्तियों मे समासोक्ति और सागरूपक अलकार है।

आकाश रन्ध्र ... रोती है।

शब्दार्थ—आकाश रन्ध्र=आकाश मे चमकते हुए तारे जो आकाश के छेद जान पड़ते हैं। पूरित=पूर्ण, भरे हुए। आलोक=प्रकाश करने वाले ग्रह नक्षत्र आदि।

व्याख्या—मनु का कहना है कि आकाश मे बिखरे हुए ये तारे नही हैं बल्कि आकाश के छिद्र है जिसमे कि उज्ज्वल प्रकाश भरा हुआ है और यही कारण है कि सृष्टि का वातावरण भी गम्भीर सा जान पडता है। साथ ही जितने भी प्रकाशवान सूर्य आदि विशाल नक्षत्र हैं वे सब मूर्छित से ही सो रहे

हैं और मेरी आँखें इनके रूप को देखते-देखते थक गयीं परन्तु इतने पर भी तृप्त नहीं हुई अत दु.खी भी हो उठी हैं और रोती सी जान पड़ती हैं।

टिप्पणी—इस पद मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

सौन्दर्यमयी चंचल .. . . नाच रहीं।

शब्दार्थ—सौन्दर्यमयी चंचल कृतियाँ=सुन्दरता एवं चचलता से पूर्ण चन्द्रमा और तारे आदि नाच रहीं=चक्कर लगा रही, क्रीडा कर रहीं।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि सुन्दरता की ये विभूतियाँ अर्थात् चन्द्रमा और तारे आदि आज मेरे नेत्रो के सामने एक अद्‌भुत रहस्य बनकर क्रीडा करने मे मग्न हैं अर्थात् वे सभी अपने-अपने कार्य मे सलग्न हैं। साथ ही ये विभूतियाँ इतनी मनोहर है कि मेरी आँखें उन्हीं पर टिकी हुई हैं तथा आगे नहीं बढ पाती अर्थात् दृष्टि उन्हे वेध सकने मे असमर्थ है। कहने का अभिप्राय यह है कि शिव का सत् स्वरूप बाह्य सौन्दर्य से इतना अधिक आच्छादित रहता है कि दृष्टि उसे भेद सकने मे असमर्थ ही रहती है और वह उसी मे उलझ कर रह जाती है। साथ ही इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि रम्यरूप बनी है जिसे व्यक्ति देखता रह जाय और इधर-उधर अपना ध्यान न आकृष्ट कर सके।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पार्थिव सौन्दर्य को अनत आध्यात्मिक सौन्दर्य का अग माना गया है पर यह भी सकेत किया गया है कि पार्थिव सौन्दर्य से पूर्ण वस्तुएँ अत्यत मोहक एव आकर्षक होने के कारण साधक को अपने सौन्दर्य मे उलझाकर उसे आगे नही बढने देती। इस प्रकार साधक अपना सतुलन खोकर ससार की विषमता मे भटकता हुआ मनु के समान जीवन के उत्थान पतन मे फँसकर सामरस्य की स्थिति से दूर हो जाता है।

मैं देख रहा हूँ . . समझूँ मान तुम्हें।

शब्दार्थ—परदे मे=नीले आकाश मे। अक्षय निधि=अमर खजाना, सदैव रहने वाला भडार। मान=मानदण्ड आधार।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि मैं जो कुछ देख रहा हूँ वह सब सत्य है या किसी की छाया मात्र अर्थात् सृष्टि मे व्याप्त यह सुन्दरता वास्तविक है या फिर इसके आवरण के भीतर कोई अन्य वस्तु है जो अत्यधिक महान है? मनु का कहना है कि क्या मैं कभी इस बात को न जान पाऊँगा कि आखिर वह गूढ सत्ता क्या है और मेरे मन मे जो विविध प्रश्न उठ रहे हैं क्या वह

मूल सत्ता उन सबको हल न कर देगी ? इन पंक्तियों में दार्शनिक विचार धारा भी है और कहा जाता है कि दार्शनिकों का यह विश्वास है कि सृष्टि का समस्त सौन्दर्य भगवान के रूप की छाया मात्र है और भगवान विम्ब है तथा सुन्दरता प्रतिबिम्ब । साथ ही इस जगत को माया माना गया है जिसमें कि मन उलझ जाता है और यह लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता है परन्तु भगवान स्वयं इस प्रपंच से परे हैं अतः मनु इन्हीं धारणाओं के कारण यह शंका कर रहे हैं कि यह दृश्यमान जगत् झूठा है, उजड़ता है या अमरत्व है ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में रूपकातिशयोक्ति, रूपक और विरोधाभास अलंकार है ।

माधवी निशा ··· · ···· धारा सी ।

शब्दार्थ—माधवी निशा=वसंत की रात्रि । अलकों में=बालों में, काले काले बादलों में । मरु अंचल=रेगिस्तान, मरुस्थल । अंत.सलिला=अन्दर ही अन्दर बहने वाली नदी ।

व्याख्या—मनु अनन्त सत्ता को सम्बोधित कर कह रहे हैं कि वह वसंत की मादकता भरी रात्रि के आनन्दपूर्ण बादलों में छिपने वाले ताराओं के समान है या फिर हृदय रूपी शून्य मरुस्थल में बहने वाली नदी के समान है जिसकी अनुभूति मात्र होती है पर जो दिखाई नहीं देती । 'वस्तुत किसी-भी किसी की आन्तरिक अभिलाषा का पता बाहर से नहीं चल पाता अत मनु ने यहाँ स्वाभाविक ही अनन्त सत्ता की उपमा बादलों में छिपे हुए तारे या धरती के अन्दर बहने वाली नदी से दी है । इन उपमाओं में यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मूल शक्ति तो छिपी रहती है और जिस प्रकार बादलों के हट जाने पर तारे दीख पड़ते हैं तथा रेगिस्तान की ऊपरी भूमि हटने पर ही जल की धारा प्रत्यक्ष हो जाती है उसी प्रकार साधना करने से अव्यक्त विराट सत्ता का ज्ञान भी सम्भव है ।

टिप्पणी—(१) कुछ व्याख्याकारों का विचार है कि कामायनी के इस पद में और इसके बाद के पद में मनु श्रद्धा के सम्बन्ध में सोच रहे हैं पर यह दूरारूढ़ कल्पना उपयुक्त नहीं जान पड़ती क्योंकि श्रद्धा तो उनके सामने प्रत्यक्ष रही है अत उसे अंत सलिला की उपमा देना आवश्यक नहीं था ।

(२) इस पद में उपमा अलंकार की योजना हुई है ।

श्रुतियों में .. .. बोल रहा।

शब्दार्थ—श्रुतियों=कानों। मधु-धारा=रस-धारा, मधुर वाणी। नीरवता=शून्य, मौन।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि यद्यपि चारों ओर निर्जनता सी है और आस-पास कोई भी नहीं है पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कोई कानों में अत्यन्त कोमल मधुर वाणी में धीरे-धीरे कुछ कह रहा है और इसके फलस्वरूप मेरे हृदय में मधुर भावनाएँ उत्पन्न हो रही हैं। मनु ने इन पंक्तियों में अपने हृदय को ही नीरव वातावरण मान लिया है और उनका कहना है कि मेरी समझ में यह नहीं आता कि वह कौन-सी अव्यक्त सत्ता है जो इतनी व्यथा के पश्चात मेरे हृदय को रसाप्लावित कर रही है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में रहस्यात्मकता है और रूपकातिशयोक्ति एवं पुनरुक्ति अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

है स्पर्श मलय .. . . बुलाता है।

शब्दार्थ—मलय=मलयाचल से आने वाली वायु जो शीतल, मंद और सुगंधित होती है। झिलमिल=मंद। संज्ञा=चेतना। तन्द्रा=निद्रा, नींद।

व्याख्या—मनु अपनी दशा का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि मुझे समझ में नहीं आता कि आखिर वह कौन सी अव्यक्त सत्ता है जिसका स्पर्श मुझे उसी प्रकार सुख प्रदान करता है जिस प्रकार मलय पवन के स्पर्श से आनन्द प्राप्त होता है। साथ ही इस स्पर्श से मेरी चेतना भी कुछ-कुछ शिथिल सी हो जाती है और पुलकित होने के कारण मेरे नेत्र आलस्यपूर्ण हो बन्द से हो रहे हैं तथा मुझे हल्की सी नींद आ रही है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में हवा के मंद झकोरों के चलने से होने वाली मानव स्थिति का स्वाभाविक चित्रण किया गया है और कवि ने यह भी स्पष्ट करना चाहा है कि शीतल, मंद और सुगंधित मलय समीर में भी वही अव्यक्त सत्ता विद्यमान है।

व्रीडा है .... सींच रही।

शब्दार्थ—व्रीड़ा=लज्जा। विभ्रम=प्रणय-व्यापार। मृदुल कर=कोमल हाथ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मुझे ऐसा आभास होता है कि वह अव्यक्त सत्ता मेरे साथ कुछ खिलवाड़-सा कर रही है क्योंकि उसके कारण

मेरी स्थिति उस लजीली चचल नायिका के समान हो जाती है जो अपने प्रियतम को देखते ही चौंक कर घूँघट डाल लेती है परन्तु फिर वही प्रियतम के पीछे मे छिप कर उसकी आँखें मीच लेती है अर्थात् आँखो को अपनी कोमल उँगलियो से ढँक लेती है। वस्तुत कवि ने इन पक्तियो मे एक ऐसी चचल लजीली नायिका का चित्रण किया है जो कि अपने प्रियतम को देख स्वय घूँघट डाल लेती है परन्तु बाद मे वही प्रियतम के पीछे छिपकर अपने कोमल हाथो से उसकी आँखे बन्द कर देती है तथा उसका प्रियतम उसे देख नही पाता लेकिन उसके स्पर्श से पुलकित हो उठता है। इस प्रकार मनु ने यहाँ यही कहना चाहा है कि उनके मन की चचल वृत्ति उसी नायिका के समान है जो स्वय अपना मुख छिपा लेती है, जिससे कि वे उसे देख न सकें अर्थात् मन की चचल वृत्ति उनके साथ खिलवाड़-सा करती रहती है और अपने आपको अप्रकट रख उनसे छेडछाड करती है। इसका परिणाम यह होता है कि उनके रोम-रोम मे सिहरन सी उठने लगती है और वे उसे देख तो पाते नहीं परन्तु उसका स्पर्श उन्हे व्याकुल कर देता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनोभावनाओ और सचारी भावो की सुन्दर व्यजना हुई है तथा यह पद कवि प्रसाद की चित्रोपम कला का सुन्दर उदाहरण है। साथ ही यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना भी हुई है।

उद्बुद्ध क्षितिज .... .. काया मे।

शब्दार्थ—उद्बुद्ध=जाग्रत, प्रात कालीन आकाश। उदित शुक्र=चमकता हुआ शुक्र तारा। किरनो की काया=किरणो का रूप या शरीर धारण कर।

व्याख्या—मनु का कहना है कि यद्यपि क्षितिज का अन्धकार हल्का पड गया है परन्तु उषा के प्रकाश के मध्य जो नीली रेखा सी दीख पडती है उसे देख विभिन्न भावनाएँ सी मन मैं उठती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो यह शुक्र नक्षत्र की कालिमा किरणो से आच्छादित सी है तथा उषा का रहस्य अपने अतर मे छिपाए सो रही है अर्थात् इस कालिमा के हटते ही उषा अपना समस्त वैभव सँवारे प्रकट हो जाएगी। यहाँ यह स्मरणीय है कि आकाश के अधकार के मध्य ही उषा प्रकट होती है अत कवि ने उसे उस अधकार में सोया हुआ बतलाया है और वह यह भी कहना चाहता है कि क्षितिज की शोभा मे उदित शुक्र नक्षत्र की छाया मे शुभ्र किरणो मे लिपटी हुई उषा न जाने कौन सा रहस्य अपने मे छिपाए हुए है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में पलायनवादी विचारधारा का खण्डन किया गया है और कवि यही कहना चाहता है कि जिस प्रकार रात्रि के अंधकार के पश्चात् आशारूपी उषा प्रकट हो उठती है उसी प्रकार दुःख की काली घटा भी अनिवार्य नहीं है तथा दुःख की समाप्ति के पश्चात् सुख भी अवश्यम्भावी है।

(२) इस पद में रहस्यात्मकता भी है और कवि का कहना है कि जिस प्रकार रात्रि के अंधकार में उषा सोई रहती है उसी प्रकार इस सृष्टि के सौन्दर्य के पीछे भी कोई अज्ञात शक्ति निस्संदेह विद्यमान है।

(३) इन पंक्तियों में पूर्णोपमा अलंकार है।

उठती हैं ··· ···· ··· ···· ···· वंशी।

शब्दार्थ—छाजन=छाया, छप्पर। निस्वर=ध्वनि, शब्द। रंध्र=छेद, यहाँ तारे।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि आकाश मण्डल पर छाई हुई यह कालिमा अर्थात् काली घटा ऐसी प्रतीत होती है मानो कि वह कोमल नवीन पत्तियों का कोई छप्पर हो और इनसे टकराकर सुन्दर सुरक्षित समीर मधुर ध्वनि छेड़ रही हो जिसे सुनकर ऐसा जान पड़ता है कि मानो कुछ दूरी पर बाँसुरी बज रही हो।

टिप्पणी—(१) इस पद में कवि ने प्रकाश की किरणों पर छाई हुई कालिमा को छप्पर के सदृश्य माना है और उसे आकाश एक विस्तृत बाँसुरी तथा तारे उसके छिद्र सदृश्य जान पड़ते हैं। इस प्रकार कवि का यही कहना है कि इस बाँसुरी को भी कोई अज्ञात शक्ति ही दूर पर छिपी बैठी बजा रही है।

(२) इन पंक्तियों में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

सब कहते ···· ··· ··· · · दर्शन की।

शब्दार्थ—जीवन धन=जीवन सर्वस्व, भगवान। आवरण=परदा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि इन सबको अर्थात् सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों को देखकर ऐसा जान पड़ता है कि मानो ये सब उस अव्यक्त सत्ता को देखने के लिए आकुल हैं तथा ऊँची ध्वनि से पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि हम अपने जीवन-धन अर्थात् परमात्मा के दर्शन करना चाहते हैं। अतएव उस अव्यक्त विभूति पर पड़े हुए परदे को हटाया जाय जिससे कि हमें उसके दर्शन सहज ही प्राप्त हो सकें। मनु कह रहे हैं कि उस आवरण का हटना तो दूर रहा वरिक दर्शन करने वाले जितना ही चिल्लाते हैं उतना ही अधिक गहरा

आवरण उस अनत विभूति पर चढता चला जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि दर्शनार्थियो की भीड ही उस अनत विभृति का परदा बन जाती है और वे दूसरो की दृष्टि के लिए स्वय एक आवरण बना जाते हैं।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने यही कहना चाहा कि भगवान के स्वरूप का दर्शन अत्यत कठिन है क्योकि सभी उसे अपनी साधना द्वारा देखने का प्रयत्न करते हैं पर जितने ही साधक और साधनायें हैं उतना ही आवरण उस पर और चढ जाता है तथा उस अनत विभूति का दर्शन दुर्लभ ही रहता है। इस प्रकार वास्तविक साधना का अभाव परमात्मा को और भी गूढ बना देता है।

(२) इस पद मे 'आवरण' द्वारा शैव दर्शन के निम्नलिखित षट् कचुको की ओर सकेत किया गया है—माया, कला, विद्या, राग, काल और नियति।

(३) 'खोलो-खोलो' मे वीप्सा और 'जीवन धन' मे परिकर अलकार की योजना हुई है।

चाँदनी सदृश . कुछ गाता सा।

शब्दार्थ—सदृश=समान। अवगुंठन=घूँघट, परदा। कल्लोल=आनद। उन्निद्र=उमडता हुआ, जाग्रत। उन्मत्त=मस्त।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि उस आनत विभूति का सुन्दररूप तभी दीख पडता है जबकि उस पर पडा हुआ अवगुंठन चाँदनी के समान बिखर कर खुल जाए अर्थात् चाँदनी का जो घूघट आकाश रूपी सागर की पवन हिलोगे के असीम आनद मे मग्न सा हो मस्ती के साथ डोल रहा है वह यदि किसी प्रकार खुल जाए तभी उस अज्ञात शक्ति के दर्शन सुलभ हो सकते हैं। मनु का कहना है कि चांदनी का यह घूंघट कभी-कभी तो शेष नाग के फन सदृश्य जान पडता है और ऐसा प्रतीत होता है कि बार-बार फन पटकने से जिस प्रकार मणियाँ बिखर उठती हैं उसी प्रकार चाँदनी रूपी घूंघट के बार-बार हिलने के कारण ही ये तारे आकाश पर बिखरे पडे हैं। इस प्रकार इन पक्तियो मे चाँदनी के घूँघट को शेषनाग का फन माना गया है और तारो को मणि राशि।

मनु कहते हैं कि बार-बार उस अवगुठन के हिलने से ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वह अनन्त विभूति मादकतापूर्ण हो हिलोरें ले रही हो और वायु के प्रवाहित होने से जो मधुर ध्वनि सुनाई देती है वह ऐसी प्रतीत होती है जैसे कि उस अवगुठन के अन्दर छिपे हुए रमणीय मुख की शोभा गीत गा रही

हो। इन पक्तियो से यह अर्थ भी ग्रहण किया जा सकता है कि कवि उस अव्यक्त शक्ति को सागर के समान मानता है और उसका कहना है कि रूप का आवरण हट जाने पर हमे उस अनत विभूति का ऐसा समुद्र दीख पडेगा जिसमे अनत आनन्द विद्यमान है और जो अपनी क्रीडा लहरो मे मग्न है। साथ ही वे लहरें फेनिल हैं और उनमे रत्नो के समूह है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे शैव दर्शन का प्रभाव विद्यमान है और शैवागमो मे शिव को आनद का सागर माना गया है तथा 'बोध सार' मे लिखा भी है—

आनद सागर शम्भुस्तच्छक्तिर्दैव उच्यते ।
शीकरा इव सामुद्रा स्तदानदकण गणाः ॥

(२) इन पक्तियो मे उपमा, रूपकातिशयोक्ति, श्लेष एवम् सागरूपक अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—कठोपनिषद् मे भी उस अव्यक्त सत्ता या विराट् विभूति को अनन्त ज्योति और अक्षय प्रकाश से पूर्ण माना गया है—

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्र तारक नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्नि ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिद विभाति ॥

जो कुछ हो ·· ···· ·· संयम इनके ।

शब्दार्थ—**दम**=दमन, वाह्य वृत्तियो का निग्रह। **सयम**=नियन्त्रण, इन्द्रिय निग्रह।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि चाहे कुछ भी परिणाम क्यो न हो पर अब मैं अपने जीवन के इस मधुर भार को अपने मानस से अलग नही कर सकता और न उसका अपमान ही कर सकता हूँ। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु के हृदय मे जो एक प्रकार की मधुर कसक सी उठ रही है उसे वे अपने हृदय से अलग न होने देंगे और यह जानते हुए भी कि इसके कारण अनेक वाधाएँ उपस्थित होगी तथा रह रहकर यह भावना भी उत्पन्न होगी कि इस मनोवृत्ति का दमन कर सयमपूर्वक जीवन व्यतीत किया जाय, पर वे अब इन सब वाधाओ की तनिक भी चिन्ता न करेंगे। मनु का कहना है कि वे इन भावनाओ को अपने प्रेम पथ की वाधा समझ कर उन्हे मार्ग से हटा देंगे और किसी भी प्रकार विचलित न हो प्रेम पथ पर आगे बढते रहेगे।

टिप्पणी—इन पक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस आगतुक रमण

अर्थात् श्रद्धा के विचारो का मनु पर कितना प्रभाव पडा है और उसकी पलायनवादी प्रवृत्तियाँ दूर हो रही हैं तथा वे अब जीवन से प्रेम करने लगे है।

नक्षत्रो तुम .... जाली क्या है ?

शब्दार्थ—सकल्प=दृढ निश्चय। **सदेहो की जाली**=सदेहो के कारण उत्पन्न उलझनें।

व्याख्या—मनु नक्षत्रो को सम्बोधित कर कहते हैं कि हे नक्षत्रो, तुम भला यह कैसे जान सकते हो कि उषा की लालिमा मे क्या सौन्दर्य होता है क्योकि तुम तो अधकार मे ही उदय होते हो और उषा काल के समय तक तो तुम छिप जाते हो। वस्तुत नक्षत्र यहाँ भाव का प्रतीक है और उषा की लाली प्रेम भावना की द्योतक है अत इन दोनो प्रतीको के आश्रय से मनु ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि उनकी भावनाएँ प्रेम की लालिमा देखने की अभिलाषा रखती हैं और उनकी यही तीव्र अभिलाषा है कि किसी भी प्रकार प्रेमानुभूति की जाय।

टिप्पणी—(१) कुछ व्याख्याकारो ने नक्षत्रो को सयमी व्यक्तियो का प्रतीक भी माना है और उनका कहना है कि जिस प्रकार नक्षत्र यह जान नही पाते कि उषा का सौन्दर्य किस प्रकार का होता है उसी प्रकार सयम से रहने वाले व्यक्ति भी सासारिक सौन्दर्य और प्रेम को समझ नही पाते।

(२) इन पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है और प्रयोजनवती लक्षणा है।

कौशल यह .. .. .. बनेगी क्या ?

शब्दार्थ—सुषमा=सौन्दर्य। **दुर्भेद्य**=जिसके पार न जाया जा सके, जो कठिनाई से प्राप्त हो सके। **चेतना**=ज्ञान, व्याकुलता, व्यग्रता।

व्याख्या—मनु का कहना है कि विधाता की यह कैसी सूक्ष्म चतुरता है कि हम सौन्दर्य के रहस्य को जान ही नही पाते और इस प्रकार सुन्दरता के रहस्य को समझना अत्यन्त कठिन कार्य है। मनु कह रहे हैं कि मैं तो इसी चिन्ता से व्याकुल हूँ कि इस सुन्दरता के रहस्य को जान भी सकूँगा या नही और जीवन भर क्या उससे अपरिचित ही रहूँगा। साथ ही सौन्दर्य की ओर आकृष्ट करने वाली मेरी इन्द्रियाँ ही क्या मुझे जीवन मे असफल कर देंगी अर्थात् जिन इन्द्रियो ने मुझे सुन्दरता की ओर आकर्षित किया है क्या वे कभी भी मुझे सुन्दरता का रहस्य न समझने देंगी ?

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मनु के अंत: संघर्ष का अत्यन्त सजीव एवं मनोवैज्ञानिक वर्णन हुआ है।

पीता हूँ .... गुंजार भरा।

शब्दार्थ—मधु लहर=मधुर भावनाएँ। गुंजार=मधुर गूँज।

व्याख्या—काम भावना से व्यथित हो मनु कह रहे हैं कि मैं अब शरीर रूपी पात्र में भरे हुए इस जीवन-रस को, जो कि स्पर्श, रूप, रस, गंध से निर्मित है, पीना प्रारम्भ करता हूँ अर्थात पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के प्रभाव की अनुभूति करने से उन सब की मधुरिमा में लीन हो इन्हीं तत्वों से बने जीवन रूपी रस का पान कर रहा हूँ। साथ ही मनु यह भी कहते हैं कि मेरे कान इसे भली भाँति जान गए हैं कि समुद्र के किनारे से जब लहरें टकराती हैं तब उस ध्वनि में कितनी मादकता छिपी होती है अर्थात् हृदय रूपी सागर में जब मधुर भावनाएँ उठती हैं तब वे स्वाभाविक ही एक प्रकार के विलक्षण आनन्द की सृष्टि करती हैं।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनु अब यह मानने लगे हैं कि नेत्र रूप को निरखने के लिए बने हैं, हाथ कोमल अंग को छूने के लिए है, वाणी मधुर ध्वनि का उच्चारण करने के लिए है, जिह्वा रस चखने के लिए है और नासिका गंध सूँघने के लिए है।

(२) इस पद में 'पीता हूँ, हाँ मैं पीता हूँ' में वीप्सा अलंकार है।

तारा बनकर . . अवसाद भरे।

शब्दार्थ—स्वप्नों का उन्माद = उन्मत्त भावनाएँ। अवसाद = दुःख, उदासी।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि अंतरिक्ष में जिस प्रकार असंख्य तारे बिखरे हुए हैं उसी प्रकार मेरे हृदय में भी अनेक भावनाएँ उठ रही हैं और मेरे नेत्रों के सम्मुख मादक स्वप्नों का वैभव सा छा गया है तथा सारा शरीर शिथिल सा होता जा रहा है। मनु का विचार है कि ऐसे मुग्ध वातावरण में उनके लिए दुःख में निमग्न रहना उचित न होगा।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में रूपक एवं मानवीकरण अलंकार हैं।

चेतना शिथिल ... . पहरों में।

शब्दार्थ—रजनी के पिछले पहरों में=रात्रि की अंतिम वेला में।

व्याख्या—कवि कहता कि अन्धकार की सघनता होने पर मनु की चेतना

आलस्ययुक्त हो गयी और उन्हे नीद सी आने लगी तथा रात्रि की अन्तिम वेला मे मनु गहन निद्रा मे मग्न हो गए। यहाँ यह स्मरणीय है कि जिस प्रकार समुद्र मे गिरने से मनुष्य की चेतना शिथिल हो जाती है उसी प्रकार रात्रि का अन्धकार बढने पर मनु भी निद्रा मे निमग्न होने लगे और उनका शरीर चेतना शून्य होने लगा।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे सागरूपक अलकार की सुन्दर योजना हुई है।

उस दूर क्षितिज ·· ··· · अपनी माया से।

शब्दार्थ—दूर क्षितिज=स्वप्न लोक। सचित=एकत्रित, इकट्ठा। अपनी माया=अपनी करामात, अपना स्वभाव।

व्याख्या—वास्तव मे मानव मन तो चलायमान ही है और उसे निद्रा मे भी विश्राम नही रहता अत मनु के मन को भी निद्रा मे विश्राम नही है तथा वह अपने स्वभाव के अनुकूल ही चचल है अर्थात् कार्यरत है। इस प्रकार शनै शनै मनु के मन मे स्मृतियो का एक पृथक् ससार ही निर्मित हो गया अर्थात् अतीत की समस्त स्मृतियो ने उनके मन मे एकत्र होकर अपना एक अलग ससार उसी प्रकार बना लिया जिस प्रकार कि दूर क्षितिज के एक कोने मे काली-काली घटाएँ एकत्र होकर अपना अलग ससार बना लेती हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे स्वप्न की महत्ता के सम्बन्ध मे प्रसाद जी का दृष्टिकोण स्पष्ट हुआ है और यहाँ यह स्मरणीय है कि फ्राइड ने स्वप्न को अतृप्त वासनाओ की पूर्ति का साधन माना है। परन्तु भारतीय दार्शनिक स्वप्न को अपने पूर्व सस्कारो से उत्पन्न मानते हैं अत प्रसाद का दृष्टिकोण भारतीय ही है।

जागरण लोक ···· ···· ध्वनि गहरी।

शब्दार्थ—जागरण लोक=बाहरी ससार। स्वप्न=कल्पना। सुख=अच्छा, मधुर। कौतुक=आश्चर्य, कौतूहल। क्रीडागार=खेलने का स्थान। आलस=शिथिलता, आलस्य। सजग=सावधान, सचेत। कानों के कान खोलकर=अत्यन्त सावधान होकर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि निद्रित अवस्था मे मनु शनै-शनै इस जागरण लोक को भूल गए और उन्हें प्रत्यक्ष जगत का तनिक भी ज्ञान न रहा तथा वे सुखद कल्पनाओं द्वारा दूसरे ही जगत मे जा पहुँचे। इसका अभिप्राय यह है कि मनु को अब सुखमय स्वप्न दीख पडने लगे और ये सुखमय

स्वप्न उनके लिए एक आश्चर्य के समान ही थे तथा उनका मन अनेक सुखपूर्ण कल्पनाओ का क्रीडागार हो गया अर्थात् उनके मन मे ये स्वप्न विविध स्मृतियो के खेलने के स्थान बन गए। कवि का कहना है कि इस आलस्यपूर्ण स्थिति मे विचार करते समय मनुष्य की चेतना अधिक सजग रहती है अत मनु उस निद्रा की अवस्था मे भी कुछ सोच रहे हैं और उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो किसी की अत्यत स्पष्ट वाणी उनके कानो मे गूँज रही है।

टिप्पणी—वस्तुत यह वाणी काम की ही थी क्योंकि काम भावना ही मनु को भी व्यथित कर रही थी और अब काम ही उन्हे अपना परिचय विस्तृत रूप मे दे रहा है।

प्यासा हूँ · ···· · ···· न चैन हुआ।

शब्दार्थ—प्यासा=अतृप्त। ओघ=जल की बाढ, तीव धारा पर यहाँ तीव्र वासना। तृष्णा=लालसा, कामना। चैन=शाति।

व्याख्या—काम कह रहा है कि यद्यपि देवो ने मेरी बहुत अधिक पूजा की है और वे दिन-रात मेरी ही उपासना मे लीन रहते थे परन्तु इतने पर भी मैं अभी तक प्यासा हूँ और अभी तक तृप्त न हो सका। काम कहता है कि देवताओ के जीवन मे भोग-विलास की बाढ आई और वह उतर भी गयी परन्तु मेरी प्यास शात न हुई।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे वीप्सा एवम् रूपकातिशयोक्ति अलकार है और अजहत्स्वार्था लक्षणा है।

देवो की सृष्टि ···· ·· · सबको घेरे।

शब्दार्थ—विलीन=नष्ट। अनुदिन=प्रतिदिन। अतिचार=मर्यादा का उल्लघन।

व्याख्या—काम का कहना है कि देव जाति रात-दिन मेरा चिन्तन करने से ही अर्थात् मुझमे ही लीन रहने से नष्ट हो गयी लेकिन उन पर मेरा जो प्रभाव था वह कम न हुआ। इस प्रकार मैं मतवाला होकर देवो के हृदय मे वासना जाग्रत करता और मेरी यह अनुचित कार्यवाही अत तक बन्द न हुई तथा सभी देवता वासना मे डूबे रहे।

टिप्पणी—स्वय मनु ने कामायनी के पहले सर्ग चिन्ता मे यह स्वीकार किया है कि देव सृष्टि दिन-रात विलास मे लीन रहने के कारण ही नष्ट हुई।

मेरी उपासना . . .. .. वितान तना।

शब्दार्थ—विधान=नियम। विलास वितान तना=विलास का व्यापक प्रसार हुआ।

व्याख्या—काम का कहना है कि देवतागण नित्य प्रति मेरी ही उपासना करते थे और वे मेरे आकर्षण मे इतना अधिक फँस गए थे कि हमेशा मेरे ही इशारो पर नाचते रहते तथा मेरा जो भी सकेत होता वही उनका अखड नियम बन जाता था। काम का कहना है कि मेरे प्रति अत्यधिक आकर्षण ने देव जाति मे विलास भावना की अधिकता सी कर दी और स्वच्छद भोग को ही अपने जीवन मे विशेष स्थान दिया।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काम के प्रभाव का अत्यत मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है और विलास वितान मे रूपक अलकार है।

मैं काम रहा . .. जीवन था।

शब्दार्थ—सहचर=साथी। कृतिमय=क्रियाशील, कर्ममय।

व्याख्या—काम कह रहा है कि मैं ही देवताओ के जीवन मे हमेशा साथी रहा और मैं ही उनके मनोरजन का एक मात्र साधन भी था। यद्यपि मैं उनकी मूर्खता पर हँसता था परन्तु वे वासना मे लीन रहकर हमेशा प्रसन्न रहते। काम का विचार है कि मैं ही देवताओ के जीवन मे गति उत्पन्न करता अर्थात् उनके जीवन मे जो भी क्रियात्मकता थी वह मेरे ही कारण थी।

टिप्पणी—इस पद मे काम को कृतिमय जीवन मानना उपयुक्त ही है क्योकि वात्स्यायन ने भी काम को एक ऐसा प्रवृत्ति माना है जिसकी प्रेरणा से जीवन के सपूर्ण काय होते हैं।

जो आकर्षण . .... चाह रही।

शब्दार्थ—रति=कामदेव की पत्नी। अव्यक्त=अविकसित। उन्मीलन=विकास। अतर=हृदय। चाह=कामना, इच्छा।

व्याख्या—काम कह रहा है कि रति ही अनादि इच्छा है और सृष्टि के सृजन मे भी मूलत यही रति वर्तमान थी तथा इसी के कारण प्रेमी-प्रेमिकाओ के हृदय मे एक दूसरे के प्रति आकर्षण उत्पन्न होता था। इस प्रकार यही रति देवागनाओ के हृदय मे स्थायी वासना का रूप धारण कर उनमे मधुरिमा उत्पन्न कर रही थी अर्थात् भोग विलास के लिए उन्हे प्रवृत कर रही थी।

टिप्पणी—पौराणिक साहित्य मे भी रति को कामदेव की पत्नी माना गया है और उनके व्यापक प्रभाव का भी अंकन हुआ है ।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में भी काम का वर्णन करते समय उसे मन का रेतस् (बीज) कहकर सृष्टि का मूल माना गया है—

कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसा रेत प्रथम यदासीत्
सतो बन्धुमसति निरविन्दन हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ।

हम दोनो का .... नर्त्तन-सा ।

शब्दार्थ—आवर्त्तन=चक्र, वेग चक्कर । संसृति=संसार । नर्त्तन=नृत्य ।

व्याख्या—काम का कहना है कि सृष्टि के आरम्भ मे हम दोनो अर्थात् काम और रति की सत्ता उस आवर्त्तन के समान थी जिससे सृष्टि के विविध रूपो का निर्माण हुआ करता है । इस प्रकार यहाँ कुम्हार के चक्र का उदाहरण देते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार कुम्हार अपने चक्र को चलाता हुआ मिट्टी से विविध प्रकार के बर्तन आदि बनाता है उसी प्रकार काम और रति की प्रेरणा से ही प्रारम्भ मे सृष्टि का विकास हुआ ।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार है और कवि की सादृश्य योजना भी प्रशसनीय है ।

उस प्रकृति लता ... ... डाल सका ।

शब्दार्थ—प्रकृतिलता=प्रकृतिरूपी बेल । पुष्पवती=फूलो से युक्त । माधव=वसत । मधुहास=मधुर हँसी, मधुर विकास । दो रूप=पुरुष और नारी से अभिप्राय है ।

व्याख्या—काम का कहना है कि वसत के आगमन पर जिस प्रकार लताएँ फूलो से आच्छादित हो जाती हैं उसी प्रकार प्रकृति रूपी लता जब अपनी यौवनावस्था मे थी अर्थात् उसका मधुर विकास हो रहा था तब हम दोनो—काम एव रति से—पुरुष और नारी के दो रूप निर्मित किए ।

टिप्पणी—(१) कतिपय व्याख्याकार दो रूप से अभिप्राय काम और रति का ग्रहण कर यह अर्थ भी करते हैं "जिस प्रकार वसत ऋतु मे लताओ मे फूल खिल उठते हैं उसी प्रकार जब प्रकृति रूपी बेल का विकास हुआ तो इसने दो अणुओ को जन्म दिया जो काम और रति के नाम से प्रसिद्ध हुए ।"

(२) इस पद मे सागरूपक अलकार की सुन्दर योजना हुई है ।

वह मूल शक्ति · अनुराग लिये ।

शब्दार्थ—मूल शक्ति=सृष्टि का विकास करने वाली विराट शक्ति या अनादि शक्ति जिसे शैवागमो मे काम कला कहा गया । परमाणुबाल=छोटे-छोटे अणु-परमाणु ।

व्याख्या—काम कह रहा है कि सृष्टि के आरम्भ मे ही मूल शक्ति अपने आलस्य को छोड तीव्र उत्साह के साथ सृष्टि निर्माण के लिए तत्पर होगयी । उस समय शून्य मे बिखरे हुए समस्त छोटे-छोटे परमाणु उसके आकर्षण से खिचकर उससे लिपटने को मचल उठे ।

टिप्पणी—साख्य एवम् शैवदर्शन मे भी स्पष्ट रूप से माना गया है कि प्रकृति और पुरुष के सयोग से सम्पूर्ण सृष्टि का विकास हुआ है अत कामायनी-कार का यह दृष्टिकोण दर्शनशास्त्र से सम्मत ही है ।

कुंकुम का · · · ··· ···· झलकते से ।

शब्दार्थ—कुंकुम=केसर, रोली । मधु उत्सव=वसतोत्सव, होली का उत्सव ।

व्याख्या—काम कह रहा है कि जब सृष्टि के आरम्भ मे सभी छोटे-छोटे परमाणु मूल शक्ति की प्रेरणा से मिलने के लिए आतुर हो उठे उस समय परमाणुओ की हलचल से यह आभास होता था कि मानो केसर का चूर्ण ही चारो ओर उड रहा है और आकाश मे वसन्तोत्सव मनाया जा रहा है ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे होलिकोत्सव की सुन्दर कल्पना की गयी है ।

(२) इस पद मे उपमा एव सागरूपक अलकार की सुन्दर योजना हुई है ।

वह आकर्षण · ··· · ···· माया में ।

शब्दार्थ—माधुरी छाया=मधुर वातावरण ।

व्याख्या—काम का कहना है कि मूल शक्ति के प्रति परमाणुओ के आकर्षण और उनके सयोग की ही भाँति उन दोनो रूपो अर्थात् पुरुष एव नारी का आकर्षण और सयोग भी मधुर वातावरण मे हुआ । इस प्रकार सृष्टि का न केवल विकास हुआ अपितु सृष्टि अपने ही आकर्षण मे मतवाली बन गई ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने न्याय-वैशेषिक दर्शन के आधार पर अणु-परमाणुओ के सयोग से सृष्टि का विकास होना सिद्ध किया है ।

(२) इस पद मे विद्युत्कणो के परस्पर सयोग मे कवि ने आधुनिक विज्ञान

के अणु-परमाणु सम्बन्धी सिद्धान्त (Electron Proton Theory) की ओर भी संकेत किया है।

प्रत्येक नाश .... वृष्टि रही।

शब्दार्थ—नाश=नष्ट होना। विश्लेषण=इधर-उधर बिखर जाना। संश्लिष्ट=कणों का एकत्र होना। ऋतुपति=वसंत ऋतु। कुसुमोत्सव=फूलों का उत्सव, पर यहाँ फूलों का खिलना। मरन्द=मकरन्द, फूलों का रस। वृष्टि=वर्षा।

व्याख्या—काम मनु से कह रहा है कि सृष्टि का विकास होने से पूर्व प्रत्येक नष्ट पदार्थ के जो अणु-परमाणु विद्युत्कणों के रूप में इधर-उधर बिखरे हुए थे वे सब एकत्र होने लगे और सृष्टि निर्माण का कार्य आरम्भ हो गया। उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि मानों ऋतुराज वसंत के यहाँ फूलों का उत्सव मनाया जा रहा है और उन फूलों से जो मकरन्द झर रहा है उसने समस्त प्रकृति को रसमय कर रखा है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि प्रसाद की उर्वर कल्पना शक्ति के दर्शन होते हैं और वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार की योजना भी हुई है।

भुजलता .. ... . साथ हुए।

शब्दार्थ—शैल=पर्वत। सनाथ=सफल, नायक। व्यजन=पखा।

व्याख्या—काम का कहना है कि सृष्टि के प्रारम्भ से ही युग्म भावना उत्पन्न हो गई थी अर्थात् चेतन प्रकृति की भाँति पुरुष और नारी का युग्म जब प्रकृति में भी स्थापित हुआ। इस प्रकार जैसे पुरुष और नारी बने वैसे ही युग्म जड़ प्रकृति में भी स्थापित हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि जड़ प्रकृति में भी प्रेम भावनाओं का प्रसार हुआ और पर्वत के गले में नदियों ने अपनी भुजलताएँ डाल दी तथा सागर भी धरती को पखा झलने लगा। इस प्रकार काम ने यहाँ सरिता अर्थात् नदी और धरती को नायिका तथा पर्वत और सागर को नायक मानकर यह स्पष्ट करना चाहा है कि सम्पूर्ण जड़ प्रकृति भी प्रेमालाप में मग्न है।

टिप्पणी—इस पद में मानवीकरण, रूपक और समासोक्ति अलंकार की अनूठी अभिव्यंजना हुई है।

कोरक अंकुर .... फूल चले।

शब्दार्थ—कोरक=कली। हम दोनों=कामदेव और रति। फूल चले=प्रसन्न हुए। नवल=नवीन। सर्ग=सृष्टि, संसार।

व्याख्या—काम कह रहा है कि ससार का जन्म कली के अकुर के समान था और जिस प्रकार कली का अकुर बहुत छोटा रहता है तथा बडे होने पर वह कली का रूप धारण कर बाद मे फूल के रूप मे सर्वत्र अपनी सुगध बिखेरता है उसी प्रकार की दशा इस सृष्टि की भी हुई और वह भी फूल के समान वैभव तथा यश से सुशोभित जान पडने लगी। काम कहता है कि हम दोनो अर्थात् रति और काम भी सृष्टि के विकास के साथ-साथ स्वय भी विकसित होते रहे तथा उस नूतन ससार रूपी वन मे मलय पवन की भाँति सुख, शीतलता और आनन्द बिखेरते हुए हर्ष-विभोर हो सचरित होने लगे।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा एव रूपक अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

हम भूख प्यास .. .. . वय मे।

शब्दार्थ—आकाक्षा तृप्ति=इच्छा और उसकी पूर्ति। नित्य यौवन वय=सर्वदा पूर्ण विकसित।

व्याख्या—काम का कहना है कि भूख और प्यास के समान ही सबको हमारी अर्थात् रति और काम की आवश्यकता प्रतीत हुई तथा हम भी सबको स्वाभाविक ही प्रिय जान पडने लगे और हमने सभी के हृदय मे उठने वाली इच्छाओ को तृप्त किया। इसका अभिप्राय यह है कि काम और रति ने पहले तो सृष्टि के प्राणियो के हृदय मे इच्छाएँ उत्पन्न की तथा बाद मे उन्हे तृप्त भी किया और कामना पूर्ति के साधन भी बतलाए। इस प्रकार अब दोनो का नाम काम और रति पड गया तथा काम इच्छायें उत्पन्न करता और रति उनकी तृप्ति करती।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काम और रति के स्वाभाविक विकास की ओर सकेत किया गया है।

सुरबालाओ की . . . . मधुमय थी।

शब्दार्थ—सुरबाला = देवागनाएँ, देवबाला। हृत्तन्त्री=हृदय रूपी वीणा। लय=स्वर मे स्वर मिलाना। राग=प्रेम। मधुमय=माधुर्य से पूर्ण।

व्याख्या—काम कह रहा है कि रति देवबालाओ की सखी बनकर उनके हृदय मे बस गयी और वह उनकी हृदय वीणा के सुर मे सुर मिलाती रहती थी अर्थात् उनके अनुकूल ही बातें करती और जैसा वे चाहती वैसा ही करती। इस प्रकार सुन्दर, माधुर्यपूर्ण एव प्रेमयुक्त होने के कारण रति देवागनाओ के

हृदय मे प्रेम भावनाएँ उद्दीप्त करने लगी और वह उन्हें अत्यधिक आकर्षक भी प्रतीत होती थी।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

मैं तृष्णा था .... पथ पर उनकी।

शब्दार्थ—तृष्णा=तीव्र लालसा या कामना। विकसित=जाग्रत।

व्याख्या—काम का कहना है कि जिस प्रकार रति देवबालाओ के मन मे प्रेम भावना बढा रही थी उसी प्रकार मैं भी देवो के हृदय मे असख्य इच्छाओ को जन्म देता और उनकी तृष्णा को तीव्र करता। इस प्रकार जब देव जाति व्याकुल हो उठती तब रति उन्हे तृप्ति का साधन बताती अर्थात् वह उन्हे भोग विलास के लिए प्रेरित करती और हम दोनो अर्थात् काम और रति देव जाति को आनन्द प्रदान कर उन्हे अपने इच्छित मार्ग पर ले जा रहे थे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काम एव रति के समन्वित प्रभाव का उल्लेख कर, पुरुष एव स्त्री के वासनामय रूप का अत्यन्त सूक्ष्म चित्रण किया गया है।

वे अमर रहे .... प्रसग हुआ।

शब्दार्थ—अमर=देव जाति। विनोद=मनोरजन का उपाय, यहाँ भोग विलास से अभिप्राय है। अनग=काम का एक नाम, अगहीन। अस्तित्व= जीवन।

व्याख्या—काम कह रहा है कि हम दोनो अर्थात् रति और काम देवजाति का मनोरजन कर उन्हे अपने इच्छित मार्ग पर ले जा रहे थे परन्तु जल प्रलय के कारण सब कुछ नष्ट हो गया। इस प्रकार न तो अब वह देव जाति ही रही और न उनका भोग विलास ही बचा तथा उनके साथ-साथ मेरा शरीर भी नष्ट हो गया और मेरा नाम अब अनग पड़ गया लेकिन मुझ मे अभी भी चेतना अवशिष्ट है। अतएव मैं शरीर रहित होकर अपने सचित कर्मों के अनुसार ही अपनी सत्ता के लिए इधर-उधर भटक रहा हूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काम ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि यद्यपि वह अब शरीर रहित है परन्तु उसमे चेतना बाकी है और वह अभी भी कामोद्दीपन मे पूर्ण समर्थ है।

यह नीड मनोहर . ... बल है।

शब्दार्थ—नीड=घोसला, यहाँ ससार। मनोहर=सुन्दर। कृति=कार्य। रंगस्थल=कर्मक्षेत्र, रगमच।

व्याख्या—काम का कहना है कि संसार एक प्रकार का कर्मक्षेत्र है और इसमें सुंदर कार्य करने वाले पुरुष ही सफल होते हैं। साथ ही इस संसार मे कोई भी अधिक समय तक नही रह पाता। और यहाँ आना-जाना तो लगा ही रहता है तथा जिसमें जितनी शक्ति होगी वह उतनी ही देर यहाँ रुक सकेगा। यहाँ यह स्मरणीय है कि इन पंक्तियो मे सृष्टि या संसार की उपमा घोंसले से दी गयी है और काम का कहना है कि जिस प्रकार घोंसले की शोभा सुन्दर पक्षियो से होती है उसी प्रकार इस जगत की शोभा उन्हीं प्राणियो से है जो शुभ कर्म करते हैं। इसी प्रकार वह यह भी कहता है कि निर्बल व्यक्तियो के लिए यह संसार नहीं है क्योंकि यहाँ शक्तिशाली ही अधिक देर तक टिक सकता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे रूपक अलंकार की योजना हुई है।

ये कितने ऐसे · · · .... बुनते हैं।

शब्दार्थ—साधन=सहायक, दूसरो का कार्य पूर्ण करने वाले। सूत्र=धागे।

व्याख्या—काम कह रहा है कि इस संसार मे शक्तिशाली पुरुष अपनी कार्य सिद्धि के लिए कितने ही व्यक्तियो को अपना साधन बना लेते हैं और बहुत से ऐसे मनुष्य भी हैं जिनका जन्म दूसरों की इच्छा पूर्ति के लिए ही होता है तथा आरम्भ से अन्त तक उनके जीवन का स्वयं कुछ भी महत्व नही होता बल्कि दूसरो के इंगितों पर ही वे अपना समस्त जीवन व्यतीत कर देते हैं। जिस प्रकार कपड़ा बुनते समय धागो का छुटकारा तब तक नही होता जब तक कि वस्त्र पूरा न बुन जाय उसी प्रकार जब तक उन व्यक्तियों से कार्य सिद्धि न हो जाय तब तक उन्हें छुटकारा भी नहीं मिलता और शक्तिशाली व्यक्ति सहज ही उनसे अपना अभीष्ट साधन कर लेते हैं।

टिप्पणी—इस पद में उपमा अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

ऊषा की सजल ... झरता है।

शब्दार्थ—गुलाली=लालिमा। वर्ण=रंग। मेघाडंबर=बादलो के समूह। साधक कर्म=सहायता देने का कार्य। माया का नीला आंचल=जादू टोनो से भरा हुआ नीला आकाश।

व्याख्या—काम मनु को सम्बोधित कर कह रहा है कि क्या तुम यह बतला सकते हो कि इस नीले आकाश मे जो उषा अपनी लालिमा चारो ओर फैलाए हुए है वह क्या है और इसी प्रकार संध्या समय जो रंगबिरंगे बादल बिखरे हुए

हैं उनके भीतर क्या रहस्य है। काम का कहना है कि इन दोनो के मध्य केवल दिन और रात्रि का अतर है तथा पहले को उषा काल कहा जाता है और दूसरे को सध्याकाल। पर यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाय तो यहाँ भी कर्म की साधना ही दीख पडती है। काम कह रहा है कि उषा काल मे रात्रि समाप्त होती है तथा दिन प्रारम्भ होता है और उषाकाल का समय दिन-रात का अन्तर स्पष्ट करता है। साथ ही यह जो लालिमा फैली हुई है वह फल देने वाले कर्म हैं और यह कर्म नीलाकाश के नीचे प्रकाश बूंद के समान विखर जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार उषा की लालिमा रात्रि को समाप्त कर दिन का प्रारम्भ कर देती है उसी प्रकार कर्म का आवेग भी निराशा रूपी अधकार को दूर कर ऐश्वर्य और वल की वृद्धि करता है अत उषा की लाली कर्म के समान है। इसी प्रकार यह सृष्टि माया का आचल है जिसमे कि कर्म प्रकाश की बूंद के समान विखर कर अपना प्रकाश सर्वत्र फैला देता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे दृष्टान्त एवम् उपमा अलकार की योजना हुई है और कवि ने यही स्पष्ट करना चाहा है कि मनुष्य को प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करते हुए कभी भी कर्म से विरत न होना चाहिए।

आरभिक वात्या .... निज कृति का।

शब्दार्थ—आरभिक=प्रारभिक सृष्टि का। वात्या=आँधी। उद्गम=मूल स्रोत। ससृति=ससार। निज कृति=अपना कार्य।

व्याख्या—काम का कहना है कि जिस प्रकार सर्वप्रथम शून्य आकाश से पवन का जन्म होता है उसी प्रकार ससार मे सबसे पहले मैं ही उत्पन्न हुआ हूँ और मुझसे ही सम्पूर्ण सृष्टि भी उत्पन्न हुई है तथा मैं ही इस नवीन सभ्यता के विकासारम्भ का प्रेरक भी हूँ। काम कह रहा है कि अभी तक मैं देवताओ के आश्रय मे रहा अत इसका परिणाम यह हुआ कि देव जाति ही नष्ट हो गयी और उनके विनाश के कारण मुझ पर सृष्टि को प्रगति पथ पर बढाने का ऋण स्वाभाविक ही चढ गया अत अब मैं मानवीय सस्कृति की छाया मे रहकर वह ऋण उतारना चाहता हूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काम ने यह सकेत करना चाहा है कि वह अब मानव जाति को सयमित जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करना चाहता है। साथ ही इस पद की पहली पक्ति मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

दोनो का समुचित ·· ··· ··· ह्रास हुआ।

शब्दार्थ—प्रतिवर्त्तन=वापिस आना। विप्लव=जल प्लावन, जल प्रलय।

व्याख्या—काम का कहना है कि जीवन की शुद्धता और विकास वास्तव मे वासना और सयम के उचित अनुपात पर ही निर्भर हैं। इस प्रकार यदि दोनो का उचित रूप मे उपयोग किया जाय तो निश्चय ही जीवन विकास को प्राप्त होगा परन्तु यह बात पहले ज्ञात न थी और प्रलय के कारण जो स्थिति हुई है उससे अब यह स्पष्ट हो गया है कि भोग विलास का ताडव नृत्य सृष्टि का विनाश कर देता है। काम का कहना है कि हम दोनो अर्थात् रति और काम का सयमपूर्वक लौट आना ही उनके जीवन मे पवित्र उन्नति का द्योतक है और इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अब हमारा जीवन पवित्र हो गया है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने काम के सृजनात्मक एवम् धर्मानुकूल रूप की ओर सकेत किया है।

यह लीला जिसकी ··· वह अमला।

शब्दार्थ—लीला=सृष्टि। विकास चली=विकसित हो रही है। ससृति=सृष्टि, विश्व। वह अमला=वह निर्मल हृदय वाली श्रद्धा।

व्याख्या—काम मनु से कह रहा है कि जिस आदि शक्ति से सृष्टि का विकास हुआ है और जिसे जानने के लिए तुम उत्सुक हो वह और कुछ नही प्रेम ही है तथा उसकी लीला का विकास ही चारो ओर इस सष्टि के रूप मे हो रहा है। उसी प्रेम का मधुमय सन्देश सुनाने के लिए ही इस सृष्टि में उस पवित्र श्रद्धा का आगमन हुआ है जिसने कि तुम्हे भी कर्मक्षेत्र मे प्रवृत्त होने की प्रेरणा दी है।

टिप्पणी—इस पद मे 'वह अमला' से अभिप्राय श्रद्धा या कामायनी से ही है और 'प्रेम कला' शब्द काम कन्या का ही द्योतक है।

हम दोनों · · ··· वह डाली।

शब्दार्थ—रगो ने=रग-बिरगे फूलो ने।

व्याख्या—काम श्रद्धा का परिचय देते हुए कहता है कि तुम्हारे समक्ष आत्म समर्पण का प्रस्ताव करने वाली श्रद्धा हम दोनो की अर्थात् रति और मेरी ही सतान है। साथ ही वह सुन्दर और भोली भाली भी है तथा उसे देखने से यही प्रतीत होता है कि वह मानो रग-बिरगे फूलो से लदी हुई कोई डाली हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा की दिव्यता, पवित्रता एवं

सुकुमारता आदि विशेषताओ का उल्लेख किया है और वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की सुन्दर योजना भी हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—विहारी ने भी नायिका के दिव्य-सौन्दर्य की झाँकी अकित करते हुए लिखा है—

झीनै पट मे झुलमुली झलकत ओप अपार।
सुरतरु की मनु सिंधु मे लसत सपल्लव डार॥

जड चेतनता ... . उष्ण विचारो की।

शब्दार्थ—गाठ=ग्रथि। सुलझन=सुलझाने वाली। उष्ण विचार=सताप, व्यथा और क्षोभ आदि उत्पन्न करने वाली भावनाएँ।

व्याख्या—काम का कहना है कि श्रद्धा जड प्रकृति और चेतन जगत दोनो को एक सूत्र मे आबद्ध करने वाली है तथा उसके प्रेम मे प्रकृति भी अनुरागमयी जान पडती है। साथ ही वह (श्रद्धा) भूलो को सुधारती हुई जीवन को क्षुब्ध और व्यथित करने वाले विचारो को शात कर मनुष्य जीवन मे आनन्द का सचार करती है। इस प्रकार इन पक्तियो मे श्रद्धा का महत्व स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि वह क्षोभ और कटुता आदि भावनाओ को दूर कर प्राणी मात्र को शीतलता और सतोष प्रदान करती है।

टिप्पणी—इस पद मे उल्लेख और विरोधाभास अलकार की योजना हुई है।

उसके पाने . . . . हो रहती।

शब्दार्थ—उसके=श्रद्धा के। सहसा=अचानक।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि काम की वह मधुर वाणी इतना कहते-कहते कि 'यदि तुम उसे प्राप्त करना चाहते हो तो उसके योग्य बनो' शान्त हो गई और उस समय मनु को ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो अभी तक कोई मधुर मुरली बज रही हो जो कि एकाएक अब शात होगई है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

मनु आँख .... रस रंग हुआ ?

शब्दार्थ—वहाँ=श्रद्धा के पास। ज्योतिमयी=दिव्य सौन्दर्य वाली। प्राची=पूर्व दिशा। अरुणोदय=सूर्योदय।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु तो अभी तक निद्रित अवस्था मे ही थे अत जैसे ही काम की वाणी मौन हुई, उन्हे अचानक चेतना सी आई।

अब चारो ओर देखते हुए मनु यह पूछने लगे कि आखिर श्रद्धा के पास पहुचने का रास्ता कौनसा है और कोई भी व्यक्ति उसे कैसे प्राप्त कर सकता है ? कवि का कहना है कि मनु के प्रश्नो का उत्तर देने वाला वहाँ कोई भी न था। उनका स्वप्न अब समाप्त हो चुका था और वे वास्तविकता की स्थिति मे पहुँच गए थे। इस प्रकार जब उनकी दृष्टि ऊपर उठी तो उन्होंने देखा कि पूर्व दिशा में सूर्योदय हो रहा है और शनै शनै आकाश मे लालिमा फैल रही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु के हृदय मे श्रद्धा के प्रति उत्पन्न आकर्षण का अत्यत सफल चित्रण हुआ है।

उस लता कुंज .... खेल रही।

शब्दार्थ—हेमाभरश्मि=प्रभातकालीन सुनहरी किरणें। सोम सुधारस=अमृत के समान मधुर और शक्तिदायक सोमरस।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु की गुफा के द्वार पर फैली हुई सोमलताओ से झिलमिलाता हुआ सूर्य का सुनहरा प्रकाश आ रहा था और सूर्य की ये सुनहरी किरणें ऐसी जान पडती थीं कि मानो वे भी क्रीडा मग्न हो। कवि कह रहा है कि प्रभात की इस सुन्दर वेला मे मनु गुफा के द्वार पर आये और उन सोमलताओ को पकड कर खडे हो गए जिनमे से देवो को अर्पित करने के लिए अमृत के समान मधुर और शक्तिदायक सोमरस निकाला जाता था।

टिप्पणी—इन पक्तियो में कवि ने मनु को सोमलता पकडे हुए दिखाकर यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनु भी अब सोमरस पान करने के लिए उत्सुक हो गए है। साथ ही कवि इस पद मे भावी कथा की ओर सकेत भी करता है।

पांचवाँ सर्ग

वासना

कथानक—यद्यपि मनु और श्रद्धा साथ-साथ रहते थे तथा दोनों का परिचय भी दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था लेकिन फिर भी दोनों एक दूसरे के समीप होते हुए भी दूर थे। दोनों ही अपने-अपने मन की बात कहने में संकोच करते थे अत. उस निकटता में भी एक प्रकार की दूरी बनी रही। इधर मनु ने सभी आवश्यक वस्तुएँ उस कुटी में एकत्र कर रखी थीं और ज्यों-ज्यों उनके मन में नवीन इच्छाएँ उत्पन्न होतीं त्यों-त्यों वे नवीन वस्तुओं का संग्रह करते जाते। एक ओर उन्होंने पर्याप्त खाद्य सामग्री एकत्र कर रखी थी और दूसरी ओर पशु भी पाल लिए थे।

एक दिन सन्ध्या के समय जब मनु चिन्तामग्न थे तब उन्होंने देखा कि श्रद्धा बड़े भोलेपन के साथ एक पशु से खेल रही है और वह पशु उसके चारों ओर स्नेहपूर्ण हो चक्कर काट रहा है। इधर मनु के हृदय में बार-बार काम का संदेश गूँज उठता था अत. उनकी अधीरता भी शनैः शनैः बढ़ती जा रही थी। इसीलिए उनके हृदय में ईर्ष्या की भावना उठने लगी और वे सोचने लगे कि हम से तो यह पशु ही अच्छा है जिसे कि श्रद्धा का स्नेह प्राप्त है। धीरे-धीरे मनु की ईर्ष्या बढ़ने लगी और उन्होंने सोचा कि ये पशु तो मेरे ही दिए अन्न से इस घर में पल रहे हैं तथा यदि मैं अन्न न एकत्र करूँ तो ये सभी मर जायँ परन्तु किसी को भी मेरा ध्यान नहीं है। सभी मेरा तिरस्कार कर रहे हैं और कोई भी मुझसे प्रेम नहीं करता। मनु यह चाहते हैं कि संसार की सभी उपयोगी और सुन्दर वस्तुएँ उनके अधिकार में ही रहें।

जब मनु यह सब सोच रहे थे तभी श्रद्धा उनके समीप पहुँचती है और उनकी आकृति देखकर समझ जाती है कि उनका हृदय विक्षुब्ध है। वह अत्यन्त स्नेह से उनके शरीर पर अपनी कोमल उँगलियाँ फेरती है और इस स्पर्श से मनु के अन्तर की ईर्ष्याग्नि शांत हो जाती है। मनु उससे कहते हैं

कि तुम इतनी देर से कहाँ रही और क्या कारण है कि मुझे आकृष्ट करते हुए भी हमेशा मुझसे दूर-दूर रहती हो। तुम्हारा आकर्षण तो पशुओं को भी तुमसे स्नेह करने के लिए बाध्य कर देता है परन्तु तुम्हारे समीप होते हुए भी मैं क्यो इतना दुखी हूँ। मैं तो यही सोचता हूँ कि अभी तक जिसकी खोज मे मैं इधर उधर-भटक रहा था, तुम्हारे रूप मे आज मुझे वही प्राप्त हो गया है। सृष्टि मे जब सभी वस्तुएँ एक दूसरे के आकर्षण मे आबद्ध हैं तब हम दोनो ही पास-पास रहते हुए भी क्यो बिछुडे हुए हैं।

मनु की इन बातो को सुनकर श्रद्धा हँस पडी और कहने लगी कि मैं तो अतिथि हूँ अत अधिक क्या कहूँ परन्तु मुझे यह ज्ञात न था कि तुम मेरे लिए इतने व्याकुल हो। वह उनका हाथ पकड कर घूमने चल दी और इस समय चाँदनी रात का सुन्दर दृश्य उनके मन मे स्नेह भावना उद्दीप्त करने लगा। अतएव मनु ने सहज ही श्रद्धा से पुन कहा कि मैंने तुम्हें पहले भी कई बार देखा है लेकिन इतनी सुन्दर तुम कभी भी दिखाई न दी। वे कहते हैं कि मेरा मन तो वेदना के आघात से आहत हो छटपटा रहा है और अब मुझे यदि कही विश्राम मिल सकता है तो केवल तुम्हारे स्नेह की शीतल छाया मे।

चाँदनी रात की इस शीतल मधुर छाया मे मनु के मानस मे मिलन की इच्छा उद्दीप्त हो उठी और उनके हृदय मे वासना की तीव्र ज्वाला प्रज्वलित होने लगी। उन्होने उन्मत्त की भाँति श्रद्धा का हाथ पकड कर कहा कि तुम्हारा रूप भी वैसा ही है जैसा कि मेरी एक सगिनी श्रद्धा का था। प्रलय मे वह मुझसे बिछुड गई थी परन्तु अब तुम्हें देखकर मुझे ऐसा लगता है कि मैंने अपनी बाल सहचरी को पुन प्राप्त कर लिया है।

श्रद्धा इन बातो को सुनकर लज्जा के भार से दब-सी गयी परन्तु उसे अत्यन्त सुख मिल रहा था और हृदय मे कोमल भावनाएँ भी उत्पन्न हो रही थी। कुछ देर बाद उसने मनु से केवल यही कहा कि कही ऐसा तो न होगा कि आज का मेरा यह समर्पण सर्वदा के लिए नारी जाति का बधन बन जाय परन्तु इसके बावजूद मैं तुम्हारे इस दान को स्वीकार करने के लिए व्याकुल हूँ।

चल पडे कब .. . ... द्वितीय उदार।

शब्दार्थ—हृदय दो=श्रद्धा और मनु। अश्रात=कभी न थकने वाले, बिना थके हुए। भ्रांत=भ्रमित, भूले हुए। गृहपति=घर का स्वामी।

अतिथि=आगतुक, पर यहाँ अतिथि से अभिप्राय श्रद्धा से है। विगत विकार=विकारहीन, पवित्र।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार दो विपरीत दिशाओ से चलने वाले दो पथिक निरतर चलते हुए अचानक एक दूसरे को मिल जायँ उसी प्रकार हिमालय के उस प्रदेश मे श्रद्धा और मनु की भेंट हुई तथा ऐसा जान पडता है कि मानो इसी स्थान पर परस्पर मिलने के लिए दोनो अब तक भटक रहे थे। कवि का कहना है कि इन दोनो पथिको— मनु और श्रद्धा—मे से एक तो गृहपति था अर्थात् गृह का स्वामी था और दूसरा निस्वार्थ भावनाओ से युक्त अतिथि। इस प्रकार यहाँ मनु को गृहपति कहा गया है और श्रद्धा को अतिथि। कवि कह रहा है कि दोनो अर्थात् मनु और श्रद्धा मे से एक यदि प्रश्न था तो दूसरा उसका उचित उत्तर। इसका अभिप्राय यह है कि श्रद्धा, मनु के अभावो की पूर्ति करने वाली थी और वह उनके हृदय की शून्यता दूर कर उसमे मधुरता का सचार करती थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा और मनु का पारस्परिक सम्बन्ध वडी कुशलता से व्यक्त किया है। वह यही कहना चाहती है कि जिस प्रकार प्रश्न और उत्तर दोनो एक दूसरे के पूरक हैं उसी प्रकार श्रद्धा और मनु भी एक दूसरे के पूरक ही हैं तथा एक के अभाव मे दूसरे का जीवन अपूर्ण और निष्फल है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि स्त्री और पुरुष, दोनो मिलकर ही एक इकाई बनाते हैं तथा दोनो के सयोग से सृष्टि का विकास सभव हो सकता है और मानव जीवन सफल हो पाता है।

(२) इस पद मे उपमा एवम् परम्परित रूपक अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

(३) 'कामायनी' के इस वासना सर्ग मे चौदह और दस की यति से चौबीस मात्राओ वाला रूपमाला छन्द अपनाया गया है। जिसके अन्त मे एक गुरु और एक लघु भी आता है।

एक जीवन सिन्धु .... घनश्याम।

शब्दार्थ—जीवन सिन्धु=जीवन रूपी सागर। लोल=चचल। नवल=नवीन। अमोल=अनुपम, अमूल्य। रंजित=सुशोभित। श्री कलित=शोभा से युक्त।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यदि मनु जीवन के अथाह समुद्र

थे तो श्रद्धा उस समुद्र मे हलचल उत्पन्न करने वाली एक छोटी सी चचल लहर थी अर्थात् वह उन्ही का अश थी और यदि मनु नवीन प्रभात के समान थे तो श्रद्धा एक अमूल्य स्वर्गीय किरण के समान थी। साथ ही यदि मनु वर्षा के सजल और गम्भीर आकाश के समान थे तो श्रद्धा उस आकाश मे सुनहली किरणो से रजित काली घटा के समान थी। इस प्रकार श्रद्धा और मनु का पारस्परिक सम्बन्ध व्याप्य-व्यापक अश-अशी भाव द्वारा व्यक्त कर, कवि ने यही कहना चाहा है कि मनु और श्रद्धा एक दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा वे किसी भी प्रकार पृथक्-पृथक् नही माने जा सकते हैं।

टिप्पणी—(१) इस पद मे कवि ने ऐसी उपमायें प्रयुक्त की हैं जो श्रद्धा और मनु का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट करती हो।

(२) इन पक्तियो मे परम्परित रूपक और श्लेप अलकार की योजना हुई है।

नदी तट .... दूसरे को फाँस।

शब्दार्थ—नव जलद=नवीन बादल। अविरत=लगातार। युगल=श्रद्धा और मनु।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार सध्या के समय नदी किनारे एक नवीन बादल, बिजली की दो रेखाओ से खेलता हुआ अत्यधिक सुन्दर जान पडता है और वे दोनो रेखाएँ परस्पर उलझती हुई भी पृथक्-पृथक् रह जाती हैं उसी प्रकार मनु और श्रद्धा के हृदय भी लगातार एक दूसरे को आकृष्ट करने के लिए सघर्ष कर रहे थे। लेकिन अभी तक दोनो मे से एक भी दूसरे को पूर्ण रूप से मोहित करने मे समर्थ न हुआ था। कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि मनु और श्रद्धा दोनो के हृदय मे एक दूसरे के प्रति प्रेम था परन्तु दोनो यही चाहते थे कि पहले दूसरा प्रेम प्रकट करे अत दोनो ही प्रेमनिवेदन करने में झिझक रहे थे।

टिप्पणी—(१) ये पक्तियाँ शब्द योजना की दृष्टि से सराहनीय हैं और कवि ने 'नदी' शब्द का प्रयोग इसीलिए किया है क्योकि भाव धारा सरस तथा निरतर प्रवाहशील रहती है। क्षितिज और सायकाल नामक शब्दो के प्रयोग द्वारा कवि यह स्पष्ट करना चाहता है कि यद्यपि मनु और श्रद्धा दोनो के हृदय मे एक दूसरे को आकृष्ट करने की भावना है लेकिन वह

स्पष्ट रूप से प्रकट नही होती। साथ ही 'नव जलद' शब्द द्वारा यह स्पष्ट होता है कि वास्तव मे अब दोनो के हृदय मे प्रेम भावना विशेष रूप से बढी है।

(२) इस पद मे दृष्टांत अलकार की योजना हुई है।

था समर्पण .... चाहती थी मेल।

शब्दार्थ—सुनिहित=सम्मिलित, छिपा हुआ। अटकाव=बाधा, अड़चन। विजन पथ=एकात वातावरण। नियति=विधाता, ससार की नियामिका शक्ति।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यद्यपि वे दोनो अर्थात् श्रद्धा और मनु एक दूसरे के प्रति आत्मसमर्पण की अभिलाषा रखते थे और सच तो यह है कि दोनो ने एक दूसरे को अपना हृदय समर्पित कर दिया था परन्तु उनके इस पारस्परिक आत्मसमर्पण मे एक दूसरे पर अधिकार करने की भावना विद्यमान थी। इसका अभिप्राय यह है कि श्रद्धा और मनु एक दूसरे को अपने जीवन का अभिन्न अग बनाना चाहते थे और अपनी इस अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए वे दोनो आगे भी बढ रहे थे परन्तु उन दोनो के मध्य की सकोच भावना उनकी इस अभिलाषा पूर्ति मे बाधक भी थी। इस प्रकार उस एकान्त वातावरण मे उन दोनो के हृदय मे प्रेम की मधुर भावना क्रीडा कर रही थी और अब विधाता भी यही चाहता था कि इन दोनो के बीच की सकोच भावना दूर हो तथा दोनो जीवन पथ पर साथ-साथ बढे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रणय भावना के क्रमिक विकास का सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।

नित्य परिचित .... गति रोक।

शब्दार्थ—गूढ़ अन्तर=गभीर भेद, गहरा अतर। आलोक=प्रकाश। सघन=घना, गहरा।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यद्यपि मनु और श्रद्धा नित्य-प्रति एक दूसरे के अत्यन्त निकट आते जा रहे थे और रोज ही कोई न कोई ऐसी घटना हो जाती जिसमे उन्हे एक दूसरे के आकर्षण का आभास होने लगता परन्तु अभी भी दोनो के मध्य की सकोच भावना दूर न हो सकी थी क्योकि दोनो मे कोई भी खुलकर बातें न करता था अर्थात् दोनो ही अपना-अपना प्रेम-निवेदन करने मे सकोच कर रहे थे। इस प्रकार मनु और श्रद्धा के हृदय की

प्रेम भावना छिपी ही रह गयी और समीपता का अनुभव करते हुए भी ये दोनों उसी प्रकार एक दूसरे से दूर थे जिस प्रकार सघन वन मे से होकर जाने वाला पथिक मार्ग के अत मे दीख पड़ने वाले प्रकाश को समीप ही समझकर उसकी ओर बढ़ता चला जाता है परन्तु वह प्रकाश उससे दूर ही रहता है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे मनु और श्रद्धा की मनोदशा का अत्यन्त स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

(२) इस पद मे उदाहरण अलकार का अत्यन्त सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(३) अंतिम दो पंक्तियो मे शब्दक्रम ठीक न होने के कारण अक्रमत्व दोष भी है।

गिर रहा निस्तेज • • अब बद।

शब्दार्थ—निस्तेज=तेजहीन। गोलक=गोलपिंड, पर यहाँ सूर्य। जलधि =सागर। घन पटल=बादलो का समूह। अवसाद=शिथिलता, थकावट।

व्याख्या—कवि सध्या का वर्णन करते हुए कह रहा है कि आभाहीन सूर्य अत्यन्त असहाय होकर पश्चिम दिशा रूपी सागर मे डूब रहा है और आकाश मे बिखरे हुए बादलो के समूह मे उसकी किरणें विलीन हो रही हैं। वस्तुत यदि सध्या के समय हम सागर तट पर खडे होकर सूर्यास्त देखें तो हमे यही अनुभव होगा कि सूर्य सागर मे डूब रहा है और वह (सूर्य) ज्यो ज्यो नीचे की ओर झुकता जाता है त्यो-त्यो उसकी किरणें ऊपर की ओर फैलने लगती हैं। इस सूर्यास्त का आधार लेकर कवि यह कल्पना करता है कि जब सेवक काम करते-करते थक जाता है और यह जानकर भी उसका निष्ठुर स्वामी उससे बरबस काम कराना चाहता है तब वह कोई न कोई बहाना बनाकर उस काम को टाल देता है, वैसे ही सूर्य भी लगातार चलते-चलते थक गया है और अब वह किसी बहाने सध्या के समय आराम करना चाहता है। कवि का कहना है कि सध्या के कारण भ्रमरी ने मधुर मकरद का सचय भी बन्द कर दिया है क्योकि फूलो की पखुडियाँ बद हो चुकी हैं।

टिप्पणी—इस पद की प्रथम पंक्ति मे रूपकातिशयोक्ति और अंतिम पंक्ति मे विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है।

उठ रही थी कालिमा ••• बिछुड़ते थे कोक।

शब्दार्थ—कालिमा=अधकार। धूसर=धुँधला। अरुण आलोक=सूर्य का प्रकाश। वैभवहीन=कातिहीन, तेजरहित। करुण लोक=करुण

वातावरण, वेदना का ससार। निलय=निवास स्थान, घर घोंसला। कोक =चकवा, चकवी।

व्याख्या—कवि कहता है कि धुँधले क्षितिज से धीरे-धीरे कालिमा चारो ओर फैल रही थी और डूबते हुए सूर्य का अंतिम प्रकाश उस कालिमा से अंतिम बार आलिंगन कर रहा था क्योकि अब तो इसके पश्चात् प्रकाश लुप्त हो जाने वाला था। कवि का कहना है कि इस दुख पूर्ण मिलन को देखकर अत्यन्त करुणा का सचार हो रहा था और उसी समय वन मे शोकपूर्ण चकवा-चकवी भी एक दूसरे से बिछुड रहे थे। यहाँ यह स्मरणीय है कि इन पक्तियो मे कवि ने अन्धकार और सूर्य की अन्तिम आभा की भेंट को दरिद्र मिलन माना है। इसका अभिप्राय यह है कि जब दो हीन व्यक्ति मिलते हैं तो वे अपने-अपने अभावो की जो कहानी सुनाते हैं उससे वेदना और अधिक गहरी हो जाती है। इसी प्रकार कवि सूर्य और कालिमा तथा चकवा और चकवी का दुहरा वियोग-मिलन दिखाकर सध्या के वातावरण मे उदासी का होना स्पष्ट करता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण अलकार है।

मनु अभी .... होने लगा सचार।

शब्दार्थ—उपकरण=साधन, जीवन निर्वाह के साधन। अधिकार=स्वामित्व। शस्य=अनाज। धान्य=धान।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु अभी तक विचारो मे लीन हो कुछ सोच रहे थे और उनके कानो मे काम का सदेश बार-बार गूँज रहा था। साथ ही उन्होने जीवनोपयोगी कुछ आवश्यक वस्तुएँ भी एकत्र कर ली थीं और धान, अन्न तथा पशु आदि उनके पास एकत्र हो गये थे।

टिप्पणी—इन पक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनु अब श्रद्धा के साहचर्य मे अपना घरेलू जीवन सुव्यवस्थित करने की ओर प्रयत्नशील थे और अपनी उस गुफा मे जीवनोपयोगी वस्तुओ का सचय कर रहे थे।

नई इच्छा · .... खेल बंधनमुक्त।

शब्दार्थ—अतिथि=श्रद्धा से अभिप्राय है। सुरुचि=रुचिपूर्ण। अग्निशाला=यज्ञशाला। चमत्कृत=आश्चर्ययुक्त। बधनमुक्त=स्वच्छद।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु उस नवीन आगतुक के अर्थात् श्रद्धा की किसी भी नवीन अभिलाषा की पूर्ति बडे उत्साह से करते और उसके सरल

शासन मे स्वेच्छा से रह रहे थे अर्थात उन्हें उसका वह शासन रुचिकर प्रतीत हो रहा था। कवि का कहना है कि अपनी यज्ञशाला मे बैठे हुए मनु नियति की इस उन्मुक्त क्रीडा को कौतूहलपूर्वक देखते रहते थे और उन्हे इसमे आनद आता था।

टिप्पणी—कवि ने इन पक्तियो मे यह स्पष्ट कर दिया है कि गृह प्रबन्ध का दायित्व नारी पर ही है और पुरुष को चाहिए कि नारी जिन घरेलू आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए उससे कहे उन्हें वह पूर्ण करे। इसीलिए उसने यह स्पष्टत कहा है कि मनु श्रद्धा की प्रत्येक इच्छा पूर्ण करते थे। साथ ही कवि ने नियति को जो उन्मुक्त क्रीडा करने वाली माना है उसका कारण यह है कि मनुष्य के किसी भी प्रकार के बधनो को वह नही मानती है अत उसका खेल हमेशा स्वच्छन्द होता है।

एक माया .. वह सग।

शब्दार्थ—मोह करुणा=ममता से पूर्ण दया की भावना। सतत=लगातार। करता चमर=चँवर के समान अपनी घने बालो वाली पूँछ हिलाना। उद्ग्रीव=गर्दन ऊपर उठाना।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु ने एक दिन यह अत्यन्त विचित्र दृश्य देखा कि श्रद्धा के साथ-साथ एक सुन्दर पशु आ रहा है और उन दोनो को देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो करुणा (श्रद्धा) ने मोह (पशु) मे प्राण डालकर उसे साकार कर दिया है अर्थात् यदि श्रद्धा करुणा थी तो पशु मोह और वह पशु उसकी ममता प्राप्त कर अपने आपको सौभाग्यशाली समझ रहा था। इसे स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि वह पशु इतना सुन्दर था कि उसे देखते ही हृदय मोहित हो जाता था और श्रद्धा तो करुणा की प्रतिमा होने के कारण समस्त विश्व के लिए स्नेह भावना रखती थी। कवि कह रहा है कि वह (श्रद्धा) अपने कोमल हाथो से उस पशु के अगो को बार-बार सहला रही थी और वह पशु भी प्यार से गर्दन ऊँची उठाकर उसकी ओर ताकता तथा चँवर के समान अपनी घने बालो वाली पूँछ हिलाकर अपना प्रेम व्यक्त करता था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अत्यन्त स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक वर्णन किया गया है।

कभी पुलकित ... ... पथ से ढार।

शब्दार्थ—रोमराजी=रोमसमूह। अतिथि सन्निधि=श्रद्धा के पास। वदन=मुख। निहार—देखकर। सचित स्नेह=एकत्रित प्रेम। ढार=उडेलना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा के साथ-साथ चलता हुआ वह पशु कभी तो अत्यधिक प्रसन्न हो अपने रोम समूह से पूर्ण शरीर को उछाल कर श्रद्धा के चारो ओर चक्कर काटने लगता और कभी वह अपने प्रेमपूर्ण भोले नेत्रो से श्रद्धा के मुख की ओर देखकर अपना सम्पूर्ण प्रेम बिखेर देता था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के प्रति पशु की ममता एव स्नेह भावना व्यक्त कर श्रद्धा को वात्सल्यमयी रमणी के रूप मे अकित किया है।

तुलनात्मक दृष्टि—'त्रिपुर रहस्य' मे भी श्रद्धा को वात्सल्यमयी माता के रूप मे चित्रित करते हुए कहा गया है—

श्रद्धा माता प्रपन्न सा वत्सलैव सुते सदा।
रक्षति प्रौढभीतिभ्य. सर्वथा न हि सशय ॥

और वह पुचकारने ... ... मुग्ध विलास।

शब्दार्थ—स्नेह शवलित=प्रेम से भरा हुआ। शोभन=आकर्षण।

व्याख्या—कवि कहता है कि श्रद्धा अत्यत स्नेह के साथ उस पशु को पुचकारती थी और अपने हृदय की समस्त सुन्दर भावनाओ को अपनी ममता से सिंचित कर व्यक्त कर देती थी अर्थात् उसके मानस मे उस पशु के लिए पवित्र प्रेम था जो कि शनैः शनै ममता का रूप धारण कर रहा था। कवि का कहना है कि इस प्रकार वे दोनो (अर्थात् श्रद्धा और वह पशु) मनु के समीप पहुँच गए तथा सुन्दर मधुर निश्छल क्रीडा करने लगे अर्थात् श्रद्धा उस पशु के अग सहलाती और वह अपनी गर्दन ऊँची उठाकर उसके प्रति प्रेम निवेदन कर देता।

टिप्पणी—इस पद मे श्रद्धा के अन्त.करण की विशालता, उदारता, ममता एवम स्नेह वात्सल्य आदि भावनाओ का सुन्दर चित्रण हुआ है।

वह विराग-विभूति ... ... वेदनामय डाह ?

शब्दार्थ—विराग-विभूति=वैराग्य की राख। ईर्ष्यापवन=ईर्ष्या रूपी वायु। ज्वलन कण=आग की चिनगारी, यहाँ हृदय की जलन या डाह।

तीखी घूट=कड़ुवा घूंट, यहा अरुचिकर बात। वेदनामय डाह=दु ख देने वाली ईर्ष्या।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा और पशु की पारस्परिक स्नेह भावना को देख कर मनु के हृदय मे सचित वैराग्य और सयमरूपी राग ईष्या रूपी तेज पवन के चलने से बिखर गयी अर्थात् अब मनु के हृदय मे ईर्ष्या की भावना जाग्रत हुई और मन के भीतर छिपी हुई कसक अग्नि के समान झलकने लगी। इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार वायु के चलने से राख बिखर जाती है और उसके नीचे दबी हुई आग की चिनगारियाँ फिर चमकने लगती हैं उसी प्रकार मनु के हृदय मे भी श्रद्धा के लिए प्रेम रूपी आग सी जल रही थी जिसे कि वे सयम और वैराग्य द्वारा अभी तक दबाये हुए थे परन्तु अब श्रद्धा को पशु के साथ क्रीडा करते देख वह आग पुन प्रज्वलित हो उठी। कवि कह रहा है कि मनु का हृदय क्षोभ से भर गया और वे सोचने लगे कि मुझे यह क्या हो गया हैं तथा मेरे हृदय मे इस पीडाजनक ईर्ष्या के उठने का कारण क्या है ? कवि ने यहाँ मनु द्वारा यह भी कहलाया है कि हिचकी आने से जो दशा होती है वही मेरी भी हो रही है। कहने का अभिप्राय यह है कि ईर्ष्या का एक तीखा घूंट पीने से मनु को हिचकी सी आ गयी और जिस प्रकार हिचकी आने से पेट का रस बाहर आ जाता है उसी प्रकार ईर्ष्या के उदय होने पर मन की भावनाएँ पुन प्रकट हो उठी।

टिप्पणी—यहाँ सागरूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

आह यह पशु • ••• तुच्छ विराग।

शब्दार्थ—गेह=घर। तुच्छ=क्षुद्र। विराग=उपेक्षा की भावना।

व्याख्या—मनु सोच रह हैं कि यह कैसी विडम्बना है कि पशु होकर भी इस श्रद्धा का इतना अधिक सरल स्नेह प्राप्त है श्रद्धा उनकी अपेक्षा पशु को अधिक मान देती है। इस प्रकार ईर्ष्यालु मनु के हृदय मे अब गर्व की भावना जाग्रत हो उठती है और वे कहते हैं कि ये दोनों अर्थात् श्रद्धा और पशु मेरे ही अन्न से इस घर मे पलते हैं पर किसी को भी मेरी चिन्ता नही है और मेरा इस घर मे कुछ भी महत्व नही है परन्तु यदि मैं इन्हे अन्न न दूं तो भला ये कैसे जीवित रह सकते हैं। मनु का कहना है कि वे सब अर्थात् श्रद्धा और पशु आदि अपना-अपना भाग तो ले लेते हैं पर मेरा तिरस्कार करते हुए मेरा भाग मेरे सामने फेंक देते है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में मनु श्रद्धा के प्रति अपनी ईर्ष्या व्यक्त कर रहे हैं और उनका कहना है कि मैं ही उसके उदर पोषण की चिन्ता करता हूँ परन्तु वह मुझ पर तनिक भी स्नेह नहीं करती और मेरी अपेक्षा तो उसे पशु ही अधिक प्यारा है।

(२) इस पद की तीसरी पंक्ति में विषम अलकार है।

अरी नीच कृतघ्नते .... सदा निर्बाध।

शब्दार्थ—कृतघ्नता=उपकार न मानने की भावना। पिच्छल=फिसलने वाली, चिकनी। अपहृतकर=छीनकर। दस्यु=डाकू, लुटेरे। निर्बाध=बिना बाधा के, निर्विघ्न।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि मेरे प्रति श्रद्धा का व्यवहार तो कृतघ्नता का ही द्योतक है और यह नीच कृतघ्नता चिकनी शिला पर लगी हुई उस काई के समान है जो उस शिला को चिकना बनाकर न जाने कितने लोगों के शरीर को चोट पहुँचाती है। मनु का कहना है कि आज यह कृतघ्नता उनके हृदय को भी आघात पहुँचा रही है अर्थात् श्रद्धा और ये पशु उनके अन्न से पलकर भी उनके प्रति उपेक्षा दिखाकर अपनी कृतघ्नता ही प्रकट करते हैं तथा इससे मनु को अत्यधिक पीडा होती है। मनु कहते हैं कि श्रद्धा और इन पशुओं ने मेरी सारी स्वतन्त्रता छीन ली तथा ये तो एक प्रकार के डाकू ही हैं जो मेरे यहाँ रहकर भी मुझे किसी प्रकार का कर नहीं देते और स्वयं तो असंख्य अपराध करते हैं परन्तु मुझसे यही आशा करते हैं कि मैं उन्हें हमेशा सुख प्रदान करता रहूँ। यहाँ कर प्रदान करने से मनु का अभिप्राय यह है कि वे चाहते थे कि श्रद्धा और पशु आदि उन्हे भी अपना स्नेह प्रदान करें परन्तु श्रद्धा मनु की उपेक्षा कर, पशु के साथ ही क्रीडामग्न थी अतः उनके हृदय मे स्वाभाविक ही खीझ उत्पन्न हो रही थी।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा, रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

विश्व ने जो .. .. सब शांत।

शब्दार्थ—विभूति=ऐश्वर्य, सम्पत्ति। वाड़व अग्नि=समुद्र के अन्दर रहने वाली आग।

व्याख्या—मनु का कहना है कि इस जगत मे जो भी वस्तुएँ स्वाभाविक रूप से सुन्दर व महान हैं, उन सबका एकमात्र स्वामी मैं ही हूँ अतः मैं चाहता

हूँ कि वे सब मेरे उपभोग मे आयें । मनु अपने आपको सागर की अशान्त बडवानल के समान समझते हैं और उनका कहना है कि मैं उसी अग्नि के समान नित्य ही जलता और दुःखी रहता हूँ । साथ ही जिस प्रकार सागर की लहरें उस प्रज्ज्वलित बड़वाग्नि को शीतलता प्रदान कर शान्त करती हैं उसी प्रकार मनु भी यही चाहते हैं कि इस जगत की सभी विभूतियाँ उनकी इच्छाओं की पूर्ति मे साधन बनें । वस्तुतः कवि ने बडवाग्नि से मनु के मन की ज्वाला की तुलना कर यह स्पष्ट करना चाहा है कि जिस प्रकार वह सागर के जल के अन्दर ही जलती रहती है और ऊपर से दिखाई नहीं देती उसी प्रकार मनु के मन की प्रेमाग्नि भी मन के अन्दर ही धधक रही थी ।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक एवम् उपमा अलकार की सफल योजना हुई है ।

आ गया फिर पास • • कुछ बात ।

शब्दार्थ—क्रीडाशील=खेल मे मग्न, खेल मे लगा हुआ । उदार अतिथि =उदार हृदया श्रद्धा । चपल=चचल । शैशव=बचपन । नत=विनम्र, झुका हुआ । हरत=अहकार पूर्ण उठा हुआ ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब मनु श्रद्धा और पशु की पारस्परिक क्रीडा को देख विचार मग्न से थे तभी वह उदार हृदय श्रद्धा उनके पास पहुँच गयी । उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो कोई चचल शिशु खेलते-खेलते, कुछ भूल कर उस विस्मृत अवस्था मे इधर-उधर फिर रहा हो । इस प्रकार श्रद्धा के मुख पर शैशवोचित सरलता दीख पड रही थी । कवि का कहना है कि श्रद्धा ने मनु से आकर पूछा कि तुम क्यो अभी तक इस प्रकार विचार मग्न बैठे हुए हो और तुम्हें देखने से ऐसा जान पडता है कि मानो तुम्हारे नेत्र कही अन्यत्र विचर रहे हैं तथा कान कही और हैं अर्थात् तुम्हारी मन स्थिति ठीक नही है ।

श्रद्धा मनु से कहती है कि तुम्हारा मन कहाँ विचर रहा है और तुम्हे क्या हो गया है तथा तुममें आज इतना परिवर्तन क्यो दिखाई पड रहा है । कवि का कहना है कि जिस प्रकार बीन की मधुर ध्वनि सुनते ही सर्प का उठा हुआ फण झुक जाता है उसी प्रकार श्रद्धा की मधुर वाणी सुनकर मनु के मन मे उठने वाली क्षोभ की उमग भी समाप्त हो गयी अर्थात् उनकी ईर्ष्या कम होने लगी और आवेश भी समाप्त सा हो गया । अब श्रद्धा अपने कोमल

सुन्दर हाथ से मनु का शरीर सहलाने लगी और मनु उसका सुन्दर रूप देखकर शात हो गए ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पूर्णोपमा और रूपक अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

कहा अतिथि ... . स्नेह सा गंभीर ।

शब्दार्थ—सुलभ=सरलता से प्राप्त होने वाला ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा के कोमल और मधुर स्पर्श से मनु का विक्षोभ शात हो गया और उन्होने उससे कहा कि हे अतिथि, तुम अभी तक कहाँ थे और तुम्हारे साथ रहते हुए भी मुझे अभी तक तुम्हारा स्नेह प्राप्त न हो सका । मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मैं तुमसे अपने सुन्दर भविष्य के सम्बन्ध मे वार्तालाप करना चाहता हूँ परन्तु तुम हमेशा दूर-दूर रहते हो और यद्यपि तुम्हारा स्नेह मुझे प्राप्त होता रहा है लेकिन न जाने क्यो आज मैं तुम्हारे अधिक समीप आने के लिये आकुल हो उठा हूँ ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्रयुक्त 'सहचर' शब्द को लेकर कुछ टीकाकारो ने उस पशु को 'सहचर' समझा है जिसके साथ श्रद्धा क्रीडामग्न थी । इन टीकाकारो का कहना है कि मनु तो श्रद्धा के सहचर न होकर गृहपति ही हैं अत उनके लिए सहचर शब्द प्रयुक्त नही हुआ । विचारपूर्वक देखा जाय तो सहचर शब्द मनु के लिए ही प्रयुक्त हुआ है क्योकि सहचर का साधारण अर्थ तो साथी ही होता है और मनु श्रद्धा के साथ रहते ही थे अत. उनके लिए सहचर शब्द का प्रयोग होना असगत नही है । यहाँ यह भी ध्यान मे रखना होगा कि कवि ने सहचर के साथ 'यह' सर्वनाम प्रयुक्त किया है और यदि उसे सहचर शब्द पशु के लिए प्रयुक्त करना होता तो फिर कवि 'यह' के स्थान पर 'वह' सर्वनाम प्रयुक्त करता ।

कौन हो तुम ....गई सी सास ।

शब्दार्थ—ज्योत्स्ना=चाँदनी । निर्झर=झरना । सास=सामर्थ्य, शक्ति ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मैं अभी तक यह नहीं जान सका कि तुम वास्तव मे कौन हो जो मुझे अपनी ओर इस प्रकार आकृष्ट कर रही हो और अब तो यह विश्वास भी मुझमे नही रहा कि मैं तुम्हें ठीक से समझ सकूँगा या नही । मनु का कहना है कि यह कितने आश्चर्य की बात है कि पहले तुम्ही मुझे आकर्षित करती हो और जब मैं मन्त्रमुग्ध सा हो तुम्हारी ओर

बढ़ता हूँ तब तुम स्वयं पीछे हट जाती हो। साथ ही तुम्हारा सौन्दर्य झरने के समान है जिसे देखकर मेरा मन नही भर पाता और तुम्हारे सौन्दर्य की आभा के सामने मेरे नेत्र ठहर नही पाते अत अनेक बार देखने पर भी मैं यह नही कह सकता हूँ कि मैं तुम्हें ठीक से पहचान सका हूँ या नही।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि बिहारी ने भी नायिका की छवि का वर्णन करते हुए उसे तीव्र आभापूर्ण दीपशिखा के तुल्य कहा है—

अग अग नग जगमगत, दीपशिखा सी देह।
दिया बढाए हूँ रहे बडो उज्यारो गेह॥

कौन करुण रहस्य ·· ·· · सभी को सानद।

शब्दार्थ—वीरुध=पौधे। पाषाण=पत्थर। आलिगन=मिलना, भेंट करना।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुममे ऐसा कौन सा कातिमान रहस्य है जिसके कारण मैं और पशु पक्षी ही नही, बल्कि ये लता पौधे भी तुम्हें अपनी छाया बडी प्रसन्नता से प्रदान करते हैं अर्थात श्रद्धा के आकर्षण पाश मे हैं। मनु का कहना है कि चाहे पशु हो या पत्थर तुम्हे देखकर तो सभी उल्लासपूर्ण हो उठते हैं और तुम्हारा सौन्दय सभी वस्तुओ मे नूतन स्फूर्ति भर देता है तथा जड और चेतन सभी वस्तुएँ तुम्हारे आकर्षण मे खिची चली आती हैं।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने यही स्पष्ट करना चाहा है कि प्रणय व्यापक अत्यन्त प्राकृतिक होने के साथ-साथ अनिवार्य भी है और अपनी नाट्यकृति 'एक घूँट' मे भी उन्होने यही कहा है कि आत्मा आनन्द की उपलब्धि के लिए सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होती है और प्रेम करती है।

(२) 'सब मे नृत्य का नव छन्द' का अर्थ प्रसाद जी के सुप्रसिद्ध नाटक 'स्कन्दगुप्त' की प्रधान पात्री देवसेना की इस विचारधारा की छाया मे समझा जा सकता है, देखिए 'प्रत्येक परमाणु के मिलने मे एक सम है, प्रत्येक हरी हरी पत्तो के हिलने मे एक लय है। मनुष्य ने अपना स्वर विकृत कर रखा है, इसी से तो उसका स्वर विश्व वीणा मे शीघ्र नही मिलता। पाडित्य के मारे जब देखो, जहाँ देखो वेताल बेसुरा बोलेगा। पक्षियो को देखो, उनकी 'चह-चह', 'कल-कल', 'छल-छल' में, काकली मे रागिनी है।

राशि राशि बिखर ... ... जिसे कोई भी न।

शब्दार्थ—राशि राशि=ढेर का ढेर। ललित=सुन्दर। लतिका लास=लता का नाच। अरुण घन=सांध्यकालीन लाल-लाल बादल। दिनांत-संध्या का समय। सविलास=क्रीडा सहित। माधव यामिनी=वसंत की रात्रि। धीर पद-विन्यास=मंद-मंद गति से या धीरे-धीरे चलना। ध्वस्त=उजड़ा हुआ, नष्ट-भ्रष्ट।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि सम्पूर्ण प्रकृति मे युगो से संचित प्रेम चुपचाप बिखरा पडा है और यह दीन संसार उससे उधार माँग कर ढोने मे व्यस्त है अर्थात् विश्व के समस्त प्राणी और जड चेतन सभी इस प्यार को प्रकृति से उधार माँग कर अपना भाग एकत्र करने मे व्यस्त हैं। इन पंक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रद्धा ही विश्व मे प्रेम का संचार कर रही है और जहाँ कही भी प्रेम दीख पडता है वह उसका दिया हुआ ही है लेकिन यह प्रेम उधार ही मिला है और इसीलिये मिलन के क्षणो मे प्रकृति अपने इस ऋण को चुकाएगी अर्थात् प्रेमोद्दीपन करेगी। मनु पुन कहते है कि मैं आश्चर्यचकित हो प्रकृति के इन दृश्यो को देख रहा हूँ तथा मुझे समीर के मधुर झकोरो मे चंचल लताएँ नृत्य करती सी दीख पड़ती हैं।

मनु का कहना है कि संध्या का समय हो गया है और अंतरिक्ष मे लाल बादल बिखरे हुए है तथा उनकी शोभा जब इन लताओ पर बिखर उठती है तब उनकी—लताओं की—शोभा अत्यन्त मधुर जान पडती है और ऐसा प्रतीत होता है कि उस सुरम्य वातावरण मे शनै-शनै माधुर्य भरती हुई मस्त कर देने वाली वसन्त की रात्रि प्रवेश कर रही हो। मनु का कहना है कि संध्या का धुंधलापन मिटता जा रहा है और चारो ओर वसंत की मतवाली रात्रि का प्रभाव बढ रहा है परन्तु स्वयं मेरा हृदय तो एक टूटे हुए भवन के उस कोने के समान है जिसमे निराशा ही भरी हुई है और जिसे आबाद करने की किसी को भी चिन्ता नही है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों मे कवि ने लाक्षणिक एवं प्रतीकात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए संध्या एवं वसंत के वर्णन द्वारा मनु के मानस मे प्रवेश करने वाली श्रद्धा का सजीव चित्र अंकित किया है।

(२) यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलंकार की मधुर योजना हुई है।

उसी मे विश्राम · ·· · तुम छवि धाम।

शब्दार्थ—अचल आवास=स्थायी निवास-स्थान। हिम-हास=वर्फ के समान स्वच्छ चाँदनी का फैलना।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि पहले मेरे इस निराशापूर्ण हृदय मे हमेशा दुख ही दुख रहता था लेकिन अब मैं सुख की अनुभूति कर रहा हूँ और मुझे ऐसा जान पडता है कि रमणीयता ने उसमे अपना स्थायी निवास बना लिया है। यहाँ यह स्मरणीय है कि मनु के हृदय मे यह रमणीयता श्रद्धा के आने के कारण ही स्थापित हो पाई थी अत. वे उससे कहते हैं कि मेरे हृदय की सौन्दर्य प्रतिमा और शोभाशालिनी मैं तुम्हारा परिचय जानना चाहता हूँ। मनु का कहना है कि श्रद्धा के कारण ही उनके हृदय मे शीतलता का सचार हो सका है और वही उन्हे सतोष तथा स्फूर्ति प्रदान करती है और वासना की मधुर छाया के समान उनके अत करण मे प्रविष्ट हो वह उसमे मधुरता का सचार कर रही है।

टिप्पणी—इस पद मे रूपकातिशयोक्ति एवम् रूपक अलकार की व्यजना हुई है।

कामना की किरन · · ··· · रुद्ध कपाट ?

शब्दार्थ—कामना=अभिलाषा, इच्छा। कुंद मदिर-सी हंसी=वह हँसी जो कुन्द के फूलो के समान सुन्दरता बिखेरती हैं। रुद्ध कपाट=बन्द दरवाजा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम्हे देखते ही मेरे हृदय मे न जाने कितनी नवीन इच्छाओ की बाढ सी आ जाती है और उसमे अपूर्व क्रियात्मकता का सचार हो उठता है तथा मुझे ऐसा जान पडता है कि मानो मेरा हृदय अभी तक तुम्हारी ही खोज मे भटक रहा था और तुम्हारे आगमन से ही वह पूर्ण हो सका है। उनका कहना है कि तुम जब मुस्करा उठती हो तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानो उसमे से कुंद के फूल बिखर रहे हो और वे अपूर्व सौन्दर्य का सचार करते हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पूर्णोपमा, रूपक एवम् उल्लेख अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कहा हँस कर ···· · ··· वाहन साज !

शब्दार्थ—अधिग्न=अधीर, बेचैन। इसके अर्थ=इसके लिए। विधु=चन्द्रमा। जलद लघुखड बाहर=बादल के छोटे टुकडे को सवारी बनाये हुए।

व्याख्या—मनु के उद्‌गार सुनकर श्रद्धा ने हँसकर कहा कि मेरा बस इतना ही परिचय पर्याप्त है कि मैं तुम्हारी अतिथि हूँ लेकिन आज तुम मेरे परिचय के लिए इतना अधिक बेचैन क्यों हो और इसके पूर्व तो तुमने कभी भी इतनी अधिक विह्वलता मेरे प्रति प्रदर्शित नही की। श्रद्धा मनु से कहती है कि मेरे साथ चलकर प्रकृति की सुषमा का रसास्वादन करो और देखो वह हँसमुख चन्द्रमा बादलो के छोटे-छोटे टुकड़ो का रथ सजाकर हमे बुलाने के लिए ही आ रहा है। वस्तुत जब बादल के टुकडे रात्रि के समय इधर-उधर आकाश में विचरण करते से दीख पडते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रमा उन पर सवारी कर रहा है अत यहाँ यह सादृश्य योजना स्वाभाविक ही कही जाएगी।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

कालिमा घुलने .... दु ख के अनुमान।

शब्दार्थ—कालिमा=अधकार। घुलने लगा आलोक=प्रकाश फैलने लगा। निभृत अनंत=शून्य आकाश। निशामुख=चन्द्रमा। सुधामय=अमृतमय।

व्याख्या—श्रद्धा मनु के समक्ष प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहती है कि अन्धकार मिटने सा लगा और चारो ओर शुभ्र प्रकाश की रेखाएँ व्याप्त हो गयी हैं तथा शून्य आकाश मे नक्षत्रो का एक लोक सा स्थापित हो गया है। अर्थात् अतरिक्ष मे चारो ओर प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता है। इस सुहावने वातावरण मे चन्द्रमा की इस मनोहर एवम् सरल अमृतमयी मुस्कान को देख कर हम भी अपने उन सभी दु खो को, जिनकी कि कल्पना तुम कर रहे हो, भूल जायें क्योंकि यह सुरम्य अवसर दु.खी होने का नही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा ने प्रकृति के माध्यम से मनु को बडी सुन्दर प्रेरणा दी है और मानवीकरण अलकार की योजना भी हुई है।

देख लो ऊँचे .. .. साधना का राज।

शब्दार्थ—शिखर=पर्वत की चोटी। व्योम=आकाश। कौमुदी=चाँदनी। स्वप्न शासन=स्वप्न के सदृश्य मनोहर राज्य: साधना का राज=साधना का वातावरण।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि देखो पर्वत की वह ऊँची चोटी कितनी विह्वलता के साथ आकाश को चूम रही है और डूबते हुए सूर्य की अंतिम किरण अंतिम बार पुन. धरती पर लौटकर अस्त हो रही है। श्रद्धा का कहना है कि हमे भी इस चाँदनी से प्रकृति का वह स्वप्न शासन देखना

चाहिए जिसमे कि अनूठी साधना का राज्य निहित है । इसे यो भी कह सकते हैं कि श्रद्धा मनु से कह रही है कि चलो हम भी इस चाँदनी रात की सुषमा देखें जिसे देखने के लिए हमारी इच्छाएँ अभी तक हमे विवश कर रही थीं। श्रद्धा का कहना है कि प्रकृति के ये मोहक चित्र अत्यधिक सुन्दर हैं और हमें यदि उसके मोहक वातावरण मे घूम-घूम कर अपनी कामनाओ की तृप्ति करनी चाहिए।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे रूपक एवम् परिकर अलकार का प्रयोग हुआ है।

सृष्टि हँसने ... . संबल साथ।

शब्दार्थ—सृष्टि=समार। रागरंजिक=लालिमा मे रगी हुई, प्रेम से परिपूर्ण। स्वप्न-पथ=मधुर स्वप्न के समान आनन्द का मार्ग। संबल=पाथेय, मार्ग मे काम आने वाला पदार्थ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब श्रद्धा और मनु गुफा से चाँदनी मे विहार करने निकले तब सम्पूर्ण सृष्टि हँसती हुई प्रतीत हो रही थी और मनु तथा श्रद्धा के नेत्रो मे प्रेम उमड आया था। साथ ही चाँदनी भी प्रेम रस में डूबी हुई थी और फूलो का पराग धरती पर बिखर रहा था। कवि का कहना है कि श्रद्धा ने मनु का हाथ पकड लिया और हँसने लगी तथा दोनो ही मधुर कल्पनाओ मे लीन हो एक अनजानी राह मे एक-दूसरे के स्नेह का आश्रय लिये चल पडे।

टिप्पणी—इस पद मे मानवीकरण, समासोक्ति और परपरित रूपक अलकार की योजना हुई है।

देवदास निकुज .... .. मधु अन्ध।

शब्दार्थ—गह्वर=गुफा। सुधा=चाँदनी। स्नात=नहाते हुए, डूबे हुए। मदिर=मादक, मतवाली। माधवी=वासन्ती।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब मनु और श्रद्धा चाँदनी रात मे विचरण कर रहे थे तब देवदारु के वृक्ष, कुज और गुफाएँ सभी मधुर चाँदनी मे निमग्न थे अर्थात उन सभी ने चाँदनी मे स्नान किया था और उन्हे देखकर ऐसा जान पडता था कि मानो आज सभी ने रात्रि भर जागरण कर उत्सव मनाने का विचार किया हो। कवि के कहने का अभिप्राय यह है चारो ओर उत्सव जैसा प्रकाश और आनन्द बिखरा पडा था। इतना ही नहीं वासती लता भी अपनी भीनी और मतवाली सुगन्ध चारो ओर फैला रही थी तथा फूलो के रस से

मस्त पवन के झकोरें चारो ओर उसी प्रकार मडरा रहे थे जैसे आकाश मे वर्षाकालीन बादल मडराते हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मानवीकरण, रूपक एव समासोक्ति अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि बिहारी ने भी कहा है—

छकि रसाल सौरभ सने मधुर माधवी गंध।
ठौर-ठौर भौंरत झंपत भौंर भौंर मधु अंध॥

शिथिल अलसाई .. .. कुतूहल कांत।

शब्दार्थ—कांत = सुन्दर। शिशिर कण=ओस की बूँदें। विश्रान्त= थकी हुई। भ्रान्त= भ्रमित, चक्कर काटती हुई। कुतूहल=जिज्ञासा, आश्चर्य।

व्याख्या—कवि का कहना है कि रात्रि की सुन्दर छाया आलस्य से शिथिल हो ओस कणो की शय्या पर सो रही थी अर्थात् ओस कणो पर पडी छाया ऐसी प्रतीत होती थी मानो कि वह रम्य चांदनी रात का छाया शरीर है जो थक कर शिथिल हो आलस्यपूर्वक उन बूँदो की शय्या पर विश्राम कर रहा है। इस प्रकार ऐसे मादक वातावरण मे लता कुंजो को देखकर मन में मस्त्पूर्ण भावनाएँ उठने लगती थीं और मन मे एक प्रकार का आकर्षक आश्चर्य उत्पन्न होने लगता था।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे प्रकृति चित्रण उद्दीपन विभाव के रूप मे हुआ है और मानवीकरण एव समासोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कहा मनु ने .... वासना के गीत।

शब्दार्थ—स्पृहणीय=ईर्ष्या करने योग्य, अत्यन्त सुन्दर। अतीत= भूत काल।

व्याख्या—मनु ने श्रद्धा से कहा कि हे अतिथि, तुम्हें मैंने इसके पूर्व भी कई बार देखा है लेकिन तुम जितने सुन्दर आज दीख रहे हो उतने पहले कभी नही दिखाई दिए। मनु का कहना है कि मुझे अपने अतीत के मधुर दिनो की याद बार-बार आने लगती है और कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे बातें इस जन्म की नही पूर्व जन्म की हैं। मनु कह रहे हैं कि अतीत के उन मधुर दिनों मे मेरी कामना अबाध रूप से सम्पूर्ण प्रकृति मे व्यक्त होती थी और मैं सर्वदा प्रेम मे सराबोर रहता था। मनु ने अपने अतीत के

दिनों की झाँकी अंकित करते हुए कहा है कि उन दिनो मदमाते मेघ आकाश पर छा जाते थे और मादक वातावरण मे उन्मुक्त कठो से निकले हुए वासना-पूर्ण गीतो की ध्वनि चारो ओर गूँजने लगती थी।

टिप्पणी—(१) वस्तुत प्रलय के पश्चात मनु का जीवन अत्यधिक निराशापूर्ण रहा है अत उन्हे प्रलय से पूर्व की घटनाएँ पूर्व जन्म की ही जान पड़ती हैं।

(२) इस पद मे रूपकातिशयोक्ति और परम्परित रूपक अलकार की योजना हुई है।

भूलकर जिस ·· · ··· घूम चक्राकार।

शब्दार्थ—अचेत=सज्ञाहीन, बेचैन। सव्रीड=लज्जासहित। सस्मित=मधुर हँसी से युक्त। चेतना का परिधि=चेतना का घेरा बनाकर। चक्राकार=पहिए की तरह।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि जिन सुहावने दृश्यो को मैं हमेशा के लिए भुलाने का निश्चय कर अपनी समस्त भावुकता भी नष्ट कर चुका था आज तुम्हारे सम्पर्क मे आने से अत्यन्त क्षीण रूप मे पुन उसी प्रकार की भावनाएँ उठ रही हैं और वे दृश्य पुन याद आने लगे हैं। मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मेरे हृदय मे अब निरन्तर यही दृढ विचार उठ रहा है कि मैं तुम्हारा हो रहा हूँ और यह विचार एक पहिए की भाँति घूमता हुआ मुझे सचेत कर रहा है अर्थात तुम्हारे प्रति समर्पण करने के लिए बाध्य कर रहा है।

टिप्पणी—इस पद मे स्मरण अलकार है।

मधु बरसती विधु ···· · ·· · होकर घ्राण।

शब्दार्थ—विधु=चन्द्रमा। मन्थर=मन्द-मन्द। सुरभि=सुगधि। घ्राण=नाक।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि चन्द्रमा की कोमल किरणे सिहरती सी रस वृष्टि कर रही हैं और पवन भी रोमाचित सा हो, रस भार से दबा, अत्यन्त मन्द गति से प्रवाहित हो रहा है। मनु श्रद्धा से कहते है कि यद्यपि तुम मेरे इतने समीप हो लेकिन फिर भी न जाने क्यो मेरे प्राणो मे इतनी अधिक विकलता है और मेरी नासिका भी न जाने किस गध को पाकर तृप्त हो गई है। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि प्रकृति के इस वातावरण मे कुछ ऐसा मोहक प्रभाव है कि थोडी देर मे मुझे अपनी सुधबुध भी न रहेगी।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मानवीकरण अलकार है।

आज क्यो संदेह · ···· ··· लघु भार।

शब्दार्थ—रूठने=मान करले। धमनियों मे=नसो मे, नाडियो मे। लघु भार=हल्का बोझ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मुझे आज रह-रहकर यह सदेह भी हो रहा है कि कही तुम मुझमे रूठ तो नही गयी और मैं तुम्हे मनाना चाहते हुए भी नही मना पाता अर्थात् मेरी इच्छा तो यही होती है कि तुम्हे मनाऊँ लेकिन साहस नही हो पाता और मैं विवश सा शात रह जाता हूँ। मनु कहते हैं कि मेरी नसो मे प्रवाहित होने वाला रक्त भी एक टीस सी उत्पन्न कर रहा है और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो किसी हल्के भार से दब जाने के कारण हृदय की धडकन भी काँपती सी जान पडती है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे मनु ने अपनी हृदगत दशा का चित्रण करते हुए स्पष्ट कर दिया है कि उनके हृदय मे अब वासना की लहर उठ रही है।

(२) यहाँ 'वेदना सा' मे उपमा और 'काँपती धडकन' मे विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है।

चेतना रगीन · · ·· · न उसमे दाल।

शब्दार्थ—रंगीन ज्वाला=मधुर या आकर्षक ज्वाला। परिधि=घेरा। अग्नि-कीट=आग मे रहने वाला कीडा। दाह=पीडा, जलन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मेरी चेतना मधुर वासना की आकर्षक ज्वाला के घेरे मे घिरी एक प्रकार के दैवीसुख का अनुभव करती हुई प्रसन्नता-पूर्वक कुछ गुनगुना रही है। इसका अभिप्राय यह है कि यद्यपि जीवन मे सामान्य जलन भी पीडादायक होती है लेकिन हृदय की उत्तेजना से वासना मनुष्य को रमणीय ही लगती है और उसके उमड उठने पर आकुलता की जो जलन होती है उससे हृदय को एक अनूठा रस प्राप्त होता है। मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार आग मे रहने वाला समन्दर नामक कीडा बडे उत्साह के साथ उस अग्नि मे रहता है और न तो उसके शरीर को गर्मी लगती है और न छाले पडते हैं उसी प्रकार मेरी चेतना भी उत्साहपूर्वक इस वासना की अग्नि मे जल रही है तथा मुझे किसी भी प्रकार का कष्ट नही होता बल्कि सुख ही प्राप्त होता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनु के हृदय मे वासना वृत्ति के प्रभाव के कारण एक मीठी कसक सी हो रही है।

(२) इस पद मे पूर्णोपमा, मानवीकरण और विरोधाभास नामक अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

कौन हो तुम विश्व .... ग्लानि विनाश।

शब्दार्थ—कुहक इन्द्रजाल या जादू। भेद=रहस्य। कात=सुन्दर। व्यजन=पखा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि सृष्टि की समस्त रमणीयता को अभिव्यक्त करने वाले इन्द्रजाल के समान तुम कौन हो? वस्तुत सम्पूर्ण जगत का सौन्दर्य नारी सौन्दर्य की ही अभिव्यक्ति है अत मनु ने यहाँ स्वाभाविक ही यह कहा है कि श्रद्धा ससार का सर्वाधिक प्रबल आकर्षण है। मनु का कहना है कि श्रद्धा उतनी ही सुकुमार और मनोहर है जितना कि जीवन की सत्ता का मनोरम रहस्य है अर्थात् प्राणो की उत्पत्ति का रहस्य जितना सूक्ष्म एव कोमल है उसी के समान उस नारी का हृदय भी अत्यन्त सूक्ष्म है। साथ ही जिस प्रकार थका हुआ पथिक वृक्षो की शीतल छाया के नीचे पहुँच कर पवन के मधुर झोको के स्पर्श से सहज ही अपनी थकावट दूर कर लेता है उसी प्रकार श्रद्धा की शीतल, शात छाया मे पहुँचकर हृदय की समस्त जलन शांत हो जाती है और समस्त कसक, पीडा एव चिन्ता दूर हो जाती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पूर्णोपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

श्याम नभ ... . रहे अनुरक्त।

शब्दार्थ—श्याम नभ=नीला आकाश। मृदु हास=कोमल हँसी। सिधु की हिलकोर=समुद्र की कोमल लहरें। दक्षिण का समीर विलास=मलय पवन का मद-मद गति से प्रवाहित होना। मुकुल=कली। अव्यक्त=गुप्त, छिपी हुई। अनुरक्त=अनुराग पूर्ण, प्रेम पूर्वक।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के उद्‌गारो को सुनकर श्रद्धा नीलाकाश मे मदमाती किरण की भाति मुस्करा उठी और उसकी वह मुस्कराहट ऐसी लगती थी कि मानो वह सागर की लहर के समान हो या फिर दक्षिण दिशा से आनेवाला मलय पवन ही इठला रहा हो। जिस प्रकार किसी कुज मे छिपी अर्द्ध विकसित कली मधुर-मधुर ध्वनि कर खिल उठती

है उसी प्रकार श्रद्धा भी मृदुल शब्दो मे कुछ कहने लगी और मनु उसकी बातें तल्लीनता के साथ सुनने लगे।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार की आकर्षक योजना हुई है।

यह अतृप्ति अधीर .... बैठा कौन।

शब्दार्थ—अतृप्ति=असतोष, पिपासा। अधीर=व्याकुल, विह्वल। क्षोभयुक्त=अव्यवस्थित, हलचल से पूर्ण। उन्माद=पागलपन, मस्ती। तुमुल=कोलाहल। विमल राका=निर्मल पूर्णिमा की रात्रि।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम्हारी इस बात चीत से स्पष्ट हो जाता है कि तुम्हारा चचल मन प्यासा है और वह मिलन की इच्छा रखता है क्योकि दुःख और क्षोभ से पूर्ण आवेश ही तुम्हारे शब्दो से झलक उठता है तथा तुम्हारा कथन भी सागर की चचल लहरो के समान निःश्वास पूर्ण है। श्रद्धा का कहना है कि इन सबसे तुम्हारे हृदय की वास्तविक अवस्था और उसकी अधीरता का परिचय मिलता है लेकिन इस समय इन सब बातो को प्रकट करने की आवश्यकता ही क्या है अतः मैं चाहती हूँ कि तुम मुझसे न तो कुछ कहो और न पूछो। श्रद्धा मनु से कह रही है कि देखो, आकाश मे सुन्दर शीतलता प्रदान करने वाली पूर्णिमा का प्रतिमा बनकर यह कौन चुपचाप बैठा हुआ है अर्थात् पूर्णिमा की चांद मौन और स्तब्ध होते हुए भी अत्यधिक सुन्दर जान पडता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा एवं रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

विभव मतवाली .... चरण के प्रांत।

शब्दार्थ—विभव=वैभव, ऐश्वर्य। प्रकृति का आवरण वह नील=नीला आकाश। शिथिल=ढीला, शात। खील=धान। नखत कुसुम=तारे रूपी फूल। अर्चना=पूजा। अश्रान्त=लगातार, निरन्तर। तामरस=कमल, चन्द्रमा। प्रांत=समीर।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि यह आकाश नही है बल्कि ऐश्वर्य शालिनी प्रकृति की नीली साडी है जो इन रम्य वातावरण के कारण शरीर से पृथक् सी हो गयी है और उस पर छाई हुई पूर्णिमा के चन्द्रमा की यह आभा ऐसी लगती है मानो कि उस पर मंगलसूचक धान बरसाए गए हो तथा वे ही इधर-उधर बिखरे पड़े हो। वस्तुत जहाँ चन्द्रमा उदय होता दीख

पडता है वहाँ उसके नीचे आकाश प्रत्यक्ष हो जाता है और आस पास जो असख्य तारे दीख पडते हैं उन्हे इन पक्तियो मे मगल सूचक धान माना गया है। श्रद्धा पुन कहती है कि इस नीलाकाश मे फैले हुए असख्य तारे ऐसे जान पडते हैं मानो कि पूजा के फूल हो और जिन्हे चन्द्रिका से स्नान करके आयी हुई रात्रि सुन्दरी के लाल-लाल कमल रूपी चरणो पर बिखेर दिया गया हो।

टिप्पणी—(१) इस पद मे प्रकृति का मानवीकरण कर उसे एक दिव्य ऐश्वर्य सपन्न नायिका के रूप मे अकित किया गया है।

(२) इन पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति, उपमा एव समासोक्ति अलकार की व्यजना हुई है।

मनु निरखने लगे ... ... था श्रीमंत।

शब्दार्थ—निरखने लगे=देखने लगे। यामिनी=रात्रि। अपरूप=अनुपम, अद्वितीय। मिलन का संगीत=मिलने की इच्छा, सयोग की भावना। श्रीमन्त=शोभायुक्त।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु रात्रि के सुन्दर रूप को ज्यो-ज्यों देखते त्यो-त्यो उन्हें उसकी छाया गलत होती सी जान पड़ती। इस प्रकार उन्होने देखा कि अनन्त मे छायी चाँदनी इस समय रात्रि के सौन्दर्य मे अपूर्व मादकता उत्पन्न कर रही है तथा सुन्दर स्वच्छ आकाश से लगातार अमृत की वर्षा हो रही है। कवि कहता है कि वह मधुर रम्य वातावरण मनु की नस-नस मे मादकता का सचार कर रहा था और उनके हृदय मे मिलन सुख की इच्छा और भी अधिक तीव्र हो उठी थी अर्थात् यह वातावरण उन्हे दो विह्वल हृदयो के पारस्परिक सयोग के लिए अत्यधिक उपयुक्त जान पडा।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

छूटती चिनगारियाँ ... ... था लेश।

शब्दार्थ—चिनगारियाँ=वासना रूपी आग की चिनगारियाँ। उत्तेजना=आवेश। उद्भ्रान्त=उन्मत्त, पागल। वक्ष=हृदय, छाती। वातचक्र=तीव्र आंधी, बवडर। लेश=थोडा सा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि प्रकृति के मादक वातावरण का प्रभाव मनु पर भी पडा और वे वासना के आवेश मे जलने लगे अर्थात् उनके हृदय मे वासना की भावनाएँ तीव्र गति से उठने लगी। इस प्रकार उनका मुख

लाल हो गया और ऐसा जान पडने लगा कि मानो उससे चिनगारियाँ छूट रही हो तथा वे अत्यधिक उत्तेजना के कारण पागल से हो गये और हृदय मे वासना की मधुर ज्वाला धधकने लगी। इसका अभिप्राय यह है कि अभी तक मनु के हृदय मे जो प्रेम की मीठी कसक थी वह अब वासना रूप धारण कर रही थी। कवि कह रहा है कि जिस प्रकार पृथ्वी पर बवडर जब चक्कर काटने लगता है तब मनुष्य भ्रमित सा हो उठता है उसी प्रकार मनु के मन मे आवेश उमड उठा तथा वे अपना समस्त धैर्य खो बैठे और वासना के प्रभाव से उनका समस्त धैर्य तथा सयम विलुप्त हो गया।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे मनु की मानसिक दशा का अत्यन्त स्वाभाविक एव मनोवैज्ञानिक वर्णन हुआ है और उपमा अलकार की योजना भी हुई है।

कर पकड़ ... ... विकल अकूल।

शब्दार्थ—मधुरिमामय=माधुर्य पूर्ण। विस्मृति=भूल। अकूल=तटहीन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उन्मत्त से हो मनु श्रद्धा का हाथ पकड़कर कहने लगे कि मुझे आज तुम्हारे रूप मे कुछ अनूठी शोभा सी दीख पडती है और तुम्हारी छवि मेरी एक बाल सहचरी से बिलकुल मिलती-जुलती सी है। मनु का कहना है कि न जाने क्यो मैं अभी तक यह बात भूल ही गया था कि तुम्हारा सौन्दर्य मेरी एक बालसहचरी के बिलकुल समान है और इसका कारण शायद यही है कि जिस प्रकार किनारा न पाने से नौका मझधार मे ही घूमती रहती है उसी प्रकार मेरी स्मृति भी विस्मृत सागर में इस प्रकार विलीन हो गई कि मुझे कुछ याद ही नही रहा।

टिप्पणी—इस पद मे परम्परित रूपक अलकार है।

जन्म संगिनि .. .. सुषमा मूल।

शब्दार्थ—जन्म सगिनि=बचपन की सहचरी। कामबाला=कामदेव की पुत्री। सुषमामूल=सौन्दर्य का उत्पत्ति स्थान, समस्त सुन्दरता का मूल।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि मेरी बचपन की सगिनी काम की पुत्री थी और उसका नाम अत्यन्त ही मधुर अर्थात् श्रद्धा था। मनु का कहना है कि वह मुझे इतनी प्रिय थी कि उसे देखकर ही मेरे प्राणो को हमेशा विश्राम मिलता था और वह इतना अधिक रूपवती थी कि उसे देखकर यही जान पड़ता था कि मानो सम्पूर्ण सृष्टि का सौन्दर्य उसी से उत्पन्न हुआ हो अर्थात् वह समस्त सौन्दर्य का मूल जान पडती थी। इतना ही नही उसकी सुन्दरता

एव सुकुमारता का प्रभाव इतना अधिक था कि वन उपवन मे उसे आता हुआ देखकर फूल भी अपने मकरन्द की वर्षा कर उसे अर्घ्यप्रदान करते थे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे हमे कवि की मौलिक उद्भावना के दर्शन होते हैं और कवि ने श्रद्धा एव मनु को बचपन का साथी कहकर 'कामायनी' के कथासूत्र को जोडने का प्रशसनीय प्रयत्न किया है।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद मे भी श्रद्धा को काम की बालिका माना गया है—

काम गोत्रजा श्रद्धा ना मर्षिका श्रद्धया श्रद्धा कामायनी।

प्रलय मे भी बच तारकहार।

शब्दार्थ—मिलन का मोद=मिलन का आनन्द। ज्योत्स्ना=चाँदनी। नीहार=कोहरा। प्रणय विधु=प्रेम रूपी चन्द्रमा। तारक हार=तारो का हार।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि इस भीषण प्रलय मे भी हम दोनो अर्थात् मनु और श्रद्धा जीवित बच रहे क्योकि हम दोनो के हृदय मे मिलन की उत्सुकता थी। मनु श्रद्धा से कहते हैं कि जैसे कोहरे को पारकर चाँदनी निकल आती है और उसका प्रेमी चन्द्रमा आकाश मे तारो का हार लिए उसका स्वागत करता है वैसे ही तुम भी प्रलय से बचकर मेरे समीप पहुँची हो तथा मैं अपने मन मे कोमल भावनाओ का हार लिए तुम्हारे स्वागत मे प्रस्तुत हूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो में उपमा, रूपक एव रूपकातिशयोक्ति आदि अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

कुटिल कुंतल चल सृष्टि।

शब्दार्थ—कुटिल कुतल=घुंघराले बाल। तमिस्रा=अन्धकार। दुर्भेद्य=गहन, जो सरलता पूर्वक नहीं भेदा जा सकता। तम=अन्धकार। चल=चचल।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम्हारे घु घराले केशो को देखकर ही समय ने अपने माया जाल की रचना की है अर्थात् जो भी तुम्हारे इन बालों को देख लेता है वह मोहित हो जाता है और इसी प्रकार तुम्हारे नेत्रो की नीलिमा से अन्धकार की रचना हुई है अर्थात् तुम्हारी आंखो को देखने वाला निराशा के अन्धकार मे भटकता रहता है। साथ ही तुम्हारी चितवन रहस्यमयी है जो कि घने अन्धकार की प्रगट निद्रा का सचार करती है और

तुम्हारी चचल हँसी मधुर स्वप्नो को बिखेरती है अर्थात् तुम्हारी हँसी से मेरे प्रेमी हृदय मे न जाने कितने मधुर स्वप्न जाग्रत हो उठते हैं।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे छायावादी काव्यशिल्प की प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता, उपचार वक्रता, मानवीकरण एवं विशेषण विपर्यय आदि विशेषताओ के दर्शन होते हैं।

(२) इस पद मे प्रतीप एव उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई।

हुई केन्द्रीभूत सी ... . थक था भ्रांत।

शब्दार्थ—केन्द्रीभूत=एकत्रित, इकट्ठी। स्फूर्ति=उमग। रम्य=सुन्दर। दिवाकर=सूर्य।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुम मे साधना की उमग एकत्रित हो गई है और ऐसा जान पडता है कि संसार की समस्त कोमलता को साकार रूप देने के लिए ही इस रमणीय नारी मूर्ति अर्थात् श्रद्धा का निर्माण हुआ है। मनु का कहना है कि मैं तो दिन भर के थके माँदे सूर्य की भाँति परिश्रम से विकल एक शिशु के समान आज तक भूला हुआ इधर-उधर भटकता रहा था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि— प्रसाद जी ने अपनी नाट्य कृति 'अजातशत्रु' मे भी कहा है—

"नारी का हृदय कोमलता का पालना है, दया का उद्गम है, शीतलता की छाया है और अनन्य भक्ति का आदर्श है।"

चन्द्र की विश्राम ... . समाप्त अशांत।

शब्दार्थ—राका=पूर्णिमा। विजयिनी=ससार को विजय करने वाली। व्रज्या=पगडडी। आक्रांत=दबी हुई।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम पूर्णिमा के चन्द्र की कांतिमयी ज्योत्स्ना वाला हो जो मुझ जैसे पथिको को विश्राम प्रदान करती हो। मनु का कहना है कि तुममे अपूर्व मधुरता से युक्त शाति तरगायमान है और तुम्हारे मुख पर विजय गौरव विद्यमान है। जबकि मैं उस पगडण्डी के समान हू जो लगातार पैरो तले कुचली जाने पर थककर किसी हरे भरे अन्न के खेत मे घुसकर वहीं चैन पाती है।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा एवं उल्लेख अलकार की योजना हुई है।

आह ! वैसा ही · · · जगत की मान ।

शब्दार्थ—काम=इच्छा कामना । चेतना=चेतन व्यक्ति । मान=प्रतिष्ठा ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मेरा हृदय आज ससार से पददलित और आक्रात होने के कारण अत्यन्त बेचैन है और तुम्ही उसे शांति प्रदान कर सकती हो । अत आज मैं तुम्हें अपना हृदय समर्पित कर अपनी समस्त कामनाओ की पूर्ति की सभावना देख रहा हूँ । मनु का कहना है कि तुम ससार की स्वामिनी और विश्वगरिमा की आधार हो अत तुम आज मेरे इस भावपूर्ण हृदय के दान को स्वीकार करो ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मालोपमा अलकार का सौन्दर्य दर्शनीय है ।

धूमलतिका सी ···· नर्ममय उपचार ।

शब्दार्थ—धूमलतिका=धुएँ की लता । गगनतरु=आकाश रूपी वृक्ष । शिशिर निशीथ=शीतकाल की अर्धरात्रि । सव्रीड=लज्जा सहित । नर्ममय =अनुनय विनय मे पूर्ण । उपचार=शिष्टाचार ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार शीतकाल की ठण्डी रात्रि मे धुआँ रूपी लता लगातार ओसकणो के गिरने से उनके बोझ से दबकर आकाश रूपी वृक्ष पर चढने मे असमर्थ ही रहती है उसी प्रकार श्रद्धा भी लज्जा और सुकुमारता के भार से दबी होने के कारण मनु के सम्मुख स्पष्ट न होकर शिथिल सी हो गयी अर्थात् वह नीचे की ओर देखने लगी । इसका अर्थ यह है कि नारी होने के कारण श्रद्धा के हृदय मे प्रेम भावनाओ के होते हुए भी वह स्पष्टत अपना प्रेम निवेदन कर सकी और लज्जा के कारण उसने सिर नीचे झुका लिया ।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा एवम् परपरित रूपक अलकार की योजना हुई है ।

और वह नारीत्व ··· ·· · करते रास ।

शब्दार्थ—मधुर व्रीड़ा मिश्र=माधुर्यपूर्ण लज्जा से युक्त । रास=प्रसन्नता के साथ नाचना ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के प्रेमोद्‌गारो को सुनकर श्रद्धा के हृदय मे समर्पण की भावना अवश्य उत्पन्न हुई परन्तु उसके अन्दर जो नारीत्व की मूल वृत्ति थी वह उस पर हँसने सी लगी । इसका अर्थ यह है कि नारी

होने के कारण श्रद्धा के अन्तरतम मे भी स्वाभाविक ही प्रेम की प्यास थी और उसके मन मे मनु के समक्ष आत्मसमर्पण कर देने की तीव्र इच्छा भी हो रही थी परन्तु उसमे लज्जा की भावना भी स्वाभाविक रूप से विद्यमान थी। इस प्रकार श्रद्धा के हृदय मे लज्जा, चिन्ता और आल्हाद की भावनाएँ एक साथ मिलकर अपूर्व आनन्द की सृष्टि कर रही थी अर्थात् उसका हृदय आनन्द से विभोर हो उठा था।

टिप्पणी— इन पक्तियो मे लक्षण-लक्षणा का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

गिर रही पलकें .... विकल हो प्रान ?

शब्दार्थ—नासिका=नाक। भ्रूलता=भौह रूपी लता। ललित=सुन्दर। कर्ण=कान। चिरबन्ध=आजीवन का बन्धन। उपभोग करना=भोगना, व्यवहार करना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि लज्जावश श्रद्धा की पलकें झुकी हुई थी और नीचे की ओर मुँह करने के कारण उसकी नासिका की नोक भी नीचे की ओर थी तथा भौहे कानतक चढ आयी थी और कान तथा कपोल भी लाल हो गए थे। इस प्रकार कदम्ब पुष्प की भाँति उसका कोमल तन रोमाचित हो उठा और वाणी गद्-गद् हो गयी।

कवि कह रहा है कि आत्म समर्पण के पूर्व श्रद्धा ने मनु से कहा कि कही आज का मेरा यह आत्मसमर्पण समस्त नारी जाति के लिए युग-युग के बन्धन का कारण तो न हो जाएगा। श्रद्धा का कहना है कि मैं तो अत्यधिक दुर्बल हूँ अत तुम्हारे इस प्रणय दान के भार को, जिसे धारण करने के लिए मेरे प्राण आनन्द से अधीर हो उठे हैं, भला मैं कैसे सँभाल सकती हूँ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि श्रद्धा के माध्यम से यह स्पष्ट कर देता है कि जिस दिन सृष्टि की प्रथम नारी श्रद्धा ने आत्म समर्पण किया उसी दिन मानो समस्त नारी जाति ने अपना सर्वस्व पुरुष को दान कर अपने आपको बन्धनो मे आबद्ध कर लिया।

(२) इन पक्तियो मे पूर्णोपमा एवम् रूपक अलकार की योजना हुई है।

छठा सर्ग

लज्जा

कथानक—राका रजनी मे मनु के मुख से अपने लिए मधुर प्रेम भरी वाणी सुनकर श्रद्धा का हृदय भी कामना से विकल हो उठा और उसका नारीत्व भी उभर उठने से, समर्पण की वाणी भी उसमे मुखरित होने ही वाली थी कि नारी की मानस सखी सी लज्जा उसके मार्ग मे बाधक जान पड़ी। लज्जा का स्वरूप अस्पष्ट तथा धूमिल सा था परन्तु वह श्रद्धा के अन्तर्तम मे प्रविष्ट हो चुकी थी। अतएव श्रद्धा कहने लगी कि मुझे न जाने क्या हो गया है जो कि एक ओर तो मेरा शरीर रोमाचित हो उठता है और दूसरी ओर मन मे अचानक इतनी अधिक सकोच भावना एकत्र हो चुकी है कि मैं अपने आप मे ही सिमटी जा रही हूँ तथा खुलकर हँस भ नही पाती। मेरे अग मोम सदृश्य कोमल हो गए हैं, चितवन मे वक्रता आ गयी है और पलकें स्वत झुक जाती हैं तथा मेरी मनोकामना मनु का स्वागत करने की है पर न जाने क्यो वह अवलम्ब ही मुझसे दूर होता जा रहा है जिसका सहारा लेकर मैं आनन्द के शिखर पर पहुँच सकती थी। न जाने क्यो मनु को स्पर्श करने मे भी मुझे लज्जा का अनुभव हो रहा है और यदि मैं उनसे कुछ कहना भी चाहती हूँ तो भी मेरे शब्द अधरो तक आकर ही रुक जाते हैं। न जाने यह कैसी परवशता है कि स्वतन्त्रता से मैं कुछ भी नही कर पाती।

श्रद्धा की इन बातो को सुनकर लज्जा ने कहा कि मुझे देखकर तुम्हे इतना अधिक आश्चर्य चकित न होना चाहिए क्योकि मेरे ही कारण स्त्रियाँ स्वेच्छाचारिणी नही हो पाती। मैं तो तुम्हे केवल सचेत करने के लिए आई हूँ कि तुम अपने मन की चचलता को दूर कर प्रेम पथ मे आगे बढने से पूर्व भली भाँति सोच विचार लो। तुम इस यौवन की शक्ति को नही जानती और तुम्हें यह भी नही ज्ञात है कि यह प्राणी मात्र को कहीं से कही बहाकर ले जाता है और मैं ही सौन्दर्य की रक्षा भी करती हूँ। देवताओ की सृष्टि मे मेरा नाम रति था लेकिन प्रलय मे अपने पति को खो देने के पश्चात् मुझमे अब असफलता

का विषाद और अतृप्ति की पीर ही अवशिष्ट रही है तथा मेरा ही नाम लज्जा है। मैं सदाचार का पथ दिखाती हूँ तथा मेरी बात मानने वाली नारी मर्यादा के भीतर रहने के कारण हमेशा सुखी रहती है।

लज्जा की इस मधुर वाणी को सुनने के पश्चात् श्रद्धा ने पुनः कहा कि अब मैं तुम्हें समझ गयी हूँ और यह मानती हूँ कि तुम्हारा कहना ठीक है लेकिन तुम स्वयं ही मुझे यह बतलाओ कि मेरे लिए कौन सा मार्ग उचित होगा? मैं तो नारी होने के कारण स्वभावतः दुर्बल ही हूँ और न जाने क्यों मेरा मन भी निर्बल होता जा रहा है तथा मेरे मन में यह भावना सी प्रबल होती जा रही है कि नारी जीवन की सार्थकता पुरुष की समता करने में नहीं, बल्कि उस पर विश्वास करते हुए उसका आश्रय पाने में है। संभवतः इसलिए मैं मनु के सामने अपना सर्वस्व समर्पित करने के लिए प्रस्तुत हूँ और बार-बार अपने मन को सँभालने का प्रयास कर, धैर्य धारण करने का प्रयत्न करते हुए भी अब मुझमें सोचने विचारने की तनिक भी शक्ति नहीं रही तथा मेरे इस समर्पण में बलिदान की ही भावना है अर्थात् मैं सब कुछ मनु के चरणों पर अर्पित कर देने क पश्चात् बदले में कुछ भी नहीं चाहती।

श्रद्धा के इन उद्‌गारों को सुनने के पश्चात् लज्जा ने उसे उत्तर देते हुए कहा कि अब तुम्हें समझाना व्यर्थ है क्योंकि जब तुमने पहले से ही यह निश्चय कर लिया है तब तुमसे क्या कहा जाय। इतना अवश्य है कि तुम्हें पहले भली भाँति सोच लेना चाहिए था परन्तु तुम तो श्रद्धा की मूर्ति ही हो अतः विश्वास के सहारे अमृत के झरने की भाँति हमेशा बहती रहो लेकिन यह भी जान लो कि तुमने आज अपने जीवन की सभी प्रिय साधों की आहुति दे डाली है। तुम्हें अब अपना सर्वस्व पुरुष को समर्पित करना होगा और चाहे कितनी ही आपदाएँ क्यों न आयें तुम्हें सर्वदा मुस्कराते हुए दिन रात पुरुष के लिए अपने को न्यौछावर करना होगा।

कोमल किसलय .... दिपती-सी।

शब्दार्थ—किसलय=कोंपल, नवीन पत्ते। कलिका=कली। गोधूली=संध्या का समय। धूमिल=धुँधला। दीपक के स्वर=दीपक की लौ। दिपती=चमकती।

व्याख्या—पूर्णिमा की सुहावनी रात में मनु के प्रेमोदगार सुनकर श्रद्धा के मन में जो भी प्रणय भावना प्रबल हो उठती है पर उसके हृदय में तीव्रता

के साथ लज्जा, मनोभाव भी उदय होता है पर वह यह नही समझ पाती कि यह कौन सा मनोभाव है। इस प्रकार एक दिन सध्या के समय वह एकान्त मे बैठी हुई यह प्रश्न करती है कि जिस प्रकार नन्ही कली स्वय को कोमल एव नवीन पत्तो मे छिपा लेती है उसी प्रकार तुम कौन हो जो अपने सुन्दर अचल मे स्वय को छिपाने का प्रयत्न करती हो। साथ ही जिस प्रकार सध्या समय धूल एव अधकार के कारण चारो ओर फैले हुए धुएँ के आवरण मे दीपक की लौ कुछ चमकती हुई दिखाई देती है उसी प्रकार अपने पट से अपने सौन्दर्य को प्रकाशित करती हुई तुम कौन हो ?

टिप्पणी—(१) कवि ने लज्जा का परिचय देते समय प्रारभ मे ही यह स्पष्ट कर दिया है कि लज्जा छिपती हुई सी आती है।

(२) इन पक्तियो मे लज्जा के सदृश्य अमूर्तभाव का मूर्तीकरण अत्यन्त सुन्दर एव सजीव है।

(३) इस पद मे उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

(४) यहाँ 'दीपक के स्वर' में लक्षणा या जहत्स्वार्था लक्षणा है।

(५) कामायनी के इस सम्पूर्ण लज्जा सर्ग मे पादाकुलक छन्द है जिसमे चार-चार मात्राओ के चार चौकलो से कुल सोलह मात्राएँ होती हैं और अन्त मे एक गुरु होता है।

तुलनात्मक दृष्टि—लेमिनस ने भी इसी प्रकार कहा है—

A woman is a flower that breathes its perfume in the shade only

वर्डस्वर्थ ने भी लिखा है—

The flower of sweetest smell is shy and lovely

मजुल स्वप्नों .... पानी भरे हुए।

शब्दार्थ—मजुल=मधुर, मनोहर। विस्मृति=भूल। सुरभित=सुगधित। बुल्ले का विभव=पानी के बुलबुले का वैभव। माया=मोहक, माया का जादू। आँखो में पानी=आनन्द के आँसू।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा को सम्बोधित कर कह रही है कि जिस प्रकार मधुर स्वप्नो में वाह्य वातावरण की धूल आ जाने पर मन का उन्माद द्वि-गुणित हो उठता है और मन मे अनेक प्रकार की उमगें उसी प्रकार उठती-मिटती रहती हैं जिस प्रकार सुगधित लहरो के अन्तर्गत बुलबुलों का वैभव

बिखरता दिखाई देता है वैसे ही मोहक जादू के रूप लावण्य मे लिपटी हुई और अपने ओठो पर उगली रखकर दूसरो को चुप रहने का सकेत देते हुए अथवा किसी मनोहर भाव मे निमग्न तथा वसन्त के आनन्ददायक आश्चर्य से उत्पन्न नेत्रो मे आनन्द के आँसू भरे हुए तुम कौन हो ?

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे लज्जा के सदृश्य अमूर्त्त भाव का मानवीकरण कर उसे एक नारी के रूप मे अकित किया गया है ।

(२) यहाँ हमे सार्थक शब्द योजना के भी दर्शन होते हैं और कवि ने जो लज्जा मे विस्मृत स्वप्नो की सी मादकता तथा लहरो द्वारा विलीन होने वाले बुलबुलो का सा आकर्षण माना है अत. इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उसमे मादकता और मधुरिमा है ।

(२) इन पक्तियो मे उपमा एव उल्लेख अलकार की योजना हुई है ।

नीरव निशीथ ... . जादू पढ़ती ।

शब्दार्थ—नीरव=शान्त । निशीथ=अर्धरात्रि । आलिंगन का जादू=आलिंगन की प्रेरणा ।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा से कहती है कि तुम कौन हो जो मेरी ओर इस प्रकार बढी चली आ रही हो जिस प्रकार अर्द्धरात्रि के शान्त वातावरण मे लता बढती हैं । श्रद्धा लज्जा से पूछ रही है कि तुम कौन हो जो अपनी कोमल बाँहे फैलाए मुझे आलिंगन की प्रेरणा देती हुई मेरी ओर बढी चली आ रही हो ।

टिप्पणी (१) इस पद मे कवि ने यह स्पष्ट किया है कि रात्रि के समय ही लज्जा की भावना अधिकतर बढ़ती है ।

(२) कवि ने लज्जा की उपमा लता और किसी ऐसी नायिका से दी है जो आलिंगन के लिए लपनी बाहे फैलाये हुए आती है । इस प्रकार कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि लज्जा मिलन की भावना जाग्रत करती है ।

(३) यहाँ उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है ।

किन इन्द्रजाल .... मधु धार ढरे ?

शब्दार्थ—इन्द्रजाल=माया, जादू । सुहाग कण=सिंदूर की भाँति लाल लाल पराग के कण । राग=अनुराग या प्रेम, लाल रग । मधुधार=मकरद की धारा, आनद की धारा ।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा से कहती है कि तुमने जादू के फूलो से लाल लाल सिंदूर की भाँति लाल लाल पराग के कण एकत्र कर लिये हैं और तुम सि

नीचा कर, बडी तन्मयता से इन फूलो की माला बना रही हो तथा उनसे मकरद की धारा के सदृश आनन्द की धारा प्रवाहित हो रही है।

टिप्पणी—इस पद मे 'सुहागकण' मे रूपकातिशयोक्ति और 'राग' मे श्लेष अलकार की अभिव्यजना हुई है।

पुलकित कदंब • •••• • •• डर मे।

शब्दार्थ—अन्तर=हृदय। फलभरता=फल का भार

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा को सम्बोधित कर कह रही है कि तुमने मेरे सम्पूर्ण शरीर को रोमाचित कर दिया है और ऐसा जान पडता है कि तुमने मुझे कदम्ब के फूलो का हार सा पहना दिया है जिसके कारण रोम रोम खडे हो जाते हैं। श्रद्धा पुन कहती है कि जिस प्रकार वृक्ष की शाखा फलो के भार से नीचे की ओर झुक जाती है उसी प्रकार तुम्हारा आगमन होते ही मन दब सा जाता है अर्थात वह कुछ कह नही पाता।

टिप्पणी—(१) कुछ व्याख्याकार फल भरता मे श्लेष अलकार मानकर उसका दूसरा अर्थ 'सतान का भार' मानते हैं और यह अर्थ भी करते हैं कि 'जिस प्रकार फलो के बोझ से डालियाँ नीचे झुक जाती हैं' उसी प्रकार तुमने मेरे मन को भी भावी सतान के भार के डर को झुका दिया है।

(२) यहाँ 'कदम्ब की माला सी' मे उपमा और मन की डाली मे रूपक अलकार है।

वरदान सदृश • सना हुआ।

शब्दार्थ—सदृश=समान। सौरभ=सुगधी।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा को सम्बोधित कर कहती है कि तुमने धुँधले आलोक से पूर्ण अत्यन्त हलका और नीले धागो से बना अपना सुगधित आचल सा मेरे हृदय पर डाल दिया है तथा वह मुझे वरदान सदृश्य जान पडता है। इसका अर्थ यह है कि लज्जा ने श्रद्धा के हृदय मे लज्जा और वासना का सचार कर दिया है।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार की याजना हुई है।

सब अग मोम सुन पाती हूँ।

शब्दार्थ—मोम से=मोम के समान अत्यन्त कोयल। परिहास=हँसी-मजाक।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि लज्जा का आँचल पडते ही मेरे सभी अग

मोम के समान कोमल हो रहे हैं और न जाने क्यो अपने आप ही मे मैं सिमटी सी जा रही हूं तथा इस सकोच भावना के कारण मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कोई मेरी हँसी सी उडा रहा है। इस प्रकार श्रद्धा ने यहाँ यह स्पष्ट करना चाहा है कि लज्जा के उदय होने पर शरीर कोमल होजाता है और वह लचकने लगता है तथा हृदय मे सकोच की भावना भी बलवती हो उठती है।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार का प्रयोग हुआ है।

स्मित बन .... है सपना।

शब्दार्थ—स्मित=मद मुस्कान। तरल हँसी=जोरो से हँसना।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा से कहती है कि तुमने मुझमे यह कैसा परिवर्तन कर दिया है कि मैं जोरो से हँसना चाहती हूँ परन्तु सकोच के कारण मेरी हँसी मन्द मुस्कान बन कर ही रह जाती है और मेरे नेत्रो मे तिरछापन आ गया है तथा मैं जो भी प्रत्यक्ष देखती हूँ वह मेरे लिए स्वप्न बन जाता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत किया है कि लज्जा के कारण खुल कर हँसना भी नही हो पाता और वास्तविकता भी अवास्तविकता की भाँति जान पडती है।

तुलनात्मक दृष्टि—विद्यापति ने भी सलज्ज युवती मे होने वाले अद्‌भुत् परिवर्तन का चित्रण करते हुए कहा है—

खने-खने दसन छटा छुट हास। खने-खने अधर आगे गहु वास॥
हिरदय मुकुल हेरि-हेरि थोर। खने आँचर दए खन होए मोर॥

मेरे सपनों मे .. डोल रहा।

शब्दार्थ—कलरव=मधुर ध्वनि। अनुराग समीर=प्रेमरूपी पवन। तिरता=तैरता हुआ, बहता हुआ। इतराता सा=इठलाता सा।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि जिस प्रकार स्वप्न काल की समाप्ति पर अर्थात् रात्रि व्यतीत हो जाने के पश्चात् सृष्टि मे कोलाहल मच जाता है अर्थात् समस्त ससार जाग उठता है और मधुर स्वर लहरी वायु तरगो पर तैरती हुई चारो ओर फैलने लगती है उसी प्रकार मेरी कल्पनाओ की समाप्ति पर मेरे हृदय मे भी प्रेम की मधुर ध्वनि गूंज उठी जो कि भावो से एकाकार हो मेरे समस्त जीवन मे छा गयी।

टिप्पणी—इस पद मे रूपकातिशयोक्ति, विशेषण विपर्यय एव निरगरूपक अलकार की योजना हुई है।

अभिलाषा अपने .. .. प्रति बढ़ती।

शब्दार्थ—बल-वैभव=सम्पूर्ण शक्ति। सत्कृत करती=सत्कार करती, स्वागत करती। दूरागत=दूर से आया हुआ, यहाँ मनु से अभिप्राय है। रज्जु=रस्सी। निर्झर=झरना। आनन्द शिखर=आनन्द रूपी पर्वत की चोटी।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि जब मेरी समस्त अभिलाषाएँ अपनी पूर्ण तीव्रता के साथ मिलन-सुख का स्वागत करने चली और जब उन्होंने मुझे अपने जीवन की समस्त शक्ति तथा सुन्दरता से दूर से आए हुए उस आनन्द के शिखर मनु से समागम करने व उनका सत्कार करने की प्रेरणा दी तब उसी समय तुमने साहसपूर्वक वह किरणो के समान उज्ज्वल आशाओ की डोर खींच ली जिसके सहारे मैं प्रेमरूपी झरने मे प्रविष्ट हो आनदरूपी पर्वत की चोटी तक पहुँचती। वस्तुत इन पक्तियो मे एक दृश्य अकित किया गया है जिसमे एक विशाल पर्वत है जिससे कि झरना निकल रहा है और उसका जल चारो ओर फैल रहा है। जल के समीप एक युवती खडी है जो कि उस पवत की चोटी तक पहुँचना चाहती है लेकिन पहुँच नही पाती। वह जानती है कि उस पर्वत की चोटी तक पहुँचने के पूर्व उस जल मे प्रवेश करना होगा तथा इसके बावजूद किसी रस्सी के सहारे ही उस चोटी तक पहुँचा जा सकता है। उसे वह रस्सी दिखाई देती है और जैसे ही वह उसका सहारा लेकर उस चोटी तक पहुँचने का विचार करती है वैसे ही कोई अन्य नारी उस रस्सी को अलग कर उसे निराश कर देती है। वास्तव मे यहाँ पर्वत आनन्द का प्रतीक है तथा झरना प्रेम का और रस्सी आशा का तथा वह युवती श्रद्धा ही है और वह रस्सी अलग करने वाली नारी लज्जा है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे सागरूपक अलकार की सुन्दर योजना हुई है और कवि की चित्रोपम कल्पना भी दर्शनीय है।

छूने में हिचक . . .. . रुकती हैं।

शब्दार्थ—हिचक=झिझक। कलरव परिहास भरी=मधुर हास परिहास से पूर्ण। गूँजें=बातें। अधरों=होठो।

-व्याख्या—श्रद्धा लज्जा को सम्बोधित कर कहती है कि तुमने मुझमे यह कैसा परिवर्तन ला दिया है कि मैं पहले जिस मनु के साथ निस्सकोच रहती थी उसी मनु को अब स्पर्श करते समय मुझे झिझक सी होने लगती है और सकोच के कारण उनकी ओर देख भी नही पाती तथा पलकें नीचे की ओर

झुक जाती हैं। साथ ही परिहासपूर्ण वार्तालाप करने की अभिलाषा भी मन की मन में ही रह जाती है और वाणी मेरे अधरों तक आकर रुक जाती है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में एक सलज्ज युवती का अत्यन्त मनमोहक एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

संकेत कर रही .... पड़ी रही।

शब्दार्थ—रोमाली=रोम पंक्ति। बरजती=रोकती। भ्रम में पड़ी रही =स्पष्ट न हो सकी।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि मेरे हृदय की स्थिति शारीरिक रोमांचों से सहज ही स्पष्ट हो जाती है और मेरे रोम-रोम खड़े होकर मानो मुझे संकेत कर प्रेमपथ में आगे बढ़ने से रोकना चाहते हैं। मैं भले ही कुछ न कहूँ लेकिन भौंहें ही मेरे हृदय के भावों को व्यक्त कर देती हैं और यह स्पष्ट हो जाता है कि मेरे हृदय में प्रेमभावना है परन्तु मेरी भौंहों की इस भाषा को सभी नहीं समझ सकते तथा इसे तो वही समझ सकता है जो इसे पढ़ने में निपुण हो। इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार किसी पुस्तक में लिखी पंक्तियों की भाषा का अर्थ उस समय तक स्पष्ट नहीं हो पाता जब तक कि उन्हें समझने वाला कोई न हो उसी प्रकार उसकी (श्रद्धा की) भौंहों के इशारों का अर्थ उस समय तक स्पष्ट नहीं हो सकता जब तक कि मनु उसे समझने का प्रयास न करें।

टिप्पणी—इस पद में कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि सामान्यतया लज्जा के कारण युवती को प्रेमोदगार प्रकट करने में संकोच होता है और वह भ्रकुटि संचालन द्वारा भी अपनी प्रणय भावना का परिचय नहीं दे पाती। साथ ही यहाँ उपमा अलंकार की मर्मस्पर्शी योजना हुई है।

तुम कौन .... बीन रही।

शब्दार्थ—परवशता=विवशता, मजबूरी। स्वच्छंद सुमन=स्वतंत्र भावनाएँ।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा को सम्बोधित कर कहती है कि तुम कौन हो जो मेरे हृदय को मजबूर किए दे रही हो और तुमने क्यों मेरी स्वतन्त्रता छीन ली है तथा इस जीवनरूपी वन में जो प्रेम के स्वच्छंद फूल खिले हुए हैं उन्हें तुम क्यों बीने लिए जा रही हो। इसका अभिप्राय यह है कि लज्जा जब हृदय में प्रविष्ट होती है तब नारी क्रियात्मक रूप से कुछ भी नहीं कर पाती और उसे

अपनी इच्छाओ का दमन करना ही पडता है। साथ ही लज्जा के कारण प्रेम-भावना भी स्पष्ट रूप से व्यक्त नही की जा सकती।

टिप्पणी—यहाँ 'स्वच्छन्द सुमन' मे रूपकातिशयोक्ति और जीवन वन मे रूपक अलकार की अभिव्यक्ति हुई है तथा अतिम पक्ति मे लक्षण लक्षणा का प्रयोग हुआ है।

सध्या की लाली ··· ··· ·· उत्तर देती-सी।

शब्दार्थ—आश्रय=सहारा। छाया प्रतिमा=प्रतिमूर्ति। गुनगुना उठी=बोलने लगी।

व्याख्या—श्रद्धा की बाते सुनकर सध्या की लालिमा मे लिपटी वह लज्जा रूपी छाया मुस्कराते हुए अस्फुट शब्दो से कुछ कहने लगी और उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो वह श्रद्धा के प्रश्नो का उत्तर दे रही हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने लज्जा मनोभाव का आकर्षक मूर्तीकरण किया है।

शब्दार्थ—चमत्कृत=आश्चर्यचकित। बाला=नवयुवती पकड=रोक, रुकावट।

इतना न चमत्कृत ···· ···· विचार करो।

शब्दार्थ—चमत्कृत=आश्चर्यचकित। बाला=नवयुवती। पकड=रोक, रुकावट।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कह रही है कि तुम मुझे देखकर इतना अधिक आश्चर्यचकित न हो और यदि तुमने मेरी बातें मान ली तो इसमे तुम्हारा ही कल्याण है। लज्जा का कहना है कि मैं स्वय तो हृदय की एक ऐसी रुकावट हूँ जो हमेशा यही कहा करती है कि आवेश मे आकर कोई कार्य न करो और और किसी भी काम को करने के पूर्व भली-भाँति यह सोच लो कि इसका परिणाम सुखद है या दुखद। यहाँ लज्जा यह स्पष्ट कर देती है कि वह प्रेमोन्मादिनी स्त्रियो को यह सोचने का अवसर देती हैं कि वे अपना हृदय किसी को अर्पित करने के पूर्व भलीभाँति सोच समझ लें।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि का सूक्ष्म निरीक्षण दर्शनीय है और रूपक अलकार की योजना भी हुई है।

अम्बर चुम्बी ···· ···· ···· उन्माद लिये।

शब्दार्थ—अम्बर चुम्बी=आकाश को छूने वाली, बहुत ऊँची। हिम शृंग=बर्फ से ढकी हुई चोटियाँ। कलरव कोलाहल=झरने की कल-कल ध्वनि। विद्युत=बिजली।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कह रही है कि मैं नवयुवतियो के उस सौन्दर्य पर नियत्रण रखती हूँ जो कि उनके शरीर मे अत्यंत मादकता के साथ तीव्र गति मे प्रवाहित होता रहता और जिसका स्वरूप उस पर्वतीय झरने के समान होता है जो आकाश तक पहुँचने वाली ऊँची-ऊँची बर्फीली चोटियो से निकल कर अत्यन मधुर ध्वनि करता हुआ बिजली की धारा के समान तीव्र धारा मे प्रवाहित होता है तथा जिसके प्रवाह मे एक प्रकार की मादकता रहती है।

टिप्पणी—इस पद मे लज्जा ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि वह नवयुवतियो को उच्छृङ्खल नही होने देती। साथ ही यहाँ सागरूपक अलकार भी है।

मंगल कुंकुम ··· ··· ···· जिसमें हरियाली।

शब्दार्थ—श्री=शोभा। निखरी हो=झलक रही हो। भोला सुहाग=अत्यत भोली सौभाग्यकांक्षिणी नवयुवती।। हरियाली=प्रसन्नता।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कहती है कि मैं उन नवयुवतियों की सरक्षिका हूँ जिनमे मगल कुकुम की लालिमा के समान सौन्दर्य की काति हो, जो ऐसी जान पडती हो मानो कि उषा की लालिमा उनके अगों में झलक रही हो तथा जो कि अत्यत भोली और सौभाग्यवती होकर इठलाती हो जिनमे नवीन इच्छाओ के कारण प्रसन्नता भरी हुई हो।

टिप्पणी—इस पद मे 'निखरी हो ऊषा की लाली' मे उत्प्रेक्षा, 'भोला सुहाग' मे विशेषण विपर्यय और हरियाली मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यजना हुई है।

हो नयनों का ···· ··· · · पिक सा हो।

शब्दार्थ—नयनो का कल्याण=नेत्रो को सुख पहुँचाने वाला। सुमन=फूल। विकसा=खिला हुआ। वासन्ती=वसन्त ऋतु। पंचम स्वर=कोयल की सुरीली कूक से अभिप्राय है। पिक=कोयल।

व्याख्या—लज्जा कह रही है कि यौवन काल मे सुन्दरता की वृद्धि हो जाने से देखने वालो को वह अपूर्व सुखकारी जान पडता है और पूर्ण विकसित फूल की भांति आनन्ददायक होता है। जिस प्रकार वसन्त ऋतु आने पर वन की सभी ऐश्वर्यशालिनी वस्तुओ मे से कोयल की सुरीली वाणी पृथक् रूप से पहचानी जा सकती है उसी प्रकार जीवन की समस्त विभूतियो मे यौवन की उत्कृष्टता स्पष्टत. प्रकट हो जाती है। इस प्रकार लज्जा ने यहाँ यह स्पष्ट

करना चाहा है कि जीवन के अनन्त ऐश्वर्य के मध्य यौवनकालीन सुन्दरता का विशेष महत्व है पर वह अर्थात् लज्जा उसी सुन्दरता पर नियन्त्रण रखती है तथा नवयुवतियो को बहकने नही देती।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अत्यत सजीव एव चित्ताकर्षक उपमाओं के दर्शन होते हैं।

जो गूँज उठे . . . ढलता सा।

शब्दार्थ—मूर्च्छना=सगीत का एक स्वर। आँखों के साँचे से आकर=आँखो मे समाकर। रमणीय=सुन्दर, मनोहर।

व्याख्या—लज्जा का कहना है कि जिस प्रकार कोयल की सुरीली कूक श्रोताओ के रोम-रोम मे छा जाती है उसी प्रकार यौवन का माधुर्य भी दशक की नस नस मे समा जाता है और उसे देखते ही विभिन्न प्रकार के मनोहर दृश्य नेत्रो के सामने नाचने लगते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि यौवन-कालीन सुन्दरता शरीर के अग-प्रत्यग को अपनी मधुरिमा से पूण कर देती है और एक प्रकार की मूर्च्छा का सा आभास होने लगता है तथा विभिन्न मोहक कल्पनाएँ मन मे उठने लगती हैं। इस प्रकार लज्जा नवयुवतियो पर अपना नियन्त्रण रखती है जिससे कि उनके कदम कही बहक न जायें।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

नयनों की नीलम ... ... पाती हो।

शब्दार्थ—नयनो की नीलम की घाटी=नेत्र रूपी नीलम पर्वत की घाटी। रस घन=शृगार रस रूपी जल से पूर्ण बादल। कौंध=बिजली की चमक। अन्तर=हृदय।

व्याख्या—लज्जा कहती है कि जिस प्रकार नीलम के पर्वतो की घाटियो मे उमडने वाले जल से पूण बादलो के छा जाने से अपूर्व सुन्दरता छा जाती है उसी प्रकार यौवन के प्रविष्ट होते ही काली-काली पुतलियों वाली नवयुवतियो के नेत्रो मे रस भर जाता है और जैसे उन घने बादलों के मध्य से बिजली कौंध-कौंध कर अपने अन्तर मे ही शीतलता व्यक्त करती है उसी प्रकार यौवन रूपी बिजली की बाहरी चकाचौंध से हृदय को एक प्रकार का अपार आनन्द प्राप्त होता है तथा प्रेम की शीतल धारा सी बहने लगती है।

टिप्पणी—यहाँ 'नयनो की नीलम की घाटी' और 'रस घन' मे परम्परित रूपक है तथा कौंध मे रूपकातिशयोक्ति है और सम्पूर्ण पद मे साग रूपक अलकार की योजना हुई है।

हिल्लोल भरा .... • •• .... निखरता हो।

शब्दार्थ—हिल्लोल=मस्ती की लहरें। ऋतुपति=वसन्त। मध्यान्ह=दोपहर।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा को सम्बोधित कर कह रही है कि मैं उन नवयुवतियो की देखभाल करती हूँ जिनका सौन्दय वसत ऋतु की सी मादकता पूर्ण लहरो से युक्त हो और जिनमे अपने प्रेमियो से मिलने की वैसी ही उत्सुकता हो जैसी गोधूलि के समय जगल से लौटती हुई गायो के हृदय मे अपने बछडो के प्रति रहती है तथा जिनमे प्रभातकाल की सी प्रसन्नता और दोपहर का सा तेज हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अत्यन्त सुन्दर एव मर्मस्पर्शी उपमाओ का प्रयोग हुआ है।

हो चकित निकल • •• • • .... लहरो पर से।

शब्दार्थ—सहसा=अचानक, एकाएक। प्राची के घर से=पूर्व दिशा से। नवल चन्द्रिका=नवीन चाँदनी। बिछले=फिसले। मानस=सरोवर, हृदय। लहरें=तरग, भावनाएँ।

व्याख्या—लज्जा का कहना है कि जिस प्रकार पूर्व दिशा के आकाश से अचानक चाँदनी छिटक पडती है उसी प्रकार यौवन काल मे सौन्दर्य भी शरीर से अक्स्मात फूट पडता है और जैसे नवीन चाँदनी सरोवर की लहरो पर पडकर, फिसल-फिसल कर भाँति भाँति की क्रीडाएँ करती है उसी प्रकार यौवनावस्था मे रूप की चन्द्रिका भी अचानक प्रस्फुटित हो सबको आश्चर्य चकित हो निहारती है तथा हृदय और मस्तिष्क मे उत्पन्न विविध प्रकार के भावो से क्रीडायें किया करती हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'मानस' मे श्लेष अलकार है और सम्पूर्ण पद मे साग-रूपक अलकार की योजना हुई है।

फूलो की कोमल • .... चन्दन मे।

शब्दार्थ—अभिनन्दन=स्वागत। कुंकुम चन्दन=केसर और चन्दन का बना हुआ लेप।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कह रही है कि मैं उन सुन्दर नवयुवतियो पर नियन्त्रण रखती हूँ जिनके स्वागत मे फूल अपनी कोमल पखुडियो को बिखेर देते हैं और जिनके स्वागत के लिए कुंकुम मिश्रित चन्दन मे वे अपना रस मिलाते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे सौन्दर्य की महत्ता का अकन हुआ है।

कोमल किसलय मर्मर ... आनन्द मनाते हो।

शब्दार्थ—किसलय=नवीन पत्ते। मर्मर रव=पत्तो की मर्मर ध्वनि।

व्याख्या – लज्जा का कहना है कि जिस प्रकार किसी सम्राट के आगमन पर जय घोषणा की जाती है उसी प्रकार कोमल पल्लवो से जो अस्फुट मर्मर ध्वनि निकलती है वह मानो यौवन की विजय घोषणा ही है और उस समय सभी मानसिक भावनाएँ चाहे वे दु खपूर्ण हो या सुखपूर्ण, आनन्द-लीन ही रहती हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि यौवनोन्माद मे एक विशेप प्रकार के आनन्द से पूर्ण मादकता के रहने के कारण अन्य भावनाओ का विशेष प्रभाव नही पडता।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे लज्जा का अभिनन्दन एक सम्राट के रूप मे किया गया है और डॉ० शम्भूनाथ सिंह ने उचित ही कहा है "अनुभाव और सचारी भाव के रूप मे लज्जा का जैसा मनोवैज्ञानिक और पूर्ण चित्रण कामायनी मे हुआ है, वैसा और कही भी हुआ हो, यह हमे ज्ञात नही है।"

उज्ज्वल वरदान ... . जगते रहते हैं।

शब्दार्थ—उज्ज्वल=सात्विक, शुभ्र। अनन्त अभिलाषा=अनेक प्रकार की इच्छाएँ, विविध कल्पनाएँ।

व्याख्या—लज्जा का कहना है कि चेतन जगत के हेतु यह यौवन ही भगवान का शुभ्र वरदान है और इसी का दूसरा नाम सौन्दर्य भी है अर्थात् यौवनावस्था विश्व के समस्त चेतन प्राणियो के लिए एक वरदान सहरा ही है क्योकि इस यौवनकाल मे हृदय में न जाने कितनी विविध कल्पनाएँ स्वप्नों की भाँति उठा करती हैं और मन मे मधुर भावनाओ का जन्म होता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने सौन्दर्य की अत्यत सुन्दर और सटीक परिभाषा करते हुए यौवन और सौन्दर्य को परस्पर सम्बन्धित माना है तथा उन्हें चेतना या विराट शक्ति का उज्ज्वल वरदान कहा है।

मैं उसी चपल ... . समझाती।

शब्दार्थ—चपल=चचल यौवन सौन्दर्य। धात्री=धाय, देखभाल करने वाली।

व्याख्या—लज्जा कह रही है कि मैं चचल यौवन और सौन्दर्य की धाय अर्थात् सरक्षिका हूँ। अतएव जिस प्रकार एक कुशल धाय अपने नियत्रण मे

रहनेवाले चचल बालक की देखरेख करती है तथा गौरव और महानता का पाठ पढाती है उसी प्रकार मैं भी यौवन और सौन्दर्य को धारण करने वाली नारी जाति को पग-पग पर सचेत करती है। लज्जा का कहना है कि मैं नारी को अच्छी आदतें सिखाकर विपत्तियो से बचाने का प्रयास करती है और जब नारी आवेश मे आकर उच्छृङ्खलता की ओर बढ़ती है तब मैं उसे सावधान कर भावी विपत्तियो से बचने की प्रेरणा देती हूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि लज्जा न हो तो युवायुवतियाँ यौवनोन्माद मे अनेक भूलें कर बैठें और उन्हे बाद मे दुखी भी होना पडे। साथ ही लज्जा किसी भी युवती को पूर्णत. प्रेम विमुख नहीं कर देती बल्कि वह तो उन्हे समझाती भर है और यदि कोई लज्जा की बात नही मानता तो उसे पछताना भी पड सकता है।

मैं देवसृष्टि की ... . संचित हो।

शब्दार्थ—पचबाण=कामदेव। वचित=अलग। आवर्जना=परित्यक्त।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा के समक्ष अपना परिचत देते हुए कहती है कि मैं वही रति हूँ जो देव जाति के उत्थान काल मे अखड वैभव से पूर्ण थी परन्तु प्रलय मे देव जाति का विनाश होने पर अब अपने पति कामदेव से बिछुडकर परित्यक्त और दीनता की मूर्ति मात्र हूँ अर्थात् मैं देव बालाओ के मन मे पहले जैसी प्रबल उत्तेजना उत्पन्न करने की शक्ति नही रखती और जीवन की सम्पूर्ण अतृप्ति एकत्र कर इधर-उधर भटक रही हूँ।

टिप्पणी—(१) लज्जा ने इन पंक्तियो मे यह स्पष्ट कर दिया है कि वही कामदेव की पत्नी रति है और मनु के स्वप्न मे स्वय कामदेव ने यह भी कहा है कि वह देव सृष्टि मे देव बालाओ की काम भावना उद्दीप्त करती थी लेकिन उनके स्वच्छद विलास मे वह तृप्त नही हुई और जिस प्रकार काम को अपने कृतित्व पर पश्चाताप है उसी प्रकार रति भी यहाँ यह मान लेती है कि केवल वासना पूर्ति से कभी कोई सतुष्ट नही हुआ। इसीलिए लज्जा आत्म समर्पण के पूर्व श्रद्धा को भी सावधान करना चाहती है।

(२) इस पद मे मानवीकरण एव उपमा अलकार की योजना हुई है।

अवशिष्ट रह .. .. दलिता सी।

शब्दार्थ—अवशिष्ट=शेष। अतीत=विगत, भूतकाल की। लीला विलास=आनन्दमयी काम क्रीडाएँ। अवसादमयी=दुखपूर्ण खिन्नता से भरी हुई।

व्याख्या—लज्जा कह रही है कि मैं तो अपने अतीत की असफलता मात्र रह गयी हूँ अर्थात् मैं अब अपने अन्ततंम मे विगत जीवन की समस्त असफलताओ की अनुभूति कर रही हूँ। लज्जा का कहना है कि जिस प्रकार कामक्रीडा की चरम सीमा के पश्चात् शरीर शिथिल हो जाता है और खिन्नता सी होने लगती है उसी प्रकार मेरी तीव्रता भी अब कम हो गया है। लज्जा के कहने का अभिप्राय यह है कि देव सृष्टि के समय स्वच्छद विलास से वह तृप्त नही हुई अत. वह स्वय अपने आपको असफल ही समझती है और उन दिनो उसने विलास की पराकाष्ठा कर दी थी अत आज उसे दु खपूर्ण मानस और श्रम से शिथिल शरीर को लेकर चारो ओर भटकना पड रहा है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

मै रति की प्रतिकृति • • मनाती हूँ।

शब्दार्थ—प्रतिकृति=प्रतिमूर्ति, प्रतिच्छाया। शालीनता=विनम्रता, सयम।

व्याख्या—लज्जा कह रही है कि मैं आज रति न रहकर उसी की प्रतिमूर्ति लज्जा बन गयी हूँ और अब युवतियो को सयम का पाठ पढ़ाना ही मेरा काम है तथा मैं उनका आवेग सयत कर उन्हे उचित मार्ग दिखाती हूँ। लज्जा का कहना है कि जिस प्रकार नृत्य के समय चरणो मे घुँघरुओ के सयोग से एक प्रकार का नियन्त्रण सा रहता है उसी प्रकार मैं भी युवा नारियो मे एक प्रकार की सयम भावना उत्पन्न करती हूँ जिससे कि वे यौवनोन्माद में कोई अनुचित कार्य न कर बैठें। यहाँ लज्जा ने यह स्पष्ट कर दिया है कि वही नारी जाति को कुमार्ग पर जाने से रोकती है और जब कोई युवती किसी गलत मार्ग पर जाना चाहती है तब वही उसके चरणो मे नूपुर सी लिपट कर अपनी आवाज से उसे सावधान कर देती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार की योजना हुई है और उपादान लक्षण भी है।

लाली बन •••• •••• •••• •••• •• कर जगती।

शब्दार्थ—सरल=कोमल, सुकुमार। कुंचित—घुंघराले। मन की मरोड़ =मन की ऐंठन या उलझन।

व्याख्या—लज्जा का कहना है कि मैं नवयुवतियो के कोमल गालो पर लालिमा के रूप मे प्रकट होती हूँ और उनके नेत्रो मे अजन के समान दिखाई

देती हूँ तथा उनके घुंघराले केशो के घुंघरालेपन के रूप मे जान पडती हूँ और युवतियो के मन मे मरोर का रूप धारण कर प्रकट होती हूँ। कहने का अभिप्राय यह है कि लज्जा के द्वारा नवयुवतियो के कपोल, आँख, केश और मन मे एक प्रकार का अद्भुत परिवर्तन होता है।

टिप्पणी—यहाँ मालोपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

चचल किशोर ... ... कानों की लाली।

शब्दार्थ—किशोर=यहाँ नवयुवती से अभिप्राय है। मसलन=रगड।

व्याख्या—लज्जा कह रही है कि मैं स्त्रियो की किशोरावस्था की चचल सुन्दरता की रक्षा करती हूँ अर्थात् सुन्दर किशोरियो के मन जब चचल हो उठते है तब मैं उन पर नियन्त्रण रखती हूँ जिससे कि वे कही इधर-उधर न भटक जायँ। साथ ही जिस प्रकार धीरे-धीरे कानो को मसलने पर वे लाल हो जाते हैं और भले ही उन्हे कुछ पीडा पहुँचती हो परन्तु उनकी सुन्दरता ही बढती है उसी प्रकार मैं भी स्त्रियो के कानो की मसलन के समान हूँ। अतएव मेरे रोकने से नवयुवतियो को स्वच्छंदता कार्य न कर पाने के कारण पीडा अवश्य होती है परन्तु अन्त मे उसका परिणाम सुन्दर ही होता है अर्थात् लज्जा के कारण ही नारी मे अपूर्व माधुर्य, सयम और प्रणयकाल का मधुमास सा आ जाता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे लज्जा के सम्बन्ध मे कवि का सूक्ष्म निरीक्षण द्रष्टव्य है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने चन्द्रगुप्त नाटक मे भी लज्जा की लालिमा का वर्णन करते हुए कहा है—

"काम-सगीत की तान सौन्दर्य की रगीन लहर बनकर, युवतियो के मुख मे लज्जा और स्वास्थ्य की लाली चढाया करती है।"

हाँ ठीक .. .. देखा क्या है ?

शब्दार्थ—निविड़ निशा=अधकारपूर्ण रात्रि। आलोकमयी रेखा=प्रकाश की किरण।

व्याख्या—लज्जा की बातें सुनने के पश्चात् श्रद्धा ने कहा कि तुम जो कहती हो वह ठीक है लेकिन तुम मुझे यह तो बताओ कि अब मैं किस मार्ग का अनुसरण कर अपना जीवन व्यतीत करूँ और मुझे इस सृष्टि रूपी घोर अधकारपूर्ण रात्रि मे प्रकाश की किरण कहाँ से प्राप्त हो सकेगी? श्रद्धा के

कहने का अभिप्राय यह है कि लज्जा उससे यह स्पष्ट करे कि आखिर वह मनु के समक्ष आत्म समर्पण करे या न करे और वह स्वय किस प्रकार इस अज्ञान और दुविधा के अधकार को दूर कर सकती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति अलकार प्रयुक्त हुआ है।

यह आज समझ • हारी हूँ।

शब्दार्थ—दुर्बलता मे नारी हूँ=पुरुष की अपेक्षा दुर्बल हूँ। अवयव=शरीर के अग प्रत्यग। सबसे=सम्पूर्ण पुरुष जाति से अभिप्राय है।

व्याख्या—श्रद्धा कहती है कि मै इतना तो समझ गयी हूँ कि मैं नारी होने के कारण स्वाभाविक ही दुर्बल हूँ और नारी की शारीरिक कोमलता ही मेरे पराजय का कारण है। श्रद्धा का कहना है कि यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो अपने शारीरिक बल की हीनता के कारण ही स्त्री सर्वदा पराजित होती रही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने नारी को न केवल पुरुष की अपेक्षा दुर्बल कहा है अपितु उसके अगो को भी सुकुमार माना है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने अपनी नाट्यकृति 'अजातशत्रु' मे पुरुष एव नारी का तुलनात्मक अनुशीलन करते हुए कहा है—

"कठोरता का उदाहरण है—पुरुष और कोमलता का विश्लेषण है—स्त्री जाति। पुरुष क्रूरता है तो स्त्री करुणा है—जो अतर्जगत का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए हैं। इसलिए प्रकृति ने उसे इतना सुन्दर और मनमोहक आवरण दिया है—रमणी का रूप। सगठन और आधार भी वैसे ही हैं।"

पर मन भी .... जल भर आता है।

शब्दार्थ—घनश्याम खड=काले बादलो का टुकडा। जल=पानी, आँसू।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा से कह रही है कि न केवल मेरा शरीर ही कोमल और निर्बल है बल्कि मेरा सुदृढ़ मन भी न जाने क्यो स्वय ही ढीला होता जा रहा है। और जल से पूर्ण काले बादलो की भाँति मेरे नेत्र भी अश्रुपूर्ण हैं। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि उसके मन मे अब मनु के प्रति आकर्षण बढता जा रहा है और नेत्रो मे स्नेहाश्रु आ गये हैं।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

सर्वस्व समर्पण ... . माया में ?

शब्दार्थ—सर्वस्व समर्पण=अपना सब कुछ न्योछावर कर देना। महातरु छाया=विशाल वृक्ष की छाया। माया=मोहक जादू।

व्याख्या— श्रद्धा का कहना है कि जिस प्रकार कोई तापदग्ध प्राणी घने वृक्ष की छांह को देख यही कामना करता है कि अब तो यही चुपचाप पडा रहूँ उसी प्रकार मेरे मन मे भी अब यही अभिलाषा उत्पन्न हो रही है कि मैं भी किसी मनुष्य के समक्ष अपना सब कुछ अर्पण कर उसके फलस्वरूप उत्पन्न दृढ विश्वास रूपी वृक्ष की घनी छाया मे अपना सारा जीवन व्यतीत कर दूँ। इस प्रकार श्रद्धा यहाँ यह स्पष्ट कर रही है कि वह मनु को अपना सर्वस्व समर्पित कर उनके जादू भरे प्रेम की छाया मे चुपचाप पडी रहना चाहती है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है।

छायापथ मे .... श्रमशीला ?

शब्दार्थ—छायापथ=आकाश गगा। तारक=तारे। द्युति=चमक, ज्योति, प्रकाश। मधु लीला=मधुर क्रीडा। अभिनय करती=जाग्रत होती, बार-बार जग उठती। निरीहता=भोलापन। श्रमशीला=परिश्रम से भरी हुई।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि मेरे मन मे आज यही अभिलाषा हो रही है कि मैं आकाश गगा मे टिमटिमाते हुए तारो के प्रकाश की भाँति अपने जीवन का आदर्श बनाऊँ। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि वह अतरिक्ष मे प्रकाशवान तारागणो की भाँति अपना जीवन प्रकाशपूर्ण रखना चाहती है। श्रद्धा पुन कहती है कि न जाने क्यो मेरे मन मे यह इच्छा बार-बार जाग्रत होती है कि मैं मनु के साथ कोमलता, भोलापन एव परिश्रम से युक्त मधुर क्रीडाएँ करती रहूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार का प्रयोग हुआ है।

निस्सबल होकर . . . .. सुघराई मे।

शब्दार्थ—निस्सबल=बिना किसी सहारे के, आश्रयहीन, निराश्रित। तिरती=तैरती। मानस=हृदय, सरोवर। जागरण=जागृति। सुघराई=सुन्दरता।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि मैं अपने हृदयरूपी सरोवर मे निराश्रित तैर रही हूँ और मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि मैंने जो पथ निश्चित लिया है वही ठीक है तथा मेरे नेत्रो के सामने सुनहले स्वप्नो का एक

ससार सा उपस्थित है और मैं उन्ही स्वप्नो मे निमग्न रहना चाहती हूँ। इस प्रकार श्रद्धा यही कहना चाहती है कि मेरी यही अभिलाषा है कि मेरे स्वप्नो की इस सुखद रात्रि का अत न हो और मैं हमेशा सोती रहूँ अर्थात अपनी इस रम्य भावना मे निमग्न होकर कि पुरुष का आश्रय पाकर फिर कुछ करना शेष नही रहता वह अन्य किसी प्रकार की जागृति की कल्पना नही करना चाहती।

टिप्पणी—इस पद में रूपकातिशयोक्ति एव दृष्टान्त अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

नारी जीवन का ... . देती हो।

शब्दार्थ—चित्र=वास्तविक रूप। अस्फुट=अस्पष्ट।

व्याख्या—श्रद्धा लज्जा से कह रही है कि जिस प्रकार कोई चित्रकार चित्र बनाने मे पहले कुछ अस्पष्ट रेखाएँ खीचकर उनमे रग भर कर उसे कलाकृति का रूप प्रदान करता है उसी प्रकार तुम भी नारी जीवन का चित्र अकित करने मे पहले नारी के भविष्य की धु धली सी रेखाएं खीचकर उनमे व्याकुलता का रग भर कर उसे नारी का रूप प्रदान करती हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने नारी-जीवन के लिए चित्र के रूप मे सुन्दर कल्पना की है। साथ ही यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार की भी योजना हुई है।

रुकती हूँ .. . अनुदिन बकती।

शब्दार्थ—अनुदिन=प्रतिदिन। बकती=ऊट-पटाँग बातें करती रहती।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि मैं स्वय भी प्रेमपथ मे अग्रसर होने से रुक जाती हूँ और मेरे हृदय मे विभिन्न भावनाएँ उठती हैं तथा मेरी अवस्था कुछ ऐसी हो गई है कि मैं स्वय कुछ भी नही सोच पाती। श्रद्धा कह रही है कि जैसे कोई पागल स्त्री रात दिन कुछ भी बक-झक करती रहती है और उसकी बातो का पारस्परिक सम्बन्ध नही होता उसी प्रकार मेरे हृदय मे भी न जाने कितने प्रकार की असम्बद्ध भावनाएँ उठा करती हैं तथा मै किसी उचित निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाती।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

मैं जभी तोलने झोंके खाती हूँ।

शब्दार्थ—तोलना=परखना। उपचार=उपाय, प्रयत्न। भुजलता=बाँहरूपी वेल।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि मैं जब भी अपने आपको सयमित रखने का प्रयत्न करती हूँ तो मेरा मन विवश सा हो जाता है और भरसक यह प्रयत्न करने पर भी कि बुद्धि तथा तर्क द्वारा अपने हृदय को वश मे करूँ, मैं अपने प्रयत्न मे असफल हो रहती हूँ अर्थात मेरी बुद्धि पर प्रेम-भावना विजयी हो जाती है। श्रद्धा कहती है कि जिस प्रकार कोई लता किसी तरु को बांधने के प्रयास मे स्वय ही हिंडोलो की भाँति झूलने लगती है उसी प्रकार मैं भी मनु का सहारा लेकर उनकी ग्रीवा मे अपनी भुजाएँ डालना चाहती हूँ। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि अब मैं मनु का आश्रय लेने के लिए विवश सी हो गयी हूँ और मैं चाहती हूँ कि अपनी स्वतन्त्र सत्ता समाप्त कर दूँ।

टिप्पणी—यहाँ परम्परित रूपक एव उपमा अलकार की योजना हुई है।

इस अर्पण .... झलकता है।

शब्दार्थ— अर्पण=समर्पण, हृदय का सौंपना। उत्सर्ग=बलिदान, सर्वस्व न्यौछावर करना।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि मेरा यह आत्मसमर्पण किसी स्वार्थवश नही है बल्कि इसमे तो मेरी त्याग भावना ही प्रधान रूप से है और मेरे इस सरल हृदय ने तो देना ही सीखा है तथा वह लेना नही जानता।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे भारतीय नारी के उच्चादर्श को प्रस्तुत किया गया है।

क्या कहती हो .... सोने-से सपने।

शब्दार्थ—संकल्प=दान करने की इच्छा। अश्रुजल=आँसूरूपी जल।

व्याख्या— श्रद्धा की बातों को सुनकर लज्जा ने कहा कि मुझे तुम्हारी बातें सुनकर आश्चर्य हो रहा है क्योकि तुमने तो पहले ही अपने जीवन की मधुर इच्छाएँ अश्रुओ रूपी जल का सकल्प देकर दान कर दी हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा ने मनु से जब प्रेम किया था तभी उसने अपने जीवन का समस्त सुख वैभव उन्हें दान कर दिया अतः अब मनु के प्रति समर्पित होने या न होने का कोई प्रश्न ही नही उठता।

टिप्पणी—यहाँ 'अश्रुजल' मे रूपक अलकार है और 'सोने से सपने' मे रूपकातिशयोक्ति अलंकार है।

नारी ! तुम केवल .... सुन्दर समतल मे।

शब्दार्थ—श्रद्धा=सत्य, प्रेम और विश्वास की साकार प्रतिमा। रजत

नग=चाँदी के समान चमकने वाला पर्वत। पीयूष स्रोत=अमृत का झरना।

व्याख्या—लज्जा का कहना है कि हे नारी, तुम तो केवल श्रद्धा की ही मूर्ति हो और तुम्हारा दूसरा नाम तो श्रद्धा ही है तथा तुम्हारा हृदय हमेशा पवित्र भावनाओ से पूर्ण रहता है। लज्जा श्रद्धा से कह रही है कि जिस प्रकार पर्वत की तलहट मे मीठे पानी के झरने वहते हैं उसी प्रकार तुम भी अपने हृदय मे अगाध विश्वास लिए जीवन की सुन्दर समभूमि मे निरन्तर प्रेम की धारा प्रवाहित करती रहो अर्थात् उन मधुर झरनो की भाँति अपरिमित विश्वास लिए मानवजीवन को अपनी सुधासिक्त वाणी से शीतलता प्रदान करती रहो।

टिप्पणी—यहाँ 'विश्वास रजत नग' में रूपक और 'पीयूष स्रोत सी' में उपमा अलकार है।

देवो की विजय ·· विरुद्ध रहा।

शब्दार्थ—दानवो=राक्षसो। उर अन्तर में=हृदय मे।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कहती है कि आज तक का इतिहास इस बात का साक्षी है कि देवताओ और दानवो मे हमेशा युद्ध होता रहा तथा अत मे देवताओ की ही विजय होती है। इसी प्रकार हृदय मे भी सत् और असत् भावनाएँ एक दूसरे की स्वाभाविक ही विरोधिनी हैं तथा उनमे सघर्ष चलता ही रहता है परन्तु इस सघर्ष मे भी सत् की विजय और असत् की पराजय होती है लेकिन जिस प्रकार विजेता के सामने पराजित को अपना सब कुछ सौंपना पडता है उसी प्रकार तुम स्वय भी, अब मनु के सामने आत्मसमर्पण के लिए उत्सुक हो गयी हो।

आँसू से भीगे · · ···· ···· लिखना होगा।

शब्दार्थ—मन का सब कुछ=सम्पूर्ण अभिलाषाएँ। स्मित रेखा=मधुर मुस्कान। सधिपत्र=प्रतिज्ञा।

व्याख्या—लज्जा श्रद्धा से कह रही है कि मनु के समक्ष तुम्हारे इस आत्मसमर्पण का परिणाम यह होगा कि तुम्हें अपने मन की सभी इच्छाएँ पुरुष को अर्पित कर यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि चाहे पुरुष तुम्हे कितना ही दुखी क्यो न करे परन्तु तुम उसके सुख के लिए ही हमेशा प्रसन्नचित्त होकर प्रयत्नशील रहोगी।

———

सातवाँ सर्ग

कर्म

कथानक—मनु मे दैवी सस्कार पुन उभर आये और उनके मन मे यज्ञ करने की इच्छा भी उत्पन्न हुई। साथ ही सोमरस पान करने की कामना भी उनके हृदय मे जाग्रत हुई और वे जानते थे कि यज्ञ करने से उनकी यह इच्छा पूर्ण हो सकती है। स्वय श्रद्धा भी उन्हे बार-बार कर्मशील बनने की प्रेरणा देती थी और काम की वाणी भी उनके कानो मे गूंज रही थी। अतएव उनके हृदय मे श्रद्धा को प्राप्त करने की नवीन आशा का सचार हुआ।

जिस प्रकार जल प्रलय मे मनु और श्रद्धा जीवित बचे थे उसी प्रकार दो असुर पुरोहित भी जीवित बच गए थे। इनमे से एक का नाम किलात था और दूसरे का नाम आकुलि था। दोनो ही कई दिनो से इधर-उधर भटकते हुए मनु की गुफा के समीप पहुँचे। जब उन्होने श्रद्धा के पालित पशु को देखा तो उनका मन ललचा गया। वे सोचने लगे कि क्या कोई ऐसा उपाय नही है कि इस सुन्दर हृष्ट-पुष्ट पशु का माँस खाने के लिए प्राप्त हो। श्रद्धा उस पशु के साथ हमेशा छाया की तरह रहती थी अत वे दोनो अपनी इच्छा सहज ही पूर्ण नही कर सके। इस प्रकार दोनो कुछ सोचकर मनु के पास पहुँचे।

इधर मनु सोच रहे थे कि यदि मै यज्ञ कर पाऊँ तो मेरा जीवन आनन्द पूर्ण हो जाए पर पुरोहित के बिना यज्ञ कैसे हो सकेगा? यह जानकर कि मनु को यज्ञ कार्य के लिए पुरोहित की आवश्यकता है किलात और आकुलि को अपार हर्ष हुआ। उन्होने मनु से कहा कि तुम जिस देवता का यज्ञ करना चाहते हो उन्होने हमे तुम्हारे पास भेजा है अत तुम अब चिन्ता मत करो और यज्ञ वेदी पर चलकर यज्ञ आरम्भ करो। हम पुरोहित बनकर तुम्हारा यज्ञ सम्पन्न करा देंगे। अतएव अब तुम चिन्ता मत करो और चलकर यज्ञ आरम्भ करो।

असुर पुरोहितो की बात सुनकर मनु को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उन्होने किलात और आकुलि का आगमन देवता का वरदान ही माना। उन्हे इस बात

से भी हर्ष हुआ कि अब इस एकात प्रदेश मे कुछ उत्सव होगा और यहाँ की उदासी दूर हो जाएगी तथा श्रद्धा भी यज्ञ देखकर प्रसन्न होगी। इस प्रकार मनु यज्ञ कार्य मे लीन हो गए और असुर पुरोहितो की प्रेरणा से यज्ञ वेदी पर श्रद्धा के पालित पशु का वध किया गया तथा उस पशु की कातर वाणी चारो ओर गूंज गयी। साथ ही उसकी हड्डियो और खून के छीटो से वहाँ एक अत्यत कारुणिक दृश्य उपस्थित हो गया। श्रद्धा को यह सब अरुचिकर प्रतीत हुआ और वह चुपचाप उठकर गुफा मे चली गई।

श्रद्धा के चले जाने से मनु को बडी बैचेनी हुई और वे सोचने लगे कि मैने श्रद्धा के मनोरजन के लिए ही यज्ञ का अनुष्ठान किया था परन्तु वह तो रूठ कर चली गयी है। अपनी व्याकुलता दूर करने के लिए मनु मास से बने हुए पुरोडाश को खाकर सोमरस पीने लगे जिससे कि वे नशे मे सब कुछ भूल जायँ पर उनकी व्याकुलता दूर न हुई। इस प्रकार वे श्रद्धा को मनाने के लिए उसके पास पहुँचे और उसके बिल्कुल समीप बैठ गये। स्वय श्रद्धा एक कोमल चर्म बिछाकर चुपचाप आँखें बन्द किये लेटी हुई सोच रही थी कि यह कितने दुख की बात है कि मैं जिस मनु को प्रेम करती थी वह कितना कठोर और घातक होता जा रहा है। समझ मे नही आता कि उसके हृदय को किस प्रकार बदलने का प्रयत्न किया जाय।

मनु ने श्रद्धा की हथेली अपने हाथ मे ले ली और कहा हे मानिनी, आज तुम्हारा यह कैसा मान है? तुम्हे मेरे स्वर्ग सुख को धूलि मे न मिलाना चाहिए? आज यहाँ केवल हम और तुम दो ही प्राणी हैं अतएव चलो मधुर सोमरस पीकर हम दोनो मिलकर आनन्द मनायेंगे। मनु के स्पर्श से श्रद्धा रोमाचित अवश्य हो उठी पर उसने सयत होकर कहा कि आज तुम इस प्रकार मेरी अनुनय विनय कर रहे हो पर हो सकता है कि कल ही तुम्हारा हृदय बदल जाय और तुम मुझसे मुँह फेर लो। हो सकता है कि कल तुम फिर से किसी नवीन यज्ञ का अनुष्ठान करो और किसी अन्य की वलि दो लेकिन क्या तुम्हारी यही मनुष्यता है कि अपने सुख के लिए अन्य प्राणियो का वलिदान कर दिया जाय।

श्रद्धा की बातें सुनकर मनु ने कहा कि ससार मे व्यक्तिगत सुख भी तुच्छ नही है और हमे अपनी इन्द्रियो को भी तृप्त करना चाहिए। यदि हमारी

इच्छायें पूर्ण न हुई तो फिर इस सृष्टि से हमे लाभ ही क्या है ? मनु की यह स्वार्थपूर्ण बात सुनकर श्रद्धा ने उन्हें उपालम्भ देते हुए कहा कि व्यक्तिगत सुख तुच्छ नही है परन्तु कोई भी व्यक्ति अपने मे ही सीमित रहकर भला कैसे सुखी हो सकता है । यदि तुम सुख पाना चाहते हो तो तुम्हे दूसरो को भी सुखी बनाने का प्रयत्न करना चाहिए और अपने सुख को व्यापक बनाकर सभी के सुख मे अपना सुख समझना चाहिए । इस प्रकार तुम अन्य प्राणियो की पीड़ा को समझने का भी प्रयत्न करो और सृष्टि के अन्य सभी प्राणियो को अपने समान समझकर अपनी पवित्र मानवता का विकास करने मे सलग्न हो ।

यद्यपि श्रद्धा मनु के समक्ष तर्कयुक्त उद्गार अवश्य प्रकट कर रही थी पर उसका हृदय भी प्यासा था । उसकी इस दुर्वलता को मनु ने पहचान लिया और सोमपात्र श्रद्धा के अधरो से लगाते हुए कहा कि भविष्य मे तुम जैसा कहोगी मैं वैसा ही करूँगा । श्रद्धा ने सोमरस का पान किया और मनु ने उससे कहा कि इस मधुर मिलन के समय लज्जा की आवश्यकता नही है । इस प्रकार उस एकान्त गुफा मे मनु और श्रद्धा दोनो एक हो गए ।

कर्म सूत्र सकेत .... जीवन धनु को ।

शब्दार्थ—कर्मसूत्र=कर्म काड, यज्ञ । सदृश=समान । शिजिनी=धनुष की प्रत्यचा । धनु=धनुष ।

व्याख्या—मनु जिस गुफा मे रह रहे थे उस गुफा के चारो ओर जो सोमलताएँ फैली हुई थी वे मनु को कर्म मे प्रवृत्त होने का संकेत सा देकर उनके जीवन को कर्म की ओर उसी प्रकार खीच रही थी जिस प्रकार प्रत्यचा के चढाने पर धनुष खिच जाता है । कहने का अभिप्राय यह है कि मनु को अब सोम पीने की इच्छा हुई और वे यज्ञो की ओर आकर्षित हुए ।

टिप्पणी—(१) वस्तुतः देव सृष्टि मे यज्ञो के उपरान्त सोमरस पिया जाता था अत यहाँ कवि ने सोमलता को कर्मसूत्र सकेत सदृश कहा है ।

(२) यहाँ 'शिजिनी सी' मे उपमा और 'जीवन धनु' में रूपक अलकार की योजना हुई है ।

(३) कामायनी के इस 'कर्म' सर्ग मे सार छन्द प्रयुक्त हुआ है, जिसमे सोलह और बारह मात्राओ की यति से कुल २८ मात्राएँ होती हैं ।

हुए अग्रसर उसी .... अब थिर वे ।

शब्दार्थ—उसी मार्ग मे=यज्ञ मार्ग की ओर । थिर=स्थिर, शान्त ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार धनुष से छूटा हुआ तीर तेजी से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है उसी प्रकार मनु भी कर्म मार्ग मे प्रवृत्त होने के लिए आगे बढे । इस प्रकार मनु के हृदय मे यज्ञ करने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई और अब वे यज्ञ करने के लिए अशान्त प्रतीत हुए ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने मनु की तुलना धनुष से छूटे हुए तीर से कर मनु के मन मे विद्यमान यज्ञ करने की तीव्र अभिलाषा और उस इच्छा पूर्ति के लिए उत्पन्न उत्कर तत्परता का सुन्दर चित्रण किया है।

(२) यहाँ उपमा एव वीप्सा अलकार की योजना हुई है ।

भरा कान मे ... ... रही थी आशा ।

शब्दार्थ—कथन काम का=स्वप्न मे सुना हुआ काम का सदेश । नव अभिलाषा=कर्म मे प्रवृत्त होने की नवीन इच्छा । अतिरजित=अत्यत रमणीय या मनमोहक ।

व्याख्या—मनु के कानो मे अभी तक कामदेव का यह सदेश गूँज रहा था कि तुम यदि श्रद्धा को प्राप्त करना चाहते हो तो उसके योग्य बनने का प्रयत्न करो । साथ ही अब मनु के मन मे यज्ञ करने की नवीन इच्छा उत्पन्न हुई और उनके हृदय मे मनमोहक आशा लहराने लगी तथा वे अपने भविष्य के सम्बन्ध में विचार करने लगे ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु के कर्म मे प्रवृत्त होने का सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हुए यह स्पष्ट करना चाहा है कि एक ओर तो मनु यज्ञादि जीवनोपयोगी कर्म करने का विचार कर रहे थे और दूसरी ओर उनके मन मे श्रद्धा को पूर्ण रूप से अपना बनाने की अत्यत रमणीय आशा भी उमड रही थी ।

ललक रही .... बनी उदासी ।

शब्दार्थ—ललक रही थी=बलवती हो रही थी । ललित=सुन्दर । लालसा=इच्छा ।

व्याख्या—मनु के मन मे सोम पीने की सुन्दर इच्छा बलवती हो रही थी अर्थात् मनु सोमपान के लिये अत्यत आतुर थे परन्तु अपने उस वैभवहीन जीवन के कारण जिसमे यज्ञ के लिये समुचित साधन न थे, उनकी वह अभिलाषा उदासी बन कर रह जाती थी । इस प्रकार उनके जीवन मे निराशा बढती जा रही थी ।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार की योजना हुई है और 'ललक रही थी ललित लालसा' मे वृत्यानुप्रास अलकार है।

जीवन की अविराम .... लौट पडी थी।

शब्दार्थ—अविराम=निरन्तर, लगातार। साधना=कर्म करने की इच्छा। तरणी=नौका, नाव।

व्याख्या—मनु के जीवन मे निरन्तर कर्म करने की इच्छा अत्यत उत्साह के साथ थी परन्तु उनकी वह इच्छा साधन हीन होने के कारण उस नौका के समान थी जो विपरीत पवन के कारण आगे न बढकर उल्टे नदी की गहरी धारा मे लौट रही थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों में कवि ने निराश, निरुपाय एवं अकर्मण्य मनु की आशा एव उत्साह से पूर्ण कर्मण्यता का चित्रण करने के लिए उनकी तुलना विपरीत पवन मे बहाव के विरुद्ध चलने वाली नौका से की है। इस प्रकार कवि ने यहाँ यह सकेत करना चाहा है कि मनु के जीवन मे अद्भुत परिवर्तन हो गया था और उन्होंने निरन्तर कर्म करने का निश्चय किया था परन्तु उपयुक्त साधन के अभाव मे वे अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए आगे नहीं बढ पा रहे थे।

(२) इस पद मे उदाहरण अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

श्रद्धा के उत्साह .... तिल के।

शब्दार्थ—भ्रांत अर्थ=उल्टा अर्थ। बने ताड़ थे तिल के=साधारण सी बात को जान बूझकर बढा देना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु को श्रद्धा के वे उत्साह पूर्ण वचन याद आ रहे थे जिसमे उसने अपना जीवन मनु के चरणो मे विकार रहित होकर व्यतीत करने की बात कही थी और उनके कानों मे काम का वह सदेश भी गूँज रहा था जिसमे उसने उन्हे कर्म की ओर प्रेरित किया था। परन्तु मनु ने इन दोनो बातो का गलत अर्थ लगाया और साधारण सी बात को जान बूझकर बहुत बड़ी बात बना दिया। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा और काम मनु को कर्मशील बनाना चाहते थे परन्तु मनु ने उनकी प्रेरणाओ का यह गलत अर्थ ग्रहण किया कि वे दोनो मनु को यज्ञ विधान, सोमरस पान और कामवासना की ओर प्रवृत्त कर रहे हैं।

टिप्पणी—इस पद में कवि ने 'तिल का ताड़ बनना' नामक मुहावरे का

प्रयोग कर न केवल भाषा मे सजीवता ला दी है बल्कि मनु की भ्रात धारणा का स्पष्ट रूप अकित किया है।

बना जाता सिद्धात · · करती है।

शब्दार्थ—पुष्टि=समर्थन। ऋण=कर्ज।

व्याख्या—इस ससार मे बहुधा यही देखा जाता है कि पहले मनुष्य अपने मन मे कोई सिद्धात निश्चित कर लेता है और फिर उस सिद्धान्त के समर्थन के लिए उसी प्रकार प्रमाणो को खोजता रहता है जिस प्रकार कोई व्यक्ति पहले तो कर्ज लेता है और बाद मे उस कर्ज को चुकाने के लिए बार-बार कर्ज की खोज करता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने उन व्यक्तियो का चित्रण किया है जो कि पहले तो कोई सिद्धान्त निश्चित कर लेते हैं और फिर उल्टे सीधे प्रमाव प्रस्तुत कर अपने उस सिद्धान्त का समर्थन करने मे अपनी सारी बुद्धि खर्च कर देते हैं। वास्तव मे यह प्रवृत्ति उचित नहीं है क्योंकि मनुष्य को पहले अनेक समुचित प्रमाण एकत्र करने के पश्चात ही बहुत कुछ सोच-विचार कर सिद्धान्त निर्धारित करने चाहिए।

मन जब · · · निरखता सपना।

शब्दार्थ—मत=सिद्धान्त, राय। दैव बल=भाग्य। सतत=निरन्तर, लगातार।

व्याख्या—वास्तव मे मन जब कोई अपना सिद्धान्त पहले ही निश्चित कर लेता है तब वह हमेशा बुद्धि की सहायता से या फिर भाग्य बल से अपने अनुकूल प्रमाण ढूंढने के लिए निरन्तर सपने देखता रहता है। कहने का अभिप्राय यह है कि जो सिद्धान्त मिथ्या है और भ्रान्त धारण के आधार पर स्थित है उसे चाहे कितने ही प्रमाणो से पुष्ट करने का प्रयत्न किया जाय पर वह सिद्धान्त झूठा ही सिद्ध होता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु के सदृश्य मिथ्या सिद्धान्त वादियों की सारहीनता की ओर सकेत किया है। साथ ही यहाँ दीपक अलंकार भी है।

पवन वही · · · · · · · · · · · नभ तल मे।

शब्दार्थ—हिलकोर=हिलोरें, लहरें। तरलता=बहाव। अन्तरतम=हृदय। नभ तल=आकाश और धरती।

व्याख्या—कवि का कहना है कि व्यक्ति जब पहले ही अपना कोई सिद्धान्त

निश्चित कर लेता है तब उसे वही सिद्धान्त द्वारा सागर मे उठाई गई लहरो और बहते हुए जल मे दिखाई देता है। इतना ही नही उसके हृदय की वही प्रतिध्वनि आकाश और धरती मे छा जाती है अर्थात् वह अपने सिद्धान्त को प्रमाणित करने के लिए धरती और आकाश दोनो स्थानो से प्रमाणो का सग्रह करता रहता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मिथ्या सिद्धान्तवादियो की मनोदशा का चित्रण करते हुए यह स्पष्ट करना चाहा है कि उन्हें सम्पूर्ण सृष्टि मे अपने सिद्धान्त का ही समर्थन दिखाई देता है।

सदा समर्थन .... सुख की सीढ़ी।

शब्दार्थ—तर्कशास्त्र की पीढी=भिन्न भिन्न प्रकार के तर्क देकर किसी सिद्धान्त को सिद्ध करने की परिपाटी। सीढ़ी=सोपान, साधन।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मिथ्या सिद्धान्तवादी व्यक्ति हमेशा अपने सिद्धान्तों का समर्थन करने के लिए अनेक प्रकार के तर्क दिया करते हैं और इन तर्कों द्वारा यही सिद्ध करते हैं कि हमारा यह सिद्धान्त बिल्कुल ठीक है तथा यही सत्य है और इसे ही अपनाकर चलने से जीवन मे उन्नति और सुख भी प्राप्त हो सकता है क्योकि उन्नति और सुख का यही एक मात्र साधन है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने भ्रान्त धारणा वाले व्यक्तियो की मन स्थिति का चित्रण करते हुए यह सकेत करना चाहा है कि जिस प्रकार लोग अपने भ्रामक सिद्धान्त को उन्नति और सुख देने वाला समझकर हमेशा उसी के समर्थन मे लगे रहते हैं उसी प्रकार मनु भी अपनी भ्रान्त धारणा की पुष्टि के लिए सोम पान आदि बातो के लिए लालायित हो उठे।

और सत्य यह .... सुआ है।

शब्दार्थ—गहन=रहस्यमय, गभीर। मेधा=बुद्धि। क्रीडा पिंजर=खेलने का पिंजरा। सुआ=तोता।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि इस ससार मे सत्य क्या है। और क्या नही है यह कहना कठिन है क्योकि सत्य का निर्धारण करना अत्यत कठिन कार्य है। इस प्रकार ससार के सभी दार्शनिको ने सत्य की खोज के लिए अनेक प्रयत्न किए और अपना सपूर्ण जीवन ही इस काम मे लगा दिया पर सत्य अभी तक रहस्यमय बना हुआ है। कवि का कहना है कि जिस प्रकार पिंजडे मे बन्द तोता अपने पिंजड़े के उस सीमित जगत को ही वास्तविक एव सत्य मानता

है और शेष जगत को मिथ्या समझता है उसी प्रकार दार्शनिक एवं विचारक भी अपनी सीमित बुद्धि के आधार पर जो सिद्धान्त निश्चित करते हैं उसे ही सत्य मानते हैं और शेष सभी को झूठा समझते हैं।

टिप्पणी—इस पद में परम्परित रूपक अलंकार है।

सब बातों मे .... छुई मुई है।

शब्दार्थ—तुम्हारी खोज=सत्य की खोज। कर=हाथ। छुई मुई=एक प्रकार का पौधा जो छूने से मुरझा जाता है।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जीवन के सभी क्षेत्रो मे सत्य की खोज करने की होड सी लगी हुई है परन्तु तर्क के हाथो का स्पर्श होते ही सत्य छुई मुई के पौधे की भाँति मुरझा जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार छुई मुई का पौधा हाथ का स्पर्श लगते ही अपना वास्तविक रूप छोड एकदम मुरझा जाता है उसी प्रकार जब तर्क द्वारा सत्य की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है तब उसका वास्तविक रूप छिप जाता है।

टिप्पणी—इस पद मे परम्परित रूपक अलकार है।

असुर पुरोहित .... कुछ कहती।

शब्दार्थ—विप्लव=जल प्लावन, प्रलय। आमिष लोलुप=मांस खाने की इच्छा करने वाली। रसना=जीभ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस भयकर जल प्लावन से दो असुर पुरोहित भी बच गए थे और इधर-उधर भटक रहे थे। उनका नाम किलात और आकुलि था और उन्होने भी जल प्रलय से लेकर अब तक अनेक कष्ट सहे थे।

कवि का कहना है कि मनु के हृष्ट-पुष्ट पशु को देखकर दोनो असुर पुरोहितो की जीभ मांस खाने के लिए ललचाई रहती थी और उस पशु को देख वे व्याकुल और चचल हो जाते थे। इस प्रकार मनु श्रद्धा के पशु को जितनी बार देखते उतनी ही बार उनकी इच्छा अत्यत तीव्र होकर उन्हे बेचैन कर देती और उनकी जिह्वा उस पशु का मांस खाने के लिए मचल उठती।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार और जहत्स्वार्थी या लक्षण-लक्षणा की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—किलात और आकुलि नामक असुर पुरोहितो का

वणन ऋग्वेद मे भी हुआ है और ब्राह्मण ग्रन्थों में भी उन्हें मनु का यज्ञ कराने वाला असुर पुरोहित कहा गया है—

किलाताऽकुलऽइति हाऽसुर ब्रह्मा वासतु । तौ हौचतु । श्रद्धादेवो वै मनुराव नु वेदावेति तौ हागत्यो चतुर्मनो याजयाव त्वेति ।

क्यों किलात .. .. बीन बजाऊं ।

शब्दार्थ—तृण=तिनका, घास। घूंट लहू का पीऊं=मन मारकर बैठा रहूं । सुख की बीन बजाऊं=आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करूं ।

व्याख्या—किलात ने स्वय को ही सम्बोधित कर कहा कि इस तरह घास खाते हुए मैं कब तक अपने जीवन का निर्वाह करूं । किलात का कहना है कि जब मैं इस जीवित पशु को देखता हूं तब मेरे मन मे एक प्रकार की ज्वाला सी उठती है और मेरा मन मास खाने के लिए लालायित हो उठता है पर मुझे कब तक मन मारकर बैठे रहना पड़ेगा ।

किलात कह रहा है कि क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे मैं इस पशु का मांस खा सकूं ? किलात का कहना है कि यदि मुझे इस पशु का मास खाने को मिल जाय तो बहुत दिनो बाद कम से कम एक दिन तो मैं अपना प्रिय भोजन पाकर आनन्द का जीवन व्यतीत करूं ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे प्रारम्भ मे किलात के प्रति सम्बोधन होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि आकुलि ने किलात को सम्बोधित कर अपने उद्‌गार प्रकट किए होगे परन्तु आठ पक्तियों के पश्चात कवि ने पुन यह लिखा है कि 'आकुलि ने तब कहा ।' इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त उद्‌गारो को श्रवण कर आकुलि ने अब उत्तर दिया होगा । इस प्रकार यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक ही उठता है कि इन पक्तियो को किसका कथन समझा जाय परन्तु वास्तव मे किलात ही यहाँ स्वय को सम्बोधित कर अपने उद्‌गार प्रकट कर रहा है ।

(२) इन पक्तियो मे सुन्दर मुहावरेदार भाषा का प्रयोग हुआ है ।

आकुलि ने तब ... . हँस के ।

शब्दार्थ—मृदुलता=कोमल स्वभाव । ममता=वात्सल्यपूर्ण । छाया=प्रतिमा, मूर्ति ।

व्याख्या—जब किलात ने अपने साथी आकुलि के समक्ष मास खाने की इच्छा प्रकट की तब आकुलि ने उससे कहा कि क्या तुम यह नहीं देखते कि

उस सुन्दर और हृष्ट-पुष्ट पशु के साथ कोमलता एव वात्सल्यपूर्ण एक नारी-प्रतिमा हमेशा हँसती हुई रहती है।

टिप्पणी—यहाँ नारी प्रतिमा से अभिप्राय श्रद्धा से है और कवि ने श्रद्धा के वात्सल्य, सुकुमारता एव ममत्व आदि गुणो की ओर भी सकेत किया है।

अधकार को दूर .. .. घन-सी।

शब्दार्थ—आलोक किरन सी=प्रकाश को किरणो के समान। माया=छल-कपट।

व्याख्या—आकुलि कह रहा है उस सुन्दर एव हृष्ट-पुष्ट पशु के साथ रहने वाली नारी प्रकाश की उस किरण के समान है जो अधकार को दूर कर देती है और जिस प्रकार प्रकाश की किरणें घने बादलो को भी भेदकर निकल आती हैं उसी प्रकार मेरा छल भी उस नारी पर नही चल सकता क्योकि उसे देखते ही मेरी माया निर्बल पड जाती है।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार की योजना हुई है।

तो भी चलो सहज सहूँगा।

शब्दार्थ—स्वस्थ=सतुष्ट, शात। सहज=स्वाभाविक रूप से, सरलता से।

व्याख्या—आकुलि कह रहा है कि यद्यपि उस सुन्दर एव हृष्ट-पुष्ट पशु के साथ हमेशा एक स्त्री रहती है पर फिर भी चलो आज इस पशु की हत्या करने का और उसका मास प्राप्त करने का कोई न कोई उपाय किए बिना मैं शात नही रह सकता। आकुलि का कहना है कि इस उपाय को पूर्ण करने मे चाहे मुझे कितना ही सुख-दु ख सहना पडे मैं वह सब सरलता से सहन कर लूगा।

यो ही दोनो .. .. ध्यान लगाये।

शब्दार्थ—कुज द्वार=लताओ से घिरी मनु की गुफा का द्वार। ध्यान लगाये=ध्यानमग्न।

व्याख्या—कवि का कहना है किलात और आकुलि नामक दोनो असुर पुरोहितो ने इस प्रकार श्रद्धा के पशु का मास खाने की योजना बनाई और लताओ से घिरी मनु की गुफा के द्वार पर पहुचे जहाँ मनु ध्यानमग्न हो कुछ सोच रहे थे।

टिप्पणी—यहाँ लताओ से अभिप्राय सोमलताओ से ग्रहण करना उचित होगा।

कर्मयज्ञ से .... कुसुम खिलेगा ।

शब्दार्थ—कर्म यज्ञ=विधि विधान द्वारा किया गया यज्ञ । सपनों का स्वर्ग=इच्छाओं का मधुर संसार । विपिन=वन । मानस=मन । कुसुम =फूल ।

व्याख्या—मनु अपनी गुफा के द्वार पर बैठे हुए यह सोच रहे थे कि यदि मैं विधि विधान से यज्ञ करूँगा तो मेरी सभी कल्पनाएँ सत्य हो जाएँगी और मुझे एक मधुर संसार की प्राप्ति होगी तथा मेरे मनरूपी वन से आशा के फूल खिल उठेंगे ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, सांगरूपक एवं श्लेष अलंकार की योजना हुई है ।

किन्तु बनेगा कौन ... ... और गया है ।

शब्दार्थ—पुरोहित=यज्ञ कराने वाला आचार्य । विधान=विधि, पद्धति ।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि मैं जो यज्ञ करना चाहता हूँ उसका पुरोहित कौन होगा और अब यह एक नवीन प्रश्न मेरे समक्ष उपस्थित है कि यज्ञ किस विधि से किया जाय क्योंकि मैं यह भूल गया हूँ कि किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कौन सा यज्ञ करना चाहिए ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मनु के अंत संघर्ष का सुन्दर निरूपण हुआ है ।

श्रद्धा .. .. मेरी आशा ।

शब्दार्थ—पुण्य प्राप्य=शुभ कर्मों द्वारा प्राप्त होने वाली । निर्जन= एकान्त ।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि श्रद्धा तो मुझे शुभ कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त हुई है और उसमें मेरी असंख्य इच्छाएँ केन्द्रित हैं अतः मैं उसे तो पुरोहित बना नहीं सकता । मनु का विचार है कि अब अपनी आशा पूर्ण करने के लिए अर्थात् यज्ञ में पुरोहित बनाने के लिए मैं इस एकान्त स्थान में किसे खोजूँ ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मनु की यह मनोभावना अंकित हुई है कि वे श्रद्धा को अपनी प्रेयसी समझते हैं और उसे अपनाना चाहते हैं ।

कहा असुर मित्रों ... . कष्ट सहे हो ।

शब्दार्थ—असुर मित्रों=किलात और आकुलि नामक असुर पुरोहित । यजन=यज्ञ ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिन समय मनु पुरोहित के न मिलने पर चिन्तित हो रहे थे उन समय किलात और आकुलि नामक असुर पुरोहित अपनी मुख मुद्रा अत्यत गभीर बनाए हुए उनके पास पहुँचे। उन्होंने मनु से कहा कि तुम जिन देवताओ के लिए यज्ञ करना चाहते हो उन्होंने हमें तुम्हारे पास भेजा है।

किलात और आकुलि मनु से कहने लगे कि क्या तुम वास्तव मे यज्ञ करना चाहते हो? यदि तुम्हारा यह विचार है तो तुम किसे खोज रहे हो? हम समझते हैं कि तुमने पुरोहित की खोज करने के लिए अनेक कष्ट सहन किये हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'सहे हो' प्रयोग व्याकरण सम्मत नही है।

इस जगती के · ··· ज्वाला की फरी।

शब्दार्थ—जगती=ससार, सम्पूर्ण सृष्टि। निशीथ=रात्रि। सवेरा=प्रभात। मित्र=सूर्य। वरुण=एक देवता। आलोक=प्रकाश। वेदी=यज्ञ का स्थान।

व्याख्या—किलात और आकुलि ने मनु से कहा कि हमे पुरोहित बनाकर तुम्हारे पास उन देवताओ ने भेजा है जो इस सम्पूर्ण सृष्टि के प्रतिनिधि हैं और जिनके नाम सूर्य तथा वरुण हैं और जिनसे दिन के प्रकाश तथा रात्रि के अधकार की प्राप्ति होती है और प्रकाश व अन्धकार जिनकी छाया है। किलात और आकुलि मनु से कह रहे हैं कि आज वे देवता ही हमारा मार्ग दर्शन करेंगे और हमे आशा है कि हम जिस पद्धति मे यज्ञ करावेंगे उसमे तुम्हारी आशाएँ पूरी होगी। इस प्रकार तुम अब चिन्ता छोडकर उठो और यज्ञवेदी के पास चलकर यज्ञ प्रारम्भ करो जिससे कि पुन यज्ञवेदी से अग्नि की लपटें उठें।

टिप्पणी—यहाँ यथासख्य या क्रम अलकार की योजना हुई है।

परम्परागत कर्मों की घड़ियाँ।

शब्दार्थ—परम्परागत=परम्परा से प्राप्त, रूढ़िगत। कर्मों=यज्ञो। लड़ियाँ=शृखला। जीवन साधन=जीवन व्यतीत होना। उलझी हैं=सलग्न हैं। सुख की घडी=आनन्द के क्षण।

व्याख्या—जब असुर पुरोहितों ने यज्ञ के लिए चिन्तामग्न मनु के पास जाकर कहा कि वे दोनो उनके यज्ञ मे पुरोहित बनने को तैयार हैं तब मनु को अत्यधिक आनन्द हुआ। वे सोचने लगे कि यज्ञ, पर्व, उत्सव आदि जिन कार्यों

को हम प्राचीन परम्परा के अनुसार करते चले आते हैं उनकी एक शृंखला सी वन जाती है। इस प्रकार हमारे जीवन मे कितने ही ऐसे आनदप्रद अवसर आते हैं जिनसे अपने जीवन को व्यतीत करने के लिए स्फूर्ति और शक्ति मिलती है।

जिनमे हैं ... . मादक स्मृतियाँ।

शब्दार्थ—कृतियाँ=कार्य। पुलक=रोमाच। मादक=मस्त कर देने वाली।

व्याख्या—मनु मन ही मन सोच रहे हैं कि उन परम्परागत यज्ञो एव उत्सवो आदि मे कितने ही ऐसे कार्य भी सम्पन्न होते है जिनसे हमे नवीन चेतना और स्फूर्ति मिलती है। इसी प्रकार इन कार्यों मे कभी-कभी कुछ ऐसी आनन्ददायक घटनाएँ भी हो जाती हैं जिनकी याद आते ही हमारा शरीर रोमाचित हो उठता है और हमे अत्यधिक सुख मिलता है।

साधारण से · · · ·· कटे उदासी।

शब्दार्थ—अतिरंजित=अधिक आकर्षक, अत्यधिक मनोरजन करने वाली। त्वरा तीव्रता।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि यज्ञ, पर्व एव उत्सव आदि कार्यों के सम्पन्न होने से हमारे जीवन की साधारण गति मे एक ऐसी आनन्दमयी तीव्रता उत्पन्न हो जाती है जो कि अत्यधिक मनोरजक होती है और वह मनुष्य के एकाकीपन को दूर कर देती है।

टिप्पणी—यहाँ 'त्वरा सी' मे उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

एक विशेष प्रकार · · · · ·· का लोभी।

शब्दार्थ—विशेष प्रकार=असाधारण या विलक्षण। कुतूहल=आश्चर्य। नूतनता=नवीनता। लोभी=इच्छुक।

व्याख्या—मनु सोच रहे है कि श्रद्धा मुझे वार-वार कर्म करने के लिए कहती है और वह जब मुझे यज्ञ करता हुआ देखेगी तब उसे आश्चर्य होगा। कवि का कहना है कि मनुष्य का मन तो हमेशा नवीनता की इच्छा किया करता है अत. मनु का मन भी प्रसन्नता मे खिल उठा क्योकि अनेक मन मे यज्ञ पूर्ण होने की नवीन आशा बलवती हो गयी थी।

यज्ञ समाप्त · ·· खड की माला।

शब्दार्थ—धधक रही थी=तीव्रता से जल रही थी। दारुण=भयकर। रुधिर=रक्त, खून। अस्थिखड=हड्डियो के टुकडे। माला=समूह।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु ने जो यज्ञ किया था वह अब समाप्त हो चुका था परन्तु यज्ञवेदी से अभी भी आग की लपटें उठ रही थी। साथ ही वहाँ का दृश्य भी बड़ा ही भयकर था और चारो ओर खून के छीटे पडे हुए थे तथा हड्डियो के टुकडों का समूह इधर-उधर बिखरा पडा था। यहाँ यह स्मरणीय है कि किलात और आकुलि ने यज्ञवेदी पर श्रद्धा द्वारा पालित पशु की बलि दी थी अत उसी पशु की हड्डियो के टुकडे और खून के छीटे यज्ञवेदी के पास दिखाई दे रहे थे।

टिप्पणी—(१) इस पद मे जिस मैत्रावरण यज्ञ के अतर्गत पशुबलि का उल्लेख किया गया है और उसका आधार वैदिक साहित्य मे विद्यमान है।

(२) इन पक्तियो मे वीभत्स रस की योजना हुई है।

वेदी की निर्मम .... कुत्सित प्राणी।

शब्दार्थ—निर्मम=निष्ठुरता से पूर्ण, कठोर। कातर=आर्त्त, व्याकुलता एव व्यथा से पूर्ण कराह। कुत्सित=घृणित, निंदनीय।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यज्ञ की समाप्ति के पश्चात् यज्ञ करने वाले मनु और असुर पुरोहित किलात एव आकुलि यज्ञवेदी के आस-पास बैठे हुए प्रसन्न दिखाई दे रहे थे परन्तु उनकी यह प्रसन्नता बडी कठोर थी क्योंकि उन्होने यज्ञवेदी पर श्रद्धा के निरीह पशु का वध किया था। कवि कहता है कि उस पशु की दर्द भरी आवाज अभी भी वहाँ गूँज रही थी और इन सब बातो से वहाँ का वातावरण बहुत ही अधिक घृणित जान पडता था। इस प्रकार किसी घृणास्पद व्यक्ति को देखने से जैसी घृणा होती है वैसी घृणा उस वातावरण से हो रही थी।

टिप्पणी—यहाँ 'वेदी की निर्मम प्रसन्नता' मे विशेषण विपर्यय अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

सोमपात्र भी .... सब जागे।

शब्दार्थ—सोमपात्र=सोमरस से पूर्ण प्याला। पुरोडाश=यज्ञ से बचा हुआ हव्य पदार्थ। सुप्तभाव=दबी हुई भावनाएँ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के समक्ष एक ओर सोम रस से पूर्ण प्याला रखा हुआ था और दूसरी ओर पुरोडाश अर्थात् यज्ञ से बचा हुआ पशु का मास भी रखा हुआ था परन्तु श्रद्धा वहाँ न थी। श्रद्धा को अपने समीप न देख मन मे दबी हुई भावनाएँ जाग्रत हुईं और मनु पुन चिन्ता मग्न हो गये।

जिसका था ... ... गरजने ऐंठी।

शब्दार्थ—उल्लास=प्रसन्नता, हर्ष। निरखना=देखना। दृप्त=प्रचण्ड, तीव्र। गरजने लगी=बलवती हो गयी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि अपने समीप श्रद्धा को न देख मनु सोचने लगे कि जिसे प्रसन्न देखने के लिए मैंने यह सारा कार्य किया था वही यदि मुझसे अलग जाकर बैठ गई तो मुझे फिर यह यज्ञ करने से क्या लाभ है? इस प्रकार सोचते-सोचते मनु के मन मे वासना की भावना बहुत बलवती हो गयी।

जिसमे जीवन .. . .. वह अपना है?

शब्दार्थ—सुन्दर मूर्ति बना है=साकार मूर्ति धारण किए है। हृदय खोलकर=सभी बातें बताकर।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि जिस श्रद्धा को मैं अपने जीवन के सम्पूर्ण संचित सुखो की साकार मूर्ति मानता हूँ वह न जाने क्यो मुझसे रूखा-रूखा व्यवहार करती है और मेरे साथ मनोविनोद मे भी भाग नहीं ले रही है। मनु सोचते हैं कि मैं श्रद्धा के सामने अपने हृदय की सभी बातें कैसे कह दूँ और उसे यह किस प्रकार कहूँ कि वह मेरी अपनी है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मनु के अन्तर्द्वन्द्व का सुन्दर निरूपण हुआ है।

वही प्रसन्न नहीं ... ... पथ जाना होगा।

शब्दार्थ—वही=श्रद्धा। सुनिहित=छिपा हुआ। वही पशु=श्रद्धा द्वारा पाला गया पशु। बाधक=विघ्न डालने वाला। रूठ गई=नाराज हो गई। पथ=रास्ता, उपाय।

व्याख्या—मनु विचार कर रहे हैं कि यज्ञोत्सव द्वारा मैं जिस श्रद्धा को प्रसन्न करना चाहता था। वह आज जब प्रसन्न नहीं है तब अवश्य इस बात मे कुछ भेद छिपा हुआ है। मनु का विचार है कि कहीं श्रद्धा अपने पशु के मरने से तो दुखी नहीं है और कहीं ऐसा तो नहीं है कि जो पशु जीवित रहकर मेरे और श्रद्धा के मिलन मे बाधक था वही पशु अब मर कर भी हमारे सुख मे विघ्न उपस्थित करेगा।

मनु सोच रहे हैं कि यदि श्रद्धा मुझसे नाराज हो गयी है तो फिर क्या मुझे उसे मनाना पड़ेगा या वह स्वयं मान जाएगी। मनु सोचते हैं कि मेरी समझ मे नहीं आ रहा कि मैं अब कौन-सा उपाय करूँ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे मनु के मन मे उठे हुए वासना के तूफान का सुन्दर चित्रण हुआ है।

पुरोडाश के साथ ... ... से भरने।

शब्दार्थ—रिक्त अश=खाली स्थान, यहाँ जीवन का अभाव। मादकता =नशा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा के रूखे व्यवहार के सम्बन्ध मे सोचते हुए मनु बहुत बेचैन हो गए और पुरोडाश नामक यज्ञ से बचे हुए मांस के हव्य पदार्थ को खाते हुए सोमरस पीने लगे। इस प्रकार वह अपने जीवन के अभावो को कुछ देर के लिए मादकता से भरने लगे अर्थात् वह सोमरस पीकर कुछ देर के लिए जीवन के अभावो की चिन्ता से मुक्ति पाने का उपाय करने लगे।

टिप्पणी—इस पद मे मनु का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है।

सध्या की धूसर ... शशि लेखा।

शब्दार्थ—धूसर=धुँधली, मलिन। छाया=अधकार। शैलशृंग= पर्वत की चोटी। अंकित=चित्रित। दिगत अम्बर=आकाश की दिशा। मलिन=मन्द। शशि लेखा=चन्द्रमा की किरणें।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि वह सध्या का समय था और उस पर्वत प्रदेश मे चारो ओर धुधला अधकार फैला हुआ था। साथ ही उस धुधले अधकार मे पर्वतो की चोटियाँ पक्तिबद्ध दिखाई दे रही थी और उन पर चन्द्रमा की धुधली किरणें पड रही थी जिन्हे देखकर यही जान पडता था कि मानों पर्वतो की चोटियाँ पक्तिबद्ध होकर चन्द्रमा को धारण किए हुए हों।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे साध्यकालीन धुधले अधकार का अत्यन्त मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है।

श्रद्धा अपनी .. मन बिलखाई।

शब्दार्थ—शयन गुहा=सोने के लिए बनाई हुई गुफा। विरक्ति बोझ= उदासीनता का भार। बिलखाई=व्याकुल, बेचैन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के आचरण से दुखी होकर श्रद्धा अपनी शयन गुफा मे लौट आयी। उसके हृदय पर उदासी का बोझ धरा था और वह मन ही मन बहुत बेचैन हो रही थी। यहाँ यह स्मरणीय है कि श्रद्धा

ने यज्ञ मे पशुवध के समय पशु की कातर वाणी सुनी होगी और उसके मन मे मनु के प्रति स्वाभाविक ही विरक्ति भावना उत्पन्न हो गयी होगी।

टिप्पणी—यहाँ 'विरक्ति बोझ' मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

सूखी काष्ठ संधि · · छलती थी।

शब्दार्थ—काष्ठ सधि=लकडियो के बीच। अनल शिखा=आग की लपट। आभा=प्रकाश। तामस=अधकार। छलती=धोखा देती, दूर करती।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा की उस शयन गुफा के अन्दर कुछ लकडियाँ जल रही थी जिनके बीच से आग की लपट ऊपर उठ रही थी और उसके प्रकाश से उस अधकारपूर्ण गुफा मे फैला अधकार कुछ कम हो रहा था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण अलकार है और जहत्स्वार्था या लक्षण-लक्षणा का प्रयोग भी हुआ है।

किंतु कभी बुझ · ·· फिर रोके।

शब्दार्थ—शीत=ठडी। उसे=आग की लपट।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा की उस शयन गुफा मे जब कभी ठडी वायु का झोका आता था तब आग की लपट बुझ जाती थी और कभी तो वह वायु के झोको के द्वारा स्वय ही जल उठती थी और फिर उसे कौन बुझाता अर्थात् आग की वह लपट जलने और बुझने मे स्वतत्र थी।

टिप्पणी—वस्तुत इस पद मे कवि ने आग की इस लपट के जलने और बुझने की क्रिया का वर्णन कर व्यजना द्वारा श्रद्धा की मनोदशा का चित्रण करना चाहा है। इस प्रकार कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा के हृदय मे कभी तो मनु के प्रति क्षोभ तीव्र हो उठता था और कभी वह आप ही आप शान्त हो जाता था।

कामायनी पडी ·· ··· को पाके।

शब्दार्थ—कामायनी=श्रद्धा। कोमल चर्म=भेडो या मेढो की मुलायम खाल। मृदु=कोमल, साधारण।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा अपनी शयन गुफा मे कोमल खाल बिछा कर लेटी हुई थी और उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो स्वय परिश्रम ही साधारण सा आलस्य प्राप्त कर यहाँ विश्राम कर रहा हो। कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि मनु के भयकर कर्म से दुखी श्रद्धा थकावट की प्रतिमा सी जान पडती थी।

टिप्पणी—यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार की योजना हुई है।

धीरे धीरे जगत विधु रथ में।

शब्दार्थ—ऋजु पथ=सीधा मार्ग। मृग=हिरन, हरिण। विधु =चन्द्रमा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि धीरे धीरे संसार अपने सीधे मार्ग पर चल रहा था अर्थात् सृष्टि के सभी कार्य साधारण से हो रहे थे। इस प्रकार धीरे धीरे रात्रि हो रही थी और आकाश मे तारे धीरे-धीरे इस तरह छिटक रहे थे जिस प्रकार उपवन मे एक-एक करके फूल खिलते हैं और चन्द्रमा के रथ को खींचने के लिए उसमे हिरन भी जुत गये थे अर्थात् चन्द्रमा भी धीरे-धीरे उदय हो रहा था।

टिप्पणी—यहाँ 'धीरे धीरे' पद मे पुनरुक्ति अलंकार है और खिलते तारे मे लक्षण-लक्षणा है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि सूरदास ने भी एक पद मे विरहिणी राधा की मनोदशा का चित्रण करते समय चन्द्रमा के रथ मे मृग के जुते होने की कल्पना की है, देखिए—

दूर करहु वीना कर धरिबो।
मोहे मृग नाही रथ हाँक्यो नाहिन होत चन्द को ढरिबो॥

स चल लटकाती वेदना वाली।

शब्दार्थ—निशीथिनी=रात। ज्योत्स्नाशाली=सफेद चाँदनी वाला। वेदना वाली सृष्टि=व्यथित प्राणी, दुखी जीव।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि रात्रि ने अपना सफेद चाँदनी वाला वस्त्र बिखेर दिया और चारो ओर वह चाँदनी फैल गयी जिसकी छाया मे दुखी संसार शांति प्राप्त करता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे कवि ने मानवीकरण अलंकार की सहायता से रात्रि की कल्पना एक ऐसी नायिका के रूप में की है जो श्वेत वस्त्र धारण किए हुए है।

उच्च शैल शिखरों मधुर उजाला।

शब्दार्थ—उच्च शैल=पर्वत की ऊँची चोटी। हँसती=प्रकाश फैलाती। प्रकृति चंचला बाला=प्रकृति रूपी चंचल युवती। धवल=सफेद, श्वेत। हँसी=चाँदनी। मधुर उजाला=आनन्ददायक प्रकाश।

व्याख्या—कवि का कहना है कि पर्वत की सभी ऊँची-ऊँची चोटियों पर चाँदनी फैल गयी थी जिसे देखकर ऐसा जान पड़ता था कि मानो इन चोटियों पर बैठी हुई किसी चचल युवती के समान यह प्रकृति सुन्दरी हँस रही हो और उसकी मधुर हँसी के कारण ही चाँदनी के समान यह आनन्ददायक उज्ज्वल प्रकाश चारो ओर फैला हुआ है।

टिप्पणी – (१) इस पद मे प्रकृति मे चेतना का आरोप कर उसे एक चेतन प्राणी के रूप मे अकित किया गया है।

(२) यहाँ मानवीकरण एव गम्योत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है और तीसरी पक्ति मे लक्षण-लक्षणा है।

जीवन की उद्दाम ·· ··· वाली पीड़ा।

शब्दार्थ—उद्दाम=तीव्र, जिसका सरलतापूर्वक दमन न किया जा सके। लालसा=कामना, इच्छा। व्रीडा=लज्जा। तीव्र उन्माद=उत्कट आवेश। मन मथने वाली=मन मे हलचल पैदा करने वाली।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की मानसिक दशा का वर्णन करते हुए कहता है कि श्रद्धा के हृदय मे जीवन की तीव्र कामना जाग्रत हो रही थी पर वह लज्जा के कारण अपनी मनोभावनाएँ प्रकट नही कर पाती थी। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा के मन मे यौवनकालीन दुर्दमनीय वासना उमड रही थी लेकिन लज्जा के कारण वह अपनी इच्छा प्रकट नही करती थी। कवि का कहना है कि श्रद्धा का सम्पूर्ण शरीर एक उत्कट आवेश से भरा हुआ था और मन में ऐसी पीडा उठ रही थी जो उसे मथे डालती थी अर्थात् मन मे तीव्र हलचल पैदा करती थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पीडित श्रद्धा का अत्यन्त मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है।

मधुर विरक्त ··· · ·· उस मन में।

शब्दार्थ—मधुर विरक्त=सुन्दर उदासीनता। हृदय गगन=हृदय रूपी आकाश। अतर्दाह=हृदय की जलन। स्नेह=प्रेम।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की मानसिक अवस्था का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जिस प्रकार आकाश मे चारों ओर से जल से पूर्ण बादल घिर आते हैं उसी प्रकार श्रद्धा के हृदय में भी पीडा के बादल घिरे हुए थे, जिनमे मधुर उदासीनता की भावना भी थी। यहाँ यह स्मरणीय है कि पशु वध के कारण

श्रद्धा के हृदय मे मनु के प्रति उदासीनता की भावना उत्पन्न हो गयी थी परन्तु उसके मन मे मनु के प्रति प्रेम भी था। इसीलिए कवि ने उसकी इस उदासीनता को मधुर माना है। कवि कह रहा है कि श्रद्धा के हृदय मे मनु के प्रति प्रेम भावना होते हुए भी उसका हृदय अन्दर ही अन्दर जल रहा था अर्थात् श्रद्धा का हृदय वेदना से पूर्ण था।

टिप्पणी—यहाँ 'हृदय गगन' मे रूपक अलकार है।

ये असहाय .. . . कटुता में।

शब्दार्थ—असहाय=विवशता से भरे हुए, वेसहारा। भीषणता=कठोरता, भयकर दृश्य की कल्पना। पात्र=अधिकारी। कुटिल=दुष्ट, दुष्टता। कटुता=कठोरता, खिन्नता।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा इस समय अपने को असहाय समझ रही थी और नेत्रो मे विवशता भरी होने के कारण उसे नीद नही आ रही थी। इस प्रकार वह कभी तो अपने नेत्र खोल देती थी और कभी अपने प्रिय पशु की हत्या के भीषण दृश्य की कल्पना मन मे उठते ही नेत्र मूंद लेती थी। उसके प्रेम का अधिकारी मनु आज प्रत्यक्ष रूप मे दुष्टता कर बैठा था और अब उसके मन मे मनु के प्रति खिन्नता उत्पन्न हो गयी थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा की मनोदशा का अत्यत स्वाभाविक एव मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।

कितना दुख . ... . सपना हो।

शब्दार्थ—चाहूँ=प्रेम करूँ। कुछ और=इच्छा के विरुद्ध। मानस चित्र =हृदय मे कल्पना का ससार। सपना हो=स्वप्न के समान झूठा।

व्याख्या—श्रद्धा अपने मन मे सोचती है कि यह कितने दुख की बात है कि मैं जिस मनु से प्रेम करती हूँ वह आज कुछ और बना हुआ है तथा मुझसे विमुख होकर हिंसा मे सुख अनुभव करता है। इस प्रकार मैंने अपने मन मे जो भविष्य का सुन्दर चित्र खीचा था वह केवल एक सुन्दर स्वप्न बनकर रह गया।

टिप्पणी—श्रद्धा के कथन का अभिप्राय यह है कि उसने यह मधुर कल्पना कर रखी थी कि उसके सहयोग से मनु सन्मार्ग पर चलकर एक नवीन ससार का निर्माण करेगा परन्तु आज उसने अपनी आँखो से यह भीषण दृश्य देखा कि मनु पशु-वध आदि भयकर कृत्यो मे फँस कर कुमार्गगामी हो गया है।

जाग उठी .. .. नीरव निर्जन मे।

शब्दार्थ—दारुण ज्वाला=भयकर दुख। मधुवन=सुन्दर वन, विशाल हृदय। नीरव निर्जन=शून्य नीरवता, शान्त एकांत।

व्याख्या—श्रद्धा मन ही मन विचार कर रही है कि जिस प्रकार वसत ऋतु मे खिले हुए किसी सुन्दर वन मे किसी तरह भयकर आग लग जाती है उसी प्रकार मधुर भावनाओ से पूर्ण मेरे हृदय मे आज मनु के हिंसक कर्म के कारण व्यथा की भयानक आग लग गयी है। साथ ही जिस प्रकार शून्य स्थान मे लगी हुई आग निरतर बढती जाती है उसी प्रकार मेरे अर्थात् श्रद्धा के हृदय की व्याकुलता रूपी आग भी बढ़ती जा रही है और उस शात एकात मे कोई भी व्यक्ति नही है जो उसकी इस व्यथा को शान्त करने मे सहायक सिद्ध होगा।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

यह अनन्त अवकाश ... ... अलस सवेरा।

शब्दार्थ=अनन्त=सीमाहीन, विस्तृत। अवकाश=अंतरिक्ष। नीड़=घोसला। व्यथित बसेरा=वेदना से पूर्ण निवास स्थान। सजग=जाग्रत। अलस सवेरा=आलस्य से पूर्ण जागरण काल।

व्याख्या—श्रद्धा सोचती है कि जो वेदना अतरिक्ष मे घोसला बनाकर रहती थी वह आज मेरी पलको मे निवास कर रही है। इस प्रकार वेदना की अधिकता के कारण मुझे अर्थात् श्रद्धा को नीद नही आ रही है और बराबर जागते रहने के कारण आँखें लाल हो गयी हैं तथा शरीर आलस्य से पूर्ण हो गया है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे सम्पूर्ण सृष्टि मे वेदना का प्रसार माना गया है और श्रद्धा को प्रात काल के चेतन नेत्रो मे भी दु ख की अधिकता दिखाई देती है तथा प्रभात भी शिथिल या आलस्य से पूर्ण जान पडता है।

(२) यहाँ उपमा एव विरोधाभास अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्रीमती महादेवी वर्मा ने भी सृष्टि मे वेदना के प्रसार का चित्रण करते हुए कहा है

निश्वासो का नीड, निशा का
बन जाता जब शयनागार
लुट जाते अभिराम छिन्न
मुक्तावलियो के बदनवार
तब बुझते तारो के नीरव नयनो का यह हाहाकार,
आँसू से लिख-लिख जाता है 'कितना अस्थिर है ससार!'

कांप रहे हैं • मलिन उदासी।

शब्दार्थ—विस्तृत=फैली हुई। मलिन उदासी=मलिनता से भरी हुई खिन्नता या अवसाद।

व्याख्या—अपनी गुफा मे लेटी हुई श्रद्धा सोच रही है कि मंद-मंद गति से चलने वाला पवन भी ऐसा प्रतीत होता है मानो व्यथा भार के कारण उसके चरण कांप रहे हो और चारो ओर नीरवता का ही राज्य है तथा वहाँ पर फैला हुआ अंधकार ऐसा जान पडता है मानो सम्पूर्ण अवसाद यही आकर एकत्र हो गया हो। इस प्रकार श्रद्धा का मन वेदना से भरा हुआ होने के कारण श्रद्धा को समस्त वातावरण ही वेदनाग्रस्त और शोकपूर्ण प्रतीत होता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मानवीकरण अलंकार एवं लक्षण-लक्षणा की योजना हुई है।

अन्तरतम की •• •••• •• • चढ़ती है।

शब्दार्थ—अन्तरतम की प्यास=अनुरागपूर्ण हृदय की प्यास। विकलता=बेचैनी, व्याकुलता। युग-युग की असफलता=समय-समय पर प्राप्त होने वाली विफलताएँ।

व्याख्या—श्रद्धा मन ही मन विचार कर रही है कि अनुरागपूर्ण हृदय की प्यास कितनी विचित्र होती है कि मन हमेशा प्रेमी को प्राप्त करने के लिए व्याकुल रहता है। साथ ही ज्यो-ज्यो उसे विफलताओं का सामना करना पडता है उसकी इच्छा उतनी ही तीव्र होती जाती है।

टिप्पणी—इस पद मे मानवीकरण एवं रूपक अलंकार की योजना हुई है।

विश्व विपुल ••• • • परम से।

शब्दार्थ—विपुल=अत्यधिक। आतंकग्रस्त=भयभीत। ताप विषम=भयंकर ज्वाला, तीव्र वेदना। घनी नीलिमा=आकाश का नीलापन। अन्तर्दाह=हृदय की आग, अंतर्जलन।

व्याख्या—श्रद्धा सोच रही है कि सारा संसार अपनी ही भयंकर ज्वाला से जल रहा है अर्थात् यह सम्पूर्ण सृष्टि अपनी भयंकर पीडा से दुःखी है और यह जो आकाश का नीलापन है वह इसी संसार के हृदय की आग मे उठे हुए धुएँ का ही सघन रूप है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे अपन्हुति अलंकार है।

उद्वेलित है .. .. जाती झुलसी।

शब्दार्थ—उद्वेलित=क्षुब्ध, अशान्त। उदधि=सागर, समुद्र। लोट रहीं =करवटें बदल रही हैं। चक्रवाल=पृथ्वी का मडलाकार घेरा। झुलसी= जलती हुई सी।

व्याख्या—श्रद्धा सोचती है कि यह सम्पूर्ण ससार वेदनामय है और समुद्र भी क्षुब्ध अर्थात् अशान्त दिखाई देता है तथा सागर की लहरें ऐसी जान पड़ती हैं मानो वे भी व्याकुलता से करवटें बदल रही हो। साथ ही पृथ्वी के मडलाकार घेरे की धुंधली रेखा भी वेदना की आग से झुलसी हुई जान पड़ती है।

टिप्पणी—(१) प्राय. अधिकाश व्याख्याकारो ने चक्रवाल का अर्थ चन्द्रमा के चारो ओर का वृत्त या परिवेश माना है परन्तु कोश ग्रथो मे कहीं भी चक्रवाल का यह अर्थ नही दिखाई देता। हाँ; चक्रवाल का अर्थ मण्डल या घेरा अवश्य मिलता है और हमने उसे पृथ्वी का मडलाकार घेरा माना है।

(२) इस पद मे मानवीकरण एव उत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

सघन धूम कुंडल ... . मणि की माला।

शब्दार्थ—सघन=घना। धूमकुंडल धुएँ का चक्र, अधकार का समूह। तिमिर फणी=अधकार रूपी साँप। मणि की माला=मणियों का समूह, तारा समूह।

व्याख्या—मनु के क्रूर कृत्यो से क्षुब्ध श्रद्धा अपनी शयन गुफा मे करवटें बदलते हुए सोचती है कि घने अधकार के रूप में चारों ओर फैले हुए इस सघन धुँए के चक्र मे तारो के रूप मे दिखाई देने वाली यह व्यथा की आग नाचती हुई जान पडती है और उसे देख कर यही जान पडता है कि मानो अंधकार एक बहुत बडा काला सर्प है जो व्यथा की तेज अग्नि के सदृश्य इन तारों की अनेक मणियाँ धारण किये हुए बैठा है।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव वस्तूत्प्रेक्षा आदि अलकार प्रयुक्त हुए हैं।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने आँसू नामक काव्यकृति मे तारो को हृदय की आग की चिनगारी कहा है—

> बस गई एक बस्ती है स्मृतियों की इसी हृदय मे,
> नक्षत्र लोक फैला है जैसे इस नील निलय मे।
> ये सब स्फुलिंग हैं मेरी इस ज्वालामयी जलन के,
> कुछ शेष चिह्न है केवल मेरे उस महा मिलन के।

जगती तल का • •••• •••• दारुण निर्ममता ।

शब्दार्थ—जगती तल=ससार । क्रदन=विलाप रुदन, रोना । विषमयी =जहरीली दु खदायी । अतरग छल=हृदय का कपट । दारुण=भयकर । निर्ममता=निष्ठुरता- निर्दयता ।

व्याख्या—श्रद्धा सोच रही है कि इस दु खमयी असमानता के कारण ही यह ससार हमेशा विलाप करता रहता है । सच तो यह है कि मनुष्य बाहर से अच्छा या सदाचारी जान पडता है पर उसके मन मे छल भरा हुआ है और हृदय मे इस कपट के रहने से ही वह दूसरो के साथ निष्ठुरता का व्यवहार करता है और उसका यह व्यवहार हृदय को भारी आघात पहुँचाता है । इस प्रकार श्रद्धा ने यहाँ यह सकेत करना चाहा है कि उसे यह आशा न थी कि मनु पशुवध आदि हिंसक कृत्यो को अपनावेंगे ।

टिप्पणी—कवि ने इन पक्तियो मे श्रद्धा के माध्यम से ससार के कटु सत्य का चित्रण किया है ।

जीवन के ये • • • •••• आँखों की क्रीडा ।

शब्दार्थ—निष्ठुर दशन=निर्दयता या कठोरतापूर्वक किये गये कार्य, कठोर अपराध । आतुर पीडा=व्याकुल कर देने वाली वेदना या व्यथा । कलुष चक्र =पाप रूपी चक्र, पाप कर्म । आँखो की क्रीडा=आँखो के लिए कौतुक या खेल बनकर ।

व्याख्या—अपनी शयन गुफा मे करवटें बदलते हुए श्रद्धा सोच रही है कि इस जगत मे व्यक्ति को कभी-कभी अपने सगे-सम्बन्धियो या घनिष्ठ परिचितो से इस प्रकार के व्यवहार सहन करने पडते हैं जिनका आघात सर्प या बिच्छू के डक के सदृश्य हृदय को कचोटता रहता है । श्रद्धा सोच रही है कि आज वे ही पीडाएँ पाप का रूप धारण कर मेरे नेत्रो के समक्ष खेल बनकर इस प्रकार नाच रही हैं जैसे कोई घूमता हुआ चक्र दिखाई देता है और नेत्रो के लिए खेल बन जाता है ।

टिप्पणी—यहाँ 'कलुष चक्र' और 'बन आँखो की क्रीडा' मे रूपक तथा 'कलुष चक्र सी' मे उपमा अलकार की योजना हुई है ।

स्खलन चेतना •••• •••• • • रहते हैं ।

शब्दार्थ—स्खलन=फिसलना, असावधानी । चेतना का कौशल=बुद्धि की कुशलता । विषाद=दु ख, शोक । नद=बडी नदी ।

व्याख्या—श्रद्धा सोचती है कि बुद्धि की कुशलता के फिसल जाने को ही भूल कहते है अर्थात् जब हमारी बुद्धि अपनी कुशलता प्रकट करने मे किसी प्रकार की असावधानी करती है तब उसे भूल कहा जाता है। साथ ही यह भूल बूंद के समान छोटी होते हुए भी उसमे दु ख की बडी-बडी नदियाँ उमडा करती हैं अर्थात् एक ही भूल से मनुष्य को जीवन मे अनेक दु ख सहन करने पडते हैं।

टिप्पणी—इस पद मे परम्परित रूपक एव विरोधाभास अलकार की योजना हुई है।

आह वही .... तम की छाया।

शब्दार्थ—जगत की दुर्बलता की माया=ससार की कमजोरियो को प्रकट करने वाला। धरणी=धरती, पृथ्वी। वर्जित=निषिद्ध, त्यागने योग्य। मादकता=नशा। सचित तम=सघन अधकार।

व्याख्या—श्रद्धा सोच रही है कि आज पशु का वध कर मनु ने वही अपराध किया है, जिसे ससार मे मनुष्य की कमजोरियों को प्रकट करने वाला माना जाता है और जिसमे एक ऐसा नशा भरा हुआ है जिसे पीकर इस धरती पर सभी व्यक्ति मतवाले हो जाते हैं और उन्हें यह ध्यान नही रहता कि क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए। इस प्रकार यह भूल द्वारा किया गया अपराध सघन अधकार की सचित छाया के समान होता है क्योकि जिस प्रकार सघन अन्धकार मे मनुष्य को कुछ भी नही दिखाई देता उसी प्रकार अपराध करने वाले व्यक्ति को भी संसार मे भले बुरे का ज्ञान नही होता और वह कठोरतापूर्वक मनमाने काम करता है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है।

नील गरल .... शांति पिये हो।

शब्दार्थ—गरल=विष, जहर। कपाल=खप्पर। निमीलित=टिमटिमाती, धुँधले।

व्याख्या—अपनी शयन-गुफा मे करवटें बदलती हुई श्रद्धा की दृष्टि आकाश की ओर जाती है और वह आकाश की कल्पना शिव के रूप मे करते हुए कहती है कि हे देव, तुमने नीले जहर से भरा हुआ यह चन्द्रमा रूपी खप्पर हाथ मे पकडा हुआ है और तुमने अपने नेत्र बन्द कर रखे हैं परन्तु जिस प्रकार धुँधले तारो से रात्रि छिटक रही है उसी प्रकार तुम्हारे बन्द नेत्रों मे भी शाति का सागर लहरा रहा है।

'टिप्पणी—यहाँ सागरूपक अलकार की योजना हुई है ।

अखिल विश्व .... तुम्हें किधर से ?

शब्दार्थ—अखिल=सम्पूर्ण, समस्त । विष=जहर, कालुष्य, पाप ।

व्याख्या—कामायनी अर्थात् श्रद्धा अपनी, शयन गुफा मे करवटें बदलती हुई मन ही मन विचार मग्न जान पडती है और वह आकाश की कल्पना शिव के रूप मे करते हुए कहती है कि हे प्रभु , तुम्हारे सम्बन्ध मे यह प्रसिद्ध है कि तुम सम्पूर्ण ससार का जहर पीते हो और यदि तुम उसे न पियो तो फिर यह ससार कैसे जीवित रह सकता है और उसका विकास कैसे हो सकता है ? आश्चर्य तो इस बात से है कि इतना भयकर जहर पीने के पश्चात भी तुम शात ही रहते हो और समझ मे नही आता कि इतनी अखड शीतलता तुम्हे कहाँ से प्राप्त होती है ।

टिप्पणी—यहाँ सागरूपक एव विरोधाभास अलकार की योजना हुई है ।

अचल अनन्त . .. ये तारे ।

शब्दार्थ—अचल=शात । अनन्त लहरो पर=विस्तृत आकाशरूपी सागर मे दिखाई देने वाली नीलिमारूपी नीली लहरें । श्रमकण=पसीने की बूंद ।

व्याख्या—श्रद्धा आकाशरूपी देवता को सम्बोधित करते हुए कह रही है कि हे प्रभु , तुम सर्वत्र फैले हुए विस्तृत नीले आकाश की उमडती हुई नीली लहरो के आसन पर सुदृढ समाधि लगाए बैठे हो । हे प्रभु , जिसके शरीर से तारे झरती हुई पसीने की बूंदो के समान प्रतीत होते है , ऐसे देवता तुम कौन हो ?

व्याख्या—यहाँ 'अनन्त नील लहरो' मे रूपकातिशयोक्ति और 'श्रमकण से ये तारे' मे उपमा अलकार है ।

इन चरणों मे नित्य भिखारी ।

शब्दार्थ—कर्म कुसुम=कर्मरूपी फूल । छायापथ=आकाश गगा । दुर्लभ=कठिनाई से प्राप्त होने वाली । लोक पार्थक=ग्रह या तारे रूपी पार्थक ।

व्याख्या—श्रद्धा आकाश रूपी देवता को सम्बोधित करते हुए कहती है कि हे प्रभु , जो अनेक तारे रूपी पथिक, आकाश गगा के मार्ग से चलकर, तुम्हारे चरणो मे अपने कर्म रूपी फूलो की अजलि चढाने आ रहे हैं वे बड़ी

दूर से पैदल आने के कारण थक जाते है पर क्या वे तुम्हारे चरणो पर कर्म रूपी फूलो की अजलि चढा पाते है। यहाँ यह स्मरणीय है कि यात्री बडी दूर-दूर से भगवान के दर्शन करने जाते हैं। इस प्रकार श्रद्धा यहाँ आकाश के तारो को इन्ही यात्रियो के रूप मे देखती है।

श्रद्धा का कहना है कि इन तारारूपी पथिको को आकाशरूपी देवता के चरणो मे पुष्पाजलि चढाने का सौभाग्य नही प्राप्त होता क्योंकि उन्हें आकाश रूपी देवता की स्वीकृति इतनी दुर्लभ हो गयी है कि बेचारे उसी प्रकार रास्ते मे ही निराश करके लौटा दिये जाते है जिस प्रकार प्रतिदिन भीख माँगने वाला भिखारी लौटा दिया जाता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे सागरूपक, रूपकातिशयोक्ति एव उदाहरण अलकार की योजना हुई है।

प्रखर विनाशशील .... उसकी काया।

शब्दार्थ—प्रखर=तीव्र, तेज, उग्र। विनाशशील=नाश मे तत्पर। नर्तन=नृत्य, चक्र। विपुल=अखिल। माया=रहस्य, शक्ति। काया= शरीर।

व्याख्या—श्रद्धा सोच रही है कि इस सृष्टि का यही रहस्य है कि यहाँ हमेशा विनाश और निर्माण का चक्र चलता रहता है और यदि एक वस्तु नष्ट हो जाती है तो शीघ्र उसके स्थान मे नवीन वस्तु प्रकट हो जाती है। अतएव सृष्टि मे तीव्र गति से निर्माण करने वाली माया रूपी शक्ति प्रति क्षण नवीन रूप धारण कर इस ब्रह्माड मे नवीन पदार्थों का निर्माण कर रही है।

टिप्पणी—वस्तुत इस पद मे कवि प्रसाद ने शैव दर्शन के अनुसार ही माया को सृष्टि का निर्माण करने वाली शक्ति माना है।

सदा पूर्णता .... मरते क्या ?

शब्दार्थ—पूर्णता=जीवन का वास्तविक स्वरूप। यौवन=जवानी, जीवन की चरम सीमा। जी-जीकर=बार-बार जन्म लेकर।

व्याख्या—श्रद्धा सोचती है कि क्या भूल का भी जीवन मे कोई महत्व है और इस ससार मे सभी व्यक्ति क्या पूर्णता प्राप्त करने के लिए ही भूल करते हैं ? इसी प्रकार क्या जीवन मे पूर्णता अर्थात् यौवन को प्राप्त करने के लिए ही इस सृष्टि मे मनुष्य बार-बार जन्म लेता और मरता है ?

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने आवागमन के चक्र की ओर संकेत किया है।

यह व्यापार ... ... हँसता क्या ?

शब्दार्थ—यह व्यापार=जन्म मरण का कार्य। महा गतिशील=अत्यंत तीव्र गति से चलने वाला। बसना=विश्राम लेता, रुकना। स्थिर मंगल=स्थायी कल्याण की भावना।

व्याख्या—अपनी शयनगुफा मे करवटें बदलती हुई श्रद्धा का ध्यान आवागमन के चक्र की ओर भी जाता है और वह सोचती है कि क्या संसार का यह जन्म-मरण का व्यापार हमेशा इसी प्रकार तीव्र गति से चलता रहेगा और वह कभी भी विश्राम नहीं लेगा अर्थात् वह क्या कभी शांत नहीं होगा ? श्रद्धा सोचती है कि क्या क्षण-क्षण पर नाशवान इस सृष्टि में छिपी हुई कल्याण की भावना चुपचाप हँसती रहती है अर्थात् क्या ये क्षणिक विनाश इस बात के द्योतक हैं कि एक दिन विनाश का कार्य रुक जाएगा और सभी प्राणी स्थायी कल्याण प्राप्त करेंगे।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलंकार की योजना हुई है।

यह विराग सम्बन्ध ... ... रही निर्ममता।

शब्दार्थ—विराग सम्बन्ध=उदासीनता का सम्बन्ध। निर्ममता=निष्ठुरता, कठोरता।

व्याख्या—श्रद्धा सोच रही है कि क्या इसे ही मानवता या मानवधर्म कहते हैं कि मनुष्य के हृदय में दूसरों के प्रति स्नेह नहीं है और वे परस्पर उदासीन होकर जीवन व्यतीत करते हैं तथा अन्य प्राणियों के साथ निष्ठुरता का व्यवहार करते हैं ? इस प्रकार क्या अब एक प्राणी के मन में दूसरे प्राणियों के लिए केवल निष्ठुरता ही बची है ?

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि प्रसाद का मानवतावादी दृष्टिकोण अभिव्यक्त हुआ है और श्रद्धा ने यहाँ मनु द्वारा पशु की बलि दिए जाने वाली घटना की ओर संकेत किया है।

जीवन का ... ... कसता क्यों ?

शब्दार्थ—रोदन=रोना, विलाप। विश्राम=विराम, रुकावट। परिकर=कमर बन्द।

व्याख्या—श्रद्धा सोचती है कि इस ससार मे न जानें ऐसा क्यो होता हैं कि एक के जीवन का सतोष दूसरे का दु ख बन जाता है और एक के सुख के लिए दूसरा दु ख सहता है अर्थात् मनुष्य को केवल अपने ही सुख की चिन्ता रहती है और वह अपने सुख के लिए दूसरो को रुलाने मे सकोच नही करता। श्रद्धा का विचार है कि हमारे जीवन की प्रत्येक रुकावट क्यो प्रगति को वैसे ही बांधे रखती है जसे कमरबन्द कमर को कसे रहता है अर्थात् कोई भी व्यक्ति जब जरा सी उन्नति करने का प्रयत्न करता है तभी उसके रास्ते मे रुकावटें आ जाती है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे श्रद्धा ने मनु द्वारा की गयी पशुबलि की आलोचना की है।

(२) यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

दुर्व्यवहार एक • ••• ••• बना पावेगा।

शब्दार्थ—दुर्व्यवहार=बुरा बर्ताव। गरल=विष, जहर, बुरा व्यवहार। अमृत=सद् व्यवहार, सुधा।

व्याख्या—अपनी शयन गुफा मे करवटे बदलते हुए श्रद्धा सोच रही है कि इस सृष्टि का कोई भी प्राणी, चाहे वह पशु-पक्षी हो या मनुष्य हो, भला किसी के बुरे बर्ताव को कसे भूल जाएगा क्योकि बुरे व्यवहार के कारण जो पीडा होती है वह आजीवन याद रहती है। श्रद्धा सोचती है कि क्या इस दुर्व्यवहार को दूर करने का कोई उपाय नही है और ऐसा कौन सा उपाय है जो जहर को अमृत मे बदल देगा ? कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार जहर को अमृत बनाना असभव है उसी प्रकार दुर्व्यवहार को भी सद्व्यवहार के रूप मे बदलना सर्वथा असभव ही जान पडता है।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

जाग उठी • • ••• •••• अब सकता।

शब्दार्थ—तरल वासना=तीव्र वासना। मादकता=सोमरस का नशा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के हृदय मे तीव्र वासना जाग उठी और सोमरस का पान करने के कारण वे नशे मे भी चूर थे। ऐसी दशा मे भला अब मनु को श्रद्धा के समीप आने से कौन रोक सकता था ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि यज्ञस्थल से उठकर मनु अब श्रद्धा की शयन गुफा के समीप पहुँच गए।

खुले मसृण .... .. लहरों-सा तिरता।

शब्दार्थ—मसृण=मृदुल, कोमल। भुजमूल=बगल, कंधे। आमन्त्रण=निमन्त्रण, पास आने का बुलावा। उन्नत=उठे हुए। वक्ष=उरोज, स्तन। आलिंगन सुख=मिलन का आनन्द। तिरता=तैरता, बहता।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अपनी शयन गुफा मे लेटी हुई श्रद्धा के कंधे खुले हुए थे और उनसे मनु के समीप आने का निमन्त्रण सा मिलता था अर्थात् श्रद्धा के आकर्षक एवम् नग्न कंधो को देखकर मनु की इच्छा श्रद्धा के समीप पहुँचने की ओर भी अधिक बढ गयी। इसी प्रकार श्रद्धा के उठे हुए उरोज देखकर मनु के मन मे श्रद्धा का आलिंगन कर सुख प्राप्त करने की इच्छा अनायास जाग्रत हो रही थी। कवि का कहना है कि श्रद्धा के इन उरोजो पर आलिंगन का सुख उसी प्रकार तैर रहा था जिस प्रकार कोई पदार्थ लहरो के ऊपर तैरता दिखाई देता है और उसे थोडा आगे बढकर प्राप्त किया जा सकता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे मानवीकरण एव उपमा अलकार की योजना हुई है।

नीचा हो उठता .... हासो मे।

शब्दार्थ—निश्वास=साँसें। जीवन=जिन्दगी, जल। ज्वार=चन्द्रमा के आकर्षण से समुद्र का जल ऊपर उठना। हिमकर=चन्द्रमा मुख। हास=चाँदनी, मुख की उज्ज्वलता।

व्याख्या—कवि कहता है कि अपनी शयन गुफा मैं लेटी हुई श्रद्धा जब साँस लेती थी तब उसके उठे हुए उरोज कुछ ऊपर उठ जाते थे। यह देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि जिस प्रकार मानो चन्द्रमा की चाँदनी से आकर्पित हो समुद्र मे ज्वार आता है अर्थात् समुद्र का जल ऊपर की ओर उठता है उसी प्रकार श्रद्धा चन्द्र मुख के प्रकाश मे उसके उरोज के ऊँचा-नीचा होने से ऐसा जान पडता था कि मानो उसके जीवन मे भी यौवन की बाढ आ गयी है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे रूपकातिशयोक्ति, वस्तूत्प्रेक्षा एव श्लेष अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—जान कीट्स ने भी अपनी एक कविता मे साँस की बढ़ी गति का वर्णन करते हुए कहा है—

Pillow upon my fair love's ripening breast
Thus to feel for ever its swift rise and fall

इसी प्रकार बायरन ने भी लिखा है—

She walks in beauty like the night
Of cloudless climes and starry skies.

जागृत था .... निशा सी नारी ।

शब्दार्थ—जागृत=जगा हुआ, खिला हुआ । रूप चन्द्रिका=सौंदर्य रूपी चाँदनी । निशा=रात्रि ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यद्यपि कोमल अगों वाली श्रद्धा सो रही थी पर उसका अनुपम सौन्दर्य खिल रहा था और जिस प्रकार चाँदनी के कारण रात्रि उज्ज्वल दिखाई देती है उसी प्रकार अपने अद्भुत सौन्दर्य की छटा से वह युवा नारी भी उज्ज्वल दिखाई दे रही थी ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में पूर्णोपमा, रूपक एवं विरोधाभास अलकार की योजना हुई है ।

वे मासल परमाणु .... उलझे जाते ।

शब्दार्थ—मासल=स्वस्थ, मास से युक्त । विद्युत=बिजली । अलक=घुंघराले बाल ।

व्याख्या=कवि श्रद्धा के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहता है कि श्रद्धा के सुन्दर एवं स्वस्थ शरीर से उसी प्रकार बिजली के समान प्रकाश निकल रहा था, जिस प्रकार परमाणुओं की किरणों से प्रकाश निकलता है । इस प्रकाश से सम्पूर्ण गुफा में एक प्रकार की सुन्दरता सी आ गयी थी और श्रद्धा के सुन्दर घुंघराले बालों में मनु का मन उसी प्रकार उलझ गया था जिस प्रकार जाल की डोरी में पदार्थों के कण उलझ जाते हैं ।

टिप्पणी—यहाँ उपमा, रूपक एवं पुनरुक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

विगत विचारों ... . रही पिरोती ।

शब्दार्थ—विगत विचार=मनु द्वारा किए गए पशु वध के सम्बन्ध में उठने वाले थोड़ी देर पहले के विचार श्रम-सीकर=पसीने की बूँदें ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि कुछ देर पूर्व श्रद्धा मनु द्वारा किए गए पशुवध सम्बन्धी कठोर एवं निष्ठुर कार्य के सम्बन्ध में सोच रही थी अतः उसके मडल पर जो पसीने की बूँदें आ गयी थीं वे मोतियों के समान चमक रही थी । कवि कहता है कि श्रद्धा के मुख मडल पर करुणा का भाव भी झलक रहा था और ऐसा जान पडता था कि मानो करुण कल्पना ही पसीने

को बूंदों के मोतियों को पिरो रही हो। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा के मुख मण्डल पर झलकने वाले पसीने की बूंदों के मूल में विश्वप्रेम की भावना ही थी।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एवं गम्योत्प्रेक्षा अलंकार की योजना हुई है।

छूते थे मनु .... थी फैली।

शब्दार्थ—कंटकित=रोमांचित। वेली=लता, यहाँ श्रद्धा के शरीर से अभिप्राय है। अंग लता=शरीर रूपी लता।

व्याख्या=कवि कह रहा है कि मनु सोती हुई श्रद्धा के समीप पहुँचकर उसके शरीर को स्पर्श करने लगे और उनके इस स्पर्श से श्रद्धा का शरीरलता के समान रोमांचित हो रहा था। कवि का कहना है कि श्रद्धा का सुन्दर शरीरलता के समान जान पड़ता था और उसके उस शरीर में गहरी व्यथा की लहरें भी उठ रही थीं।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में रूपक, उपमा एवं रूपकातिशयोक्ति अलंकार की योजना हुई है और लक्षण-लक्षणा का प्रयोग भी हुआ है।

वह पागल सुख ... . तना था।

शब्दार्थ—वह पागल सुख=मनुष्य को मतवाला कर देने वाला भोग विलास का सुख। विराट=महान। अंधकार=अंधेरा अज्ञान। प्रकाश=उजाला, सुख का ज्ञान। वितान=चंदोवा, शामियाना।

व्याख्या—कवि कहता है कि आज मनु के लिए भोग विलास का सुख ही संसार की सबसे महान वस्तु थी और श्रद्धा का स्पर्श करते ही उनका मन इस सुख को पाने के लिए मतवाला हो उठा अतएव उनका हृदय अज्ञानता के अंधकार से भर गया तथा उस गुफा में हल्का प्रकाश और हल्का अंधकार इस प्रकार फैल रहा था मानो रात्रि के अंधकार में सफेद चादर का शामियाना तान दिया गया हो।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एवं दृष्टान्त अलंकार की योजना हुई है।

कामायनी जगी ... ... बिगड़ता बनता।

शब्दार्थ—चेतनता=सुध-बुध। मनोभाव=मन की भावनाएँ। आकार=स्वरूप। बिगड़ता बनता=थोड़ी-थोड़ी देर में बदल जाता।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के स्पर्श से श्रद्धा की नींद कुछ कुछ खुल गई परन्तु उस समय उसकी चेतना कुछ कार्य नहीं कर रही थी और वह

बेसुध सी हो रही थी। कवि का कहना है कि श्रद्धा के मन की भावनाएँ अपने आप ही उसके मुख पर कभी तो झलकने लगतीं और कभी आप ही आप लुप्त हो जातीं। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा के मन में उठते क्रोध एवं करुणा की भावनाएँ श्रद्धा की मुखाकृति से सहज ही स्पष्ट हो जाती थीं।

टिप्पणी—इस पद में श्रद्धा की आंतरिक भावनाओं का निरूपण पूर्णतया मनोवैज्ञानिक ही कहा जाएगा।

जिसके हृदय .... कुछ नाता है।

शब्दार्थ—हृदय सदा समीप होना=प्रेम करना। दूर जाना=प्रेम न करना। नाता=सम्बन्ध।

व्याख्या—इस संसार में बहुधा ऐसा होता है कि हम जिसे बहुत प्रेम करते हैं वह हमसे दूर भागता है और हम अपना क्रोध उसी पर प्रकट करते हैं जिससे हमारा कुछ सम्बन्ध होता है। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा जिस मनु को अपने हृदय के समीप समझती थी और प्रेम करती थी वही मनु पशुवध आदि क्रूर कर्मों से अब श्रद्धा से दूर भागने का प्रयत्न कर रहे थे अर्थात् उसके विचारों से दूर होते जा रहे थे। साथ ही श्रद्धा के मन में मनु के क्रूर कार्यों के प्रति इसीलिए क्रोध की भावना उमड़ रही थी क्योंकि वह मनु के साथ स्नेह सम्बन्ध मानती थी।

टिप्पणी—इस पद में अर्थान्तरन्यास अलंकार की योजना हुई है।

प्रिय को ठुकरा .... लौटा देती।

शब्दार्थ—माया=ममता। प्रणय शिला=प्रेम रूपी पर्वत शिला। उलझा लेती=नहीं छोड़ती। प्रत्यावर्तन=लौटकर आना, वापिस आना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यह भी सत्य है कि हम जिसे हृदय से प्रेम करते हैं, उसे यदि किसी कारणवश कभी क्रोध के वशीभूत हो ठुकरा देते हैं तो भी हमारा मन प्रेम की एक ऐसी मोहक शक्ति से बँधा रहता है कि उस व्यक्ति को हमेशा के लिए त्यागने का मन नहीं होता अर्थात् हमारा मन उससे उलझा रहता है। साथ ही जिस प्रकार आवाज पर्वत शिलाओं से टकराकर वापिस लौटती है उसी प्रकार हमारा हृदय भी प्रियपात्र से क्रोधित होने पर भी उसकी ओर उन्मुख होता है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में कवि ने यह संकेत करना चाहा है कि

मनु के पशुवध आदि क्रूर कृत्यो से श्रद्धा उन पर रुष्ट अवश्य हो गयी थी पर उसके हृदय मे मनु के प्रति प्रमभावना विद्यमान थी ।

(२) यहाँ 'प्रणय शिला' मे रूपक अलकार है ।

जलदागम मारुत .. मे ले ली ।

शब्दार्थ—जलदागम मारुत=वर्षाकालीन पवन । कम्पित=काँपती हुई । पल्लव=कोमल पत्ते । सदृश=समान । कर=हाथ ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब मनु ने श्रद्धा के शरीर का स्पर्श किया तब श्रद्धा का शरीर रोमाचित हो उठा और सम्पूण शरीर काँपने लगा । मनु ने धीरे से श्रद्धा की हथेली अपने हाथ मे ले ली और मनु का स्पर्श पाकर उसकी हथेली इस प्रकार काँप रही थी जिस प्रकार वर्षाकालीन शीतल पवन चलने पर कोमल पत्ते काँपते हुए दिखाई देते हैं ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पूर्णोपमा अलकार की योजना हुई है ।

अनुनय वाणी .. माया ।

शब्दार्थ—अनुनय=विनय । उपालम्भ=उलाहना । मानवती=मानिनी ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि वासना के नशे मे चूर होने के कारण मनु की वाणी मे विनय की भावना झलक रही थी परन्तु उनके नेत्रो मे उलाहना के सकेत दिखाई देते थे । इस प्रकार मनु ने श्रद्धा की हथेली अपने हाथ मे लेकर कहा कि हे मानिनी, तुमने आज इस तरह रूठकर यह कैसी माया रची है ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु की मनुहार और उनके उपालम्भयुक्त वचनो से श्रद्धा के प्रति उनकी वासना मिश्रित प्रणय भावना के सकेत स्पष्ट दिखाई देते हैं ।

स्वर्ग बनाया गान सुनाओ ।

शब्दार्थ—स्वर्ग=अक्षय आनन्द । अतीत=बीता हुआ समय । नूतन=नवीन ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि हे अप्सरे, मैंने इस धरती पर जो स्वर्गीय सुख प्राप्त करने की कल्पना की है उसे नष्ट करने का प्रयत्न मत करो और जिस प्रकार तुम पहले मेरे साथ प्रेमपूर्ण बातें करती थी उसी प्रकार पुन प्रेम के नवीन गीत सुनाओ जिससे कि मेरे व्यथित हृदय को शाति मिले ।

टिप्पणी—इस पद मे 'स्वर्ग' शब्द मे लक्षण लक्षणा है और वह अप्सरा' शब्द मे परिकर अलकार की योजना हुई है ।

इस निर्जन मे ... · · आँखें मीचे।

शब्दार्थ—निर्जन=सुनसान, एकान्त स्थान। ज्योत्स्ना=चाँदनी। पुलकित=प्रसन्न, खिला हुआ। विधु त नभ=चन्द्रमा से युक्त आकाश।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि इस एकान्त प्रदेश और चन्द्रमायुक्त आकाश के नीचे मेरे और तुम्हारे सिवाय कौन है अत तुम इस तरह आँखें बन्द करके मत लेटी रहो। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि वह प्राकृतिक वातावरण बहुत रम्य है और प्रणय के लिए पूर्णतया उपयुक्त है अत श्रद्धा को चाहिए कि वह इस प्रकार अपनी गुफा मे न लेटी रहे बल्कि उठकर उनके साथ प्रेमालाप करे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे प्राकृतिक वातावरण का पृष्ठभूमि के रूप मे चित्रण किया गया है।

आकर्षण से भरा ... . वासना-धारा।

शब्दार्थ—भोग्य=भोगने के लिए। कूल=किनारे।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि यह ससार आकर्षण से पूर्ण है और परमात्मा ने हमारे भोगने के लिए ही इस ससार का निर्माण किया है। मनु का कहना है कि हे प्रिये, जिस प्रकार दो किनारो के बीच नदी बहती है, उसी प्रकार हम दोनो के मध्य वासना की धारा बहती रहे।

टिप्पणी—यहाँ परम्परित रूपक अलकार की योजना हुई है।

श्रम की · ... . बरबस बहता है।

शब्दार्थ—श्रम=थकावट। अभाव=कमी। जगती=ससार। भीषण चेतनता=भयकरता से पूर्ण ज्ञान। अनतता=असीमता। दो बूद=सोमरस की बूंदो से अभिप्राय है। रस=आनद की धारा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि यह ससार अनेक प्रकार की थकावट एवं कमियो से भरा हुआ है और यही कारण हे कि मनुष्य का मन हमेशा व्याकुल रहता है। इसलिए हमे कोई ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे हम इन सभी भीषणताओ को भूलकर सुखी हो।

मनु का कहना है कि इसके लिए केवल एक यही उपाय है कि सोमरस के दो घूंट पी लेने चाहिए क्योकि क्योकि इसके पीते ही व्यक्ति ससार की समस्त थकावट और सम्पूर्ण अभावो को भूल जाएगा तथा उसके जीवन मे हठात् ही आनन्द की धारा बहने लगेगी।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मनु चाहते हैं कि श्रद्धा भी उनके साथ सोमरस का पान करें जिससे कि उसके हृदय में भी वासना की ज्वाला उमड उठे और मनु अपनी लालसापूर्ति में सफल रहे।

देवों को · · · · · · · मिलकर झूला।

शब्दार्थ—मधुमिश्रित=मधु या शहद मिला हुआ, मधुर। मादकता= सोमरस का नशा, मस्ती। दोला=हिंडोला, झूला।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि हे प्रेयसी, मैं तुमसे यही कहूँगा कि देवताओं को अर्पित किए जाने वाले इस मधुर सोमरस को तनिक अपने कोमल होठों से छूकर देखो और मेरे साथ मिलकर मस्ती के झूले में उसी प्रकार झूलो जिस प्रकार दो प्रेमी झूलते हैं।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलंकार की योजना हुई है।

श्रद्धा जाग · ·· ···· रस छकता

शब्दार्थ—मधुर भाव=प्रेम भाव। रस छकता=रस भरता, तृप्त करता।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मनु ने सोती हुई श्रद्धा के शरीर का स्पर्श किया था तब वह जाग उठी थी परन्तु उस पर एक प्रकार का नशा सा छाया हुआ था। कवि कह रहा है कि मनु की प्रणय एवं विनय से पूर्ण बातें सुनकर श्रद्धा का मन और शरीर मधुर भावना से भर गया तथा ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो प्रेम की भावना उसके—श्रद्धा के—तन मन में व्याप्त होकर अपनी तृप्ति कर रही हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मानवीकरण एवं गम्योत्प्रेक्षा अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

बोली एक · · · · ·· ···· बहते हो।

शब्दार्थ—सहजमुद्रा=स्वाभाविक रूप से। धारा=प्रवाह, आवेश।

व्याख्या—मनु के प्रेमोद्‌गार सुनकर श्रद्धा स्वाभाविक रूप से अर्थात् बिना किसी बनावट के उनसे कहने लगी कि आज तुम यह कैसी बातें कर रहे हो? श्रद्धा मनु से कहती है कि इस समय तुम मुझे प्रसन्न करने के लिए ही आवेश में आकर प्रेम की धारा में प्रवाहित हो रहे हो।

टिप्पणी—श्रद्धा ने मनु का हिंसक रूप प्रत्यक्ष ही देखा था। अतः वह उनके प्रमोद्‌गारों एवम् अनुनयभरी बातों को बनावटी ही समझती हो।

कल ही यदि .. .. सुख पाते।

शब्दार्थ—परिवर्तन=भावो का बदल जाना। वलि=वध, हत्या। देव के नाते=देवता के निमित्त। धोखा=छल कपट का कार्य।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम इस समय मुझसे मधुर प्रेम की बातें कर रहे हो परन्तु कल ही यदि तुम्हारे भावो मे परिवर्तन हो गया तो फिर तुम्हारे हृदय से यह सब प्रेम भाव न जाने कहाँ चला जायेगा और तुम्हारे निष्ठुर कर्मों के कारण भला यहाँ कौन बच पाएगा। श्रद्धा मनु से कहती है कि हो सकता है कल तुम्हें कोई फिर नवीन साथी मिल जाय और वह तुम्हें यज्ञ के लिए प्रेरित करे? इस प्रकार किसी देवता के निमित्त पुनः किसी निरीह पशु का वध किया जाय? श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम्हारे कार्य छलकपट से पूर्ण है और तुम्हारे इन यज्ञो से तो केवल अपना ही सुख प्राप्त होता है पर दूसरो को तुम धोखा ही देते हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अहिंसा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है और कवि ने श्रद्धा के माध्यम से आडम्बर एव पाखडपूर्ण कार्यों की निन्दा करते हुए सदाचरण को ही श्रेयस्कर सिद्ध किया है।

ये प्राणी जो ... . हैं फीके।

शब्दार्थ—अचला=स्थिर, स्थायी, सुदृढ। जगती=ससार, धरती, सृष्टि। फीके=तुच्छ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि इस सुदृढ धरती पर जो प्राणी आज जीवित दिखाई देते हैं क्या उनके कुछ भी अधिकार नहीं है? श्रद्धा का कहना है कि क्या सृष्टि के ये सभी जीवित प्राणी अत्यंत तुच्छ हैं और हम इस बात के लिए स्वतन्त्र हैं कि जब चाहे तब उनका वध करें।

टिप्पणी—इस पद मे उन व्यक्तियों की कटु आलोचना की गयी है जो पशुओ को तुच्छ समझकर उनका वध करते हैं।

मनु! क्या यही ... . शवता।

शब्दार्थ—उज्ज्वल=पवित्र। मानवता=मानव धर्म, मनुष्यता। हंत=खेद सूचक शब्द। शवता=अचेतनता मृत्यु।

व्याख्या—श्रद्धा कह रही है कि हे मनु, क्या यही तुम्हारी पवित्र एवं नवीन मानवता होगी जिसमे मनुष्य स्वय सब कुछ लेने का प्रयत्न करेगा और अपने सुख के लिए अन्य प्राणियो का बलिदान करेगा। इस प्रकार क्या केवल

मृत्यु ही शेष बचेगी और क्या जीवन के विकास के लिए कोई स्थान नही होगा ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने हिंसा, स्वार्थ एव निष्ठुरता से पूर्ण कार्यों की घोर निन्दा कर यही सकेत करना चाहा है कि शुद्ध मानवता का विकास तभी समव है जब सम्पूर्ण विश्व उक्त दूषित भावनाओ को त्यागकर अहिंसा, सत्य, सेवा एव परोपकार आदि को रुचि पूर्वक अपनावे।

तुच्छ नहीं ... . सब कुछ है।

शब्दार्थ—तुच्छ=हेय, नगण्य। दो दिन के=क्षणिक। चरम=सबसे महान, सर्वश्रेष्ठ।

व्याख्या—श्रद्धा के उद्गारो को सुनकर मनु कहने लगे कि हे श्रद्धे, तुम्हारी बात ठीक हो सकती है परन्तु ससार मे अपना सुख भी हेय नही है और उसकी भी कुछ सत्ता अवश्य है। मनु का कहना है कि तुम्हारा जीवन तो क्षणिक ही है अत इस छोटे से जीवन का महान् लक्ष्य ही एक मात्र वैयक्तिक सुख है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु वैयक्तिक सुख की श्रेष्ठता का प्रतिपादन कर रहे है।

इन्द्रिय की ... कुछ गावे।

शब्दार्थ—अभिलाषा=कामना,लालसा, इच्छा। सतत=निरन्तर लगातार। सफलता=तृप्ति, सतोष तृप्ति विलासिनि=विलास वासना की पूर्ति। तृप्ति विलासिनि का मधुर मधुर कुछ गाना=भलीभाति वासना की पूर्ति होना।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि इस जीवन का सुख यही है कि हमारी इन्द्रियो की कामनाएँ पूर्ण होती रहे और हृदय को यह अनुभव होता रहे कि उसकी विलासिनी तृप्ति आनन्द के गीत गा रही है।

टिप्पणी—इस पद मे मनु ने यही सकेत करना चाहा है कि भोग विलास की पूर्ति ही प्रत्येक मनुष्य का लक्ष्य है।

रोम हर्ष हो .... गले मिले तो।

शब्दार्थ—ज्योत्स्ना=चाँदनी। मृदु मुस्कान खिले=मुस्कराहट हो। श्वास नजावर होकर=परस्पर अपनी साँसो को एक दूसरे पर न्यौछावर करते हुए।

व्याख्या—विलास मग्न मनु श्रद्धा से कहते हैं कि हे प्रिये, इस जीवन

का क्या यह सुख कम है कि तुम्हारे मुख पर फिर से चाँदनी के समान मुस्कान खिल उठे और उसे देखकर मेरा शरीर रोमाचित हो उठे अर्थात् मेरा रोम-रोम प्रसन्न हो जाय। साथ ही हम दोनों परस्पर श्वासों को न्यौछावर करते हुए इस प्रकार एक दूसरे के गले मिलें जिससे हमारी इच्छाएँ पूर्ण हो जायें और यह जीवन आनन्दमय हो जाय।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

विश्व माधुरी ·· ···· ···· ··· कहती हो ?

शब्दार्थ—विश्वमाधुरी=ससार की सुन्दरता। मुकुर=दर्पण, आइना।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि हे श्रद्धे, यह सुख क्या कम है कि मैं तुम्हारे मुख रूपी दर्पण मे सम्पूर्ण ससार के सौन्दर्य का प्रतिबिम्ब देखता रहूँ तथा यह सुख तो स्वर्ग के अक्षय सुख से कम है। मनु श्रद्धा से पूछते हैं कि यह तुम कैसे कह सकती हो कि ये सब व्यर्थ है क्योकि मैं तो तुम्हारे रूप मे सम्पूर्ण ससार का सौन्दर्य देखकर प्रसन्न होता हूँ और वही मेरा स्वर्गीय सुख भी है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलंकार एव लक्षण लक्षणा की योजना हुई है।

जिसे खोजता फिरता ···· ···· ···· चंचल में।

शब्दार्थ—हिम गिरि=हिमालय पर्वत। जीवन चंचल=क्षणिक जीवन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धा मैं जिस सुख को इस हिमालय पर्वत के कोने-कोने मे ढूँढता फिरता था वही मेरा सुख मुझे अपने इस क्षणिक जीवन मे तुम्हारी मधुर मुस्कान के रूप मे अपने सामने हँसता हुआ दिखाई दे रहा है और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो मेरे जीवन के अभाव ने ही आज इस अमर सुख का रूप धारण कर लिया है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे मनु श्रद्धा को अपने अक्षय सुख की साकार प्रतिमा मान कर उसे अपने क्षणिक जीवन का मुस्कराता हुआ स्वर्ग कहते हैं।

(२) इस पद मे रूपक, मानवीकरण एव विरोधाभास अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

वर्तमान जीवन ···· ···· ··· ·· होता है।

शब्दार्थ—योग=सयोग, मिलन। छली=ठग। अदृश्य=भाग्य।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि हे श्रद्धे, इस ससार में न जाने ऐसा क्यो होता है कि जब भी कोई व्यक्ति अपने अभावो की पूर्ति कर सुख प्राप्त करता

है तब भाग्य तुरन्त ही अभाव का रूप धारण कर उसके समक्ष पुन उपस्थित हो जाता है और वह मनुष्य सुखी नहीं रह पाता। इस प्रकार मनु ने अपने जीवन मे विद्यमान अभाव की ओर सकेत कर यह स्पष्ट करना चाहा है कि वे यह समझते थे कि श्रद्धा के आगमन से उनका यह अभाव दूर हो जायगा परन्तु छली भाग्य ने श्रद्धा को रुष्ट कर मनु के जीवन मे पुन वेदना भर दी।

टिप्पणी—यहाँ अर्थान्तरन्यास अलकार है।

किन्तु सकल • प्रयास नहीं तो।

शब्दार्थ—सकल=सम्पूर्ण, सभी। कृतियो=कार्यो, रचनाओ। विफल प्रयास=व्यर्थ या असफल प्रयत्न।

व्याख्या—मनु का कहना है कि इस ससार की सभी वस्तुएँ हमारे उपभोग के लिए ही हैं और हमारे सतोष के लिए ही उनका निर्माण हुआ है अत यदि हम उनका उपभोग करते और हमारी कामनाएँ प्यासी रह जाती हैं तो हमारा जीवन व्यर्थ ही है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु ने न केवल अपनी वासनोन्मुखता को बल्कि यज्ञादि कार्यों को उचित सिद्ध करना चाहा है।

एक अचेतना ... • आँखें खोली।

शब्दार्थ—अचेतनता लाती सी=अत्यधिक प्रभावित करती हुई। सविनय =नम्रतापूवक। सृष्टि ने फिर से आँखें खोलीं=नवीन सृष्टि के विकास का अवसर आया।

व्याख्या—मनु के वासनायुक्त प्रेमोदगारो को सुनकर श्रद्धा उन्हे अत्यधिक प्रभावित करती हुई नम्रतापूवक कहने लगी कि अन्य देवो की अपेक्षा हृदय मे अभी कुछ सुन्दर भाव बचे हुए थे अतएव सम्पूर्ण सृष्टि का सहार करने वाली प्रलय के मुख से बच गए और तुम्हारे रूप मे एक नवीन सृष्टि का विकसित होना आरभ हुआ।

टिप्पणी—इस पद मे मानवीकरण अलकार का प्रयोग हुआ है और 'सृष्टि के आँखें खोलने' मे उपादान लक्षणा है।

भद बुद्धि • • • •• •••• गई ही होगी।

शब्दार्थ—भेदबुद्धि=बुरे भले का अतर बताने वाली बुद्धि। निर्मम ममता =निष्ठुरता से पूर्ण मोह। प्रलय पयोनिधि=प्रलय का सागर।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि प्रलय के सागर की भयकर लहरें

तुम तक आकर इसीलिए लौट गयी होगी कि तुममे अभी निष्ठुरता और ममता का अन्तर बता देने वाली बुद्धि बची हुई है। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि भेद बुद्धि और निष्ठुर मोह के कारण जहाँ कि सम्पूर्ण देव सृष्टि नष्ट हो गयी वहाँ इन दोनो से दूर रहने के कारण ही मनु भयानक जल प्रलय से बच गये।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा मनु को यह समझाना चाहती है कि सृष्टि का नवीन विकास स्वार्थ लिप्सा की पूर्ति या ईर्ष्या और द्वेष को पल्लवित करने के लिए नही हुआ।

अपने मे सब ... ... नाश करेगा।

शब्दार्थ—एकान्त स्वार्थ=केवल अपना स्वार्थ। भीषण=भयकर।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि यदि व्यक्ति ससार के सभी सुखो को अपने मे समेट कर रखने का प्रयत्न करेगा अर्थात् ससार के सभी सुखो का उपभोग स्वय करना चाहेगा और दूसरो की तनिक भी परवाह नहीं करेगा तो फिर मनुष्य का विकास कैसे हो सकेगा। श्रद्धा का कहना है कि व्यक्तिगत सुख की भावना बहुत भयकर है और उससे मनुष्य का विकास न होकर, विनाश ही होगा।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के माध्यम से व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना को निन्दनीय माना है।

औरों को हँसते ... ... सुखी बनाओ।

शब्दार्थ—औरों को=दूसरो को। विस्तृत कर लो=विस्तार कर लो।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि तुम दूसरों को प्रसन्न देखो और स्वय भी प्रसन्न रहो तथा दूसरो के सुख मे ही अपना सुख समझो। श्रद्धा मनु से कहती है कि तुम अपने सुख की भावना को व्यापक बना लो जिससे उसमे ससार का सुख आ जाय और तुम केवल व्यक्तिगत सुख मे न उलझकर सम्पूर्ण सृष्टि के साथ तादात्म्य स्थापित करो जिससे कि तुम्हारे साथ-साथ दूसरो को भी सुख प्राप्त हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को ही श्रेयष्कर माना गया है।

रचनामूलक सृष्टि ... ... विकसने को है।

शब्दार्थ—रचनामूलक=निर्माणमयी। सृष्टि यज्ञ=संसार रूपी यज्ञ।

यज्ञ पुरुष=वह विराट् सत्ता जिसके लिए समस्त यज्ञादि कर्म किये जाते हैं।
संसृति सेवा=संसार की सेवा।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को समझाते हुए कह रही है कि सृष्टि की रचना का कार्य भी एक प्रकार का यज्ञ है और इस यज्ञ का सम्बन्ध भी उसी विराट सत्ता से है जिसे प्रसन्न करने के लिए तुमने पशु बलि वाला यज्ञ किया था। श्रद्धा का कहना है कि हे मनु, तुमने जो यज्ञ किया था वह हिंसा, निष्ठुरता एवं निर्दयता से युक्त था परन्तु सृष्टि का यह रचनामूलक यज्ञ सेवा, करुणा एवं परोपकार आदि से पूर्ण है तथा इस विराट् यज्ञ द्वारा ही हम सम्पूर्ण सृष्टि की सेवा कर सकते हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में यज्ञ की एक सुन्दर एवं उदात्त कल्पना की गयी है।

सुख को सीमित · · ···· ·· · मुँह मोड़ोगे।

शब्दार्थ—सीमित=संकुचित, संकीर्ण। इतर=अन्य, दूसरे। मुँह मोड़ना=उपेक्षा करना।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि यदि तुम सम्पूर्ण सुखों को अपने तक ही सीमित करने का प्रयत्न करोगे तो फिर अन्य प्राणियों के लिए तो केवल दुःख ही रह जाएगा। इस प्रकार दूसरे प्राणियों को दुःखी देखकर क्या तुम सदैव उनके दुःख की उपेक्षा ही करोगे।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में परदुःखकातरता एवं परपीडा को समझने का आग्रह किया गया है।

ये मुद्रित कलियाँ · ···· · ·· ···· भर लें।

शब्दार्थ—मुद्रित=मुन्दी हुई, अविकसित। दल=पंखुड़ियाँ। सौरभ=सुगंधि। मकरन्द=फूलों का रस। मरलें=मुरझा जाएँ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि यदि सभी अविकसित कलियाँ अपनी पंखुड़ियों के भीतर ही सम्पूर्ण सुगंधि को भर लें और वे मधुर मकरन्द की बूँदों से तनिक भी सरस न हों तो वे मुरझा कर गिर जाएँगी। इस प्रकार न तो वे दूसरों को सुगन्धि दे सकेंगी और न उन्हें स्वयं ही सुगंधि प्राप्त होगी। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति समस्त सुखों को अपने तक ही सीमित रखेगा वह न तो पूर्णतया स्वयं ही सुखी रह पायेगा और न किसी दूसरे को सुख प्रदान करेगा बल्कि वह कलियों के समान मुरझाकर एक दिन इसी संसार में विलीन हो जाएगा।

टिप्पणी—यहाँ दृष्टान्त अलकार की योजना हुई है।

सूखें झडें .... पर लाओगे।

शब्दार्थ—सौरभ=सुगधि। आमोद=हर्ष या सुख। मधुमय=मधुर, हर्ष एव प्रसन्नता से पूर्ण। वसुधा=पृथ्वी, धरती।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब अविकसित कलियाँ सूखकर धरती पर गिर जाएँगी तब उनके कुचले जाने पर मकरद अवश्य प्राप्त होगा लेकिन वह सम्पूर्ण वातावरण को सुगधित करने वाला मकरन्द न होकर कुचला हुआ सौरभ होगा और उससे सम्पूर्ण पृथ्वी को आनन्द नही प्राप्त हो सकेगा। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति सभी सुखो को अपने तक ही सीमित रखता है तो इस धरती पर न तो कही आनन्द ही प्राप्त होगा और न सरसता ही।

टिप्पणी—इस पद मे दृष्टान्त एव श्लेष अलकार है।

सुख अपने .... वही है।

शब्दार्थ—सग्रह मूल=सकलित करने योग्य, एकत्रित करने योग्य। प्रदर्शन=दर्शनीय, देखने योग्य।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि सुख केवल अपने सतोष के लिए ही एकत्रित करने योग्य नही है बल्कि वह तो प्रदर्शन करने वाली वस्तु है जिससे कि दूसरे भी सुखी हो सकें। कहने का अभिप्राय यह है कि हम केवल अपने सुख की ही चिन्ता न करें बल्कि दूसरो को सुखी रखने के लिए भी प्रयत्नशील रहें क्योकि दूसरे जिस सुख को देखकर सुखी हो वही सच्चा सुख है।

तुलनात्मक दृष्टि—उपनिषदो मे भी कहा गया है—

सर्वेऽपि सुखिन सन्तु सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दु खभाग भवेत ॥

निर्जन में क्या .... सुमन खिलेगा।

शब्दार्थ—निर्जन=एकान्त, शून्य प्रदेश। प्रमोद=सुगधि, आनद या सुख। सुमन=फूल।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि यदि कोई व्यक्ति अकेले ही सुगधि का सुख लेने के उद्देश्य से किसी एकान्त स्थान मे खिले हुए सभी फूलो को एकत्र कर बठ जाय और फिर वहाँ फूलो का खिलना ही बन्द हो जाय तो

जिस प्रकार वह हमेशा सुगधि नही प्राप्त कर सकता उसी प्रकार हम भी यदि ससार के सभी सुखो का अकेले ही किसी एकान्त स्थान मे उपभोग करने का प्रयास करोगे और दूसरो के सुख की तनिक भी चिन्ता नहीं करोगे तो न केवल दूसरो को सुख प्राप्त नही होगा बल्कि तुम्हे भी एकान्त में अकेले रहकर आनन्द नही मिल सकेगा।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एव श्लेष अलकार की योजना हुई है।

सुख समीर .. .. .. मानवता धार।

शब्दार्थ—समीर=पवन। संसृति=सृष्टि, ससार।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि चाहे सुख-पवन के स्पर्श से तुम्हारा एकान्त जीवन सुखी हो जाय परन्तु उससे विश्व-सुख मे अर्थात् सभी सासारिक प्राणियों के सुख मे कोई वृद्धि नही होगी क्योकि ससार का सुख तो मानव-मात्र के सुख की धारा के रूप मे आगे बढता है। श्रद्धा का कहना है कि व्यक्तिगत सुख से ससार का विकास नही होता बल्कि सम्पूर्ण समाज के सुख से ही ससार का विकास सभव है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे श्रद्धा मन से यह कहना चाहती है कि यदि वे अपने सुखो का उपभोग दूसरे व्यक्तियो के साथ मिल-जुलकर करेंगे तो न केवल दूसरो को सुख प्राप्त होगा बल्कि स्वय मनु की कीर्ति भी मानवता के साथ-साथ विकसित होगी।

(२) इस पद मे परम्परित रूपक अलकार है।

हृदय हो रहा . .... ज्वाला सहते।

शब्दार्थ—उत्तेजित=आवेगपूर्ण, उद्विग्न। ज्वाला=प्रेम की आग।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यद्यपि श्रद्धा मनु के समक्ष सेवा, परोपकार, करुणा एव समष्टि-सुख आदि की बाते कह रही थी परन्तु उसके मन में प्रेम की आग जल रही थी और न केवल उसका हृदय कामना के वेग से उद्वेलित बल्कि वासना की ज्वाला से उसके अधर सूख रहे थे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे काव्यलिंग एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

उधर सोम का पात्र . .... फिर सुख क्या ?

शब्दार्थ—बुद्धि के बंधन=विचारो की उलझन। मनुहार=अनुनय, प्रेमी-द्वारा की गई प्रार्थना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इधर श्रद्धा की मुखाकृति से उसके मन मे उमड़ती हुई प्रणय ज्वाला के चिन्ह दिखाई दे रहे थे और उधर मनु सोमरस से पूर्ण पात्र लिए बैठे थे तथा अपनी वासना पूर्ति के लिए यह समय अनुकूल जान वे श्रद्धा से नम्र स्तरो मे वार्तालाप करने लगे। इस प्रकार मनु ने श्रद्धा से कहा कि श्रद्धे, यह सोमरस पी लो क्योकि यह बहुत गुणकारी है और उसे पीते ही तुम्हारी बुद्धि के सभी बंधन खुल जायेंगे।

मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम जैसा कह रही हो अब मैं वैसा ही करूँगा और मैं यह मानता हूं कि तुम्हारी यह बात सत्य है कि जीवन मे अकेले सुख भोगना उचित नही है। कवि का कहना है कि जब मनु ने श्रद्धा से इस प्रकार अनुनय की तब भला वह सोमरस पान करना कैसे अस्वीकार कर सकती थी।

तुलनात्मक दृष्टि—ऋग्वेद मे भी देवताओ का देवपत्नियो सहित सोमरस पान करने का प्रसग अंकित हुआ है, देखिए—

ऐभिरग्ने सरथ याह्यर्वाङ् नाना रथ वा विभवो ह्यश्वा ।
पत्नीवतास्त्रिंशत त्रींश्च देवाननुष्वधमावह मादयस्व ॥

आँखें प्रिय .. .. नस नस मे।

शब्दार्थ—अरुण अधर=श्रद्धा के लाल ओठ। काल्पनिक विजय=विजय की मिथ्या अथवा असत्य भावना। चेतनता=स्फूर्ति, आवेग।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा के अनुरागपूर्ण नेत्र मनु के वासना पूर्ण नेत्रो मे डूब गये और उसके लाल-लाल ओठ सोमरस मे डूब गये। यद्यपि श्रद्धा का मन यह जानकर सुखी था कि मेरी विजय हो गई है क्योकि मनु ने मेरी बातें मान ली हैं और उसकी नस-नस में स्फूर्ति आ गई थी पर वास्तव मे उसकी यह विजय काल्पनिक ही थी क्योकि मनु ने केवल वासना से प्रेरित होकर ही श्रद्धा की बात मानी थी।

टिप्पणी—यहाँ 'नस नस' मे पुनरुक्ति अलंकार है।

छल वाणी की . ... विभुता को।

शब्दार्थ—छलवाणी=कपट भरी बातें। प्रवंचना=धोखा, कपट व्यवहार। शिशुता=बालको का सा भोलापन। निर्मल विभुता=पवित्र गरिमा, सद्भावो का ऐश्वर्य।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार भोले-भाले बच्चो को बातों में बहलाकर अपनी इच्छानुसार खेल मे लगा लिया जाता है उसी प्रकार

पुरुषों की कपट भरी बातें नारी के भोले-भाले हृदय को ठग लेती हैं। इस प्रकार पुरुषो की कपट व्यवहार की बातें नारी को अपने जीवन की पवित्र गरिमा को भुलाकर अपना सर्वस्व छली पुरुष के चरणो मे सौपने के लिए आतुर कर देती हैं।

टिप्पणी — इन पंक्तियों मे मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

जीवन का उद्देश्य • • • छल मे।

शब्दार्थ—जीवन का उद्देश्य=नारी जीवन का लक्ष्य। लक्ष्य की प्रगति दिशा=नारी की अपनी उन्नति का मार्ग। मधुर इगित=सुन्दर सकेत।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि पुरुषो की छलपूर्णवाणी मे यह शक्ति होती है कि वह अपने तनिक से सुन्दर सकेत से ही सुकुमार एव भोलीभाली नारी के जीवन का लक्ष्य परिवर्तित कर देती है। कहने का अभिप्राय यह है कि नारी हमेशा अपने जीवन का महान् लक्ष्य निश्चित करती है परन्तु पुरुष अपनी छलपूर्ण बातों मे उसे लक्ष्य भ्रष्ट कर उसे अपनी इच्छानुसार चलने को विवश करता है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने नारी जीवन की विडम्बना का स्वाभाविक चित्र अकित किया है।

वही शक्ति उलझा लेती।

शब्दार्थ—वही=छल की। अवलब=सहारा। अभिनय=बनावटी, ऊपरी भाव।

व्याख्या—कवि का कहना है कि छल कपट की वही शक्ति, जो अपने बनावटी हाव-भाव से दूसरे प्राणी के मन मे सुख की सभावना जाग्रत कर उसे उलझाए रखती है। आज मनु को भी अपना मनोहर सहारा दे रही थी। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु ने अपनी छलपूर्ण वाणी से श्रद्धा को अपनी ओर आकृष्ट करने मे सफलता प्राप्त कर ली।

टिप्पणी—इस पद मे कवि ने नारी हृदय की सरलता और विलासी पुरुष के कपट व्यवहार का सुन्दर चित्रण किया है।

श्रद्धा होगी •• • सुख की सीमा।

शब्दार्थ—चन्द्रशालिनी=चाँदनी से युक्त। भीमा=भयकर।

व्याख्या—मनु ने श्रद्धा से कहा कि जिस प्रकार अन्धकार से पूर्ण भयकर रात्रि चन्द्रमा के उदय होते ही उज्ज्वल एव मधुर चाँदनी से पूर्ण हो जाती है उसी प्रकार अनेक अभावों के कारण जीवन की विषमताओ से पूर्ण मेरा यह

ससार भी अब सुख की शीतल एव मधुर भावनाओ से पूर्ण हो जायगा । मनु का कहना है कि हे श्रद्धा, मेरी तो अब यही अभिलाषा है कि मेरे सभी सुखो की सीमा तुम बन जाओ अर्थात् तुम हमेशा के लिए मेरी बन जाओ ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एव रूपक अलकार की योजना हुई है ।

लज्जा का आवरण ‥ ···· ‥ हम तुम से ।

शब्दार्थ—आवरण=पर्दा । ढंकना छिपाना । अकिंचन=दरिद्र, तुच्छ, साधारण । अलगाता=अलग करता ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि जिस प्रकार अन्धकार चारो ओर फैलकर व्यक्तियो को कार्य करने मे बाधा पहुँचता है उसी प्रकार यह लज्जा का पर्दा ही तुम्हारे हृदय को ढंकता हुआ हमारी आनन्द क्रीडाओं को बाधा पहुँचा रहा है । मनु श्रद्धा से कहते हैं कि लज्जा के इसी पर्दे ने तुम्हारी वासना को आवेगहीन और तुच्छ बना दिया है तथा हम दोनो को आपस मे मिलने की बजाय अलग अलग कर रहा है ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे पुरुष एव नारी के स्वच्छद मिलन मे लज्जा को ही बाधक माना गया है ।

(२) यद्यपि अलगाता क्रिया अलगाना से बनी है परन्तु वह अप्रचलित क्रिया ही है क्योकि इसका प्रयोग बहुत कम होता है ।

(३) यहाँ 'तम' शब्द मे लक्षण-लक्षणा है और रूपकातिशयोक्ति अलंकार की भी योजना हुई है ।

कुचल उठा ···· ···· ···· ···· मिल जाओ ।

शब्दार्थ—कुचल उठा=बुरी तरह दबाया गया । बाधा=विघ्न ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धे, यह लज्जा ही हमारे आनन्द-पूर्ण जीवन की सबसे बडी बाधा है और हमारे मिलन मे भी बाधक है तथा इसने हमारे आनद को बुरी तरह कुचला है । इसलिए अब तुम इस लज्जा को दूर कर दोनो प्रेमी हृदयो को स्वच्छंदतापूर्वक परस्पर मिल जाने दो जिससे उन्हे अनुकूल सुखो की प्राप्ति हो ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलंकार है ।

और एक फिर ··· ···· ···· के मिस से ।

शब्दार्थ—व्याकुल=प्रेम की व्यग्रता से पूर्ण । रक्त खौलता=खून तीव्र

गति से बहता । शीतल प्राण=सुप्त भावनाओं वाला हृदय । तृषा तृप्ति= या इच्छा की पूर्ति । मिस=बहाना ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु ने इतना कहने के पश्चात् श्रद्धा को चूम लिया और उनके इस प्रेम की व्यग्रता से पूर्ण चुम्बन के फलस्वरूप श्रद्धा के सम्पूर्ण शरीर मे बिजली सी दौड गयी और उसका खून तीव्र गति से दौडने लगा अर्थात् रक्त प्रवाह की गति बढ़ गयी । साथ ही श्रद्धा की सोई हुई काम वासना भी जाग उठी और अपनी इच्छा-पूर्ति की अभिलाषा से उसके प्राणों मे भी वासना की आग धधकने लगी ।

टिप्पणी—यहाँ 'शीतल प्राण' मे विशेषण विपर्यय, 'शीतल प्राण के धधकने मे विरोधाभास और 'तृषा तृप्ति के मिस' मे कैतवापन्हुति अलकार की योजना हुई है ।

दो काठों की · · · · · जैसे सुख सपने ।

शब्दार्थ—दो काठें=दो सूखी लकडियाँ परन्तु यहाँ कवि का अभिप्राय श्रद्धा और मनु से है । सधि=मिलन । अग्नि शिखा=आग की लपट, परन्तु यहाँ वासना का आवेग । बुझ गई=शात हो गई । सुख सपने=मधुर स्वप्न ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस प्रकार दो सूखी लकडियो के परस्पर मिलकर जलने वाली लपट उन लकडियों के पूरी तरह जल जाने के उपरान्त बुझ जाती है और जिस प्रकार जग जाने पर सभी मधुर स्वप्न समाप्त हो जाते हैं उसी प्रकार मनु और श्रद्धा के मिलन के उपरात उनके मन में प्रज्वलित वासना की आग भी शात हो गयी तथा उस गुफा मे जलनेवाली अग्निशिखा भी बुझ गयी ।

टिप्पणी—इस पद मे उदाहरण एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

आठवाँ सर्ग

ईर्ष्या

कथानक—वस्तुत श्रद्धा ने क्षणिक आवेश मे आकर मनु के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया था परन्तु अब उसके जीवन मे निराशा ही रह गयी। वास्तव मे मनु ने केवल श्रद्धा को प्राप्त करने के उद्देश्य से ही उसके समक्ष यह झूठी प्रतिज्ञा की थी कि अब मैं हिंसा कर्म मे लीन न रहूँगा परन्तु अब वे अपना अधिकाश समय मृगया मे ही व्यतीत करते। उन्हे हिंसा के अतिरिक्त और कुछ भी अच्छा न लगता था। अब उन्हे श्रद्धा मे कोई आकर्षण नही दिखाई देता और उसका सरल विनोद भी उन्हे आकर्षित नही कर पाता। उनके मन मे बार-बार नवीन लालसा उत्पन्न होती थी और वे यह भी सोचते थे कि कब तक इस प्रकार का बन्दी जीवन व्यतीत करना होगा। मनु के मन मे यह भावना भी उत्पन्न होती थी कि श्रद्धा के प्रेम मे आकुलता नही रही और उसकी वाणी मे उत्साह के स्थान पर शाति ही दिखाई देती है। वह कभी तो शालियाँ बीनती दिखाई देती है, कभी बीजो का सग्रह करती है और कभी तकली चला-चला कर कुछ गाया करती है।

एक दिन मनु मृगया से सध्या के समय थक कर लौटे और अपनी गुफा के द्वार से कुछ दूरी पर ही रुक गए। श्रद्धा के प्रति उत्पन्न उदासीनता ने उन्हे अत्यधिक बेचैन कर दिया था। अतएव उन्हे आगे बढने की इच्छा नही हो रही थी। किसी तरह वे अपनी गुफा के द्वार तक आये और धनुष आदि आयुधो को वही रख कर वे द्वार पर बैठ गये। इधर श्रद्धा गुफा मे बैठी-बैठी यह सोच रही थी कि सध्या हो गई किन्तु मनु अभी तक नही लौटे। कही किसी चचल पशु के पीछे भागते-भागते वे दूर तो नही निकल गए। वह तकली कातते हुए यह सोचती जा रही थी। गर्भवती होने के कारण उसका मुख पीला पड गया था और नेत्रो मे आलस्य तथा शरीर मे शिथिलता स्पष्ट दिखाई देती थी। ऊन की एक काली पट्टी से बँधे हुए उसके पीन पयोधर

कुछ-कुछ झुक आए थे। श्रद्धा बैठी-बैठी तकली पर ऊन कातकर ऊन की पट्टियाँ बना रही थी और उसके मस्तक पर पसीने की बूँदें झलक रही थी।

मनु ने द्वार से ही श्रद्धा का वह रूप देखा पर कुछ कहा नही। उन्हे उसका वह रूप पसन्द नही आया और वे उसकी ओर देखते हुए वही बैठे रहे। श्रद्धा उसकी भावना को समझ गई और उनके समीप जाकर स्नेहपूर्वक कहने लगी—'तुम दिन भर कहाँ भटकते रहते हो ? तुम्हे यह हिंसा इतनी प्रिय हो गयी है कि इसके पीछे तुम न केवल घर को भूल जाते हो बल्कि अपने शरीर का भी ध्यान नही रखते। मैं यहा अकेली बैठी हुई तुम्हारी प्रतीक्षा मे सारा दिन बिता देती हूँ। दिन ढल गया है और पक्षी अपने घोंसलो मे लौट कर अपने-अपने शिशुओ से प्रेम कर रहे हैं पर मेरा घर अभी सूना है। आखिर तुम्हे ऐसी क्या कमी है जो तुम घर छोडकर इस प्रकार जगलो मे भटकते फिरते हो ?

श्रद्धा की बाते सुनकर मनु ने उससे कहा 'यह ठीक है कि तुम्हे कोई कमी नही है परन्तु मुझे तो अपने जीवन मे कमी ही दिखाई देती है। तुम्हारे हृदय मे भी अब मेरे लिए पहले जैसी आकुलता नही दिखाई देती और मेरी चिन्ता न कर तुम दिन भर तकली कातने मे मग्न रहती हो। मेरी समझ मे नही आता कि जब मैं पशुओ के कोमल चर्म ला सकता हूँ तब तुम ऊन क्यो कातती हो और जब मैं शिकार करने मे समर्थ हूँ तब तुम बीज बीनने मे क्यो लगी रहती हो ? न जाने तुम्हारा मुख क्यो पीला पड गया है और तुम किसके लिए वस्त्र बुन रही हो ?'

मनु के कथन का उत्तर देते हुए श्रद्धा ने कहा 'अपनी रक्षा के लिए यदि किसी पशु पर प्रहार किया जाय तो वह उचित है परन्तु अपने स्वाद या स्वार्थ के लिए किसी निरीह पशु का वध करना मैं उचित नही समझती। हमे पशुओ को तुच्छ न समझना चाहिए बल्कि प्रेम-पूर्वक उनका पालन करना चाहिए।' श्रद्धा की यह बात सुनकर मनु बोले कि कि 'मैं तुम्हारी इन बातो से सहमत नही हूँ। मैं सरलता से प्राप्त होने वाले सुखो को छोडने के लिए तैयार नही हूँ और मेरी तो यही अभिलाषा है कि तुम्हारे नेत्रो मे केवल मेरा ही चित्र रहे। मैं नही चाहता कि जिस प्रेम पर मेरा एकमात्र अधिकार है उसे कोई और प्राप्त करे। मेरी तो बस केवल यही इच्छा है कि तुम मुझे पहले के समान प्रेम करो और मेरे सुख का पूरा ध्यान रखो।'

यह सुनकर श्रद्धा मनु का हाथ पकड़कर उन्हें अपनी गुफा के समीप वहाँ ले गई जहाँ उसने लताओं के कुंज के अन्दर फूल की एक सुन्दर कुटिया तैयार की थी। इन कुटिया में सुन्दर-सुन्दर वातायन थे और बेंत की लता का सुन्दर झूला पड़ा हुआ था और धरती पर फूलों का पराग बिखर रहा था। इस सुन्दर कुटिया को मनु उत्सुकता के साथ देख रहे थे और मन ही मन यह सोच रहे थे कि न जाने किसे सुख देने के लिए यह सब तैयार किया गया है? उन्हें विचारों में लीन देख श्रद्धा ने कहा 'देखो यह घोंसला तो बन गया है परन्तु इसमें कलरव करने वाला अभी कोई नहीं है। जब तुम दूर चले जाते हो तब मैं अकेली यहाँ बैठी हुई गीत गाती और तकली कातती रहती हूँ। मैं अब गर्भवती हूँ और अपनी संतान के लिए वस्त्र तैयार कर रही हूँ। जब मेरी संतान होगी और तुम यदि बाहर चले जाया करोगे तब मुझे यहाँ अकेलेपन का अनुभव न होगा। मैं अपने शिशु से अपना मन बहलाया करूँगी और उसकी क्रीड़ाओं से मेरे मन में आनन्द का सागर लहराया करेगा।'

श्रद्धा की इन वात्सल्यपूर्ण बातों को सुनकर मनु की उत्तेजना और भी अधिक बढ़ गई। उन्होंने कहा—'तुम तो प्रसन्न रहोगी और मैं शान्ति के लिए जंगलों में भटकता रहूँगा। मैं यह सहन नहीं कर सकता कि तुम सन्तान के लिए अभी से इतनी ममता करो और मेरी ओर ध्यान न दो। मैं तुम्हारे प्रेम का एकमात्र अधिकारी हूँ और मुझे अपने इस अधिकार का विभाजन पसन्द नहीं है। मैं भिखारी नहीं हूँ और मुझे यह पसन्द नहीं है कि तुम जब चाहो तब मुझे प्यार करो और जब न चाहो तब मेरी उपेक्षा करो। मैं अब यहाँ एक क्षण भर भी नहीं रह सकता और तुम इस सुख का जी भरकर उपभोग करती रहो।' यह कहकर ईर्ष्या से अत्यधिक बेचैन होकर मनु श्रद्धा का परित्याग कर चले गये और वह गुफा के द्वार पर खड़ी-खड़ी उन्हें पुकारती रह गई।

पल भर की · ·· ·· निष्फल अन्धकार।

शब्दार्थ—स्वाधिकार=अपना अधिकार, स्वच्छन्दता। मधुर निशा=मधुर चाँदनी रात। निष्फल अन्धकार=असफलता से पूर्ण अन्धकार की भांति घोर निराशा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि एक क्षणिक आवेश में आकर श्रद्धा ने मनु को अपना सर्वस्व समर्पण कर दिया और वह अब हमेशा के लिए मनु के

आधीन हो गई। इस प्रकार उसकी मधुर रातें बीत गई थीं और उसके जीवन मे अब अँधेरी रातो के समान असफलता एव निराशा ही रह गई थी। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु ने पहले तो श्रद्धा को यह आश्वासन दिया था कि वे वही करेंगे जैसा वह चाहेगी पर श्रद्धा के सर्वस्व समर्पण के पश्चात्‌ मनु यह आश्वासन भूल गये। न तो वे श्रद्धा से उतना प्रेम ही करते थे और न उन्होने अपने वचन का पालन ही किया। इस प्रकार श्रद्धा तो अपने शरीर का माधुय मनु को समर्पित कर चुकी थी और अब उसके जीवन मे असफलता और निराशा का सघन अन्धकार ही शेष रहा था।

टिप्पणी—(१) इस पद मे कवि ने विलासी पुरुष की प्रवचना से छली हुई सुकुमार एव भोली-भाली नारी का मार्मिक चित्र अकित किया है।

(२) यहाँ 'मधुर निशा' और निष्फल अन्धकार मे लक्षण-लक्षणा है।

(३) इस पद मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

(४) कम्पनी के इस सर्ग मे कवि ने एक नवीन मिश्रित छन्द का प्रयोग किया है जिसमे पहली पक्ति सोलह मात्राओ के पादाकुलक छन्द की है और दूसरी पक्ति सोलह मात्राओ के पद्धति छन्द की है।

मनु को अब • लाली से ललाम।

शब्दार्थ—मृगया=शिकार। हिंसासुख=पशु वध करने मे प्राप्त आनन्द। लाली से ललाम=प्रेम की लाली से भी सुन्दर।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अब मनु को शिकार के अतिरिक्त और कोई काम नही रह गया था और वह सारा दिन जगल मे शिकार के लिए भटकते रहते थे। कवि का कहना है कि एक बार जो मनु ने श्रद्धा के पशु का मास खाया था, उसके पश्चात् अब उन्हें मास खाने की आदत पड गई थी और हिंसा करने मे उन्हे प्रेम की लाली से भी अधिक आनन्द आता था। इस प्रकार उन्हे पशु हिंसा के सामने श्रद्धा के प्रेम मे कोई रुचि नही रही थी।

टिप्पणी—इस पद मे दीपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार और उपादान लक्षणा की योजना हुई है।

हिंसा ही नहीं .... अवसाद-चीर।

शब्दाथ—अघीर=बेचैन, व्याकुल। प्रभुत्व=अधिकार, स्वामित्व। अवसाद चीर=खिन्नता या उदासी को दूर कर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु का मन केवल हिंसा से ही सतुष्ट-

नहीं था वल्कि वह रात दिन कुछ और खोजने में व्याकुल रहता था। उनकी इस व्याकुलता का कारण यह था कि वे अब यह चाहते थे कि उनके अधिकार विस्तृत हो जायें और उनकी सम्पूर्ण खिन्नता दूर होकर उनके जीवन में आनन्द भर जाय। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु स्वयं को श्रद्धा का स्वामी मानते थे और चाहते थे कि श्रद्धा एकमात्र उनके सुख को ही चिन्ता करे तथा उसका स्नेह किसी भी रूप में अन्य किसी को प्राप्त न हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने पुरुषों की प्रभुत्व भावना का स्वामाविक चित्रण किया है।

जो कुछ मनु .... बन रहा दीन।

शब्दार्थ—करतल गत=हाथ में, अपने अधिकार में। रुचता=अच्छा लगता।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जो कुछ भी मनु को प्राप्त था। उसमें कोई नवीनता नहीं रह गई थी अर्थात् मनु के अधिकार में श्रद्धा आदि जो भी सुख के साधन थे वे अब मनु को नवीन नहीं जान पडते थे और उन्हें उसमें आकर्षण का अभाव दिखाई देता था। इस प्रकार उन्हें अब श्रद्धा के सरलता एवं स्वाभाविकता से पूर्ण मनोविनोद में तनिक भी रुचि नहीं रही थी और उनमें उन्हें तनिक भी आनन्द नहीं आता था।

टिप्पणी—इस पद में मानवीकरण अलकार है। और सरल विनोद के दीन होने में लक्षण-लक्षणा है।

उठती अतस्तल से ... . आप शांत।

शब्दार्थ—अंतस्तल=हृदय। दुर्ललित=उत्कट, तीव्र वेग वाली। कांत=रंगीन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के हृदय में हमेशा अदमनीय वासना की उत्क्रष्ट इच्छायें उत्पन्न होती रहती थीं परन्तु जिस प्रकार आकर्षक इन्द्र धनुष कुछ देर के लिए दिखाई देता है और फिर अपने आप ही विलीन हो जाता है उसी प्रकार मनु की उक्त इच्छायें भी कुछ क्षण तक झिलमिला कर अपने आप दबकर शांत हो जाती थीं।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा अलंकार की सुन्दर योजना हुई है।

निज उद्गम .... कहाँ त्राण ?

शब्दार्थ—उद्गम=उत्पत्ति का स्थान, मूल स्रोत। अलस प्राण=

आलस्यपूर्ण जीवन । चिर चचल पुकार=सुख प्राप्त करने की अमर अभिलाषा । त्राण—रक्षा, आश्रय ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अब श्रद्धा द्वारा अपनी वासना की तृप्ति न होने के कारण मनु अत्यन्त क्षुब्ध हो सोचने लगे कि जिस प्रकार कोई अलसाया हुआ व्यक्ति मुह ढक कर सो जाता है उसी प्रकार मेरे ये आलस्य-पूर्ण प्राण न जाने कब तक इस तरह यो ही पडे रहेगे अर्थात् सुख एव आनन्द के बिना ही पडे रहेगे । मनु सोच रहे हैं कि जीवन मे आनन्द प्राप्त करने की अमर अभिलाषा कब तक मेरे हृदय मे लगातार उठती रहेगी और कब तक मुझे निराश होना पडेगा क्योंकि श्रद्धा की नीरसता के कारण स्वय उनके तृप्ति का कोई साधन नही रहा ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है ।

श्रद्धा का प्रणय • • • कुशल सूक्ति ।

शब्दार्थ—प्रणय=प्रेम । अभिव्यक्ति=प्रकट करने का ढग । व्याकुल आलिंगन=उत्कट लालसा से पूर्ण मिलन की भावना । अस्तित्व=स्थिति ।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि श्रद्धा अब मेरे प्रति अपने प्रेम को अत्यत सीधे सादे ढग से प्रकट करती है और न तो उसके प्रेम मे पहले के समान उत्कट लालसा ही है और न ही उसके प्रेम प्रकट करने का ढग ही कौशल एव चमत्कार से पूर्ण है तथा उसकी बातो में भी किसी प्रकार के चमत्कार का आभास नही होता ।

टिप्पणी—यहाँ यथासख्य या क्रम और दीपक अलकार है ।

भावनामयी वह • कुछ भी नवीन ।

शब्दार्थ—भावनामयी=भावो से परिपूर्ण स्मित रेखा=मुस्कान, मुस्कराहट । विलीन=छिपा हुआ, अत । उल्लास=उमग । कुसुमोदगम=फूलो का खिलना ।

व्याख्या—मनु सोचते है कि श्रद्धा की नवीन मुस्कराहट मे अब पहले के समान भावो से परिपूर्ण उत्साह का अनुभव नही होता अर्थात् अब श्रद्धा के शरीर मे पहले जैसी तीव्र वासना से पूर्ण स्फूर्ति नही रही । श्रद्धा अब न तो कभी प्रेम क्रीडा के लिए ही आग्रह करती है और न उसके हृदय मे उमग ही शेष रही है तथा फूलो के नित्य नवीन विकास के सदृश पहले उसके हृदय मे

और उन्हें सामने ही गुफा का द्वार दिखाई दे रहा था। इतना होते हुए भी उनके पैर गुफा की ओर नहीं बढ़ रहे थे क्योंकि उनके मन में श्रद्धा के प्रति कोई आकर्षण नहीं रहा था और श्रद्धा की इस उदासीनता के सम्बन्ध में ही विचार करते हुए वे आ रहे थे।

मृग डाल .... शृंग तीर।

शब्दार्थ—शिथिलत=थका हुआ। उपकरण—सामान। आयुध=हथियार। प्रत्यंचा=धनुष की डोरी। शृंग=सींग का बाजा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु ने गुफा के द्वार पर ही आहत हिरण को डाल दिया और धनुष को भी वहीं रख दिया तथा अत्यन्त थके हुए शरीर से वहीं बैठ गए। मनु के समीप ही तीर, धनुष की डोरी और सींग का बाजा आदि शिकार का सारा सामान भी बिखरा पड़ा था।

पश्चिम की रागमयी .... चपल जन्तु।

शब्दार्थ—रागमयी=अरुण, लालिमा। अहेरी=शिकारी मनु। चपल=चंचल। जन्तु=पशु।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा मनु की प्रतीक्षा कर रही थी और आगमन में विलम्ब होने के कारण वह सोच रही थी कि पश्चिम दिशा में संध्या की लाली भी समाप्त होकर अन्धकार में बदल गई है परन्तु शिकार पर गये हुए मनु अभी तक नहीं लौटे। क्या किसी चंचल पशु का पीछा करते हुए मनु कहीं दूर चले गये।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में श्रद्धा एक पतिपरायणा नारी के रूप में अंकित हुई है।

यों सोच रही .... गुल्फ चूम।

शब्दार्थ—अनमनी=उदास। अलकें=केश। गुल्फ=एड़ी के ऊपर की गाँठ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि रात्रि का अंधकार फैलता हुआ देखकर [illegible]ित होकर मनु के सम्बन्ध में सोच रही थी और उसके हाथों में [illegible] घूम रही थी। मनु को शिकार से लौटने में देर हो जाने के [illegible] कुछ उदास भी हो गयी थी। उस समय उसके बालों की लटें [illegible] का स्पर्श कर रही थीं।

[illegible] 'अलकें लेती थीं गुल्फ चूम' में वाक्यवैशिष्ट्योत्पन्नवाच्य है।

और उन्हें सामने ही गुफा का द्वार दिखाई दे रहा था। इतना होते हुए भी उनके पैर गुफा की ओर नही बढ रहे थे क्योकि उनके मन मे श्रद्धा के प्रति कोई आकर्षण नही रहा था और श्रद्धा की इस उदासीनता के सम्बन्ध मे ही विचार करते हुए वे आ रहे थे।

मृग डाल .. .. शृग तीर।

शब्दार्थ—शिथिलत=थका हुआ। उपकरण—सामान। आयुध=हथियार। प्रत्यचा=धनुष की डोरी। शृग=सीग का बाजा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु ने गुफा के द्वार पर ही आहत हिरण को डाल दिया और धनुष को भी वही रख दिया तथा अत्यन्त थके हुए शरीर से वही बैठ गए। मनु के समीप ही तीर, धनुष की डोरी और सीग का बाजा आदि शिकार का सारा सामान भी बिखरा पडा था।

पश्चिम की रागमयी .... चपल जन्तु।

शब्दार्थ—रागमयी=अरुण, लालिमा। अहेरी=शिकारी मनु। चपल=चचल। जन्तु=पशु।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा मनु की प्रतीक्षा कर रही थी और आगमन मे विलम्ब होने के कारण वह सोच रही थी कि पश्चिम दिशा मे सध्या की लाली भी समाप्त होकर अन्धकार मे बदल गई है परन्तु शिकार पर गये हुए मनु अभी तक नही लौटे। क्या किसी चचल पशु का पीछा करते हुए मनु कही दूर चले गये।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे श्रद्धा एक पतिपरायणा नारी के रूप मे अंकित हुई है।

यों सोच रही .. . . गुल्फ चूम।

शब्दार्थ—अनमनी=उदास। अलकें=केश। गुल्फ=एडी के ऊपर की गाँठ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि रात्रि का अधकार फैलता हुआ देखकर श्रद्धा चिंतित होकर मनु के सम्बन्ध मे सोच रही थी और उसके हाथो मे तकली लगातार घूम रही थी। मनु को शिकार से लौटने मे देर हो जाने के कारण वह कुछ-कुछ उदास भी हो गयी थी। उस समय उसके बालो की लटें एडी के ऊपरी भाग का स्पर्श कर रही थी।

टिप्पणी—यहाँ 'अलकें लेती थी गुल्फ चूम' मे वाक्यवैशिष्ट्योत्पन्नवाच्य सम्भवा आर्थी व्यजना है।

केतकी .... लिये देह !

शब्दार्थ—केतकी गर्भ=केतकी अर्थात् केवड़े के फूल का वह भीतरी भाग जो पराग कोष कहलाता है और जिसका रंग पीला होता है। स्नेह=प्रेम। कृशता=दुर्बलता, कमजोरी। लजीली=लज्जायुक्त। कम्पित=काँपती हुई। लतिका सी=लता के समान।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि गर्भवती होने के कारण श्रद्धा का मुख केतकी के पराग कोष के समान पीला पड गया था और उसकी आँखें आलस्य-पूर्ण अनुराग से भरी रहती थी। साथ ही उनके शरीर में नवीन दुर्बलता और लज्जा के दर्शन हो रहे थे तथा उसकी देह काँपती हुई लता के समान दिखाई दे रही थी।

टिप्पणी—इस पद में पूर्णोपमा अलकार है।

मातृत्व बोझ .. .. रुचिर साज।

शब्दार्थ—मातृत्व बोझ=माता बनने के कारण स्तनों में दूध भर जाने से उनका बोझिल हो जाना। पयोधर=स्तन। पीन=पुष्ट, भारी, उभरे हुए। पट्टिका=पट्टी। रुचिर साज=सुन्दर वस्त्र।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा अब शीघ्र ही माता बनने वाली थी अतः उसके स्तन दूध भर जाने के कारण भारी होकर झुक गए थे। श्रद्धा ने अपने स्तनों को कोमल काली ऊन की नवीन पट्टी से बाँध रखा था जो उसके शरीर पर बड़ी सुन्दर जान पडती थी।

सोने की सिकता .... रही हास।

शब्दार्थ—सोने की सिकता=सुनहरी रेत या बालू। कालिन्दी=यमुना नदी। उसास=आहें, यहाँ हिलोर से अभिप्राय है। स्वर्गंगा=आकाश गंगा। इन्दीवर=नील कमल। पंक्ति=कतार। हास=हँसना, यहाँ खिलना।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि गर्भवती श्रद्धा का शरीर पीला पड़ गया था और उसके स्तनों पर बधी काली ऊन की पट्टी ऐसी जान पड़ती थी मानो सुनहरी रेत के बीच काले जल से पूर्ण यमुना कृष्ण के वियोग में आहें भरती हुई प्रवाहित हो रही हो और आहें भरने के कारण ही उसका रंग काला पड़ गया हो। साथ ही कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता था मानो श्रद्धा का पीला शरीर आकाश गंगा हो और उस पर बंधी काली ऊन की पट्टी नीले कमलों पर खिली हुई कतार के रूप में शोभायमान हो रही हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे वस्तूत्प्रेक्षा एव सदेह अलकार है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि सूरदास ने भी भ्रमरगीत सम्बन्धी पदो में कृष्ण के वियोग मे कालिन्दी अर्थात् यमुना नदी का जाहे भरने के कारण काली पड जाने का वर्णन किया है—

लखियत कालिन्दी अति कारी ।
कहियो पथिक जाय हरि सो ज्यो भई विरह जुर जारी ।

कटि मे लिपटा · ··· जननी सलील ।

शब्दार्थ—कटि=कमर । नवल वसन=नया वस्त्र । नील=नीला । दुर्भर=असह्य । सलील=प्रसन्नता से, सहर्ष ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा की कमर मे भी वैसा ही नया पतला नीला वस्त्र लिपटा हुआ था जैसा कि उसने अपने स्तनो पर धारण कर रखा था । यद्यपि इस समय श्रद्धा को गर्भ की असह्य पीडा थी पर माँ बनने के आनन्द मे वह पीडा को सहर्ष झेल रही थी ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने यह सकेत करना चाहा कि श्रद्धा शीघ्र ही माँ बनने वाली थी ।

श्रम बिन्दु बना था महा पर्व ।

शब्दार्थ—श्रमबिन्दु=पसीने की बूँद । भावी जननी=होने वाली माँ । सरस गर्व=मधुर अभिमान । कुसुम=फूल । भूपर=धरती पर । महापर्व=महोत्सव, सतान के जन्म का समय ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा के मुख पर पसीने की बूँदें झलक रही थी और ऐसा प्रतीत होता था मानो वे उस होने वाली माता के मधुर अभियान की अभिव्यक्ति हो । कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा शीघ्र ही माँ बनने वाली थी और श्रम बिन्दुओ के रूप मे उसका सरस अभिमान झलक रहा था । साथ ही जब पसीने की बूँदे झर-झरकर धरती पर गिरती थी तो ऐसा जान पडता था मानो सतान के जन्म का महान् उत्सव निकट आ गया है और यह बूँदें सुन्दर व सुकुमार फूलो की भाँति धरती पर बरस रही हैं।

टिप्पणी—इस सम्पूर्ण पद मे उत्प्रेक्षा अलकार है और 'श्रम बिन्दु बना सा' मे उपमा तथा 'वन कुसुम' मे रूपक अलकार की योजना हुई है ।

मनु ने देखा · ·· ··· भाव नहीं अनूप ।

शब्दार्थ—सहज=स्वाभाविक । खेद=उदासी । अपनी इच्छा का दृढ़

विरोध=अपनी विलासमयी इच्छा के पूर्ण विपरीत आचरण। अनूप=अद्भुत, सर्वथा नवीन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु ने गुफा के द्वार से ही झांक कर श्रद्धा का वह रूप देखा जिसमे स्वाभाविक उदासी स्पष्ट दिखाई पड रही थी। मनु को श्रद्धा का वह रूप पसन्द नही आया क्योकि वह उनकी विलासमयी इच्छा के पूर्ण विपरीत था और उन्हे श्रद्धा की इस मुखाकृति मे पहले के समान अद्भुत भावो के दर्शन नही हुए।

टिप्पणी—वस्तुत मनु चाहते थे कि श्रद्धा नित्य नवीन बनाव शृगार किया करे और उसकी मुखाकृति मे नित्य नवीन आकर्षण दिखाई दे तथा जब कभी वे घर आवे तब श्रद्धा वासनामयी दृष्टि से उनका स्वागत करे। पर श्रद्धा की मुखाकृति मे इस समय इन बातो की झलक न होकर स्वाभाविकता एव उदासीनता दिखाई दे रही थी। इसलिए मनु को श्रद्धा का वह रूप अपनी इच्छाओ के विपरीत जान पडा।

वे कुछ बोले .... उनका विचार।

शब्दार्थ—साधिकार=अधिकार की भावना से।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु श्रद्धा के उस रूप को देखकर कुछ भी नही बोले बल्कि चुपचाप उसकी ओर अधिकार भरी दृष्टि से देखते रहे। श्रद्धा उन्हे देख धीरे से मुस्करा उठी और उस समय ऐसा प्रतीत हुआ मानो उसने मनु के भावो को पढ लिया हो।

टिप्पणी—वस्तुत मनु श्रद्धा के शरीर पर अपना पूर्ण अधिकार समझते थे अतएव वे उसकी ओर अधिकार भरी दृष्टि से देख रहे थे।

दिन भर थे ... . देह गेह।

शब्दार्थ—हिंसा=निरीह पशुओ की हत्या, शिकार। देह=शरीर। गेह=घर।

व्याख्या—श्रद्धा ने मधुर स्नेह से पूर्ण वाणी मे मनु से कहा कि तुम सारा दिन कहाँ भटकते रहे? क्या तुम्हे जगल मे निरीह पशुओ का शिकार करना इतना अधिक प्रिय लगता है कि इसके लिए तुम्हे न तो उसके शरीर का ध्यान रहता है और न घर की चिन्ता रहती है।

मैं यहाँ अकेली .... कर अशांत।

शब्दार्थ—पद ध्वनि=पैरों की आवाज। नितान्त=एकदम। कानन=जगल। अशांत=आतुर, व्यग्र।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि मैं यहाँ अकेली बैठी हुई तुम्हारा रास्ता देख रही हूँ अर्थात् तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हूँ। जब तुम आतुर होकर जगल मे मृग के पीछे दौड रहे थे तब मैं तुम्हारे पैरो की आवाज सुनती हुई तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी।

टिप्पणी—सामान्यतया श्रद्धा तक मनु की पद ध्वनि का सुनाई देना सम्भव नही जान पडता पर कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा मनु की चिन्ता मे इतनी तल्लीन रहती है कि उसे उनकी पद ध्वनि भी सुनाई देती है।

ढल गया दिवस • रहे घूम।

शब्दार्थ—ढल गया=छिप गया, समाप्त हुआ। दिवस=दिन। रक्तारुण बन=लाल खून मे सनकर, साध्यकालीन लाल सूर्य बनकर। नीड़=घोसला। विहग युगल=पक्षियो के जोडे।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि पीला-पीला दिन भी कब का समाप्त हो गया और चारो ओर अंधेरा छा गया है पर तुम अभी भी लाल खून मे सनकर, साध्यकालीन लाल सूर्य के समान जगल मे घूमते रहे। श्रद्धा मनु से कह रही है कि देखो पक्षियो के जोडे अपने-अपने घोसलो मे लौट आये हैं और अपने बच्चो को प्यार कर रहे हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'रक्तारुण' मे श्लेष और 'पीला-पीला' पुनरुक्ति अलकार की योजना हुई है।

उनके घर • • अन्य द्वार?

शब्दार्थ—कोलाहल=पक्षियो का शोरगुल। जिसके हित=जिसके लिए।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि वह देखो उन पक्षियों के घोसलों मे कितना शोरगुल सुनाई दे रहा है परन्तु मेरी गुफा द्वार अभी तक सूना पडा है। श्रद्धा मनु से पूछती है कि तुम्हे ऐसी क्या कमी है जो तुम सारा दिन जगल मे भटकते रहते हो?

श्रद्धे! तुमको विकल धाव।

शब्दार्थ—मधुर वस्तु=रमणीय वस्तु। विकल=बेचैन कर देने वाला।

व्याख्या—श्रद्धा की बातें सुनकर मनु ने उससे कहा कि हे श्रद्धे, तुम्हें चाहे किसी भी बात की कमी न हो परन्तु मुझे अपने जीवन मे कमी स्पष्ट दिखाई दे रही है। मनु का कहना है कि मैं कोई ऐसी रमणीय वस्तु खो बैठा हूँ

जिसके न मिलने से मेरे हृदय मे अब व्याकुलता उत्पन्न हो रही है। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि वह जिस मधुर वस्तु को खो बैठे हैं उसकी स्मृति अब उनके हृदय पर तीव्र घाव कर रही है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार है।

चिर मुक्त पुरुष • •• •••• बन रहा डीह।

शब्दार्थ—चिर मुक्त=हमेशा से स्वच्छन्द रहने वाला। अवरुद्ध=परतन्त्र, बन्धन युक्त। निरीह=बेचारा, लाचार, असहाय। पगु=लँगडा, जो चल न सके। ढहकर=गिर कर। डीह=उजडे हुए गाँव का टीला।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मैं तो हमेशा से स्वच्छद रहने वाला व्यक्ति हूँ और पहली बार बधन मे पडा हूँ लेकिन मैं असहाय होकर कब तक इन परतन्त्रता मे जीवन बिता सकूँगा ? मनु कहते हैं कि मेरी प्रगति रुक गई है और मे किसी लँगडे व्यक्ति के समान आग बढने मे असमर्थ हूँ तथा मेरी दशा उस उजडे हुए गाँव के टीले के समान हो गई है जिस पर कभी वैभव के दर्शन नही होते।

टिप्पणी—यहाँ 'गतिहीन' मे श्लेष, 'पगु सा' मे उपमा और 'ढह कर जैसे बन रहा डीह' मे उदाहरण अलकार है।

जब जड़ बन्धन • •••• • हो अधीर।

शब्दार्थ—मृदु=कोमल। आकुलता=तीव्र इच्छा। ग्रंथि=गाँठ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि जब मोह का निरकुश बधन कोमल प्राणो को कस लेता है तब यदि उस बधन को और अधिक कसने का प्रयत्न किया जाय तो स्वयमेव उस बधन की गाँठ टूट जाती है। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि मैं तुम्हारे प्रेम के बधन मे पड गया हूँ परन्तु जिस प्रकार अधिक कसने से रस्सी का बधन अपने आप टूट जाता है उसी प्रकार तुम्हारा मोह मुझे जितना अधिक जकडने का प्रयास करता है उतना ही वह बधन अधीर होकर टूटता जाता है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार है।

हँसकर बोले •••• •••• •• •• • मधुर प्राण।

शब्दार्थ—निर्भर=झरना। ललित=सुन्दर। उल्लास=प्रसन्नता, तीव्र उमग, आह्लाद। बन मधुर=आनदित होकर।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि पहले तुम मेरे आते ही प्रसन्न होकर

हँसते हुए मुझसे बातें किया करती थी और तुम्हारी उन बातो को सुनकर मुझे यही प्रतीत होता था कि मानो कल-कल ध्वनि से पूर्ण झरने का मधुर सगीत सुनाई दे रहा हो। इसका मूल कारण यह था कि उस समय तुम्हारे मन मे प्रेम की तीव्र उमग भरी रहती थी और तुम्हारी वह मधुर सगीतमयी वाणी सुनकर मैं आनन्द से झूमने लगता था।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

यह आकुलता .. . हो रही झूल।

शब्दार्थ—कोमल तन्तु=कोमल धागा या डोरी। सदृश=समान।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि अब तुम्हारी वह प्रेम की उत्कट अभिलाषा और व्याकुलता कहाँ गयी जिसे देखकर मैं सब कुछ भूल जाता था। तुम तो अब आशा की कोमल डोरी के समान तकली मे झूलती रहती हो अर्थात् पता नही तुम किस आशा मे उलझी निरन्तर तकली चलाने मे मग्न रहती हो।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार है।

यह क्यों क्या . .. हुआ न कर्म।

शब्दार्थ—शावक=पशुओ के बच्चे। मृदुल चर्म=कोमल खाल। मृगया =शिकार, आखेट। शिथिल=ढीला, कम।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुम सारा दिन तकली क्यो चलाती हो और क्या तुम्हें पशुओ के बच्चो की कोमल खालें नही मिलती, जिससे शरीर सरलतापूर्वक ढँका जा सके। साथ ही तुम बीज क्यों बीनती रहती हो और क्या मैं शिकार से जो मास लाता हूँ वह पर्याप्त नही होता और क्या मेरा शिकार का काम शिथिल पड गया है ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु के हृदय मे स्थित अतृप्त वासना, ईर्ष्या, द्वेष, आदि मनोभावना का चित्रण हुआ है।

तिस पर यह .. . .. छिप रहा भेद ?

शब्दार्थ—सखेद=दुख एव उदासी सहित। भेद=रहस्य।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम सारा दिन परिश्रम क्यो करती रहती हो और तुम्हारा शरीर पीला क्यो पड गया है तथा कपडा बुनने मे तुम इतनी मेहनत क्यो करती हो कि जिससे तुम थक जाओ ? तुम यह सब किसके लिए कर रही हो और मुझे यह तो बताओ कि इसमे कौन सा रहस्य छिपा हुआ है।

अपनी रक्षा .... सकी न अर्थ ।

शब्दार्थ—अस्त्र=वाण आदि फेंककर चलाये जाने वाले हथियार । शस्त्र =तलवार आदि हाथ मे लेकर जाने वाले हथियार । हिंसक=हिंसा करने वाला । निरीह=विवश, लाचार । समर्थ=शक्ति ।

व्याख्या—मनु के उद्गार सुनकर श्रद्धा ने कहा कि यदि तुम हिंसक पशुओ से अपनी रक्षा के लिए उन पर अस्त्र चलाओ और उनकी हत्या करो तो अनुचित न होगा क्योकि हिंसक से अपनी रक्षा करना आवश्यक हो जाता है । कहने का अभिप्राय यह है कि यदि कोई जानवर जगल मे तुम पर आक्रमण कर दे तो अपने बचाव के लिए उस पर अस्त्र चलाना अनुचित न होगा ? श्रद्धा पुन कहती है कि जो वेचारे भोले भाले पशु हैं वे जिन्दा रहकर हमारे लिए उपयोगी सिद्ध होंगे अत. हम उनकी हत्या करें यह उचित नहीं जान पडता । इस प्रकार वेचारे लाचार पशुओ की हत्या करने का अर्थ मेरी समझ मे नही आता ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा के माध्यम से हिंसा का विरोध और अहिंसा का समर्थन किया है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाभारत मे भी निरीह प्राणियों का वध करना अनुचित माना गया है—

आहर्त्ता चानुमन्ता च विशस्ता क्रय—विक्रयी ।
सस्कर्त्ता चोपभोक्ता च खादका सर्वं एव ते ॥

चमडे उनके .... दुग्ध धाम ।

शब्दार्थ—मासल=हृष्ट पुष्ट । अमृत=मधुर दूध । दुग्ध धाम=दूध देने वाले ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि मैं तो यही चाहती हूं कि पशु हमेशा जीवित रहकर अपने चमडो को धारण करें क्योकि मेरा काम तो ऊन से भी चल सकता है । मेरा तो यही विचार है कि पशु हृष्ट पुष्ट होकर जीवित रहे और वे दूध देने मे समर्थ रहे तथा हम उनका अमृत के समान दूध पी सकें ।

टिप्पणी—इस पद मे अहिंसा का समर्थन करते हुए पशुपालन पर बल दिया गया है ।

वे द्रोह न .... बनें सेतु ।

शब्दार्थ—द्रोह=विरोध, शत्रुता । स्थल=स्थान । सहेतु=उद्देश्य से

उपकार के लिए। भव=ससार। जलनिधि=सागर, ससार। सेतु=पुल, सहारा।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि जिन पशुओं को हम अपने किसी उद्देश्य और उपकार के लिए पाल सकते हैं उनसे शत्रुता नही करनी चाहिए। श्रद्धा मनु से कहती है कि यदि हम पशुओ से कुछ श्रेष्ठ हैं तो हमे उनमे ऊँचा बन कर दिखाना चाहिए और इस ससार रूपी सागर मे पुल का काम करना चाहिए अर्थात् पशुओ के उद्धार और उनकी सुरक्षा का कारण बनना चाहिए।

टिप्पणी—इस पद मे परम्परित रूपक अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—'महाभारत' मे भी निरीह प्राणियो की हत्या का विरोध और अहिंसा का कट्टर समर्थन किया गया है—

अहिंसा परमोधर्मस्तथा हिंसा पर तप ।
अहिंसा परम सत्य यतो धर्म प्रवर्तते ॥

मैं यह तो .... छले जायँ।

शब्दार्थ—सहज लब्ध=सरलता से प्राप्त। विफल=असफल। छले जायँ=ठग लिए जायँ, ऐश्वर्य से वचित रहे।

व्याख्या—जब श्रद्धा ने मनु के समक्ष पशु वध की अनुपयुक्तता सिद्ध करते हुए अहिंसा का कट्टर समर्थन किया तब मनु ने कहा कि मैं सरलता से प्राप्त होने वाले सुखो का उपभोग न कर उन्हें त्याग दूँ। वास्तव में यह जीवन तो एक सघर्ष है और यदि इस सघर्ष के बाद भी हमे सुख नहीं प्राप्त होता तो फिर जीवित रहने से क्या लाभ है। मनु का कहना है कि मैं अपने सुखो को त्याग कर अपने जीवन को असफल बनाना या स्वय को धोखा नहीं देना चाहता।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु वैयक्तिक सुख के कट्टर समर्थक जान पडते हैं और उन्हें श्रद्धा का सहृदयतापूर्ण अहिंसावादी दृष्टिकोण अनुचित प्रतीत होता है।

काली आँखो .... अनन्य।

शब्दार्थ—आँखों का तारा=आँखो की पुतली। धन्य=सौभाग्यशाली। मानस=हृदय मन। मुकुर=दर्पण, आइना। अनन्य=एक व्यक्ति के प्रति दृढ निष्ठा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मैं तो केवल यही चाहता हूँ कि हमेशा तुम्हारी आँखो की पुतली मे अपना चित्र देखता रहूँ और तुम निरन्तर

मेरे मन रूपी दर्पण मे विराजमान रहो। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा के नेत्रो मे किसी अन्य व्यक्ति का चित्र न होकर स्वय उनका ही सौभाग्यशाली चित्र हो और उनके हृदयरूपी दर्पण मे वे अनन्य भाव से उसकी — श्रद्धा की— छवि ही सर्वदा प्रतिविम्बित देखना चाहते हैं। इस प्रकार मनु यह चाहते हैं कि उनके और श्रद्धा के मध्य किसी प्रकार का अन्तर न हो और श्रद्धा एकमात्र उनसे ही अनन्य भाव से प्रेम करें।

टिप्पणी—यहाँ मानस मुकुर मे रूपक अलकार है।

श्रद्धे ! यह नव .. .. रहा डोल।

शब्दार्थ—नव सकल्प=नवीन धारणा या निश्चय। लघु=छोटा, क्षणिक। अमोल=बहुमूल्य, अनमोल। चल=दल सा पीपल का वृक्ष, पीपल का पत्ता।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धे ! मैं जो अपना यह निश्चय तुम्हारे सामने प्रकट कर रहा हूँ वह कोई मेरी नवीन धारणा नही है बल्कि इसका तो मैं अपना जीवन व्यतीत करने के लिए, पहले से ही निश्चय कर चुका हूँ। मनु कह रहे हैं कि जो सुख पीपल के पत्ते के समान चचल है मैं उसे इसी क्षणिक एव बहुमूल्य जीवन मे अब भोग लेना चाहता हूँ।

टिप्पणी—इस पद मे उपमा अलकार है।

देखा क्या .... विश्वास सत्य।

शब्दार्थ—स्वर्गीय सुख=बहुत बडा सुख, देवो को प्राप्त अलौकिक सुख। प्रलय नृत्य=विनाश का नाच। चिर निद्रा=मृत्यु। विश्वास=निष्ठा। सत्य=अटल, अडिग।

व्याख्या— मनु श्रद्धा से कहते हैं कि क्या तुमने देव सृष्टि का भयकर विनाश नही देखा ? मनु का कहना है कि देवताओ को अगणित अलौकिक सुख प्राप्त थे परन्तु भीषण प्रलय ने सब कुछ नष्ट कर दिया और न केवल देवताओ के अलौकिक सुख नष्ट हो गये बल्कि देव सृष्टि का भी विनाश हो गया। मनु श्रद्धा से पूँछते हैं कि यह सब देखते हुए भी न जाने तुम्हे जीवन पर क्यो इतना अधिक विश्वास है ?

टिप्पणी—मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि जब जीवन मे मृत्यु और नाश ही अश्वयम्भावी है तब श्रद्धा की यह धारणा भला कैसे उचित हो सकती है कि हमे वर्तमान जीवन के सुखो को त्यागकर भविष्य की चिन्ता करनी चाहिए।

तुलनात्मक दृष्टि—कामायनी के मनु की यह विचारधारा बहुत कुछ चार्वाक दर्शन के अनुरूप ही है, देखिए—

यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥

यह चिर प्रशान्त ··· · हो सानुराग ?

शब्दार्थ—चिर प्रशान्त मगल की अभिलाषा=जीवन मे प्राप्त होने वाली अविचल एव स्थायी कल्याण की इच्छा । सचित=इकट्ठा, एकत्र । सानुराग अनुराग से पूर्ण ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे है कि मेरी समझ मे नही आता कि जब संसार मे कोई भी वस्तु स्थिर और स्थायी नही है तब न जाने क्यो तुम्हारे हृदय मे चिरस्थायी शांति और कल्याण की इच्छा जागृत हो रही है ? मनु श्रद्धा से पूछते है कि तुम यह किसके लिए अपना प्रेम और दुलार एकत्रित कर रही हो तथा किसके प्रति आजकल तुम्हारा प्रेम बढता जा रहा है ?

यह जीवन का वरदान ·· · ·· रहे भार ।

शब्दार्थ—दुलार=प्रेम, प्यार । तव=तुम्हारा । चित्त=हृदय । वाहन करे=धारण करे ।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कहते हैं कि हे रानी ! तुम मुझे अपना वह प्यार प्रदान करो, जो मेरे जीवन के लिए वरदान के समान है । मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा हृदय केवल मेरी ही सुख सुविधाओ की चिन्ता करे । मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा का प्यार उनकी सबसे बडी सफलता है और उस पर किसी अन्य का अधिकार उन्हें पसन्द नही है तथा वे यही चाहते हैं कि श्रद्धा केवल उनके सुख सुविधाओ की ही ओर ध्यान दे ।

टिप्पणी—इस पद मे मनु की स्वार्थभावना का सफल चित्रण हुआ है ।

मेरा सुन्दर विश्राम ···· ·· · एक एक ।

शब्दार्थ—विश्राम=सुख शांति प्रदान करने वाला । सृजना हो=निर्माण करता हो । मधुमय=मधुर । मधुधारा=रस या प्रेम की धारा ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मेरी एकमात्र अभिलाषा यही है कि तुम्हारा हृदय मुझे सुख शांति प्रदान करने वाला हो और वह सुखोपभोग की सम्पूर्ण सामग्रियो से सुसज्जित होकर एक ऐसे रमणीय ससार का निर्माण करे

विलास की हमेशा नवीन अभिलाषाएँ उठा करती थीं परन्तु अब वहाँ किसी भी प्रकार की नवीनता नहीं दिखाई देती।

टिप्पणी—इस पद में उपमा अलंकार है।

आती है वाणी .... चंचल मरोर।

शब्दार्थ—चाव भरी=आवेश भरी लालसा से पूर्ण। लीला हिलोर=क्रीड़ा की इच्छा। मरोर=कसक।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि अब पहले के समान श्रद्धा की बातों से किसी प्रकार की आवेश भरी क्रीड़ा का आभास नहीं मिलता। जहाँ कि पहले उसमे लहरों के समान मृत्यु से पूर्ण नित्य नवीनता दिखाई देती थी और वह चंचल लहरों की भाँति इठलाती हुई सी मेरे कानों में गूँज उठती थी वहाँ अब उसमें न तो चावपूर्ण क्रीड़ा है और न वह वासना की चंचल मरोर से इठलाती हुई सी ही दिखाई देती है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एव मानवीकरण अलंकार की योजना हुई है।

जब देखो बैठी .... अस्तित्व हुआ अतीत।

शब्दार्थ—शालियाँ=धान। श्रांत=थकी हुई। क्लांत=दुखी। सब कुछ लेकर=सभी वस्तुओं पर अपना अधिकार कर। अस्तित्व=सत्ता। अतीत=बीत गयी, महत्वहीन हो गई।

व्याख्या—मनु सोचते हैं कि जब भी देखो श्रद्धा या तो बैठी हुई धान बीनती रहती है और जरा भी नहीं थकती या वह अन्न एकत्र करने में लगी रहती है तथा इस परिश्रम से भी वह तनिक भी दुखी नहीं होती। मनु सोच रहे हैं कि श्रद्धा बीजों का संग्रह करती है और जब समय मिलता है तब वह तकली चलाती हुई गीत गाती रहती है। इस प्रकार श्रद्धा को वह सब मिल गया जो वह चाहती थी परन्तु उसकी दृष्टि में अब मेरे जीवन का कुछ भी मूल्य नहीं रहा और वह मेरी तनिक भी चिन्ता न कर अपने काम धन्धे में मग्न रहती है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने श्रद्धा के गृहस्थ जीवन की सुन्दर झाँकी अंकित की है।

लौटे थे .... करते विचार।

शब्दार्थ—मृगया=आखेट, शिकार।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु शिकार से थक कर वापस लौटे थे

कितनी मीठी .... रहे चूम ।

शब्दार्थ—अभिलाषाएँ=इच्छाएँ, कामनाएँ । मगल के मधुर गान=उत्सव के समय के गीत । कोनो को रहे चूम=प्रत्येक कोने मे गूँज रहे ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा की उस कुटिया मे सुसज्जित वस्तुओ को देखकर यह स्पष्ट हो जाता था कि भावी सन्तान के लिए श्रद्धा के हृदय मे कितनी मधुर इच्छाएँ व्याप्त हो रही थी और उस कुटिया मे उत्सव के समय गाए जाने वाले गीत भी नीरवता से गूज रहे थे ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार है ।

मनु देख रहे ... . साभिमान ।

शब्दार्थ—चकित=हैरान । गृहलक्ष्मी=गृहिणी, घर की स्वामिनी, पत्नी । गृह विधान=घर का निर्माण । साभिमान=अभिमान सहित ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु आश्चर्य चकित होकर घर की स्वामिनी श्रद्धा की यह नवीन कुटिया और उसकी सजावट देख रहे थे परन्तु उन्हे श्रद्धा का यह नवीन घर देखकर कुछ भी सुख नही हुआ । मनु अब यह सोचने लगे कि श्रद्धा ने अभिमान सहित किसके सुख के लिए यह सब निर्माण किया है और कौन गर्वपूर्वक इन सुखो का उपभोग करेगा ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने एक ओर तो श्रद्धा के गृहलक्ष्मी रूप की झाँकी अकित की है और दूसरी ओर ईर्ष्यालु मन की मनोभावनाओ का चित्रण किया है ।

चुप थे पर .... अभी भीड़ ।

शब्दार्थ—नीड=घोंसला । कलरव=मधुर गुजार या ध्वनि । आकुल=लालायित, चचल ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु श्रद्धा की उस सुन्दर कुटिया को देख चुप ही रहे पर श्रद्धा से कहा कि देखो यह घोसला तो बन गया है परन्तु अभीतक इसमे मधुर ध्वनि करने वाले शिशुओ की चचल भीड एकत्र नही हुई । इस प्रकार श्रद्धा ने यहाँ यह सकेत करना चाहा है कि वह अब सतान के लिए आतुर है ।

टिप्पणी—इस पद मे उपादान लक्षण और रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

तुम दूर चले .... बीच पैठ ।

शब्दार्थ—निर्जनता=एकान्त, सुनसान । पैठ=प्रवेश कर, डूबकर ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब तुम शिकार खेलने के लिए बहुत दूर चले जाते हो तब मैं यहाँ इस कुटिया मे सारा दिन अकेली बैठी तकली घुमाती रहती हूँ और उनके चारो ओर के एकान्त मे डूब जाती हूँ ।

मैं बैठी गाती ... . खेलने को अहेर ।

शब्दार्थ—प्रतिवर्त्तन मे=घूमने मे, बार-बार चक्कर लगाने मे । स्वर विभोर=तकली के मधुर स्वर मे लीन होकर । अहेर=आखेट, शिकार ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि जब मेरी तकली तेजी से चक्कर लगाती है तब मैं उसकी मधुर ध्वनि मे लीन होकर यह गाती हूँ कि हे तकली, मेरे प्रिय, शिकार खेलने गय हैं और यहाँ मैं अकेली हूँ तथा तू धीरे-धीरे चल ।

जीवन का कोमल .... कुछ बड़े नान ।

शब्दार्थ—कोमल तन्तु=मुलायम धागा । मजुलता=सुन्दरता । चिर-नग्न प्राण=बहुत दिनो से नगे रहने वाले शरीर ।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि मैं तकली कातते-कातते यह गाती रहती हूँ कि जिस प्रकार तुम्हारे धागे कोमल हैं और लगातार बढते जा रहे हैं उसी प्रकार हमारा जीवन भी कोमलता एव सुन्दरता के साथ बराबर उन्नति की ओर बढता रहे । साथ ही जिस प्रकार तुम्हारे धागो से बना हुआ वस्त्र बहुत दिनो से नगे रहने वाले शरीर को ढँक देता है और उससे शरीर का सौन्दर्य बढ जाता है उसी प्रकार हमारे जीवन की नग्नता दूर होकर हम सभ्यता की ओर अग्रसर हो तथा हमारे सौन्दर्य की प्रतिष्ठा बढ़े ।

टिप्पणी—इस पद मे रूपक एव उपमा अलकार है ।

किरनों सी .... नवल गात ।

शब्दार्थ—उज्ज्वल=कातिमान । मधुजीवन=सरस जीवन । निर्वसना=वस्त्रहीन । नवल गात=नवीन शरीर ।

व्याख्या—श्रद्धा तकली को सम्बोधित कर कह रही है कि जिस प्रकार प्रात काल के समय सूर्य की किरणे प्रकाश रूपी स्वच्छ वस्त्र बुनकर भोली-भाली वस्त्रहीन प्रकृति को ढक देती हैं उसी प्रकार तू भी अपने उज्ज्वल धागो से बुने हुए स्वच्छ वस्त्र से मेरे जीवन के मधुर प्रभात अर्थात् मेरे नवजात

जिसमें प्रेम की मधुर धारा प्रवाहित होती हो और मेरे प्रति मधुर भावनाओं की लहरें एक एक करके उठती हों।

टिप्पणी—इस पद में 'मधुधारा' और 'लहरें' में रूपकातिशयोक्ति अलंकार है।

मैंने तो एक .... वहीं अधीर।

शब्दार्थ—कुटीर=कुटिया। अधीर=उत्सुकतापूर्वक।

व्याख्या—मनु की स्वार्थपूर्ण बातें सुनकर श्रद्धा ने कहा कि मैंने एक कुटिया बनाई है और तुम मेरे साथ चलकर उसे देखो। यह कहकर श्रद्धा मनु का हाथ पकड़कर उन्हें उत्सुकतापूर्वक अपनी कुटिया की ओर ले गई।

उस गुफा समीप .... जहाँ कुंज।

शब्दार्थ—पुआल=धान आदि के दाने झड़े हुए सूखे डंठल। छाजन=छप्पर। शांति पुंज=शांति का समूह। सघन=घनी।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु की गुफा के समीप कुंज था जो कि लताओं की डालियों के परस्पर मिलने के कारण अत्यन्त सघन हो गया था और वहीं पर अत्यन्त शांति प्रदान करने वाली वह कुटिया थी जिस पर पुआलों का छप्पर था।

टिप्पणी—यहाँ गम्योत्प्रेक्षा अलंकार है।

थे वातायन .... समीर, अभ्र।

शब्दार्थ—वातायन=झरोखा, रोशनदान। प्राचीर=दीवार। पर्णमय=पत्तों से युक्त। शुभ्र=स्वच्छ, उज्ज्वल। अभ्र=बादल।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस कुटिया में पत्तों की स्वच्छ दीवारें बनाई गयी थीं और उनमें झरोखे इस ढंग से बनाये गए थे कि यदि इन झरोखों में से हवा या बादल का टुकड़ा अन्दर आ जाय तो वह तत्काल ही सामने वाली दीवार के झरोखे से बाहर निकल जाय।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि प्रसाद का सूक्ष्म निरीक्षण दर्शनीय है।

उसमें था झूला .... सुरभि चूर्ण।

शब्दार्थ—वेतसी लता=वेंत की लता। सुरुचिपूर्ण=सुन्दर। धरातल=धरती। सुरभिचूर्ण=सुगंधित पराग।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा ने अपनी कुटिया में वेंत की लता का एक सुन्दर झूला डाल रखा था और धरती पर फूलों का कोमल, चिकना तथा सुगन्धित पराग बिछा हुआ था।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि मैं अपने शिशु को झूले पर झुलाया करूंगी और उसके कोमल कपोलों को चूमा करूंगी तथा वह मेरी छाती से लगा हुआ सरलतापूर्वक इस पर्वत की सम्पूर्ण घाटी मे घूम लिया करेगा।

वह आवेगा .... स्मिति-लतिका-प्रवाल।

शब्दार्थ—मृदु मलयज=कोमल मलय पवन। मसृण=चिकने। मधुमय =माधुर्य पूर्ण। स्मिति-लतिका-प्रवाल=हँसी रूपी लता के कोमल पत्ते।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब वह शिशु आयेगा तो उसके आगमन मे वही सुख प्राप्त होगा जो मलय पर्वत से आने वाली मलय पवन के आने पर होता है और उसके (शिशु के) चिकने बाल लहराते हुए होगे। साथ ही जिस प्रकार लता पर नवीन लाल कोमल किसलय शोभायमान होते हैं उसी प्रकार उस शिशु के अधरो पर भी मधुर मुस्कान थिरकती होगी।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

अपनी मीठी रसना .... मकरन्द घोल।

शब्दार्थ—रसना=जीभ, जिह्वा। कुसुम धूलि=फूलों का पराग। मकरद=फूलो का रस।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि वह शिशु अपनी मधुर जीभ से मधुर बाते करेगा और उसकी मधुर बातो से मेरे हृदय की पीडा के लिए फूलो के रस मे घुले पराग कण का काम देंगे। श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार पराग का लेप शारीरिक पीड़ा को हर लेता है उसी प्रकार मेरे शिशु की मधुर बातें सुन-सुनकर मेरे हृदय की पीडा शान्त हो जायगी।

टिप्पणी—इस पद में गम्योत्प्रेक्षा अलकार है।

मेरी आँखों .... चित्र मुग्ध।

शब्दार्थ—अमृत स्निग्ध=मधुर अमृत। निर्विकार=विकारहीन, सरल, भोले-भाले, निर्मल। अपना चित्र=अपनी आशा-आकाक्षाओ का मूर्त्तरूप। मुग्ध=मोहित होकर।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब मैं मुग्ध होकर अपने शिशु के भोले-भाले सरल नेत्रो मे अपनी आशा आकाक्षाओ का चित्र देखूंगी तब मेरे नेत्र आनन्द के अश्रुओ से पूर्ण हो जायेंगे और मुझे अपने ये अश्रु भी अमृत के समान मधुर प्रतीत होंगे।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे रूपक अलकार है।

तुम फूल उठोगी .... कस्तूरी कुरंग।

शब्दार्थ—फूल उठोगी=प्रसन्न होगी, हर्षित हो जाओगी। लतिका=लता, बेल। कंपित=काँपता हुआ, सिहरन। सुख सौरभ=सुख रूपी सुगंध। सुरभि=सुगंध, यहाँ सुख। कस्तूरी कुरंग=वह हिरण जिसकी नाभि में कस्तूरी रहती है।

व्याख्या—श्रद्धा की स्नेह एवं वात्सल्य पूर्ण बातें सुनकर मनु ने कहा कि तुम तो शिशु को पाकर लता के समान फूल उठोगी और जिस प्रकार लता प्रफुल्लित होकर सुगंध की लहरें बिखेरती है उसी प्रकार तुम भी सुख की लहरों में निमग्न हो हर्ष से पूर्ण हो जाओगी। दूसरी ओर उसी प्रकार मैं भी तुम्हारे समीप रहते हुए भी सुख प्राप्ति के लिए भटकता फिरूँगा।

टिप्पणी—यहाँ 'लतिका सी' में उपमा, 'सुख सौरभ' में रूपक, 'वन-वन' में यमक, 'सुरभि' में रूपकातिशयोक्ति और 'बन कस्तूरी कुरंग' में रूपक अलंकार की योजना हुई है।

यह जलन .... बन एक तत्व।

शब्दार्थ—जलन=आन्तरिक पीड़ा या वेदना। ममत्व=प्रेम। पंचभूत की रचना=क्षिति जल, पावक, गगन एवं समीर नामक पाँच तत्वों से बना हुआ यह संसार। रमण करूँ=सुखों का उपभोग करूँ। बन एक तत्व=अकेला ही एकमात्र।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मैं इस आन्तरिक पीड़ा को सहन नहीं कर सकता और मुझे तो मेरा प्रेम प्राप्त होना चाहिए। मनु का कहना है कि मैं तो यही चाहता हूँ कि पाँच तत्वों से बने इस संसार में एकमात्र मैं ही तुम्हारे साथ सुखों का उपभोग करूँ और हम दोनों के सुखी जीवन में कोई भी आकर बाधा न उपस्थित करे।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलंकार है।

यह द्वैत अरे . . . . निज विचार।

शब्दार्थ—द्वैत=दो का अस्तित्व, भेद दृष्टि। द्विविधा=दुविधा, दो भागों में बाँटना। प्रकार=ढंग। भिक्षुक=भिखारी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुमने शिशु की कल्पना कर मेरे अनन्य प्रेम को दो भागों में बाँटने का एक नया ढंग निकाला है, परन्तु यह भेद दृष्टि मुझे सह्य नहीं है क्योंकि [illegible] भी

हिस्सेदार नहीं बनाना चाहता। मनु का कहना है कि मैं कोई भिखारी नहीं हूँ जो तुम्हारी इच्छानुसार प्रेम की भीख स्वीकार करे और इससे उचित यही होगा कि मैं अपने प्रेम सम्बन्धी विचारों को ही परिवर्तित कर दूँ तथा यही समझूँ कि मेरे मन में तुम्हारे प्रति कभी प्रेम नहीं था।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में गर्व नामक संचारी भाव का सुन्दर चित्रण हुआ है।

तुम दानशीलता ·· ···· ·· शरद इंदु।

शब्दार्थ—दानशीलता=दानियों का स्वभाव। सजल=जल से पूर्ण। जलद=बादल। बितरो=बाँटो। बिन्दु=जलकण। सुख नभ=सुख रूपी आकाश। सकल कला धर=सम्पूर्ण कलाओं से युक्त चन्द्रमा। शरद इंदु=शरद ऋतु का चन्द्रमा।

व्याख्या—यहाँ परम्परित रूपक अलंकार की योजना हुई है।

भूले से कभी ···· ··· जानु टेक।

शब्दार्थ—निहारोगी=देखोगी। आकर्षणमय=आकर्षक, मनोहर। हास=हँसी। मुस्कराहट। मायाविनी=जादू करने वाली, छल करने वाली। जानुटेक=घुटने टेक कर, अत्यन्त विनम्र होकर।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि शिशु का आगमन होने पर तुम अब कभी भूल कर या अचानक ही आकर्षक मुस्कान के साथ मेरी ओर देखने का उपकार करोगी परन्तु हे मायाविनि; मैं उसे वरदान समझकर अब घुटने टेककर स्वीकार नहीं करूँगा। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि जब उन्हें यह विश्वास था कि श्रद्धा एकमात्र उनकी ही है और उसके प्रेम पर केवल उनका ही अधिकार है तब वे विनम्रतापूर्वक उससे प्रणय-याचना कर सकते थे परन्तु अब यह जानकर कि वह शिशु को भी अपना प्रेम पात्र समझती है वे स्वयं उनके समक्ष घुटने टेकना उचित नहीं समझते।

टिप्पणी—यहाँ गर्व नामक संचारी भाव का सुन्दर चित्रण हुआ है।

इस दीन अनुग्रह ·· ···· ···· सदा व्यर्थ?

शब्दार्थ—दीन अनुग्रह=दीनों पर की जाने वाली कृपा। समर्थ=योग्य। व्यर्थ=बेकार, विफल।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि जिस प्रकार धनी व्यक्ति दीनों को भीख देकर उन पर अपनी कृपा का बोझ डालते हैं उसी प्रकार तुम भी मुझ पर अपनी कृपा का भार डालकर मुझे आभारी बनाने का प्रयत्न न करो।

तुम अपने इस प्रयत्न में कभी सफल नहीं होगी क्योंकि मैं तुम्हारे प्रम की भीख नहीं लेना चाहता।

टिप्पणी—इस पद मे 'दीन अनुग्रह' मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

तुम अपने सुख .... महामन्त्र।

शब्दार्थ—स्वतन्त्र=अकेला। परवशता=परतन्त्रता, गुलामी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम अपने सुख को आनन्द पूर्वक भोगो परन्तु मैं तो सर्वथा स्वतन्त्र रहकर अकेले ही दु ख उठाऊँगा और हमेशा इस महामत्र का जाप करता रहूँगा कि मानसिक गुलामी सबसे बडा दु ख है।

लो चला आज .... कुसुम कुंज।

शब्दार्थ—संचित=एकत्रित, इकट्ठा। संवेदन भार पुंज=अभाव जन्य दु खानुभूति के भार का समूह। कांटे=कठिनाइयाँ, कष्ट। कुसुम कुंज=फूलो की कुँजें, सुख।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि आज तक मेरे जीवन मे जितने अभाव रहे हैं और अभावो की अनुभूतियो का जो भार मेरे हृदय में इकट्ठा है, आज मै उक्त भार को यही छोडकर पूर्णतया स्वतत्र होकर जा रहा हूँ। मनु का कहना है कि मुझे चाहे कांटो के मार्ग मे चलना पडे और चाहे कितनी ही विपत्तियाँ क्यो न सहनी पडे पर मैं उसी मे अपने को धन्य समझूँगा। मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि ये फूलों के कुज तुम्हे ही सुख प्रदान करें।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे लक्षण-लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

कह, ज्वलनशील अघोर श्रांत।

शब्दार्थ—ज्वलनशील=ईर्ष्या की आग से जलता हुआ। अन्तर=हृदय। शून्य=सूनी। निर्मोही=निष्ठुर। अधीर=व्याकुल, बेचैन। श्रान्त=थकी हुई।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा से इतना सब कहकर मनु ईर्ष्या की आग से जलता हुआ हृदय लेकर चले गये और वह प्रदेश अब सूना हो गया। थकी हुई और व्याकुल श्रद्धा यह कहती ही रह गयी कि ओ निष्ठर जरा रुक जा और मेरी बात तो सुन ले परन्तु मनु ने पीछे मुडकर उसकी ओर देखा भी नहीं और उसे वही छोड चले गये।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे शोकाकुल परिवार का सजीव चित्र अकित हुआ है।

नवाँ सर्ग

इड़ा

कथानक—श्रद्धा का परित्याग करके मनु बहुत समय तक पहाडो पर, जगलो मे और मैदानो मे घूमते रहे लेकिन कही भी उनके क्षुब्ध मन को शाति प्राप्त नही हुई और उनके हृदय का भार कही भी हल्का नही हुआ। घूमते-घूमते मनु एक दिन सारस्वत नगर पहुँचे। सरस्वती नदी के तट पर वसा हुआ यह राज्य भूचाल से ध्वस्त हो चुका था पर अभी कुछ खडहर शेष थे। चलते-चलते मनु को थकावट आ गयी थी और वे वहाँ विश्राम करते हुए जीवन के सम्बन्ध मे विचार करने लगे। मनु सोच रहे थे कि यह जीवन क्या है, जगत क्या है और स्वय मनुष्य क्या है ? आखिर हमारे अस्तित्व का अभिप्राय और उद्देश्य क्या है ? मनु के मन मे यह विचार भी उत्पन्न हुआ कि चाहे कुछ भी हो मैं जीवन का आदर्श जड हिमालय को नही वना सकता और न अकर्मण्यता को ही मैं प्रश्रय दे सकूँगा। मैं तो कर्मशील वनना चाहता हूँ और मेरे जीवन का आदर्श पवन तथा सूर्य ही होगे। मनु को जीवन मे व्याप्त निराशा भी प्रिय न प्रतीत हुई और सोचने लगे कि निराशा एव असफलताओ के मध्य हृदय मे इतना अधिक मोह कैसे वचा रहता है ?

उजडे हुए सारस्वत नगर को देखकर मनु को वहुत अधिक पीडा हुई और उनका ध्यान इस ओर गया कि यह वही सारस्वत प्रदेश है जो कभी देव सस्कृति का केन्द्र था। यही इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया था और इस घटना का स्मरण होते ही मनु के मन मे देव और असुरो के सघर्ष की स्मृतियाँ उभर उठी। उन्हे याद आया कि ये दोनो जातियाँ अपने-अपने विशिष्ट सिद्धान्त को लेकर एक दूसरे का व्यर्थ विरोध करती थी और उन दोनो मे सघर्ष किसी लोकहित की भावना से नही वल्कि दम्भ के कारण होता रहा है। इसी समय मनु को यह भी अनुभव हुआ कि आज उनके हृदय मे सघर्ष चल रहा है और वे असहाय तथा एकाकी ही हैं। उन्हें श्रद्धा का स्मरण हो आया और वे सोचने लगे कि मैं अधिकार की प्राप्ति के लिए ही ममता के वधन तोड कर तथा वह सुन्दर जीवन छोडकर इधर-उधर भटक रहा हूँ पर श्रद्धा विहीन होकर मैं अव एकदम दुर्वल व्यक्ति ही हूँ।

मनु इसी विचारधारा मे मग्न थे कि अचानक उन्हें आकाशवाणी के रूप मे काम का शाप सुनाई दिया—मनु ! तुम उस परम विश्वासमयी श्रद्धा को भूल गए। उसने तो तुम्हारे लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया था, परन्तु हृदय मे बराबर अविश्वास और स्वार्थ बना रहा तथा तुम हमेशा 'कुछ मेरा हो' की सकुचित भावना से भरे रहे। अब इसी सकुचित भावना के कारण तुम्हे तनिक भी सुख प्राप्त न होगा और तुम्हारे जीवन मे हमेशा द्वन्द्व चलता रहेगा। तुम जिस प्रजातन्त्र की स्थापना करना चाहते हो, तुम्हारा वह प्रजातन्त्र भी शाप से पूर्ण रहेगा और सम्पूर्ण प्रजा भेद भाव से भर जाएगी। वह अनेक प्रकार की समस्याओ मे उलझ कर अपने ही विनाश का प्रयत्न करेगी और निरन्तर कोलाहल तथा कलह बढते रहेंगे। प्रजा को अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति तो दूर रही, बल्कि उसे अविच्छिन्न खेद ही प्राप्त होगा। लोग एक दूसरे को पहचान भी न सकेंगे और सब कुछ पास होने पर भी उन्हे सतोष न मिलेगा। अपनी सकुचित दृष्टि के कारण सभी को बहुत अधिक कष्ट प्राप्त होगा और अनेक प्रकार के सदेह उत्पन्न होते रहेगे तथा स्वजनो मे विरोध फैलेगा और चारो ओर दरिद्रता फैलेगी। सर्वत्र सद्भावना एव सहानुभूति का अभाव रहेगा और भेदभाव के फैल जाने से मनुष्य की असीम एव अमोघ शक्ति का ह्रास हो जायगा। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन ही सघर्ष बन जाएगा और जनता जरा मरण के चक्कर मे पडकर हमेशा अशान्त बनी रहेगी। तुम्हारी प्रजा यह रहस्य न जान सकेगी कि जीवन मे श्रद्धायुत रहने से ही यह भूमि कल्याणमयी बन सकती है, अन्यथा यह ससार सकट और सघर्ष से ही पूर्ण रहता है।

काम की यह शाप ध्वनि अचानक विलीन हो गयी परन्तु मनु यह शाप सुनकर अवाक् रह गए। उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ कि उनका भविष्य अत्यन्त दु खपूर्ण और अनेक यातनाओ से भरा हुआ है तथा इन्हे दूर करने का कोई उपाय भी नही है। अचानक उनकी दृष्टि सरस्वती नदी की ओर गयी। वह मधुर ध्वनि करती हुई बह रही थी और उसमे सुन्दर लहरें उठ रही थी तथा उसका वेग निरन्तर विकास का प्रतीक था।

कुछ देर बाद प्रात कालीन किरणें बिखर कर अपूर्व शोभा फैलाने लगी। प्रभात के समय सहसा एक अनुपम सुन्दरी मनु के समक्ष उपस्थित हुई। उसका नाम इडा था और वह प्रदेश की महारानी थी। जब वह मनु के समीप

पहुँची तब दोनो ने एक दूसरे को अपना परिचय दिया। इडा ने मनु का स्वागत करते हुए कहा कि मैं यहाँ इस आशा मे पडी हूँ कि कोई यहाँ आए और उसकी सहायता से मैं अपने प्रदेश का पुनर्निर्माण करूँ। मनु ने अपने दु खो की चर्चा करते हुए कहा कि क्या इस नीले आकाश से परे जो लोक है वह उनके जीवन की निराशा को दूर कर सकता है। इडा ने मनु को सात्वना देते हुए कहा कि मैं तो यह समझती हूँ कि मनुष्य को सुख प्राप्ति के लिए अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिए और जो स्वय अपना विकास करने के लिए कटिवद्ध है उसे कोई भी नही रोक सकता। इस प्रकार इडा ने मनु को सारस्वत प्रदेश का शासन सूत्र सभालने और अपनी बुद्धि के अनुसार कार्य करने को कहा।

इडा की प्रेरणामयी वाणी सुनकर मनु के हृदय मे नूतन स्फूर्ति का सचार हुआ और उन्होने कर्म मे लीन होने का निश्चय किया। इस प्रकार उन्होंने सारस्वत नगर के पुनर्निर्माण का कार्य अपने हाथ मे ले लिया।

किस गहन गुहा ... शून्य चीर।

शब्दार्थ—गहन=गहरी, अधकारपूर्ण। गुहा=गुफा। झझा=आँधी, तूफान। विक्षुब्ध=उग्र, कुपित, अत्यन्त तीव्र गति वाला। महासमीर=अत्यन्त तेज आँधी, तूफान। परमाणु पुज=परमाणुओ का समूह। नभ=आकाश। अनिल=पवन, वायु। अनल=आग, अग्नि। क्षिति=पृथ्वी, धरती। नीर=जल। कटुता=विरोध, विषमता। जगती=ससार। दीन=दुखी। निर्माण=सृजन। प्रतिपद=प्रत्येक स्थान मे। क्षमता=योग्यता, शक्ति। सघर्ष=द्वन्द्व, युद्ध। विराग=उदासीनता। ममता=प्रेम। अस्तित्व=जीवन की सत्ता। चिरन्तन=शाश्वत, सनातन, हमेशा रहने वाली। धनु=धनुष। विषम=भीषण, तीक्ष्ण। लक्ष्य भेद को=लक्ष्य का भेदन करने के लिए, निशाने पर लगने के लिए। शून्य चीर=अन्तरिक्ष या आकाश को चीर कर।

व्याख्या—श्रद्धा को हिमालय की एकान्त गुफा मे छोडकर जब मनु अकेले ही इधर-उधर भटक रहे थे तब किसी एकान्त स्थान मे वे जीवन और उसकी समस्याओ के सम्बन्ध मे विचार करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार आँधी का प्रवाह तेज गति से भीषण रूप धारण कर, अधीर होकर किसी अज्ञात स्थान की ओर बढता दिखाई देता है उसी प्रकार मेरा यह दुखी जीवन भी आज

हिमालय की गहरी गुफा से निकल कर किसी अज्ञात दिशा की ओर तीव्र गति से बढ़ रहा है। जिस प्रकार भयकर आँधी मे अनेक प्रकार की मिट्टी और धूल आदि के कण मिले हुए रहते हैं उसी प्रकार मेरे इस जीवन मे भी आकाश, वायु, धरती, अग्नि और जल आदि पाँच तत्वो के परमाणुओ का समूह विद्यमान है। जिस प्रकार तेज आँधी अपनी भीषणता के कारण सभी को भयभीत कर देती है उसी प्रकार मेरा यह जीवन भी सभी को भयभीत करता हुआ भय की साधना मे सलग्न जान पड़ता है। जैसे भयकर आँधी बसे हुओ को उजाड़ कर ससार मे विषमता और कटुता पैदा कर देती है तथा ससार को अत्यन्त असहाय एव विवश बना देती है वैसे ही मेरा यह जीवन भी सर्वत्र द्वेष एव वैमनस्य ही बाँटता दिखाई देता है। जिस प्रकार आँधी का तेज प्रवाह मरुस्थल की बालू और अन्य उपजाऊ मिट्टी के कणो को खेतो मे इधर-उधर फैलाकर एक ओर तो निर्माण का कार्य करता है और दूसरी ओर वह तीव्र गति से बसे हुओ को उजाड कर विनाश का कार्य करने मे भी अपनी शक्ति दिखाता है उसी प्रकार मेरा यह जीवन भी निर्माण और विनाश के कार्यों मे लगा हुआ है कारण कि मैंने यदि श्रद्धा के सहयोग से गृहस्थी का निर्माण किया था तो दूसरी ओर श्रद्धा का परित्याग कर विनाश का कार्य भी किया है। इसी प्रकार जैसे आँधी या तूफान की तीव्र वायु का सृष्टि के सभी पदार्थों से अनुराग और विराग दोनो ही रहता है उसी प्रकार मेरा जीवन भी ममता एव वैराग्य से बँधा हुआ सघर्ष सा कर रहा है। मनु अन्त मे कहते है कि जिस प्रकार किसी लक्ष्य को भेदने के लिए धनुष से कोई तीर छूटकर अन्तरिक्ष को चीरता हुआ आगे बढ़ता है उसी प्रकार मेरा यह शाश्वत जीवन भी न जाने किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शून्यता को पार करते हुए तीव्र गति से अग्रसर हो रहा है।

टिप्पणी—यहाँ सम्पूर्ण पद मे सागरूपक अलकार है और 'झझा प्रवाह सा' मे उपमा तथा 'जीवन विक्षुब्ध महासमीर' और 'अस्तित्व चिरतन धनु' मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

देखे मैंने ये .... गतिमय पतग।

शब्दार्थ—शैल शृग=पर्वत की चोटियाँ। अचल=शान्त, स्थायी। हिमानी=बर्फ। रजित=सुशोभित, रगी हुई। उन्मुक्त=स्वतन्त्र। उपेक्षा भरे =ससार की अन्य वस्तुओ की ओर उदासीनता दिखाने वाले। तुङ्ग=उन्नत,

ऊँचे। जड गौरव=जडता का महत्व। वसुधा=धरती, पृथ्वी, संसार। स्वेद बिन्दु=पसीने की बूँदें, पिघली हुई बर्फ के जलकण। समाधि=अन्तःकरण, दृढ़ता के साथ स्थिर बैठना। अबोध=सरल। स्तिमित=निश्चल, निश्चेष्ट। गत शोक क्रोध=दुःख और क्रोध से रहित। स्थिर मुक्ति=स्थायी मुक्ति, अविचल मुक्ति। मरुत सदृश=आँधी के समान। अग-जग=जड चेतन अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि। कम्पन की तरंग=हलचल से भरी हुई गति। ज्वलनशील=जलता हुआ। गतिमय=गतिमान, हमेशा गतिशील रहने वाला। पतंग=सूर्य।

व्याख्या—जीवनसंगिनी श्रद्धा को हिमालय की एकान्त गुफा मे त्यागकर मनु अकेले ही इधर-उधर भटकते हैं और एक दिन किसी एकान्त स्थान मे वे कहते हैं—मैंने हिमालय पर्वत की वे ऊँची-ऊँची चोटियाँ देखी हैं जिन पर हमेशा बर्फ जमी रहती है और जो सर्वथा स्वच्छन्द दिखाई देती हैं तथा अपनी उच्चता मे सम्पूर्ण सृष्टि की उपेक्षा करती सी जान पडती है। कहने का अभिप्राय यह है कि हिमालय की ये चोटियाँ जडता और उच्चता की प्रतीक हैं तथा वे अचलता और उच्चता मे धरती का गौरव नष्ट करती सी दिखाई देती हैं। और वे योगियो के समान ही अपनी समाधि मे सुखी रहती हैं। साथ ही इन चोटियो से अनजाने ही जो नदियाँ प्रवाहित हो रही हैं वे ऐसी प्रतीत होती हैं मानो वे जल-कण समाधि मे लीन इन पर्वत चोटियो के शरीर से निकले हुए पसीने की बूँदें हैं। मनु कह रहे है कि इन नदियो के निकलने पर भी उक्त पर्वत चोटियो पर कुछ भी प्रभाव नही पडता और वे उस समय भी ऐसी प्रतीत होती है मानो वे क्रोध-शोक आदि समस्त विकारो से रहित होकर किसी समाधि मे स्थित योगी के समान निश्चल एव स्थिर बैठी हुई हो तथा उन्हे समस्त सासारिक बधनो से हमेशा के लिए छुटकारा मिलकर स्थायी मुक्ति प्राप्त होगयी हो। मनु का कहना है कि मैं हिमालय की इन जडता, स्थिरता एवं गतिहीनता से युक्त चोटियो जैसी प्रतिष्ठा नही चाहता बल्कि मेरी तो यही अभिलाषा है कि मेरा मन वायु के समान अबोध गति से आगे बढता जाय और नवीन सुख को प्राप्त करे। मनु कह रहे हैं कि मैं अपना जीवन सूर्य के समान बनाना चाहता हूँ और जिस प्रकार प्रज्वलित सूर्य अपनी किरणो से जड और चेतन को चूमता हुआ बढता रहता है उसी प्रकार मैं भी सम्पूर्ण सृष्टि के सौन्दर्य का रस पान करता हुआ आगे बढ़ता जाऊँ तथा जिस प्रकार सूर्य निरतर प्रज्वलित रहते हुए भी आगे बढ़ता रहता है उसी प्रकार मैं भी हमेशा आकाक्षा के ताप मे अपना विकास करता रहूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मानवीकरण, उपमा, रूपक एव गम्योत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

अपनी ज्वाला ··· ·· ···· ···· कुसुम हास।

शब्दार्थ—ज्वाला=हृदय की आग, हृदय की अभिलाषा। कर प्रकाश=इच्छाओ की पूर्ति के लिए साधन एकत्र करके। प्रारम्भिक जीवन का निवास =हिमालय पर्वत का निवास। गुहा=गुफा। मरु अंचल=रेगिस्तान का विस्तार। सदय=सहानुभूति पूर्ण। रीझा=प्रसन्न हुआ। कड़ी होड=प्रतिस्पर्द्धा। विजन प्रान्त=निर्जन या एकान्त प्रदेश। कल्पना लोक मे कर निवास =उज्ज्वल भविष्य की कल्पनाओ मे लीन रहता हुआ। कुसुम हास=फूलो की हँसी, सुखी जीवन।

व्याख्या—अपने जीवन के प्रति ग्लानि प्रकट करते हुए मनु कहते हैं कि मैंने अपनी अभिलाषाओ को पूर्ति के लिए, श्रद्धा का सहयोग प्राप्त कर, अनेक प्रकार के साधन एकत्र कर लिये थे और मेरी एक सुन्दर गृहस्थी वन गयी थी परन्तु आज मैं अपने उस प्रारम्भिक निवास स्थान को छोडकर चला आया हूँ तथा वन, पवत की गुफाओ, कुञ्ज एव मरुप्रदेश मे भटकता हुआ अपनी उन्नति का मार्ग खोज रहा हूँ। मनु का कहना है कि मैं कितना पागल हूँ। साथ ही मैंने अपने जीवन मे किसी पर भी दया नही की और मैं हमेशा निष्ठुर एव कठोर वना रहा। इसी प्रकार मैं आज तक किसी पर भी उदार नही रहा और मैने अब तक सभी से प्रतिस्पर्धा की है तथा मैं हमेशा अपनी ही ईर्ष्या की आग मे जलता रहा। मनु कह रहे हैं कि आज इस निर्जन प्रदेश मे मैं अकेला ही बिलखता हुआ भटक रहा हूँ और मेरी दुःख भरी वाणी का उत्तर देने वाला कोई नही है तथा जिस प्रकार ग्रीष्म ऋतु मे चलने वाली गर्म लू से न केवल कोई फूल ही खिलता बल्कि खिले हुए फूल भी झुलस जाते है उसी प्रकार मैं भी सब को झुलसाता हुआ दौड रहा हूँ और मुझसे किसी का भी हित नही हुआ। मनु का कहना है कि मैं हमेशा कल्पना लोक मे रहकर उजडे हुए स्वप्न देखता हूँ और मैंने कभी फूलो की हँसी नही देखी तथा जीवन मे कभी भी किसी को सुख-शान्ति नही दे सका।

टिप्पणी—(१) यहाँ सुन्दर लाक्षणिक पदावली का प्रयोग हुआ है और ज्वाला से कर प्रकाश, कोई फूल खिला एव देखा कब मैंने कुसुम हास आदि

पदो मे जहत्स्वार्था या लक्षण-लक्षणा है तथा लगा दी कडी होड मे अजहत्स्वार्था या उत्पादान लक्षणा है ।

(२) इन पक्तियो मे 'लू सा भुलसाता' मे पूर्णोपमा और फूल एव कुसुम हान मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

इस दुखमय जीवन कर विनाश ।

शब्दार्थ—जीवन का प्रकाश = जीवन की मनोरम इच्छायें। नभ = आकाश। नीललता = श्याम लता, यहाँ निराशा। हताश = आशाहीन, निराश, वचित। कलियाँ = सुख। काँटे = विपत्ति, दु ख। बीहड पथ = भीषण या निर्जन मार्ग। उन्मुक्त शिखर = पर्वत की स्वतन्त्र चोटियाँ। निर्वासित = घर से निकाला हुआ। अभिनय = कार्य। कुलाच रही = उछल कूद मचा रही है। पावस रजनी = वर्षा की रात पर यहाँ दुर्दिन या बुरा दिन। जुगनू गण = खद्योत समूह, यहाँ ऐसे पदार्थ जो सुख देने वाले दिखाई देते हैं परन्तु जो वास्तव मे सुखदायी नही होते। ज्योति कण = प्रकाश के कण, यहाँ सुखदायी पदार्थ।

व्याख्या—अपने जीवन की असफलताओ एव निराशाओ से दु खी होकर मनु यह रहे है कि इस दु ख पूर्ण जीवन की मनोरम इच्छाएँ आकाश रूपी नीली लताओ की डालो मे उलझ गयी हैं और मुझे अब सुख प्राप्ति की कोई *आशा नही दिखाई देती । कहने का अभिप्राय यह है कि दु खी मनुष्य को* आकाश की ओर देखकर कुछ सात्वना प्राप्त होती है। इसका यह अभिप्राय भी ग्रहण किया जा सकता है कि जब व्यक्ति इस ससार से निराश हो जाता है तब वह ऊपर स्वर्ग मे सुख प्राप्ति की कामना करता है। इसीलिए मनु को अब धरती पर कही भी सुख के चिन्ह दिखाई देते और वे कहते हैं कि मैं जिन वस्तुओ को सुख देने वाली समझ रहा था वे मुझे काँटे के समान दुःख देने वाली ही सिद्ध हुईं। मनु का कहना है कि श्रद्धा का परित्याग कर मैं इस निर्जन पथ पर चलता रहा हूँ और जब कही मै बहुत अधिक थक जाता हूँ तो थोडी देर विश्राम कर लेता हूँ। हिमालय पर्वत की ये ऊँची-ऊँची स्वतन्त्र चोटियाँ मेरी इस दयनीय दशा को देखकर मुझ पर हँसती हुई सी जान पडती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे ससार की नियामिका शक्ति अपना भयकर अभिनय करती हुई मेरे चारो ओर नाच रही हो या फिर इस सुनसान प्रदेश मे पग-पग पर मेरी असफलता ही चारो ओर नाचती कूदती सी दिखाई देती है। मनु का कहना है कि मैं अपने जीवन के इन बुरे दिनो मे जिस वस्तु

को सुखप्रद जानकर ग्रहण करना चाहता हूँ वही मुझे निराश करती है और मेरी दशा उस मनुष्य के समान है जो वर्षा ऋतु की घोर अन्धकारमयी रात्रि में प्रकाशित होने वाले सम्पूर्ण पदार्थों को स्वय नष्ट कर, पुन. प्रकाश पाने की अभिलाषा से जुगनुओ को दौडकर पकडता हो पर उसे प्रकाश के स्थान पर घोर अन्धकारमय प्रदेश ही मिलता हो ।

टिप्पणी—(१) यहाँ वर्षा की रात घोर निराशा की प्रतीक है और जुगनुओ के कण मिथ्या आशा के प्रतीक हैं । इस प्रकार कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि मनु घोर निराशा मे आशा का सहारा लेकर आगे बढते हैं लेकिन वे आशाएँ क्षण भर मे ही नष्ट हो जाती हैं ।

(२) इन पक्तियो म प्रकाश, कलियाँ, काँटे, पावस रजनी, जुगनू कण एव ज्योतिकण आदि पदो मे प्रयोजनवती शुद्ध लक्षण-लक्षणा है ।

(३) यहा रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव मानवीकरण अलकार की सुन्दर योजना हुई है ।

जीवन निशीथ के ···· माया रानी के केश भार ।

शब्दार्थ—निशीथ=अर्ध रात्रि । जीवन निशीथ के अंधकार=जीवन की घोर निराशा । तुहिन=कोहरा । जलनिधि=सागर । नील तुहिन जलनिधि=श्याम रग के बर्फ कणो का समुद्र । वार पार=आरपार, सर्वत्र, एक सिरे से दूसरे सिरे तक । चेतनता की किरण डूब रही=चेतना लुप्त हो रही या सुधबुध जाती रही । निर्विकार=शुद्ध, सात्विक । मादक=मस्त कर देने वाला । निखिल=सम्पूर्ण । भुवन=जगत, ब्रह्माड । भूमिका=पृष्ठभूमि, आधार । अभग=पूर्णरूप से । अनंग=आकृतिहीन । ममता=प्रेम, स्नेह । क्षीण=धुधली । अरुण रेखा=उषा की लालिमा । ज्योति कला=प्रकाश का वैभव, आशा । ऊर्मिल=लहराती हुई, घुघराली । अलक=लटें, केश । कुंकुम चूर्ण=सिन्दूर । चिर निवास=शाश्वत या स्थाई निवास । मोहजलद= मोह रूपी बादल । छाया उदार=विस्तृत या विशाल छाया । केश भार= बालो का समूह ।

व्याख्या—श्रद्धा को हिमालय की एकान्त गुफा मे छोडकर इधर-उधर अकेले भटकते हुए मनु किसी एकात स्थान मे अपने जीवन की असफलताओ एव निराशाओ की तुलना अर्ध रात्रि के सघन अधकार से करते हुए कह रहे हैं कि जिस प्रकार नीले रग की बर्फ के टुकडो के सागर की भाँति अर्धरात्रि

का गहन अधकार चारो ओर फैल जाता है उसी प्रकार मेरे जीवन मे भी घोर निराशा फैली हुई है। यहाँ यह स्मरणीय है कि यह रात का समय है और मनु के जीवन मे भी निराशा है अत यहाँ प्रस्तुत अप्रस्तुत का सुन्दर सामजस्य है। मनु कहते हैं कि अर्धरात्रि के सघन अधकार मे जिस प्रकार आकाश मे तारे टिमटिमाकर उस अधकार को दूर करने का प्रयास करते हैं लेकिन उनका प्रकाश उस अधकार मे ही डूब जाता है उसी प्रकार मेरी चेतना की सात्विक किरणें भी इस निराशा मे डूबी हुई हैं। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि मैं अपने जीवन को उन्नत बनाने के लिए कुछ भी नही सोच पा रहा हूँ। मनु का कहना है कि हे निराशा, जिस तरह रात्रि का सघन अधकार ससार मे फैलकर मनुष्यो को उसी प्रकार सुला देता है जिस प्रकार मतवाले व्यक्ति अपनी चेतना भूल जाते हैं। उसी प्रकार तुमने धरती के प्रत्येक भाग मे फलकर अपने प्रभाव से मनुष्यो को अकर्मण्य बना दिया है और जिस प्रकार प्रकाश के आने पर अधकार कुछ देर के लिए छिप जाता है पर प्रकाश के नष्ट होने पर वह पुन प्रकट हो जाता है उसी प्रकार तू भी मेरे जीवन में चुपचाप छिपती और प्रकट होती रहती है। मनु निराशा को सम्बोधित कर कहते हैं कि जिस प्रकार किसी प्रकार किसी सौभाग्यवती नारी की लहराती हुई घुघराली लटो के बीच निकली हुई माँग मे भरे हुए सिन्दूर के समान रात्रि के सघन अधकार मे से उषा की लालिमा से भरी एक क्षीण रेखा पूर्व दिशा मे दिखाई देती है उसी प्रकार मेरे अधकारपूर्ण जीवन अर्थात् घोर निराशा से भरे हुए मेरे व्यथित हृदय मे ममता की एक क्षीण रेखा भी कभी-कभी चमक जाती है। मनु कह रहे हैं कि हे निराशा, जिस तरह रात्रि का सघन अधकार सभी प्राणियो को सुलाकर विश्राम प्रदान करता है उसी प्रकार तू भी मुझे अकर्मण्य बनाकर विश्राम देती है और जैसे अधकार मे काले बादलो की विस्तृत छाया दिखाई पडती है वैसे ही तू भी मोह के रूप मे दिखाई देती है तथा जिस प्रकार अधकार प्रकृति के काले-काले बालो का सा समूह जान पडता है उसी प्रकार तू भी इस ससार मे व्याप्त माया जाल के रूप मे दिखाई देती है। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि इस माया जाल के कारण ही मनुष्य सासारिक पदार्थों के प्रति अधिकाधिक लालायित होता है और इन पदार्थों के न मिलने पर उसे अत्यधिक निराशा का सामना करना पडता है।

टिप्पणी—(१) इस पद मे अर्थ गाम्भीर्य और चित्रोपमता के गुण दिखाई देते हैं।

(२) यहाँ सागरूपक, रूपकातिशयोक्ति, निरगरूपक, विरोधाभास एव वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—कवि प्रसाद ने अपनी प्रसिद्ध काव्यकृति 'आँसू' मे भी निराशा और रात्रि के सघन अधकार की तुलना करते हुए यही कहा है—

घिर जाती प्रलय घटाये कुटिया पर आकर मेरी,
तमचूर्ण बरस जाता था छा जाती अधिक अँधेरी।
जीवन निशीथ के ' प्रतिध्वनि नभ अपार।

शब्दार्थ—अभिलाषा=इच्छा। नवज्वलन धूम सा=नई-नई जलाई गई आग मे से उठने वाले धुएँ के समान। दुर्निवार=जो रोका न जा सके। अपूर्ण लालसा=अतृप्त इच्छा। कसक=टीस। मधुवन=वृन्दावन, वसन्त। कालिंदी=यमुना नदी। दिगत=दिशाएँ। मन शिशु=मनरूपी बालक। कुहुकिनि=माया या जादू करने वाली स्त्री। दृग=नेत्र। अजन=काजल। छलना=धोखा, प्रवचना। धूमिल=धुधली, अस्पष्ट। नव कलना=नवीन रचना। श्यामल पथ=अधकारपूर्ण मार्ग, हरा भरा रास्ता। पिक प्राण=कोयल रूपी प्राण। नील प्रतिध्वनि=वेदना और व्यथा की गूँज।

व्याख्या—जीवन सगिनी श्रद्धा को हिमालय की एकात गुफा मे छोडकर मनु अकेले ही इधर-उधर भटकते हुए किसी एकात स्थान पर पहुँचते हैं और अपने जीवन की असफलताओ एव निराशाओ की तुलना अर्ध रात्रि के सघन अधकार से करते हुए कहते हैं कि हे मेरे जीवन की निराशा, तू अर्ध रात्रि के गहन अधकार के समान है और जैसे नई-नई जलाई हुई आग मे से उठने वाला काला-काला धुआँ चारो ओर फैल जाता है और हटाने से भी नही हटता, उसी प्रकार तू भी मेरे जीवन मे नवीन आशाओ के रूप मे प्रकट होती है। मनु निराशा को सम्बोधित कर कह रहे है कि जिस प्रकार धुएँ के अन्दर कभी-कभी आग की चिनगारी चमक कर उठती हुई दिखाई देती है उसी प्रकार तेरे कारण मेरी अभिलाषाएँ अपूर्ण बनकर धधकती रहती है और जैसे मधुवन को छूती हुई यमुना नदी वर्षा ऋतु मे चारो दिशाओ मे फैल जाती है तथा उसमे सध्या के समय बच्चो के से चचल एव विनोदी स्वभाव वाले व्यक्ति मनोरजन या सैर के लिए अपनी-अपनी नौकाओ पर सवार होकर

अपनी नौकाएँ तीव्र गति से दौडाया करते है उसी प्रकार मेरे शरीर मे भी यौवन का प्रवाह् वडी तेजगति से वह् रहा है और मेरा मन अनत अभिलाषाओ की ओर दौटता रहता है । मनु का कहना है कि हे निराशा, जिस प्रकार अर्धरात्रि का अधकार किसी जादू करने वाली नारी के नेत्रो मे लगे हुए काजल के समान दिखाई देता है और जिसमे सुन्दर धोखा छिपा हुआ होता है उसी प्रकार तू भी मेरे जीवन को वरावर छलती आ रही है तथा जैसे आधीरात का अधकार धुधली रेखाओ से वनाये गये एक सजीव चित्र के सदृश दिखाई देता है वैसे ही तू भी धुंधली स्मृतियो द्वारा अपना रूप सँवारती है । अपने जीवन की निराशा को सम्बोधित करते हुए मनु कहते हैं कि जिस प्रकार रात्रि का अधकार कोयल की उस गूँज के समान सर्वत्र छाया हुआ दिखाई देता है, जो अपनी मधुर गूंज से सम्पूर्ण आकाश मे फैल जाती है और जो वहुत दिनो से परदेश मे रहने वाले किसी वियोगी को हरे भरे मार्ग मे सुनाई पडती है उसी प्रकार तू भी मेरे प्राणो की व्यथा भरी पुकार के समान मेरे हृदय मे छा गई है ।

टिप्पणी—(१) इस पद मे कवि ने निराशा के कई सुन्दर एव सजीव चित्र अकित किए हैं ।

(२) यहाँ मालोपमा, रूपक, श्लेष एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

यह उजडा सूना ... . स्वय शान्त ।

शब्दार्थ—नगर प्रान्त=नगर का भाग । विध्वस्त=नष्ट भ्रष्ट । शिल्प=कला कृतियाँ । नितान्त=पूर्णतया, पूर्णरूप से । विकृत=विगडी हुई, भद्दी । वक्र=टेढी-मेढी । अपूर्ण रुचि=अपूर्ण इच्छा । विकीर्ण=फैली हुई, विखरी हुई । पत्र जीर्ण=पुराने पत्ते । आकश वेलि=अमर वेल ।

व्याख्या—श्रद्धा को हिमालय की एकान्त गुफा मे छोडकर इधर उधर अकेले भटकते हुए मनु सारस्वत प्रदेश पहुँचते है और देखते हैं कि यह नगर विलकुल उजड गया है तथा सूना पडा हुआ है । इस सारस्वत प्रदेश का विध्वस और नष्ट भ्रष्ट सुन्दर कला कृतियो को देखकर मनु को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उनके समक्ष आज सुख और दु ख की परिभाषा स्पष्ट हो रही थी । साथ ही सारस्वत प्रदेश के सुन्दर सुन्दर भवनो की छिन्न भिन्न तथा टेढी मेढी रेखाओ को देखकर यही जान पडता था मानो वे किसी प्राणी के दुर्भाग्य की टेढी मेढी

रेखायें हैं, जो अत्यन्त विकृत होकर इधर उधर बिखरी पडी है तथा इन समृद्धिशाली भवनो के खण्डहरो को देखकर यही जान पडता था कि यहाँ बडी बडी आशा आकाक्षा वाले व्यक्ति रहते थे जिनकी सुन्दर स्मृतियाँ आज भी वहाँ चारो ओर खण्डहरो के रूप मे बिखर कर मँडरा रही हैं और उनकी (रहने वाले व्यक्तियो की) अतृप्त अभिलाषा प्रकट कर रही हैं। इस प्रकार सारस्वत प्रदेश के विध्वस भवनो के टूटे-फूटे कोनो को देखकर यही प्रतीत होता था जैसे इन कोनो मे किसी का दुलार करने के लिए टीस भरी हुई हिचकी निकल रही हो और इन खण्डहरो से यह भी अनुमान होता था कि उनके निवासियो के जीवन पर विलासपूर्ण मनोवृत्ति इस प्रकार छाई हुई थी जैसे कि हरे भरे वृक्ष पर अमर वेल छा जाती है। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार किसी हरे भरे वृक्ष पर अमर वेल छा जाती है और वह दूसरे पेड को तो नष्ट कर देती है पर स्वय फलती फूलती रहती है उसी प्रकार विलासिता ने सारस्वत प्रदेश के निवासियो को और विशाल भवनो को तो नष्ट कर दिया था, परन्तु वह स्वय अभी तक जीवित थी। इस प्रकार सारस्वत प्रदेश के वे खण्डहर आज वहाँ के निवासियो की सजीव समाधि बने हुए थे और उनके अन्तर्गत वहाँ के नगर निवासियो का विभवतापूर्ण जीवन इस प्रकार मौन एव शान्त पडा हुआ था जिस तरह किसी समाधि स्थल पर प्रज्वलित दीपक कुछ क्षणो के लिए अपना चचल प्रकाश फैलाने के बाद बुझकर शान्त हो जाते हैं।

टिप्पणी—यहाँ उपमा, रूपक एव दृष्टान्त अलकार हैं।

यो सोच रहे .... .. चारो ओर ध्वान्त।

शब्दार्थ—श्रान्त=थके हुए। सुख साधन निवास=सुख प्राप्ति का निवास स्थान। प्रशान्त=अत्यन्त शान्ति देने वाला। अटकते=रुकते हुए। निस्तब्ध=शात। निशा श्याम=अधेरी रात। नक्षत्र=तारे। निर्निमेष=अपलक। वसुधा=धरती। विकल=व्याकुल करने वाली। वाम=कुटिल, टेढी। वृत्रहनी=सरस्वती नदी। जनाकीर्ण=मनुष्यो से भरा हुआ। उपकूल=नदी के किनारे की भूमि। देवेश=देवताओ के राजा। विजय कथा=विजय की कहानी। दु स्वप्न=बुरे बुरे सपने। क्लान्त=थका हुआ, दु खी। ध्वात=अन्धकार।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इधर उधर भटकते हुए जब मनु उजडे

हुए सारस्वत प्रदेश मे पहुचे तव वे अत्यधिक थके हुए थे अत वे सारस्वत प्रदेश के खण्डहरो मे ही विश्राम करने लगे और उस प्रदेश के विगत वैभव एव ऐश्वर्य आदि के सम्बन्ध मे सोचने लगे । कवि कह रहा है कि जब से मनु सुख और शान्ति प्रदान करने वाला श्रद्धा का निवास स्थान छोडकर चल दिए थे तब से वे कई मार्गो मे भटकते हुए और रुकते हुए इस उजडे हुए प्रदेश के समीप आ गए । यहाँ पूर्ण वेग से सरस्वती नदी वह रही थी और अधेरी रात मे सवत्र शान्ति छाई हुई थी तथा आकाश मे चमकते हुए तारे ऐसे जान पडते थे मानो वे धरती की इस दुखदायी और वक्र गति को अपलक नेत्रो से देख रहे हो । सरस्वती नदी के किनारे की इस भूमि पर पहले सारस्वत नगर निवासियो की हमेशा भीड लगी रहती थी पर आज यह भूमि सूनी पडी हुई थी । किसी समय इसी सरस्वती नदी के किनारे देवताओ के राजा इन्द्र ने विजय प्राप्त की थी और उस विजय की स्मृति होते ही मनु की व्याकुलता दुगुनी बढ गयी तथा उन्हे वह उजडा हुआ सारस्वत प्रदेश ऐसा प्रतीत होता था मानो वह कोई बुरा स्वप्न देख रहा हो और दुखी हो तथा उसके चारो ओर अन्धकार फैला हुआ हो ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे सारस्वत प्रदेश की शून्यता एव निजनता का अत्यन्त हृदय-स्पर्शी वर्णन हुआ है ।

(२) यहाँ उजडी हुई अवस्था को सारस्वत नगर का बुरा स्वप्न कहने मे यह भाव भी निहित है कि भविष्य मे उसका यह बुरा स्वप्न टूट जायगा और वह फिर से अपनी सामाजिक अवस्था को ग्रहण करेगा ।

(३) यद्यपि कुछ विचारक इस पद की छठवी पक्ति मे प्रयुक्त 'वृत्रघ्नी' शब्द से अभिप्राय इन्द्र का ग्रहण करते है पर वास्तव मे वृत्रघ्नी का अर्थ सरस्वती नदी ही होता है और ऋग्वेद मे भी सरस्वती को वृत्रघ्नी कहा गया है—'वृत्रघ्नीवाष्ट सुष्टुतिम्' (ऋग्वेद ६/६१/७)

(४) यहाँ मानवीकरण एव विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है ।

जीवन का लेकर ... मे बँधते दुर्निवार ।

शब्दार्थ—नव विचार=नवीन सिद्धान्त । द्वन्द्व=सघर्ष, युद्ध । प्राणो की पूजा का प्रचार=शरीरिक सुख की अभिलाषा का प्रचार । आत्म विश्वास निरत=आत्मा की शक्ति पर विश्वास रखने वाला । सतत=लगातार, सदैव । आराध्य=आराधना करने योग्य, पूज्यनीय । आत्म-मगल=आत्मा का

कल्याण, अपनी कल्याण कामना । विभोर=लीन । उल्लास शील=आनन्द-मय । शक्ति केन्द्र=शक्ति का आधार । आनन्द उच्छलित=आनन्द या हर्ष से परिपूर्ण । शक्ति स्रोत=बल का झरना । विकास=उन्नति । वैचित्र्य=विविधता । हरा=प्रफुल्लित, आनन्द से पूर्ण । दुर्निवार=दृढ, अविचल ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सारस्वत प्रदेश के खण्डहरो मे विश्राम करते हुए मनु सोच रहे थे कि पहले इस प्रदेश मे सुर और असुर साथ-साथ निवास करते थे परन्तु जीवन के सम्बन्ध मे नवीन विचारो का उदय होते ही दोनो मे (सुर और असुरो मे) सघर्ष छिड गया । एक ओर असुरो ने प्राण को ही आत्मा मान लिया और शारीरिक सुख साधना मे लीन हो गए तथा दूसरी ओर देवताओ का समाज आत्मा की सत्ता पर ही विश्वास कर आत्म कल्याण को ही समझने लगा । इस प्रकार देवताओ अर्थात् सुरो का समाज पुकार पुकार कर हमेशा कहा करता था कि "हमसे भिन्न कोई और ऐसी शक्ति नही है जिसकी हम उपासना करे तथा हमे हमेशा अपनी कल्याण भावना के लिए ही लीन रहना चाहिए । हम स्वय सम्पूर्ण उल्लासमयी शक्ति के केन्द्र हैं अत हम किसी अन्य शक्ति की शरण मे जाकर क्या करेंगे और हमारा जीवन ही आनन्द से पूर्ण शक्ति का स्रोत है, जो अनेक प्रकार की विचित्रताओ से भरा हुआ है । साथ ही हम अपनी शक्तियो द्वारा इस जीवन का नव निर्माण कर इस सृष्टि को भी हरा भरा और सुख सम्पन्न रखते हैं ।" मनु सोच रहे हैं कि एक ओर तो देवता यह सब कहते थे और दूसरी ओर असुर हमेशा अपने शरीर को सुखी बनाने मे व्यस्त थे और अपने जीवन को सुधारने के लिए कठोर नियमो मे वँधते जा रहे थे ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने सुर और असुरो के सघर्ष की पीठिका का सुन्दर चित्रण किया है ।

था एक पूजता .. .. . श्रद्धा विहीन ।

शब्दार्थ—एक=यहाँ असुर वर्ग से अभिप्राय है । देह दीन=तुच्छ शरीर को । दूसरा=सुर समाज अर्थात देवताओ से अभिप्राय है । अहंता=घमण्ड, अहकार । प्रवीण=चतुर, कुशल । हठ=जिद । दुर्निवार=दृढ, कठोर, जो टाला न जा सके । तर्क=युक्ति, दलील । ममत्वमय=ममता से पूर्ण । आत्म मोह=आत्मप्रेम या स्वार्थ भावना । उच्छृंखलता=नियमों का उल्लघन करने की प्रवृत्ति, स्वेच्छाचारिता । प्रलय भीत=प्रलय से डरकर । पूर्व द्वन्द्व=वह

प्राचीन सघर्ष जो देवो और असुरो के मध्य हुआ था। व्याकुलता=वेचैनी। परिवर्तित हो=नवीन रूप धारण कर। दीन=अभावपूर्ण। श्रद्धा विहीन= श्रद्धा से रहित, आस्तिक भाव से शून्य या रहित।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि सारस्वत प्रदेश के खडहरो मे विश्राम करते हुए मनु सोच रहे थे कि प्राचीन काल मे जो असुर और सुर या देवता नामक दो वर्ग थे उनमे से एक अर्थात् असुर तो अपने तुच्छ शरीर की चिंता में अधिक लीन रहता था और दैनिक सुखो को ही जीवन का चरम लक्ष्य समझने के कारण जीवन की पूर्णता से अपरिचित था। असुरो के विपरीत सुर या देवता आत्मवादी होने के कारण अपने अतिरिक्त किसी अन्य की सत्ता को कुछ नही समझते थे और अपनी अहमन्यता के कारण अपने को बहुत निपुण समझते थे पर यह वर्ग भी अपूर्ण ही था। इस प्रकार असुर और सुर दोनो ही हठी थे और अपने-अपने विचारो से तनिक भी नही हटना चाहते थे और अपने विचारो को छोडकर दूसरे के मत मे जरा भी विश्वास नही करते थे। पहले तो इन दोनो ने अपने-अपने विचारो को तर्क द्वारा सिद्ध करना चाहा पर कोई किसी के विचारो को न समझ सका और अत मे दोनो मे भयकर युद्ध छिड गया तथा उनका यह सघर्ष सभी को वेचैन करता हुआ बहुत दिनो तक चलता रहा और उनके जीवन को अशान्त बनाता रहा। मनु सोच रहे हैं कि सुर और असुरो के विरोधी भाव आज तक विद्यमान हैं तथा आज मेरे हृदय में भी वही देवासुर सग्राम चल रहा है क्योकि मुझमे एक ओर तो ममता से भरी हुई स्वार्थ की भावना है जो स्वतन्त्रता के बहाने स्वेच्छाचारिता बनी हुई है और दूसरी ओर जल प्रलय से डर कर मैं भी अपने शरीर की रक्षा का अधिक ध्यान रखता हूँ तथा दैहिक सुख प्राप्त करने के लिए व्याकुल हूँ। मनु का विचार है कि आज वही प्राचीन देवासुर सग्राम नवीन रूप धारण कर मुझे अत्यधिक वेचैन बना रहा है और मैं यह स्पष्ट अनुभव कर रहा हूँ कि मैंने न केवल अपनी जीवन सगिनी श्रद्धा को खो दिया है बल्कि मेरे हृदय का आस्तिक भाव भी नष्ट होगया है।

टिप्पणी—यहाँ 'श्रद्धा' शब्द मे श्लेष अलकार है और कवि ने श्रद्धा-विहीन मनु के हृदय मे उत्पन्न द्वन्द्व का चित्रण कर इस पद मे मनोवैज्ञानिकता का निर्वाह किया है।

मनु ! तुम श्रद्धा .. .. चुभ गया शूल ।

शब्दार्थ—आत्म विश्वासमयी=आत्म प्रेरणा मे विश्वास रखने वाली । तूल=रुई । असन=नश्वर, नाशवान । जीवन धागे में रहा भूल=जीवन कच्चे धागे मे भूल रहा है । वासना तृप्ति=कामेच्छा की पूर्ति । उलटी मति =विपरीत बुद्धि, दुर्बुद्धि । व्यर्थ ज्ञान=झूठा विचार । पुरुषत्व मोह= मनुष्यता का अहकार । सत्ता=अस्तित्व । समरसता=सामरस्य, समान भाव या समानता । तीखी=तीव्र, तीक्ष्ण । अम्बर=आकाश । अकूल=असीम, अपार । शूल=काँटा ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा को हिमालय की एकान्त गुफा में छोडकर जब मनु अकेले ही इधर-उधर भटकते हुए सारस्वत प्रदेश पहुँचते हैं और सारस्वत प्रदेश के खडहरो मे विश्राम करते हुए मानव जीवन की विभिन्न समस्याओ के सम्बन्ध मे विचार करने मे मग्न हो जाते हैं तब उन्हे अचानक आकाशवाणी के रूप मे काम का शाप सुनाई दिया—"मनु ! तुम श्रद्धा को बिलकुल ही भूल गये और आत्मा मे पूर्ण विश्वास रखने वाली श्रद्धा को तुमने रुई के समान एक तुच्छ पदार्थ समझकर उसकी हमेशा उपेक्षा की । तुमने तो यह समझा था कि यह नश्वर ससार कच्चे धागे मे भूलने वाली किसी वस्तु के समान शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाला है और इस क्षणभगुरता के विचार ने ही तुम्हारे मन मे यह भावना पैदा कर दी थी कि जो क्षण सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने मे ही बीतते हैं, वे ही सार्थक हैं और वही वास्तविक जीवन भी है । यही कारण है कि तुमने अपनी वासना तृप्ति को ही स्वर्ग के समान सुख देने वाली समझ लिया और तुम्हारी विपरीत बुद्धि मे यही झूठा ज्ञान समा गया तथा इस मिथ्या ज्ञान के फलस्वरूप तुम अहकार एव मोह मे लीन हो यह भूल गए कि ससार मे नारी की भी कुछ सत्ता होती है । इतना ही नही तुम यह भी भूल गये कि अधिकार और अधिकारी अर्थात् नारी और पुरुष मे परस्पर समानता का सम्बन्ध है ।" कवि का कहना है कि जब काम की यह कटु वाणी असीम आकाश मे गूँज उठी तब मनु के हृदय मे ऐसी कसक उत्पन्न हुई जैसे उनके पैर मे कोई काँटा चुभ गया हो ।

टिप्पणी—(१) इस पद मे लाक्षणिकता, भाव व्यजकता एव मुहावरे बन्दिश आदि विशेषताएँ दर्शनीय हैं ।

(२) अन्तिम पक्ति मे उत्प्रेक्षा की योजना हुई है ।

यह कौन • • • • • हुआ मैं पूर्ण काम ?

शब्दार्थ—विराम=विश्राम, शांति । प्रत्यक्ष होने लगा=आँखो के सामने आने लगा । अतीत=बीता हुआ समय, भूत काल । गत युग=अतीत काल । अतरग=हृदय, अन्तःकरण । अभिशाप ताप=भयकर क्लेश और पीडा । भ्रान्त साधना=मिथ्या कार्य या प्रयत्न । सस्नेह=प्रेम पूर्वक । अमृत धाम=अमृत के समान सुख एव शांति का निवास स्थान, मधुर भावनाओ से पूर्ण हृदय । पूर्ण काम=सतुष्ट ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि काम की वाणी सुनकर मनु ने कहा कि यह किसकी आवाज है और फिर उसे पहचान कर कहने लगे कि अरे यह तो उसी काम की आवाज है जिसने मुझे श्रद्धा के प्रेमजाल मे फँसाकर मेरे जीवन की सुख शांति छीन ली है । मनु के कहने का अभिप्राय यह हैं कि इस काम ने ही मुझे पहले स्वप्न मे श्रद्धा को अपनाने का आग्रह किया और यदि वह मुझे श्रद्धा को प्राप्त करने के लिए प्रेरित न करता तो फिर यह सारी विपत्ति न झेलनी पडती । मनु कह रहे है कि आज पुन काम की वाणी सुनकर मुझे भूतकाल की वे सभी घटनाएँ याद आ रही हैं जिनका अब बस नाम मात्र ही मेरे लिए शेष रह गया है और जिसे किसी समय मैंने वरदान समझकर ग्रहण किया था, आज वही मेरे हृदय को कम्पित कर रहा है तथा मेरा सारा शरीर और मन उस वरदान के दुःख की ज्वाला मे जल रहा है । कवि का कहना है कि कुछ देर बाद मनु ने काम को सम्बोधित कर कहा कि क्या मैं अब तक मिथ्या कार्यों मे ही लगा रहा और क्या तुमने मुझसे नही कहा था कि मैं प्रेमपूर्वक श्रद्धा को ग्रहण करूँ ? मैंने तुम्हारा आग्रह स्वीकार करके ही श्रद्धा को प्राप्त करने का प्रयत्न किया और उसने भी मधुर भावनाओ से पूर्ण अपना हृदय मुझे अर्पित कर दिया अत अब तुम्ही मुझे यह बतलाओ कि इतने पर भी मेरी सतुष्टि क्यो नही हुई ?

टिप्पणी—इस पद मे काम सर्ग की उस घटना की ओर सकेत किया गया है जब मनु को स्वप्न मे काम ने श्रद्धा का सक्षिप्त परिचय देकर उसे अपनाने का उनसे आग्रह किया था ।

मनु ! उसने तो • • जलनिधि का क्षुद्रयान ।

शब्दार्थ—प्रणय=प्रेम । मान=स्वाभिमान । चेतनता=ज्ञान, सज्ञानता । शान्त प्रभा=स्वाभाविक ज्योति, शांति देने वाला प्रकाश । ज्योतिमान=

कातिमान, प्रकाशित । जड़ देह=पार्थिव शरीर । सौन्दर्य जलधि=सुन्दरता का सागर । गरल पात्र=विष का प्याला, यहाँ वासना मे लीन मनु से अभिप्राय है । अबोध=अज्ञानी, अज्ञ । परिणय=वैवाहिक सम्बन्ध । राग भाग=स्वार्थमयी भावना । मानस जलनिधि=हृदय रूपी समुद्र । क्षुद्रयान=तुच्छ नौका ।

व्याख्या—जब मनु ने काम से यह जानना चाहा कि उन्होने उसका आग्रह स्वीकार करके ही श्रद्धा को अपनाया था और श्रद्धा ने उन्हे अपना हृदय अर्पित कर दिया था पर इसके बावजूद उन्हे सतुष्टि क्यो नही हुई तब आकाश वाणी के रूप मे काम ने उन्हे उत्तर देते हुए कहा कि हे मनु ! उस उदारता की प्रतिमा श्रद्धा ने तो अपना सर्वस्व तुम्हारे चरणो मे अर्पित कर दिया था और श्रद्धा का वह सरल एवं सुकुमार हृदय न केवल दाम्पत्य प्रेम से पूर्ण था अपितु उसमे नारी जीवन का स्वाभिमान भी विद्यमान था, जिसमे चेतनता अपने शात सात्विक प्रकाश से कातिमान थी पर तुम्हारा ध्यान उसके हृदय के इन गुणो की ओर नही गया । काम के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा का हृदय सेवा, परोपकार, उदारता एव त्याग आदि सात्विक भावनाओं से परिपूर्ण था परन्तु मनु ने उसके हृदय के इन गुणो को नही देखा । काम मनु से कह रहा है कि तुम तो श्रद्धा की सुन्दर जड देह की सुन्दरता पर ही रीझकर रह गये और श्रद्धा का जीवन तो उस सुन्दरता के सागर के समान था जिसमे अमृत और विष दोनो रहते हैं पर तुमने केवल विष ही ग्रहण किया अर्थात् श्रद्धा के हृदय मे विद्यमान अनेक सात्विक भावनाओ की ओर मनु का ध्यान नही गया और उन्होने केवल विष तुल्य वासना को ही ग्रहण किया तथा वे उसके बाह्य शारीरिक सौन्दर्य पर ही मुग्ध रहे । काम कह रहा है कि हे मनु ! तुम तो बडे ही अज्ञानी हो और तुम अपनी अपूर्णता को भी नही समझ पाए तथा जिस बात को विवाह सम्बन्ध पूर्ण करता है उससे तुम अपने आप दूर चले आये । इसका अभिप्राय यह है कि श्रद्धा ने मनु को अपना जीवन सहचर मान कर उनसे विवाह कर उनके जीवन की न्यूनता को दूर करना चाहा था परन्तु जिस प्रतिदान द्वारा मनु अपने और श्रद्धा के सम्बन्ध को पूर्ण कर सकते थे, उसे वे नही कर पाए । काम मनु से कहता है कि तुम अपने ही स्वार्थ मे मग्न होकर केवल यही सोचते रहे कि 'कुछ मेरा हो' और ससार के सभी प्राणी मेरे अधिकार को मानकर मेरी ही सुख सुविधा का

ध्यान रखें पर तुम्हारी यह स्वार्थ भावना नितान्त संकुचित है जो तुम्हे पूर्णता का ज्ञान प्राप्त नही करने देती तथा स्वार्थपूर्ण इस तुच्छ नौका द्वारा श्रद्धा के विशाल सागर के समान अथाह मन का पार पाना तुम्हारे लिए असंभव हो गया।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति अलंकार है।

हाँ अब तुम बनने ··· तव प्रजातन्त्र।

शब्दार्थ—कलुष=पाप, दोष, अवगुण। तंत्र=विचार, राय, मत। द्वन्द्वों का=विरोधी भावो का। शाश्वत=सनातन, अमर। मंत्र=निश्चित सिद्धान्त। कंटक=काँटे। कुसुम=फूल। रुचि=स्वभाव। बिंधे हुए=बँधकर युक्त होकर। प्राणमयी ज्वाला=प्राणो की उत्तेजना। प्रणय प्रकाश=प्रेम-रस्मी प्रकाश, दाम्पत्य प्रेम की ज्योति। जलन वासना=वासना की जलन। जीवन भ्रम तम=जीवन का भ्रम रूपी अन्धकार। प्रवर्त्तन=प्रारम्भ। यंत्र=साधन, मशीन। तव=तुम्हारा।

व्याख्या—मनु को सम्बोधित कर काम कह रहा है कि तुम स्वयं बने रहने के लिए अपने अपराध दूसरो पर थोप रहे हो और स्वयं को दोषी न समझकर अपना एक भिन्न मत स्थापित करना चाहते हो परन्तु यह एक निश्चित सिद्धान्त है कि हृदय मे हमेशा विरोधी भावो की उत्पत्ति होती रहती है। जिस प्रकार फूल और काँटे साथ-साथ रहते हैं उसी प्रकार रागद्वेष और भलाई-बुराई आदि परस्पर विरोधी भाव भी साथ-साथ रहते हैं परन्तु यह मनुष्य की अपनी निजी विशेषता है कि वह फूल के समान अच्छे भाव ग्रहण करे तथा काँटे के सदृश्य बुरे भावो की ओर ध्यान न दे लेकिन तुमने अपनी स्वार्थमयी इच्छा के वशीभूत होकर अपनी रुचि के अनुकूल श्रद्धा के जीवन से बुरे भावो को ही ग्रहण किया तथा उस जीवन दान करने वाली ज्वाला से प्रेम का प्रकाश नही लिया। काम का कहना है कि श्रद्धा विश्व को जीवन प्रदान करने वाली एक ऐसी ज्योति है जिसमे दाम्पत्य प्रेम का प्रकाश भरा हुआ था पर तुम उस उज्ज्वल प्रकाश को न ग्रहण कर अपनी भद्दी रुचि के अनुसार वासना को अपना कर उसकी जलन से ही हमेशा जलते रहे और उसे ही तुमने अपने जीवन मे प्रमुख स्थान दिया। काम मनु से कह रहा है कि अब तुम जिस प्रजातन्त्र की स्थापना

करना चाहते हो वह सदैव शाप से पीड़ित रहेगा और तुम्हारे इस प्रजातन्त्र को संसार की नियामिका शक्ति उसी प्रकार घुमाती रहे जिस प्रकार मशीन पहिए को घुमाती है।

टिप्पणी—यहाँ उदाहरण, रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति अलंकार है।

यह अभिनव ... ... संकुचित दृष्टि।

शब्दार्थ—अभिनव=नवीन। मानव प्रजा सृष्टि=मानव समाज। द्वयता=भेदभाव स्व और पर की भावना। वर्णों की=ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि चार वर्णों की। वृष्टि=वर्षा। विनष्टि=नाश। कलह=युद्ध, संघर्ष। अभिलषित=इच्छित। अनिच्छित=इच्छा के विरुद्ध, न चाहा हुआ। आवरण=पर्दा। वक्षस्थल की जड़ता=हृदय में स्थित स्वार्थ संकीर्णता, ईर्ष्याद्वेष आदि जड़ विचार। चले विश्व गिरता पड़ता=मानव समाज दु:ख-पूर्वक जैसे-तैसे अपना जीवन व्यतीत करे। तुष्टि=संतोष। संकुचित दृष्टि=संकीर्ण मनोभाव, सीमित दृष्टिकोण।

व्याख्या—काम मनु को शाप देते हुए कह रहा है कि तुम जिन नवीन मानव समाज का विकास करोगे वह हमेशा आपसी विरोध की वृद्धि करेगा और मानव सृष्टि में धीरे-धीरे भेद भाव बढ़ता ही चला जायेगा तथा ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र आदि नवीन वर्णों एवं जातियों की भरमार होगी। इसका परिणाम यह होगा कि नवीन मानव समुदाय विभिन्न प्रकार की अज्ञात समस्याओं में हमेशा उलझा रहेगा और इन समस्याओं में उलझकर वह अपने ही विनाश की तैयारी करेगा तथा भेद-भाव के निरन्तर बढ़ने से मानव समुदाय की एकता नष्ट हो जाएगी और हमेशा परस्पर संघर्ष चलता रहेगा तथा सम्पूर्ण समाज में लगातार कोलाहल बना रहेगा। इस प्रकार जिस वस्तु के लिए व्यक्ति इच्छा करेगा और जिसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न करेगा वह हमेशा उससे दूर रहेगी तथा उसकी अभिलाषा कभी पूर्ण नहीं होगी और जिस वस्तु को व्यक्ति नहीं चाहेगा, वह उसे प्राप्त होगी तथा उसके दु:ख और क्लेश को बढ़ाने वाली होगी। साथ ही व्यक्ति के हृदय का अज्ञान ही उसकी पवित्र भावनाओं को दबा देगा और व्यक्ति भ्रम में पड़कर सदैव सद्प्रवृत्तियों से दूर होता जाएगा तथा वह न तो स्वयं को पहचान सकेगा और न दूसरों को। काम कह रहा है कि नवीन मानव सभ्यता के सभी व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थ के घेरे से आबद्ध रहने के कारण सम्पूर्ण समाज बड़े दु:ख के साथ अपना जीवन व्यतीत

करेगा और व्यक्ति को सब कुछ प्राप्त करके भी संतोष नहीं होगा तथा उसकी संकुचित दृष्टि उसे हमेशा दुःख देती रहेगी।

टिप्पणी—यहाँ करती रहे वृष्टि मे लक्षण-लक्षणा है।

अनवरत उठे ‥ … …. ज्वाला का पतंग।

शब्दार्थ—अनवरत=लगातार, निरन्तर। उमंग=अभिलाषा, इच्छा। चुम्बित हो=स्पर्श कर रहे हो। जलधर=बादल। शैल शृंग=पर्वत की चोटियाँ। जीवन नद=जीवन रूपी बड़ी नदी। हाहाकार=दुःख की ध्वनि, चीत्कार। लालसा=इच्छा, कामना। सन्तप्त=दुखी। सभीत=डरे हुए। स्वजनो का=निकट सम्बन्धियो का। श्याम अमा=अन्धकारमयी अमावस्या। दारिद्रय दलित=गरीबी से सतायी हुई। शस्य श्यामला=हरी-भरी। रमा =लक्ष्मी। नीरद=बादल। तृष्णा ज्वाला=अभिलाषा या इच्छा की लपटें।

व्याख्या—काम मनु को शाप देते हुए कहता है कि जिस नवीन सभ्यता का विकास करोगे वह प्रजा के हृदय मे लगातार कितनी ही इच्छाएँ उत्पन्न करेंगी परन्तु जिस प्रकार पर्वतो की चोटियो पर बादल घिरे रहते हैं उसी प्रकार व्यक्ति की उच्चाकांक्षायें अश्रुओ मे डूबी रहेगी तथा व्यक्ति की सभी इच्छायें अपूर्ण होगी और वह लगातार अपनी असफलता पर आँसू बहाता रहेगा। काम का कहना है कि जिस प्रकार बरसाती नदी कोलाहल करती हुई बहती है और उसमे विविध तरंगे भी उठती हैं उसी प्रकार आगामी प्रजा का जीवन भी हमेशा कोलाहल पूर्ण चीत्कार से युक्त रहेगा और उसके हृदय मे हमेशा पीड़ा की लहरें उठती रहेगी। साथ ही आगामी प्रजा के जीवन में इच्छाएँ उसी प्रकार उमड़ेंगी जिस प्रकार वसन्त ऋतु मे प्रकृति सौन्दर्य उमड पड़ता है लेकिन वे पतझड़ की भाँति सूखकर बिखर जायेंगी और प्रत्येक व्यक्ति के मन मे हमेशा नये-नये सन्देह उत्पन्न होंगे तथा कोई भी व्यक्ति का विश्वास नही करेगा और इस सन्देह के कारण ही सभी व्यक्ति दुःखी होकर हमेशा भयभीत से दिखाई देंगे। काम कहता है कि भावी प्रजा मे निकट सम्बन्धियो के मध्य हमेशा विरोध ही फैलता रहेगा और वह इस प्रकार भयावह होगा जिस प्रकार अन्धकार पूर्ण अमावस्या की रात्रि का अन्धकार होता है तथा समाज का जीवन अस्त-व्यस्त और विरागमय हो जाएगा। इतना ही नही प्रकृति रूपी लक्ष्मी धन-धान्य से हरी-भरी होकर भी निर्धनता से सताई जाकर बिखरा करेगी और जिस प्रकार बादलो के मध्य इन्द्र-धनुष प्रतिक्षण नये-

नये रगो को धारण करता है उसी प्रकार मनुष्य भी अपने दु:खी जीवन मे नित्य ही अपना स्वभाव बदलता रहेगा और नित्य नवीन चाले चला करेगा। इसी प्रकार मनुष्य वैभव की प्यास की आग का पतगा बन जाएगा और जिस प्रकार पतगा दीपक मे जलकर स्वय अपने को जला देता है उसी प्रकार आगामी प्रजा भी स्वय तृष्णा की आग मे जलकर भस्म हो जाएगी।

टिप्पणी—यहाँ परम्परित रूपक, उपमा एव निरग रूपक अलकार है।

वह प्रेम न रह .... झूले हार जीत।

शब्दार्थ—पुनीत=पवित्र। आवृत्त=ढका हुआ। मंगल रहस्य=छिपी हुई कल्याण की भावना। ससृति=सृष्टि, संसार, सम्पूर्ण प्रजा। आकांक्षा जलनिधि=इच्छाओ या अभिलाषाओ रूपी सागर। रक्त=लीन, डूबी हुई। राग विराग=प्रेम और द्वेष। शतश:=सैंकडो प्रकार से। सद्भाव=मैत्री, उचित मेलजोल। सुन्दर सपना=मधुर कल्पना। पेंगो मे झूले हार जीत=झूले की गति के अनुसार ही मनुष्य कभी हारता और कभी जीतता रहे, पेंग झूले के ऊँचे और तेज उतार चढाव को कहते हैं।

व्याख्या—मनु को शाप देते हुए काम कहता है कि तुम्हारी प्रजा के हृदय मे वह पवित्र एव कल्याणकारी प्रेम नही रहेगा और सभी व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थों से परिपूर्ण होकर ही आपस मे प्रेम करेंगे तथा किसी के हृदय मे कल्याण की भावना न रह जाएगी। इस प्रकार सभी व्यक्ति परस्पर सौहार्द्र प्रदर्शित करते हुए सकोच करेंगे और पारस्परिक प्रेम दिखाते हुए भी भयभीत दिखाई देगे तथा सम्पूर्ण मानव सृष्टि विरह के दु ख से भरी हुई दिखाई देगी और प्रत्येक व्यक्ति का जीवन हमेशा दु ख से पूर्ण गीत गाने मे ही व्यतीत होगा। काम मनु से कह रहा है कि तुम्हारी आगामी प्रजा की इच्छाओ की कोई सीमा न रहेगी और वे उसी प्रकार अनन्त दिखाई देंगी जिस प्रकार क्षितिज को छूता हुआ समुद्र अपार दिखाई देता है तथा वह प्रजा हमेशा निराशा मे डूबी रहेगी और तुम स्वय अपनी शक्ति को सैकडो भागो मे विभक्त कर किसी से प्रेम करोगे और किसी से ईर्ष्या तथा तुम्हारी सम्पूर्ण शक्ति राग द्वेष मे नष्ट हो जायगी। कहने का अभिप्राय यह है कि जब किसी के सहयोग की आवश्यकता होगी तब तुम उससे प्रेम करोगे और जब काम निकल जायगा तब उससे द्वेष करने लगोगे तथा किसी पर भी तुम्हारा सच्चा प्रेम नहीं होगा। काम का कहना है कि मस्तिष्क हृदय के विरुद्ध हो जायगा और दोनों—

मस्तिष्क व हृदय—मे कोई उचित मेल जोल नही रहेगा तथा जब मस्तिष्क हृदय से एक ओर चलने को कहेगा तब चचल हृदय कही और चल देगा और जब हृदय एक ओर बढ़ेगा तब बुद्धि दूसरी ओर बढ़ेगी। इस प्रकार आगामी प्रजा का वर्तमान जीवन दु ख मे ही व्यतीत होगा और उसकी सम्पूर्ण सुन्दर कल्पनायें अपूर्ण रहने के कारण विलीन हो जायँगी तथा सुखद अतीत केवल एक सुन्दर स्वप्न बनकर रह जाएगा। जिस प्रकार झूला तेजी से ऊपर नीचे आता जाता है उसी प्रकार भविष्य मे व्यक्ति यदि किसी क्षण विजयी होकर सुखी होगा तो दूसरे ही क्षण उसे पराजय का दु ख भी भोगना पडेगा।

टिप्पणी—(१) यहाँ 'वह प्रेम' से काम का अभिप्राय उस प्रेम से है जिसका उल्लेख काम ने पहले ही काम सर्ग मे किया है।

(२) इस पद मे रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

सकुचित असीम • तर्क से भरी युक्ति।

शब्दार्थ—सकुचित=सीमित। असीम=अनन्त, अपार। अमोघ=अचूक, अकाट्य। बाधामय=विघ्नो से पूर्ण। पथ=मार्ग, रास्ता। अपूर्ण अहता=तुच्छ अहकार। रागमयी=मोहमयी, ममता से पूर्ण। महाशक्ति=विराट शक्ति। व्यापकता=विशालता, मनुष्य की व्यापक शक्ति। सर्वज्ञ=सब कुछ जानने वाला। क्षुद्र अश=छोटा हिस्सा। कर्तृत्व=कार्य, रचना। नश्वर=नाशवान। नित्यता=अखडता, सनातनता। तर्क से भरी युक्ति=तर्क पूर्ण उक्ति।

व्याख्या—काम मनु को शाप देते हुए कह रहा है कि तुम्हारी प्रजा की असीम एव अचूक शक्ति भी सकुचित हो जायगी और भेद भाव पूर्ण व्यक्ति के जीवन को बाधाओ से भरे हुए मार्गों पर ले जाएगी तथा मनुष्य अपने तुच्छ अहकार के कारण विराट शक्ति को मोहमयी तुच्छ शक्ति मानकर न केवल उसका निरादर करेगा बल्कि मनुष्य के हृदय मे स्थित व्यापक एव असीम शक्ति भी उसे अपनी सीमाओ मे घिरी और सीमित जान पडेगी। कहने का अभिप्राय यह है कि सकुचित भावनाओ के कारण व्यक्ति के हृदय मे ईश्वर प्रेम भी भेद भाव से पूर्ण हो जाएगा और मनुष्य मे श्रद्धा होते हुए भी उसके मूल मे ईर्ष्या एव क्षोभ छिपा होगा तथा अपनी अपूर्णता से ही अहकार के कारण अपने को सर्वशक्तिमान समझकर वे अपने सामने सारे ससार को तुच्छ समझते है। काम का कहना है कि भविष्य मे मनुष्य थोडा सा ज्ञान प्राप्त

करके ही अपने को सर्वज्ञ समझने लगेगा और इसी सीमित ज्ञान के आधार पर वह काव्य रचना की ओर प्रवृत्त होगा तथा ललित कलाओ को वह इस प्रकार चित्रित करेगा कि वे सभी छाया के समान नश्वर और क्षण भगुर होगी। कहने का अभिप्राय यह है कि भविष्य मे व्यक्ति वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्र कला, सगीत कला और काव्यकला आदि ललित कलाओ के क्षेत्र मे कोई भी ऐसी कृति प्रस्तुत न करेगा जो अमर एव स्थायी हो वल्कि वह नश्वर छाया के सदृश्य ही अस्थायी कृतियाँ प्रस्तुत करेगा। काम कहता है कि भविष्य में मनुष्य के हृदय से जीवन और जगत की व्यापकता एव अखण्डता विषयक भावनायें लुप्त हो जायेगी तथा वह विकास की अपेक्षा प्रतिक्षण अपने ह्रास को देखता हुआ समय व्यतीत करेगा और उसका सारा समय पतन के साथ व्यतीत होगा। काम मनु से कह रहा है कि स्वय तुम्हारी यह स्थिति होगी कि तुम भलाई और बुराई मे किसी भी प्रकार का अन्तर नही देख सकोगे और बुराई को ही अधिक प्रभावशाली मानकर उसी को स्वीकार कर लोगे तथा तुम्हारा तर्कपूर्ण व ज्ञान अपफल होगा अर्थात तुम्हारा तर्क किसी भी बात को सिद्ध नही कर सकेगा।

टिप्पणी—यहाँ 'नश्वर छाया सी' मे उपमा अलकार है।

जीवन सारा बने ... . हो अशुद्ध।

शब्दार्थ—रक्त अग्नि की वर्षा=युद्ध मे वहे हुए खून और आग के समान जलाने वाली पीडाओ की वर्षा। शुद्ध=पवित्र। शकाओ=संदेहो। आवृत्त किए रहो=घेरे रहो, छिपाये रहो। कृत्रिम=नकली, बनावटी। वसुधा=धरती, पृथ्वी। उन्नत=ऊँचा। दम्भ स्तूप—अहकार का ऊँचा टीला। संसृति=समार, सृष्टि। नव निधि=नवीन खजाना, हृदय की सात्विक भावनायें। वचित=अलग, रहित। रहो रुद्ध=उलझे रहो। प्रपच=कार्य, संसार के विविध आडम्बर। अशुद्ध=दूषित।

व्याख्या—मनु को शाप देते हुए काम कहता है कि भविष्य मे मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन ही एक युद्ध वन जायेगा अर्थात् मानव आन्तरिक और वाह्य संघर्षों से परिपूर्ण हो जाएगा और उस युद्ध मे वहे हुए खून एव आग के समान जलाने वाली पीडाओ की वर्षा में हृदय के सभी भाव शुद्ध हो जायेंगे तथा तुम अपनी ही शकाओ से व्याकुल होकर अपने ही विरुद्ध हो जाओगे। कहने का तात्पर्य यह है कि भविष्य मे ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होगी कि मनु का

आत्म विश्वास नष्ट हो जाएगा और वे निरन्तर अपने ही द्वारा उत्पन्न किए गए सघर्षों मे उलझाकर किंकर्त्तव्यविमूढ बने रहेगे। काम का कहना है कि हे मनु, भविष्य मे तुम मोह मे पडकर अपना विनाश करते हुए भी समाज से अपना वास्तविक रूप छिपाकर अपना आडम्बरपूर्ण बनावटी रूप दिखाओगे और तुम्हारे हृदय मे घमण्ड भी अधिकाधिक बढता जाएगा तथा तुम धरती की सम भूमि पर चलते फिरते अहकार के स्तूप के समान जड और मदान्ध रहोगे। काम मनु से कहता है कि तुमने उस श्रद्धा को धोखा दिया है, जो इस सृष्टि का व्यापक रहस्य एव शुद्ध रूप से विश्वासमयी है और जिसने नव-निधियो के सदृश्य सुख प्रदान करने वाली अपने हृदय की भावनाओ को तुम्हें अर्पित कर दिया था। इस प्रकार श्रद्धा को धोखा देने के कारण तुम न केवल अपने वर्तमान सुखो से वचित रहोगे बल्कि भविष्य की आशा मे भी भटके रहोगे अर्थात् तुम्हारा भविष्य भी सदिग्ध बना रहेगा और तुम्हारे सभी कार्य अशुद्ध अर्थात पापपूर्ण तथा दुखदायी सिद्ध होगे।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धाहीन मानव के जीवन का सजीव चित्र अकित किया है और वह श्रद्धा को 'इस सस्मृति का रहस्य' कहकर सकेत करना चाहता है कि श्रद्धा मे वे सभी भावनायें हैं जिनसे इस मानव सृष्टि का विकास हो सकता है।

तुम जरा मरण रहे सर्वंव भ्रान्त।

शब्दार्थ—जरामरण=वृद्धावस्था और मृत्यु। चिर अशात=हमेशा व्याकुल। जीवन मे परिवर्तन अनन्त=जीवन मे हमेशा परिवर्तन होता रहता है। अमरत्व=अमरता। वचक=छली, धोखा देने वाला। ससति=सतान। ग्रह रश्मि रज्जु=नक्षत्रो की किरण रूपी रस्सी। पीटे लकीर=अधानुसरण करना। यह लोक=यह ससार। अतिचारी=अत्याचार करने वाला, स्वेच्छाचारी। परलोक वचना=दूसरे लोक का धोखा। बुद्धि विभव=बौद्धिक उन्नति। भ्रान्त=भटके हुए। श्रान्त=थके हुए।

व्याख्या—शाप देता हुआ काम कहने लगा कि हे मनु, तुम वृद्धावस्था और मृत्यु के भय से हमेशा बेचैन बने रहोगे तथा तुम अब तक जिस मृत्यु को जीवन का अनत परिवर्तन मानते थे, उसे ही तुम अब जीवन का अनिवार्य अन्त समझकर व्याकुल होते रहोगे और जीवन की अमरता को भूलकर साधारण मनुष्य की भाँति वृद्धावस्था और मृत्यु का कष्ट सहन करने के लिए

तारो के समूह मद-मद गति से टिमटिमाते हुए दिखाई देने लगे । कवि का कहना है कि उस समय सम्पूर्ण ससार शात एव मौन था और नीरव सारस्वत प्रदेश मे पडे हुए मनु रात्रि के सघन अधकार की भाँति बेचैन होकर साँसें लेते हुए सोच रहे थे कि वही काम आज फिर मेरा भाग्य बनकर उपस्थित हो गया है जिसने पहले मेरे जीवन पर अशुभ प्रभाव डालकर मुझे श्रद्धा को अपनाने के लिए वाध्य किया था और आज उसी काम ने पुन मेरे भविष्य की घोषणा करते हुए कहा है कि मुझे भविष्य मे अनन्त दु ख उठाने पडेंगे और उनसे छुटकारा पाने का कोई उपाय भी मेरे पास नही है ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो ने कवि ने काम के आध्यात्मिक रूप का चित्रण कर यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनु यदि काम का वासनात्मक रूप न अपनाकर उसके आध्यात्मिक एव सृजनात्मक रूप को अपनाते तो उन्हें कष्ट न सहन करना पडता ।

(२) यहाँ 'काली छाया' मे लक्षण-लक्षणा है ।

(३) इस पद मे साागरूपक, उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है ।

करती सरस्वती · ·· जाता कुछ सु-संवाद ।

शब्दार्थ—मधुर नाद=मीठी कल-कल ध्वनि । श्यामल=हरी भरी । निर्लिप्त=विकारहीन, तटस्थ भाव । अप्रमाद=विना आलस्य के, शातिपूर्वक ।' उपल=पत्थर । उपेक्षित=तिरस्कृत । निष्ठुर=निर्दय । विषाद=शोक । कर्म निरन्तरता प्रतीक=कर्म करने के लिए प्रेरणा देने वाली मूर्ति । स्ववश= अपने अधिकार मे । हिमशीतल=वर्फ के समान शीतल । कूल=किनारा । आलोक=प्रकाश । अरुण किरणो का=सूर्य की किरणो का । निज निर्मित पथ=अपना बनाया हुआ मार्ग । निर्विवाद=विना किसी विघ्न के, अबाध गति से । सु-सवाद=सुखद सन्देश ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सबेरा होने वाला था और मनु अब सारस्वत प्रदेश के खण्डहरो को छोडकर आगे बढे तथा सरस्वती नदी के किनारे पहुँचे । कवि कह रहा है कि सरस्वती मधुर ध्वनि करती हुई हिमालय की हरी-भरी घाटियो मे विकारहीन शुद्ध भावो के सदृश्य शातिपूर्वक वह रही थी और उस नदी के किनारे बहुत से तिरस्कृत पत्थर पडे हुए थे, जिन्हे देखकर वही प्रतीत होता था कि मानो सरस्वती नदी के मन मे किसी भी प्रकार की

चिन्ता या खिन्नता नही है और यही कारण है कि शोक नामक भाव निष्ठुर एव जड बनकर इस नदी के तट पर पडे हुए हैं। कवि कहता है कि सरस्वती नदी की धारा कल-कल, छल-छल की ध्वनि मे मधुर सगीत सुनाते हुए प्रसन्नता के साथ आगे बढ रही थी और यह निरतर बहने वाली नदी सतत कर्मशीलता की प्रतिमा बनी हुई थी तथा प्राणियो को हमेशा कर्म करने की प्रेरणा देते हुए ऐसी प्रतीत होती थी मानो उसमे अनत ज्ञान भरा हुआ हो। साथ ही सरस्वती नदी की बर्फ के समान शीतल लहरे रह-रहकर किनारो से टकरा रही थी और उन लहरो पर प्रभातकालीन सूर्य की किरणें अपना प्रकाश बिखेर रही थी तथा सरस्वती का यह सौन्दर्य अद्भुत दिखाई देता था। इस प्रकार किसी पथिक के समान अबाध गति से अपने निश्चित पथ पर बढते हुए सरस्वती नदी सभी प्राणियो को निरतर कर्म करने का शुभ सदेश दे रही थी।

टिप्पणी—(१) इस पद मे कवि ने सरस्वती नदी का अत्यन्त सजीव एव भावपूर्ण चित्र अकित किया है।

(२) यहाँ 'निर्लिप्त-भाव सी' मे उपमा, उपेक्षित पडे रहे जैसे वे निष्ठुर जड विषाद मे वस्तूत्प्रेक्षा और निज निर्मित पथ का पथिक मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

प्राची मे फैला .... .. जीवन का तम विराग।

शब्दार्थ—प्राची=पूर्व दिशा। राग=लालिमा। मडल=लालिमा का घेरा। कमल=यहाँ सूर्य। पराग=पीला प्रकाश। परिमल=सुगधि, यहाँ किरणें। श्यामल कलरव=हरी भरी डालो पर से पक्षियों का मधुर ध्वनि करना। आलोक रश्मि=प्रकाश की किरणें। उषा अंचल=प्रभात का आँचल। आदोलन=हलचल। अमन्द=तीव्र। बिखरने को=बाँटने को। मरन्द=मकरन्द, फूलो का रस। रम्य फलक=सुन्दर चित्रपट। नवल=नवीन। बाला=युवती। नयन महोत्सव की प्रतीक=नेत्रो को अत्यन्त सुन्दर लगने वाले किसी महान उत्सव की प्रतिमूर्ति। अम्लान=जो मुरझाया हुआ न हो अर्थात् खिला हुआ, प्रफुल्लित। नलिन=कमल। सुषमा=सौन्दर्य। शुस्मित=सुन्दर हँसी, मुस्कराता हुआ। सुराग=मधुर प्रेम। सोया=निद्रित, निमोहित। तम=अधकार, निराशा। विराग=विरक्ति, उदासीनता।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि धीरे-धीरे रात बीत गई और प्रभात होते ही पूर्व दिशा मे मधुर लालिमा फैल गई जिसके लालिमा के घेरे मे सुगधि से

पूर्ण नगल के समान प्रकाश से भरा हुआ सुनहला सूर्य उदय हो गया और सूर्य की किरणो से जगकर हरी भरी डालो पर सोये हुए पक्षी मधुर ध्वनि करने लगे तथा उन्हे देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो पूर्व दिशा मे खिले हुए कमल की मधुर सुगंधि से आदोलित होकर सभी पक्षी उस कमल का गुणगान करते हुए जाग पडे हो। कवि का कहना है कि उषा की लालिमा से पूर्ण प्रभात का समय ऐसा प्रतीत होता था मानो वह प्रकाश की किरणो से बना हुआ ऊषा का आचल हो और उस मधुर वातावरण मे प्रभातकालीन मधुर पवन फूलो की सुगधि को बाँटने के लिए तीव्र गति से हलचल मचा रही हो। कवि कह रहा है कि पूर्व दिशा के सुन्दर चित्रपट पर अचानक नवीन चित्र के समान एक सुन्दर युवती प्रकट हुई, जो नेत्रो को अधिक सुख प्रदान करने वाले किसी महान उत्सव की प्रतीक के समान जान पडती थी और खिले हुए कमल के फूलो की नवीन माला के समान प्रतीत होती थी तथा उसके अपार सौन्दर्य से सुशोभित मुख मण्डल पर सुन्दर मुस्कान छाई हुई थी, जो कि सम्पूर्ण सृष्टि मे मधुर राग को बिखेर रही थी और जिस प्रकार प्रभात-कालीन प्रकाश मे ससार का सम्पूर्ण सौन्दर्य तिरोहित हो जाता है। उसी प्रकार उस सुन्दर युवती के आते ही जीवन की समस्त उदासीनता भी तिरोहित हो गयी।

टिप्पणी—(१) इस पद मे 'सुन्दर बाला' से अभिप्राय इडा से है और कवि ने यहाँ प्रभातकालीन अनुपम छटा तथा युवती इडा के अत्यत मर्म स्पर्शी चित्र अकित किये है।

(२) इन पंक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति, विशेषण विपर्यय, उपमा, रूपक एव फलोत्प्रेक्षा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

बिखरी अलकें ... ... गति भरी ताल।

शब्दार्थ—अलकें=घुँघराले केश या बाल। तर्क जाल=तर्क समूह। विश्व मुकुट=ससार का मुकुट। शशि खण्ड=अर्द्ध चन्द्र, अपूर्ण कलावाला चन्द्रमा। सदृश=समान। स्पष्ट भाल=स्वच्छ ललाट। पद्म पलाश=कमल के पत्ते। चषक=प्याला। अनुराग=प्रेम। विराग=उपेक्षा। मधुप=भ्रमर, भौरा। मुकुल सदृश=अधखिले फूल के समान। आनन=मुख। वक्षस्थल=हृदय, छाती। ससृति सृष्टि, ससार। विज्ञान=भौतिक ज्ञान। ज्ञान=आध्यात्मिक ज्ञान। कलश=घडा। वसुधा=पृथ्वी। जीवन

रस=जीवन का आनन्द। अवलम्ब=सहारा। त्रिगुण=सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। आलोक वसन=उज्ज्वल सफेद वस्त्र। त्रिबली=उदर या पेट पर पडने वाली तीन रेखाएँ। अराल=टेढा, तिरछा। ताल संगीत या नृत्य मे समय और गति का परिमाण।

व्याख्या—कवि उस सुन्दर युवती अर्थात् इडा के व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए कह रहा है कि उसके घुंघराले बाल तर्क-समूह के समान बिखरे हुए थे और उसका ललाट अत्यत उज्ज्वल था, जो ससार के मुकुट के समान शोभा देने वाले अर्द्धचन्द्र के सदृश्य प्रतीत होता था। कवि का कहना है कि उस युवती के दोनो नेत्र कमल के पत्तो से बने हुए दो प्यालो के समान थे, जिनमे से प्रेम और वैराग्य छलक रहे थे तथा उसका मुख अधखिले फूल के सदृश था जिससे निकलती हुई आवाज ऐसी जान पडती थी मानो कोई भौरा गूंज रहा हो और उसके उन्नत वक्षस्थल को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो वह अपने हृदय मे ससार के सम्पूर्ण भौतिक विज्ञान एव आध्यात्मिक ज्ञान को एकत्रित किये हुए हो। कवि इडा के व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए कहता है कि उसके एक हाथ मे कर्म का पात्र था जिसमे धरती पर रहने वाले समस्त प्राणियो के जीवन के आनन्द का सार भरा हुआ था अर्थात् जिससे सभी लोगो को वास्तविक जीवनानन्द प्राप्त होती है और उसका दूसरा हाथ विचारो के आकाश को मधुरता एव निर्भयता के साथ सहारा दे रहा था अर्थात् इडा के दूसरे हाथ से यह सकेत मिल रहा था कि वह गूढ से गूढ विचारो को भी अत्यत मधुरता एव निर्भीकता के साथ कार्यरूप मे परिणत कर सकती है। साथ ही इडा के उदर पर नाभि के समीप तीन रेखाएँ ऐसी जान पडती थी मानो सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण की तरगें लहरा रही हो तथा उसने अपने शरीर पर उज्ज्वल तिरछा वस्त्र धारण कर रखा था और उसके चरणो मे नृत्य के ताल जैसी गति थी।

टिप्पणी—(१) इस पद मे कवि ने इडा के नख शिख का वर्णन सर्वथा नवीन पद्धति के अनुसार किया है और उसके सम्पूर्ण शरीर का सौन्दर्य अकित करते हुए, समस्त गुणो का भी निरूपण किया है।

(२) इडा के इस रूप चित्रण से निम्नलिखित दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं—प्रथम तो यह कि इडा मस्तिष्क के प्रतीक के रूप मे अङ्कित की गयी है और द्वितीय वह मनुष्य को ससार मे प्रवृत्त करने वाली शक्ति के समान है

जो प्राकृतिक गुणो के समान ही पुरुष को अपने मे उलझा लेती है। इस प्रकार इडा के रूप चित्रण की तुलना श्रद्धा के रूप वर्णन से करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि श्रद्धा के वर्णन मे हृदय की विभूतियो का चित्रण हुआ है तो इडा के वर्णन में उसके मस्तिष्क एव सासारिकता का वर्णन किया गया है।

(३) इस पद मे कवि ने इडा को बुद्धि का प्रतीक माना है और उसे एक ऐसी युवती के रूप मे अकित किया है जो बौद्धिक धरातल पर उन्नति प्राप्त सभ्यता की प्रेरक शक्ति है तथा जिसमे वैज्ञानिक युग के प्रवर्तन की अपूर्व शक्ति भी है।

(४) यहाँ 'आलोक वसन' में लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति की योजना हुई है।

(५) इस पद मे 'बिखरी अलकें ज्यो तर्क जाल', 'विश्व मुकुट सा', 'शशि खड सदृश', 'चपक से दृग' और मुकुल सदृश आदि मे उपमा तथा कर्म कलश, विचारो के नभ और बिजली थी त्रिगुण तरगमयी मे रूपक अलकार का प्रयोग हुआ है।

नीरव थी प्राणो .. .... नाचतीं बार-बार।

शब्दार्थ—नीरव=मूक, मौन, शात। प्राणों की पुकार=हृदय की हलचल। मूर्छित=मौन, शात, क्रियाहीन। जीवन सर=जीवन रूपी तालाब। निस्तरग=तरग रहित, शात, विचार शून्य। नीहार=कुहरा, निराशा। निस्तब्ध=शात, चुपचाप। सोई=बद हो गयी। बयार=वायु, पवन, यहाँ इच्छा। मन मुकुलित कज=मन रूपी अधखिला कमल। मधु बूँदें=रस की बूँदें, मधुर भाव। निस्वन=मौन। रुद्ध=चुपचाप, शात। आलोक मयी=प्रकाश युक्त, सुन्दर। हेमवती=सुनहली। तन्द्रा=आलस्य। उजली माया=प्रकाश पूर्ण चेतना। दुलार=प्रेम। वीथियाँ=लहरें, स्मृतियाँ।

व्याख्या—कवि मनु के हृदय की दशा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि युवती इडा को देखकर मनु के हृदय की समस्त हलचल शात हो गयी हो और जिस प्रकार कोई तालाब तरग रहित होकर शात हो जाता है उसी प्रकार मनु के जीवन मे मचलते हुए विविध भाव भी शात हो गये तथा जिस तरह जाडो के दिनो मे तालाब कुहरे से घिरा रहता है उसी तरह मनु

का जीवन भी निराशा से अत्यधिक घिरा हुआ था। साथ ही जैसे शात तालाव से यह स्पष्ट हो जाता है कि वहाँ चचल हवा नही चल रही है और वह आलस्यवश कही सो गयी है वैसे ही मनु के जीवन की सभी मचलती इच्छाएँ भी शात हो गयी थी तथा इडा के उस दिव्यरूप को देखकर मनु का मन अपने ही विचारो मे इस प्रकार लीन हो गया जैसे कि तालाव मे विकसित कोई अधखिला कमल का फूल स्वय अपने पुष्प रस को चुपचाप पी रहा हो। इतना ही नही उस प्राची दिशा मे, जहाँ कि दिव्य युवती इडा अवतरित हुई थी, अभी तक मधुर मौन छाया हुआ था और इडा को देखकर मनु भी कुछ क्षणो तक चुपचाप रहे पर वे अचानक ही कहने लगे—'अरे, यह कौन है ? क्या अपनी सुनहली-काति फैलाते हुए और प्रकाश सहित हँसती हुई चेतना ही साकार रूप धारण कर यहाँ आ गयी है ? कवि का कहना है कि इडा को देखते ही मनु के मन का आलस्य दूर हो गया और उनके जीवन मे उज्ज्वल प्रकाशयुक्त चेतनता का समावेश हुआ तथा उन्हे अपने उस बीते हुए समय की याद आने लगी जब वे श्रद्धा के साथ आनन्द से पुलकायमान रहते थे और जैसे शात तालाव में लहरो के अचानक उठने पर तालाव चचल एव सक्रिय हो जाता है वैसे ही विगत क्षणो की मधुर स्मृति होते ही मनु का मन भी थिरकने लगा तथा उन्हे अतीत की मधुर स्मृतियाँ बार-बार उठकर नाचती हुई सी प्रतीत होने लगी।

टिप्पणी—(१) यहाँ 'बीते युग को उठता पुकार' नामक पदावली द्वारा कवि ने मनु के देव सृष्टि सम्बधी विलासमय जीवन की ओर सकेत न कर, अभी कुछ दिन पूर्व श्रद्धा के साथ व्यतीत हुए उनके सुखद गृहस्थ जीवन की ओर इगित किया है।

(२) यहाँ रूपक एव रूपकातिशयोक्ति, अलकार की योजना हुई है।

प्रतिभा प्रसन्न मुख · भविष्य का द्वार खोल।

शब्दार्थ—प्रतिभा=ईश्वर द्वारा दी गयी असाधारण बुद्धि। सहज खोल= स्वाभाविक ढग से खोलते हुए। नासिका=नाक। स्मित=हँसी। अमोल= अनुपम, अद्वितीय। क्लेश=विपत्ति। भौतिक हलचल—जलप्रलय, बाढ और भूकम्प आदि सासारिक विपत्तियाँ। चचल हो उठा=अस्त-व्यस्त हो गया। आये दिन मेरा=पुन मेरे अच्छे दिन आएँ। सहज मोल=वास्तविक मूल्य, यथार्थ लक्ष्य या उद्देश्य।

व्याख्या—कवि का कहना है कि असाधारण प्रतिमा से दैदीप्यमान इडा का मुख स्वाभाविक ही खुला और वह कहने लगी कि मेरा नाम इडा है परन्तु इस प्रदेश मे घूमने वाले तुम कौन हो ? कवि कहता है कि जब इडा ने मनु से यह प्रश्न किया तब उसकी नुकीली नाक के पुट फडक रहे थे और कोमल अधरो पर अनुपम मुस्कान छाई हुई थी तथा उसके प्रश्न को सुनकर मनु ने उत्तर दिया—'हे बाले, सुनो मेरा नाम मनु है। मैं इस ससार मे भटकने वाला एक यात्री हूँ और बहुत दिनो से कष्ट सहन करता चला आ रहा हूँ। मनु के उद्गार सुनकर इडा ने उनसे कहा कि मैं तुम्हारा स्वागत करती हूँ परन्तु तुम्हे यह भी मालूम होना चाहिए कि तुम यह जो उजडा हुआ सारस्वत प्रदेश देख रहे हो वह मेरा ही देश था लेकिन जल प्लावन के कारण वह अस्त-व्यस्त होकर अब खडहर बन गया। अभी तक इस देश मे इसी आशा मे पडी हुई हूँ कि सभव है कभी मेरे भी अच्छे दिन आयेंगे और यह उजडा हुआ प्रदेश पुन समृद्धिशाली हो जाएगा।' इडा की इन बातो को सुनकर मनु ने कहा कि हे देवि, मेरे यहाँ आने का कारण यह है कि मैं इस जीवन का वास्तविक लक्ष्य जानता हूँ और मुझे कुछ क्षण पूर्व अपने भावी जीवन के भय की सूचना प्राप्त हुई है अत तुम्हीं मेरे इस रहस्य का उद्घाटन करो।

टिप्पणी—इस पद मे इडा की दैदीप्यमान चचल आकृति का अत्यत सुन्दर चित्रण हुआ है।

इस विश्व कुहर मे .... पट है दिया डाल।

शब्दार्थ—कुहर=बिल, छेद, यहाँ अतरिक्ष। इन्द्रजाल=जादू टोना। नखत=नक्षत्र। माल=माला या समूह। भीषणतम=अत्यत भयानक, सबसे अधिक भयकर। महाकाल=ईश्वर, शिव, परमसत्ता। लघु-लघु=छोटे-छोटे। निष्ठुर=निर्दय, कठोर। अधिपति=स्वामी। सुख नीड=सुख का घोसला। अविरत=लगातार। विषाद=दुख, शोक। चक्रवाल=झझावत, घेरा। पट=पर्दा।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि जिस शिव या परम सत्ता ने अतरिक्ष मे अपना जादू फैलाकर बडे-बडे ग्रह, तारा, बिजली और नक्षत्र समूह की रचना की है वही महाकाल या विनाश का अत्यत भयकर रूप धारण कर समुद्र की भयकर लहरो के सदृश्य इस ससार मे क्रीडा करता रहता है अर्थात् ससार का विनाश करता है और ऐसा जान पडता है कि उस निष्ठुर परमसत्ता

ने इस सृष्टि की रचना धरती के छोटे-छोटे प्राणियों को भयभीत कराने के लिए ही की है तथा क्या उसकी इस कठोर रचना मे सदैव केवल विनाश की ही जीत होगी ? कहने का अभिप्राय यह है कि क्या हमेशा इस सृष्टि का विध्वस ही होता रहेगा ? मनु का कहना है कि जब इस सृष्टि की समस्त वस्तुएँ नष्ट होने के लिए ही हैं तब फिर भला मूर्ख मानव आज तक इस विध्वस कार्य को निर्माण का कार्य क्यो समझता आ रहा है और क्या इस ससार का कोई भी स्वामी नही है क्योकि यदि कोई स्वामी होता तो वह इस सृष्टि के दीन दु खियो की कातर ध्वनि सुनकर अवश्य पसीजता लेकिन उसके कानो तक कोई भी दु ख भरी आवाज नही पहुँचती अत कैसे कहा जाय कि इस ससार का कोई स्वामी है ? मनु कहते हैं कि इस सृष्टि मे हमेशा दु ख का झंझावात सुख के घोसलो को घेरे रहता है और न जाने किसने यह परदा डाल दिया है जिसके फलस्वरूप ससार अपने वास्तविक स्वरूप को भुलाये रहता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे शैवदर्शन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है और शैव दर्शन के अनुसार ही इस पद मे शिव को सागर की लहरो के समान ससार से क्रीडा करने वाला और सृष्टि का सहारक माना गया है।

(२) यहाँ 'तरग सा' मे उपमा और 'महाकाल' परिकराकुर अलंकार है।

शनि का सुदूर ... .. . कोई सके रोक।

शब्दार्थ—**सुदूर**=बहुत दूर। **नील लोक**=श्याम रग या अधकार का ससार, यहाँ शोक का संसार। **गगनशोक**=आकाश के रूप मे छाया हुआ शोक। **ओक**=स्थान, पुंज, समूह। **गंतव्य मार्ग**=निर्दिष्ट मार्ग। **मत कर पसार**=हाथ मत फैलाओ, दूसरो से याचना मत करो। **निज पैरो चल**= आत्म निर्भर बनो, स्वावलम्बी बनो। **झोक**=धुन, लगन।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि यद्यपि शोक से भरा शनि ग्रह का संसार इस धरती से बहुत दूर है पर वह अपना प्रभाव इस धरती पर डालता रहता है और उसी शनि लोक की छाया के रूप मे यह शोकपूर्ण नीला आकाश पृथ्वी के ऊपर-नीचे सर्वत्र शोक फैलाता रहता है। मनु का कहना है कि यह मत भी प्रचलित है कि शनि लोक से बहुत दूर कोई ऐसा प्रकाश एव सुख का महान जगत है जो परमेश्वर का निवास स्थान है पर क्या वह परमेश्वर अपने प्रकाश एव सुख की एक किरण मुझे प्रदान कर मेरे जीवन की स्वतन्त्रता में सहायक बन सकता है और मुझे इस ससार के प्रपचो से मुक्ति दिलाने का कोई

उपाय कर सकता है ? मनु की इन बातो को सुनकर इडा ने कहा कि परमेश्वर चाहे कोई भी हो पर वह तुम्हारी सहायता क्यो करेगा और स्वय मनुष्य को पागल बनकर किसी पर भी निर्भर नही रहना चाहिए। इडा मनु से कह रही है कि मनुष्य को अपनी दुर्बलता और बल को परख कर अपने लक्ष्य की ओर कदम बढाना चाहिए अत तुम भी किसी के सामने हाथ मत फैलाओ बल्कि आत्मनिर्भर बनो और यह हमेशा याद रखो कि जो व्यक्ति आगे बढ़ने की इच्छा रखता है उसे कोई भी नही रोक सकता।

टिप्पणी—(१) इस पद मे इडा मनु को ईश्वर पर आस्था न कर अपनी बुद्धि एव शक्ति से उन्नति करने की प्रेरणा दे रही है और यही से मनु नास्तिक होकर बुद्धि जगत मे पदार्पण करते हैं।

(२) यहाँ रूपकातिशयोक्ति, उपमा, रूपक एव अर्थान्तरन्यास अलकार की योजना हुई है।

हाँ तुम ही हो .... . लोक मे रहे छाय।

शब्दार्थ—सहाय=सहायक। सस्कार=परम्परागत प्रभाव। रमणीय=सुन्दर। अखिल ऐश्वर्य=सम्पूर्ण वैभव। शोधक=अनुसधान या खोज करने वाला। विहीन=रहित। पटल=पर्दा, रहस्य। परिकर कसकर=कमर कसकर, पूरी तरह तैयार होकर। क्षमता=योग्यता, शक्ति। निर्णायक=फैसला करने वाले। विषमता=असमानता। सहज साधन=सरल साधन।

व्याख्या—मनु को सम्बोधित कर इडा ने कहा कि यह बिल्कुल निश्चित है कि तुम स्वय ही अपने सहायक हो और तुम्हें यह हमेशा स्मरण रहना चाहिए कि यदि मनुष्य बुद्धि के अनुसार काम नही करता तो फिर वह किसका सहारा लेगा क्योकि समस्त विचारो और सस्कारो की परीक्षा करने का केवल एक ही साधन है, और वह है बुद्धि। इडा मनु से कहती है कि यह प्रकृति अत्यत सुन्दर है और सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से पूर्ण है परन्तु अभी तक किसी ने भी उसके वैभव को खोजने का प्रयत्न नही किया अत तुम्हे चाहिए कि प्रकृति के इस रहस्य को खोजने के लिए कमर कसकर तैयार हो जाओ और समस्त प्राकृतिक पदार्थों पर अपना शासन रखते हुए विश्व पर शासन करो तथा अपनी शक्ति बढाओ। इडा मनु से कह रही है कि तुम स्वय यह निर्णय करो कि इस ससार मे कहाँ समता है और कहाँ विषमता है तथा क्या-क्या उचित है और क्या-क्या अनुचित है। इडा ने मनु से कहा कि तुम जड पदार्थों को

चेतन बनाओ और इसके लिए विज्ञान के सहज साधनो की सहायता लो तथा इससे तुम्हारा यश सम्पूर्ण सृष्टि मे फैल जाएगा।

टिप्पणी—इस पद मे इडा ने मनु को बुद्धि बल पर आश्रय लेने के साथ साथ आधुनिक वैज्ञानिक साधनो को अपनाने की प्रेरणा भी दी है।

हँस पड़ा गगन .... सकल शोक।

शब्दार्थ—गगन=आकाश। शून्य लोक=सूना ससार। क्रन्दन करते=तडपते। कोक=चकवा। प्राची=पूर्व दिशा। कौतुक=खेल, आश्चर्यजनक कार्य। लख=देखकर। उन्निद्र=जाग्रत, खिले हुए।

व्याख्या—कवि का कहना कि इडा के प्रेरणामय उद्गार सुनकर मनु उत्साहित हुए और उस समय आकाश का सूना ससार भी हँस पडा अर्थात् आकाश की शून्यता नष्ट हो गयी और सर्वत्र आनन्द छा गया। यद्यपि आकाश की इसी शून्यता के भीतर न जाने कितने हृदयो का न जाने कितने हृदयो का मधुर मिलन रात्रि के अन्धकार मे बिछुडे हुए चकवा चकवी के करुण क्रन्दन की तरह चीत्कार कर रहा था लेकिन अब मनु ने सारस्वत प्रदेश को बसाने का कठोर दायित्व अपने ऊपर ले लिया था और इस दृश्य को देखकर उषा भी पूर्व दिशा मे अपनी लालिमा फैलाते हुए हँसने लगी तथा धरती के इस आश्चर्यजनक कार्य को देखने के लिए दक्षिण दिशा की मलयाचल वायु भी मन्द-मन्द गति से चलने लगी। कवि कह रहा है कि उषा की लालिमा से प्रकृति के आकाश रूपी गालो पर फैली हुई लालिमा देखकर तारो का मतवाला समूह विलीन होने लगा और जैसे-जैसे प्रकाश बढने लगा वैसे ही वैसे तारे भी छिपने लगे तथा कमलो के वन विकसित हो गए और भँवरे मधुर गुजार करते हुए छेड-छाड करने लगे तथा उस समय का आनन्दमय वातावरण देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो धरती अपना सारा दु.ख भूल गयी हो।

टिप्पणी—यहाँ विशेषण विपर्यक, रूपक और मानवीकरण अलकार हैं।

जीवन निशीथ का .... .. ही खुला द्वार।

शब्दार्थ—निशीथ=रात्रि, रात। आवृत=छिपाकर, ढककर। निहार=देखकर। मनोभाव=मन के भाव। विहंग=पक्षी। अवलम्ब=आश्रय, सहारा। विकल्प=भ्रम, अनिश्चय। सकल्प=दृढ निश्चय, पक्का विचार।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि जिस प्रकार उषा के आने पर रात्रि का अन्धकार अपना मुँह छिपाकर क्षितिज के पार भागता चला जाता

है उसी प्रकार तुम्हे देखते ही मेरे जीवन की सम्पूर्ण निराशा दूर हो गयी है और तुम आज मेरे जीवन मे उषा के समान ही उदारता तथा सहृदयता लेकर उत्पन्न हुई हो। मनु का कहना है कि हे इडा, जिस प्रकार जब उषा का आगमन होता है तब सोये हुए पक्षी जाग उठते हैं और मधुर ध्वनि से गाने लगते हैं तथा सर्वत्र प्रकाश की किरणें विखर जाती हैं उसी प्रकार तुम्हारे सम्पर्क मे अब मेरे सोये हुए भाग जाग उठे हैं अर्थात् अकर्मण्य कर्मशील बन गए हैं तथा मेरी भावनाये नवीन उत्साह से पूर्ण होकर लहरो के समान नाच रही है। मनु इडा से कहते हैं जब मैंने दूसरो का सहारा छोडकर बुद्धिवाद को अपनाया तो मैं स्वाभाविक रूप से अपने निश्चित लक्ष्य की ओर बढा और तुम्हे पाकर मुझे यही प्रतीत हो रहा है कि तुम्हारे रूप मे स्वय बुद्धि मुझे प्राप्त हो गयी है तथा अब मैं यही चाहता हूँ कि मेरे अस्थिर विचार स्थिर हो जायँ और मेरा जीवन अकर्मण्यता को छोडकर हमेशा कार्य मे लीन रहे जिससे मुझे सभी प्रकार के सुख साधन सरलतापूर्वक प्राप्त होते रहे।

टिप्पणी—(१) इस पद मे अकित इडा के विविध रूपो का आधार वैदिक साहित्य ही है और ऋग्वेद मे भी इडा को 'इडा यूथस्य माता', 'इडा मनुष्यदिह चेतयन्ती' तथा 'इडामकृण्वन् मनुपस्य शासनीम्' आदि कहा गया है।

(२) यहाँ रूपकातिशयोक्ति, उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

दसवाँ सर्ग

स्वप्न

कथानक—जब मनु हिमालय की एकात गुफा मे श्रद्धा को छोडकर चले गये तब वह उस विस्तृत गुफा मे अकेली ही अपने विरह के दिन व्यतीत करने लगी और न केवल उसका जीवन सूना हो गया बल्कि उसका मधुर सौन्दर्य भी फीका पड गया। अब वह मकरन्दहीन पुष्प, रगहीन रेखा चित्र, प्रभाहीन चन्द्र और प्रकाशविहीन सध्या के समान जान पडती थी। उसका हृदय विरह की मौन व्यथा से प्रतिक्षण जलता रहता था और वह क्षण भर के लिए भी चैन नही पाती थी। अपनी ऐसी दशा मे एक दिन वह सध्या

के समय पहले तो पश्चिम दिशा के माथे से सिन्दूर मिटता हुआ देख रही थी और रात होते ही वह आकाश गगा की ओर देखकर यह सोचने लगी मैं समझ न पाई कि जीवन मे सुख अधिक है या दुःख क्योंकि ससार का कोई भी रग स्थिर नहीं है और यहाँ सुख दुःख की आँख मिचौनी चलती रहती है। इन्द्र धनुष के समान जीवन मे सुख दुःख के चित्र बनते-बिगडते रहते हैं और मैं यहाँ अकेली दीपशिखा की भाँति जल रही हूँ पर न जाने मेरा शलभ अर्थात् प्रिय मनु अब कहाँ है ? वह चाहे जहाँ हो पर मुझे इसी मे सुख है कि मैं अकेली इस कुटिया मे शांति के साथ विरहाग्नि मे जलती रहूँ और मेरी यह दीपशिखा कभी मन्द न हो।' इस प्रकार प्रकृति का सम्पूर्ण सौन्दर्य श्रद्धा के हृदय को अत्यधिक पीड़ा देता और उसे यही प्रतीत होता कि मानो सारा ससार उससे बिना किसी अपराध के रूठ गया हो परन्तु वह अपना हृदय कठोर बनाकर असीम दुःख सहन करने का प्रयत्न करती। उसे रह-रहकर विगत सुखद स्मृतियों की याद आती है और मधुर मिलन के विगत सुखद क्षण उसके विचारो मे मँडराने लगते परन्तु वह दृढतापूर्वक उनका दुःख सहन कर लेती। इतना ही नहीं वह स्वय को पराजिता भी नहीं समझती और यही सोचती है 'मैंने जो विश्वास किया था, वह केवल मेरा मोह था। मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था लेकिन अब मैं वे सभी बातें भूलती जा रही हूँ।

एक दिन जब सध्या के समय श्रद्धा अपनी कुटिया के सामने बैठी हुई इसी प्रकार के विचारो मे लीन थी तब उसका पुत्र मानव माँ-माँ चिल्लाता हुआ आया। वह जगल मे खेलकर आया था और धूल धूसरित था। वह आकर अपनी माँ से लिपट गया और और अब श्रद्धा के हृदय मे मनु का अभाव और भी जलन पैदा करने लगा। श्रद्धा ने उससे कहा 'तू अभी तक कहाँ खेल रहा था ? अपने पिता के समान तूने भी मुझे दुःख सुख दोनो ही पर्याप्त मात्रा में दिये हैं। तू न जाने इतनी देर तक कहाँ खेलता रहता है। मैं तुझे मना करने से डरती हूँ क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि अपने पिता के समान तू भी रूठकर कहीं भाग जाय। माँ की वात्सल्यपूर्ण बातें सुनकर मानव ने कहा 'यह बात कितनी अच्छी होगी कि मैं बार-बार रूठूँ और तू मुझे बार-बार मनाये। अच्छा तो अब मैं जाकर सोता हूँ, और आज मुझे ऐसी नींद आयेगी कि जल्दी मेरी आँखें नहीं खुलेगी।' यह कहकर मानव सो गया

और श्रद्धा ने बडे स्नेह से उसका चुम्बन लिया परन्तु उसके हृदय मे वियोग की आग धधकती रही ।

कुछ देर बाद श्रद्धा भी अपने पुत्र के समीप सो गई और उसने एक विचित्र स्वप्न देखा । इस स्वप्न मे उसने देखा कि मनु इडा के पास पहुँच गये हैं और इडा उनकी पथ-प्रदर्शिका बनी हुई है तथा उसके सकेत पर ही मनु सभी कार्य कर रहे हैं । उन्होने इडा के कहने से उजडे हुए सारस्वत प्रदेश का पुनर्निर्माण किया और बडे-बडे भवन बनवाये जहाँ वर्षा, धूप एव शीत आदि से बचने की सुन्दर व्यवस्था की गई । नगर मे सभी अपना-अपना कार्य उत्साहपूर्वक कर रहे हैं और कृषि की भी उन्नति हो रही है तथा स्वर्णकार विविध प्रकार के आभूषण तैयार कर रहे हैं । साथ ही लोग शिकार से लौटकर सुन्दर-सुन्दर उपहार ला रहे हैं और मालिनें बागो मे से सुन्दर फूल चुन रही है तथा फूलो के रगो और रसो से अनेक प्रकार के अगराग के प्रसाधन बन रहे हैं और कही सगीत की मधुर ध्वनियाँ भी थिरक रही हैं । इस प्रकार सम्पूर्ण नगर सुख-समृद्धि से भरा हुआ है ।

स्वप्न मे ही श्रद्धा ने यह भी देखा कि वह स्वय उस नगर मे घूम रही है और राज भवन के सिंहद्वार पर खडे हुए प्रहरियो को धोखा देते हुए वह राजमहल के अन्दर घुस गई । उसने वहाँ सुन्दर भवनो और सुरभित गृहो को देखा तथा उनसे सलग्न बहुत से उद्यान भी उसे दिखाई दिये जिनमे प्रेमी प्रेमिका परस्पर प्रेम के साथ गलबाँही डाले घूम रहे थे और रगबिरगे फूलो पर भौरे भी मकरन्द पानकर मस्ती के साथ झूम रहे हैं । इसी प्रकार स्वप्न मे ही श्रद्धा को मनु एक ऊँचे सिंहासन पर विराजमान दिखाई दिये । मनु के हाथ में एक प्याला था जिसमें समीप बैठी हुई इडा मादक रस ढाल रही थी । मनु बार-बार मदिरा पीकर भी तृप्त नही हो रहे थे और अर्ध उन्माद की अवस्था में उन्होने इडा से पूछा कि अब और क्या करने को शेष रह गया ? इडा ने उत्तर दिया—'अभी कार्य पूरे कहाँ हुए हैं ? क्या तुमने सभी साधन अपने वश में कर लिये ?'

यह सुनकर मनु ने कहा कि अभी मैं सबको कहाँ वश में कर पाया हूँ ? यद्यपि मैंने तुम्हारे उजडे हुए सारस्वत प्रदेश को पुन बसा दिया है पर मेरा हृदय अभी तक उजडा हुआ है ? मैं तुम्हारे द्वारा अपने इस सूने हृदय को बसाना चाहता हूँ और तुम मुझे यह बतलाओ कि तुम्हारे ये हाव भरे सकेत

किस पर होते हैं ? इडा को मनु की इन बातो से आश्चर्य हुआ और उसने स्पष्ट रूप से कहा 'मैं तुम्हारी प्रजा हूँ और तुम्हे सबका प्रजापति मानती हूँ ।' लेकिन मनु ने पुन प्रणय निवेदन करते हुए कहा कि हे रानी ! मैं तुम्हारे प्रेम का भिखारी हूँ अत तुम मेरी प्रजा मत बनो ।' इतना कहकर मनु ने आवेश मे आ इडा का आलिंगन कर लिया ।

मनु के इस अनुचित कर्म को देखकर सम्पूर्ण प्रकृति मे हलचल मच गई और धरती काँपने लगी तथा आकाश की सभी देव शक्तियाँ क्षुब्ध हो उठीं । शिव ने क्रुद्ध हो अपना तीसरा नेत्र खोल दिया और अपने धनुष पर बाण चढा लिया तथा प्रकृति काँपने लगी । प्रजा मे भी हलचल मच गई और सारस्वत प्रदेश के निवासी राजनियमो की उपेक्षा कर अपनी रानी इडा के इस अपमान का बदला लेने के लिए कटिबद्ध हो गए । लज्जा और क्रोध से भरी इडा राजद्वार की ओर बढी पर वहाँ पहले ही सम्पूर्ण प्रजा व्याकुल होकर आ गयी थी । इस विषम और भयानक परिस्थिति को देखकर मनु ने राजद्वार बद करने और किसी को उनके पास न आने की आज्ञा दी । यद्यपि वे ऊपर से क्रोध प्रकट कर रहे थे परन्तु मन ही मन भयभीत से थे और हृदय मे एक प्रकार का आतक सा लिए हुए वे अपने शयनागार मे चले गये ।

यह विचित्र और भयकर स्वप्न देखकर श्रद्धा काँप उठी और उसकी आँखें अचानक खुल गयी । वह बहुत देर तक अपने स्वप्न के सम्बध मे ही सोचती रही और अनेक प्रकार की आशकाओ से दु खी रही । इस प्रकार सोचते ही श्रद्धा ने शेष रात्रि बिता दी ।

सध्या अरुण जलज .... कलियो पर मँडराती ।

शब्दार्थ—अरुण जलज=लाल कमल, यहाँ साध्यकालीन छिपता हुआ लाल सूर्य । केसर=पीला पराग, सूर्य की पीली-पीली किरणें । तामरस=कमल, सूर्य । क्षितिजभाल=पश्चिम दिशा का ललाट या माथा । कुंकुम=सेंदुर, लालिमा । कालिमा=अधकार । कर=हाथ । काकली=कोयल की मधुर ध्वनि ।

व्याख्या—कवि साध्यकालीन प्रकृति का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जिस प्रकार कोई नायिका अपने हाथ मे लाल कमल का पीला पराग लेकर कुछ समय तक अपना मन बहलाती रहती है और कुछ देर बाद वही कमल मुरझा कर उसके हाथ से गिर पडता है तथा अँधेरा होने के कारण वह उसे

खोज नही पाती उसी प्रकार सध्या भी आकाश मे छिपते हुए अर्थात् अस्त होते हुए सूर्य के लाल बिम्ब से निकलने वाली पीली किरणो से कुछ देर तक अपना मन बहलाती रही और थोडी देर बाद वह सूर्य भी प्रकाशहीन होकर न जाने कहाँ अस्त हो गया तथा अब अधकार मे उसे ढूँढ नही पाती। कवि का कहना है कि सूर्य के छिपते ही मलिन अधकार के क्रूर हाथो ने पश्चिम दिशा की सम्पूर्ण लालिमा को उसी प्रकार मिटा दिया जिस प्रकार क्रूर काल किसी सौभाग्यवती नारी के पति की मृत्यु होते ही उस नारी के माथे से सिन्दूर मिटा देता है। कवि कह रहा है कि इस समय कमल की मुरझाई हुई कलियो पर कोयल व्यर्थ ही अपनी मधुर ध्वनि सुना रही थी क्योकि उसकी ध्वनि सुनकर प्रसन्न होने वाला वहाँ कोई भी न था।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने श्रद्धा की विरहावस्था का चित्रण करने से पूर्व, पृष्ठभूमि के रूप मे साध्यकालीन विरह विधुरा प्रकृति की मर्मस्पर्शी झाँकी अकित की है और यहाँ प्रकृति चित्रण की न केवल मानवीकरण प्रणाली प्रयुक्त हुई है अपितु प्रकृति चित्रण द्वारा वातावरण का निर्माण किया गया है।

(२) यहाँ सम्पूर्ण पद मे समासोक्ति अलकार है और अरुण जलज केसर, तामरस एव कु कुम आदि मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

(३) कामायनी के इस सर्ग मे सम्पूर्णतया ताटक छन्द का प्रयोग हुआ है और इसमे अतिम वर्ण दीर्घ रखा गया है।

कामायनी कुसुम वसुधा ··· · कोई नहीं जहाँ।

शब्दार्थ—कामायनी=श्रद्धा। मकरद=पुष्प रस, सरसता। रग=वर्ण, आकर्षण। हीन कलाशशि=चाँदनी से रहित चन्द्रमा जो मलिन पड गया हो।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की विरहावस्था का वर्णन करते हुए कहता है कि मनु के वियोग मे व्यथित श्रद्धा उस फूल के समान धरती पर पडी हुई थी जिसमे फूलो का रस जैसी जीवन की सरसता नही रही थी और वह उस चित्र के समान थी जिसमे केवल रेखायें ही थी पर रग नहीं थे अर्थात् श्रद्धा की शरीर-काति मलिन पड गयी थी। विरहिणी श्रद्धा का चित्रण करते हुए कवि कह रहा है कि उसकी दशा प्रभातकालीन कलाहीन चन्द्रमा के समान थी जिसमे न तो किरणें रहती हैं और न चाँदनी ही दिखाई देती है तथा वह उस सूनी सध्या के समान थी जिसमे सूर्य, चन्द्रमा और तारे आदि नही होते। कहने का

अभिप्राय यह है कि श्रद्धा मे अब किसी भी प्रकार का आकर्षण नही दिखाई देता था।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे विरहिणी श्रद्धा का अत्यधिक मार्मिक एव स्वाभाविक चित्र अकित किया है और यह चित्रकाव्य का सुन्दर उदाहरण है।

(२) इस पद मे निरग रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

जहाँ तामरस इंदीवर .... जम जाये।

शब्दार्थ—तामरस=लाल कमल, मुख की लालिमा। इन्दीवर=नील कमल, आँखो की नीलिमा। सित शतदल=सौ पखुडियो का सफेद कमल, सम्पूर्ण अगो का गौर वर्ण। नाल=कमल दण्ड, अगयष्टि। सरसी=सरोवर, तालाव। मधुप=भ्रमर, भौंरा, यहाँ मनु। जलधर=वादल। चपला—विजली। श्यामलता=वादल की श्याम काति। शिशिर कला=शीतलता की चाँदनी। क्षीण स्रोत=लघु या छोटा झरना। हिमतल=वर्फीला प्रदेश।

व्याख्या—विरह विधुरा श्रद्धा की दशा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि मुख की लालिमा नेत्रो की नीलिमा और शरीर के अवयवो का वर्णन क्षीण हो जाने के कारण श्रद्धा उस सरोवर की भाँति दिखाई देती थी जिसके लाल, नीले एवम् सफेद कमल मुरझाकर अपने डठलो पर शोभाविहीन होकर खडे हो तथा उन पर कोई भी भौंरा न आता हो। यहाँ यह स्मरणीय है कि मनु श्रद्धा को हिमालय की उस गुफा मे छोडकर चले गये थे अत इन पक्तियो मे श्रद्धा का यह चित्रण स्वाभाविक ही कहा जाएगा। कवि पुनः कहता है कि वियोगिनी श्रद्धा अपनी शारीरिक शोभा विहीनता के कारण उस वादल के समान जान पडती थी जिसमे न तो विजली की चमक थी और न किसी प्रकार की नीलिमा ही थी तथा अत्यन्त दुर्बल और शिथिल हो जाने के कारण श्रद्धा शिशिर ऋतु में प्रवाहित होने वाले उस लघु झरने के समान जान पडती थी जिसकी पतली धारा वर्फीले प्रदेश मे पहुँच कर जम जाती है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने प्रभावशाली उपमानो का अद्भुत एव अनुपम सचय कर वियोगिनी श्रद्धा की शारीरिक दशा का सजीव चित्रण किया है।

(२) यहाँ निरग रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

एक मौन वेदना .... अब पार नहीं ।

शब्दार्थ—मौन वेदना=नीरव पीडा । विजन=एकात, जनशून्य स्थान । झिल्ली=झीगुर । जगती=ससार । अस्पष्ट=जिसका कारण अज्ञात हो, अकारण । उपेक्षा=तिरस्कार । साकार कसक=पीडा का मूर्तिमान स्वरूप आलिंगन करती=पृथ्वी पर पडी हुई थी ।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की विरहावस्था का वर्णन करते हुए कह रहा है कि वियोगी श्रद्धा की व्यथा उस एकान्त प्रवेश की मौन वेदना के समान थी जिसमे झीगुर का स्वर भी सुनाई नही देता और मनु द्वारा परित्यक्ता श्रद्धा ससार की एक ऐसी उपेक्षा थी, जिसके उपेक्षित होने का न केवल कारण स्पष्ट नही था बलिक जो पीडा का मूर्तिमान स्वरूप जान पडती थी । कहने का अभिप्राय यह है कि उस निर्धन स्थान के दर्द भरे मौन के सदृश्य श्रद्धा का जीवन भी चुपचाप बीत रहा था और वह पीडा की साक्षात प्रतिमा थी तथा सपूर्ण ससार ने उसकी उपेक्षा की थी । कवि का कहना है कि वियोगिनी श्रद्धा धरती पर लेटी हुई ऐसी जान पडती थी जैसे किसी हरे भरे कु ज की सम्पूर्ण हरियाली नष्ट हो गयी हो और उसकी केवल काली छाया ही धरती पर शेष रह गयी हो तथा वह—श्रद्धा—उस छोटी सी विरह नदी के समान थी जो छोटी अवश्य जान पडती थी लेकिन जिसकी गहराई की थाह पाना असम्भव था ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे लाक्षणिकता एव प्रतीकात्मकता आदि विशेषताएँ हैं ।

(२) यहाँ निरग रूपक एव उत्प्रेक्षा अलकार है ।

नील गगन मे ... तमघन घिरने ।

शब्दार्थ—विहग बालिका=पक्षियो की पुत्री । किरनें=सूर्य की किरणें। तम घन=अँधेरा या अन्धकार रूपी बादल ।

व्याख्या—विरह विधुरा श्रद्धा की दशा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि जिस प्रकार नीले आकाश मे उडती हुई पक्तियो की बालिकाएँ थक कर सोने के लिए अपने-अपने घोसलो की ओर चली जाती हैं उसी प्रकार सूर्य की किरणें भी दिन भर नीले आकाश का चक्कर लगाकर, थकान का अनुभव करती हुई आनन्दपूर्वक शैय्या पर सोने तथा सुख स्वप्न देखने के लिए पश्चिम दिशा मे प्रवेश करने लगी परन्तु वियोगिनी श्रद्धा के जीवन मे एक

क्षण भर के लिए भी विश्राम नही है। कहने का अभिप्राय यह है कि सध्या के आते ही सम्पूर्ण प्रकृति विश्राम के लिए तैयार हो जाती है पर वियोगिनी के जीवन मे क्षण भर के लिए भी विश्राम नही होता। कवि कह रहा है कि जैसे रात्रि का अन्धकार बादलो के समान घिरने लगा वैसे ही वियोगिनी श्रद्धा के हृदय मे मनु की याद बिजली के समान चमकने लगी।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा, रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

सध्या नील सरोरुह ··· ···· स्वर भरते थे।

शब्दार्थ—सध्या नील सरोरुह=सध्यारूपी नीले कमल से। श्याम पराग अन्धकार रूपी पराग। शैल घाटियाँ=पर्वत की घाटियाँ। तृण=घास। गुल्म=झाडियाँ। नग=पर्वत।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की वियोग दशा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जब सध्या रूपी नीले कमल से अन्धकार रूपी पराग झरने लगता अर्थात् सध्या का अन्धेरा फैलने लगता और यह अँधेरा धीरे-धीरे पर्वत की घाटियो में भर जाता तब श्रद्धा की विरत व्यथा असत्य हो उठती पर उसकी दुख भरी कथा को घास और झाडियो से पूर्ण पर्वत ही केवल सुन पाते। इस प्रकार श्रद्धा की विरह वेदना उसकी सूनी साँसो से मिलकर स्वर का रूप धारण कर लेती थी। लेकिन विरहिणी श्रद्धा की दुख पूर्ण कथा को उस एकान्त प्रदेश की पर्वतीय घाटियाँ ही सुन रही थी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, मानवीकरण एव वस्तूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

जीवन मे सुख · ···· रहस्य को खोलोगी ?

शब्दार्थ—मन्दाकिनी=आकाश गगा। नखत=नक्षत्र, तारे। बुदबुद=बुलबुले।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा आकाश गंगा को सम्बोधित कर कहती है कि क्या तुम मुझे यह बता सकती हो कि जीवन मे सुख अधिक है या दुख और आकाश मे तारे अधिक हैं या सागर मे बुलबुले अधिक हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि मानव जीवन मे तारो के समान असख्य सुख और पानी के बुलबुलों के समान अनगिनती दुख हैं। श्रद्धा आकाश गगा से कह रही है कि आकाश के सारे तारे तुम मे प्रतिबिम्बित हैं और तुम सागर में जाकर मिल जाती

हो अत तुम वहाँ के बुलबुलो को भी गिन सकती हो पर तुम क्या यह रहस्य सुलझा सकती हो कि ये तारे और बुलबुले अर्थात् सुख और दुख दोनो एक सत्ता की ही छाया हैं या दोनो के पृथक्-पृथक् आधार है ।

टिप्पणी—यहाँ यथासख्या या क्रम अलकार की योजना हुई है ।

इस अवकाश पटी घूमिल पट बुनते हैं ।

शब्दार्थ—अवकाश पटी=आकाश का पट, शून्य चित्र फलक, अन्तरिक्ष । सुरधनु=इन्द्र धनुप । पट=वस्त्र । व्यापक नील शून्यता=सर्वत्र फैले हुए नीले आकाश की नीलिमा । आवरण वेदना=पर्दे के रूप मे सभी को ढकने वाली पीडा । घूमिल=धुँधला ।

व्याख्या—विरह-वेदना से सतप्त श्रद्धा अपनी व्यथा पर विचार करते हुए कह रही है कि जिस प्रकार आकाश मे कितने ही इन्द्र धनुप बनते और बिगडते रहते हैं उसी प्रकार इस जीवन मे भी कितने ही चित्र प्रस्तुत होते हैं और फिर विलीन हो जाते हैं तथा जीवन मे कभी एक दृश्य उपस्थित होता है और कभी दूसरा तथा ये सभी दृश्य इन्द्र धनुप के रगो के समान स्थायी न होकर परिवर्तनशील होते हैं । साथ ही एक क्षण भर मे सम्पूर्ण अणु एक दूसरे मे घुलकर इस विशाल नीले आकाश के समान ही एक अस्पष्ट पीडा का पर्दा बना देते हैं जो सदैव ससार को ढके रहता है और जीवन के सुखो के नष्ट हो जाने पर केवल दुख ही दुख बचा रहता है । कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा का सम्पूर्ण ससार मे वेदना ही वेदना दिखाई रही है

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव उपमा अलकार है ।

दग्ध श्वास से आह जले यहाँ ।

शब्दार्थ—दग्धश्वास=तप्त साँसें, दुख भरी साँसें सजल=ओज भरी, आँसू भरी । कुहू=अमावस्या की रात । स्नेह=प्रेम, तेल । साझकिरन=साध्यकालीन सूर्य की किरण । दीप शिखा=दीपक की लौ । शलभ=पतिगा, मनु ।

व्याख्या—वियोगिनी श्रद्धा का कहना है कि ओस के रूप मे आँसू बहाने वाली इस अमावस्या की रात्रि मे कही ऐसा न हो कि मेरे हृदय से भी विरह के कारण तप्त साँसें न निकलने लगें अर्थात् मेरा विरह दुख सबके समक्ष प्रकट हो जाय । श्रद्धा का कहना है कि भले ही मेरी तुलना उस छोटे से दीपक से भी नही की जा सकती जो स्वय जलकर लगातार दूसरो को प्रकाश-

देता रहता है परन्तु मेरी यही अभिलाषा है कि इस कुटिया मे जलने वाला प्रेम दीप कही सन्ध्याकालीन सूर्य की किरण की भाँति अस्त न हो जाय। श्रद्धा कहती है कि यह तो अच्छा ही है कि आज यहाँ मनुरूपी पतंगा नहीं है अत मैं यही चाहती हूँ कि मेरे प्राणो का यह दीप अकेले ही सुखपूर्वक यहाँ जलता रहे अर्थात् मनु के वियोग मे अकेली जलते हुए ही श्रद्धा दु.खी न होकर सुख का अनुभव करना चाहती है।

टिप्पणी—यहाँ श्लेष, उपमा, रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है और दीपशिखा तथा शलभ मे लक्षणा भी है।

आज सुनूं केवल .... सब सह ले।

शब्दार्थ—कोकिल=कोयल। पराग=फूलो का रस, मकरन्द।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा कह रही है कि आज कोयल चाहे जो भी ध्वनि करे मैं उसे केवल चुपचाप सुनकर सहन करूँगी अर्थात् कोयल की ध्वनि हृदय मे प्रणय भावनाओ को उद्दीप्त अवश्य करती है परन्तु मुझे उन्हें दबाना होगा। श्रद्धा का कहना है कि पहले यहाँ वसन्त ऋतु की सुषमा फैली हुई थी और सर्वत्र फूलो का रस बिखरा रहता था पर मेरे विरह के कारण यहाँ पतझड आ गया है और प्रकृति श्रीहीन होगयी है तथा वृक्षो की डालें सूनी बनी हुई हैं। श्रद्धा कह रही है कि यह सध्या भी मनु की प्रतीक्षा करते-करते बीत रही है और हे कामायनी, तू अपना हृदय कडा करके इस वियोग दु ख को सहन करले।

टिप्पणी—इस पद मे व्यतिरेक अलंकार है।

बिरल डालियों के .. .. पलक के पार बहे।

शब्दार्थ—विरल डालियों=पत्ते और फूलों से रहित सूनी डालें। निकुंज =कुंज। दु ख के निश्वास=पीड़ा की आहें। समीर=पवन, हवा।

व्याख्या—वियोगिनी श्रद्धा का कहना है कि आज ये पत्र और फूलो से रहित डालियाँ ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे ये कुंजें भी किसी के विरह में दु खी होकर आहे भर रही हैं तथा इन कुंजों मे चलने वाली वायु ऐसी जान पड़ती है जैसे वह किसी की याद में भूली हुई सी चली आ रही हो अत यह भी मेरे प्रियतम मनु के सम्बन्ध मे मुझे कुछ भी नही बता सकती। श्रद्धा कह रही है कि आज मुझे यही प्रतीत होता है कि जिस प्रकार मनु बिना किसी विशेष कारण के, केवल अपने अहकार के कारण ही मुझसे रूठ कर चले गये थे उसी प्रकार यह सारा संसार भी बिना किसी अपराध के मुझसे रूठ गया है अतः

भला मैं अब अपने आँसुओ से किस-किस के चरण धोते हुए मनाने की कोशिश करूँ क्योकि केवल मनु ही नही वल्कि यह सारा संसार ही मुझसे रूठा हुआ है।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव गम्योत्प्रेक्षा अलकार है।

अरे मधुर हैं • सुख दु ख की लडियाँ।

शब्दार्थ—निस्संबल=असहाय, वेसहारा। विखरी कडियाँ=वीती हुई बातें। सुख दु ख की लडियाँ=सुख-दु ख की शृ खला, उलझनें।

व्याख्या—प्रियतम मनु के साथ व्यतीत हुए विगत क्षणो की स्मृतियो की याद करते हुए विरहिणी श्रद्धा कहती है कि वह बीता हुआ जीवन चाहे कितना ही कष्ट पूर्ण-क्यो न हो पर उसकी स्मृति अत्यन्त मधुर होती है और जो व्यक्ति मेरे समान वेसहारा होकर अकेला ही अपने अतीत जीवन की विखरी कडियो को जोडता रहता है, उसे तो अपने अतीत जीवन की याद और भी अधिक मधुर जान पडती है। यही कारण है कि आज मुझे भी रह-रहकर अपना वह विगत जीवन याद आ रहा है जिसे मैंने जीवन का अत्यधिक सुन्दर सत्य समझकर यह विश्वास कर लिया था कि वह गृहस्थ जीवन इसी प्रकार सुखमय रहेगा लेकिन प्रियतम मनु के अकारण ही मुझे छोडकर चले जाने से वह सत्य आज न जाने कहाँ छिप गया है और मेरी समझ मे नहीं आता कि मैं अकेली ही अपने जीवन मे उत्पन्न होने वाली सुख दु ख की उलझनो को किस प्रकार सुलझा सकूँगी ?

टिप्पणी—यहाँ 'मधुर है कष्टपूर्ण जीवन भी' मे विरोधाभास और 'जोड रहा विखरी कडियाँ' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

विस्मृत हों वे ... ... मेरी हार नहीं।

शब्दार्थ—विस्मृत हो=भूल जायँ। सार=तत्त्व। जलती छाती=प्रेम से धडकता हुआ हृदय। मधु अभिलाषाएँ=मधुर इच्छाएँ। निष्ठुर=कठोर, निर्दय।

व्याख्या—अपने अतीत जीवन के सम्बन्ध मे सोचती हुई श्रद्धा कह रही है कि अब तो मैं यही चाहती हूँ कि बीते हुए सुखद जीवन की सभी बातें भूल जाऊँ क्योकि उन्हे याद रखने मे मुझे कुछ भी सार नही दिखाई देता और न तो अब मेरे हृदय मे पहले के समान प्रेम का आवेग ही रहा है और न अब पहले जैसा सुख देने वाला प्रेम ही बचा है। श्रद्धा का कहना है कि मेरी सारी आशाएँ और मधुर इच्छाएँ अतीत मे घुलती जा रही हैं तथा यह सत्य है कि मेरे प्रियतम मनु अपनी निष्ठुरता में मुझे त्यागकर विजयी हुए है परन्तु मैं

अपने को पराजित नही मानती क्योकि मनु ने चाहे मुझे त्याग दिया हो परन्तु मैंने उनका त्याग नहीं किया है ।

टिप्पणी—यहाँ 'जलती छाती' और 'शीतल प्यार' मे विरोधाभास अलकार हैं ।

वे आलिगन एक ··· · · · अनुमान रहा ।

शब्दार्थ—पाश=बधन । स्मित=हँसी, मुस्कान । चपला=बिजली । वंचित जीवन=ठगा हुआ जीवन, धोखा खाया हुआ जीवन । अकिंचन=दरिद्र, दीन ।

व्याख्या—वियोगिनी श्रद्धा अपने प्रियतम मनु के साथ व्यतीत हुए प्रणय सम्बन्धी व्यापारो का स्मरण करती हुई कहती है कि जब मनु यहाँ थे तब हमारे प्रेम के आलिगन एक बधन के समान थे और उन दिनो आनद के कारण हमारे अधरो पर बिजली के समान हँसी चमकने लगती थी पर आज वे सभी बातें न जाने कहाँ छिप गयी । श्रद्धा का कहना है कि मैंने अपने प्रियतम मनु पर विश्वास किया था और उस विश्वास मे ही जीवन का सुख माना था लेकिन मेरा वह मधुर विश्वास कि हम दोनो कभी अलग नहीं होंगे झूठा ही सिद्ध हुआ और वह केवल पागलपन का मोह बनकर रह गया । श्रद्धा कहती है कि यद्यपि मनु ने मेरे साथ विश्वासघात कर मुझे धोखा दिया है और मैं एक प्रकार का दीन एव असहाय जीवन ही व्यतीत कर रही हूँ लेकिन मुझे आज भी यह अभिमान है कि मैंने कभी अपना जीवन मनु के चरणो मे समर्पित कर दिया था, परन्तु आज ये सभी बातें पुरानी पड चुकी हैं और मैं केवल यही अनुमान अब कर सकती हूँ कि मैंने मनु को कभी कुछ दिया था ।

टिप्पणी—यहाँ 'वे आलिगन एक पाश थे, स्मिति चपला थी' मे रूपक अलंकार है ।

विनिमय प्राणो का ···· ···· उडुगन बिखरे ।

शब्दार्थ—विनिमय=आदान-प्रदान । भय-सकुल=भय से भरा हुआ । उडुगन=तारो का समूह ।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा का कहना है कि प्रेम मे प्राणो का आदान-प्रदान होता है और प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे को अपना जीवन समर्पित कर देते हैं परन्तु यह प्रेम का व्यापार भय से पूर्ण है और इस व्यापार मे अनेक दुख सहने पडते हैं । श्रद्धा अपने मन को सम्बोधित कर कहती है कि इस प्रेम

व्यापार मे तू जितना देना चाहे उतना अवश्य दे सकता है पर इस व्यापार मे कुछ लेने की इच्छा करना दु ख का कारण होता है क्योकि प्रेम में लेने की इच्छा वास्तव मे परिवर्तन की तुच्छ इच्छा है जो कभी पूरी नही हो सकती। श्रद्धा का कहना है कि सध्या प्रतिदान की आशा मे आकाश को सूर्य के समान प्रकाशवान श्रेष्ठ पदार्थ प्रदान करती है पर उसे इसके बदले केवल कुछ बिखरे हुए तारो का समूह ही प्राप्त होता है अत जीवन मे किसी से कुछ लेने की इच्छा न करनी चाहिए।

टिप्पणी—यहाँ अतिम पक्ति मे दृष्टात अलकार है।

वे कुछ दिन • • •••• •••• कह कर छल से।

शब्दार्थ—अन्तरिक्ष=आकाश और धरती के मध्य का शून्य स्थान। अरुणाचल=उदयाचल, वह पर्वत जहाँ से सूर्य उदय होता है। स्वरों का कूजन=पक्षियो का कलरव, जीवन की चहल-पहल। कुहक=जादू। चिर प्रवास=हमेशा के लिए विदेश जाना।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा कह रही है कि जिस प्रकार प्रात काल अन्तरिक्ष मे सूर्य का उदय होने पर अनेक प्रकार के फूल खिल उगते हैं और पक्षी मधुर कलरव करने लगते हैं तथा धरती पर एक प्रकार की जादू भरी शक्ति का व्यापक प्रसार दिखाई देता है और सूर्य की किरणें अपने प्रकाश के रूप मे एक मधुर हास्य चारो ओर फैला देती हैं उसी प्रकार मेरे जीवन मे मनु का प्रवेश होने पर मेरे आनन्द और उल्लास की कोई सीमा नही थी लेकिन वे मुझे उसी प्रकार छोडकर चले गये जिस प्रकार कोई छल से शीघ्र ही लौटने की बात कहकर हमेशा के लिए विदेश चला जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा को अब जीवन मे विरह की असहनीय पीडा सहनी होगी और उसे वह आनन्द प्राप्त नही होगा जो मनु के साथ मिलता था क्योकि मनु उसे धोखे मे छोडकर चले गये हैं।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

जब शिरीष की •••• • • बन कर मुसक्याते।

शब्दार्थ—शिरीष=एक प्रकार का कोमल फूल। मधु ऋतु=वसत ऋतु। रक्तिम मुख=लाल मुख। दिवस=दिन। आलाप=बातचीत, वार्तालाप।

व्याख्या—वियोगिनी श्रद्धा का कहना है कि वसत ऋतु आते ही शिरीष

के फूल खिलने लगते हैं और उनकी मधुर गन्ध रात के समय सर्वत्र छा जाती है पर शिरीष की मधुर गंध से पूर्ण वसंत की रात्रि के समय भी मैं प्रियतम मनु की याद में बैठी जागती रहती हूँ और मुझे यही प्रतीत होता है कि वह मेरे रात भर जागने के कारण क्रोधित होकर उषा की लालिमा के रूप मे अपने लाल मुख द्वारा अपना क्रोध प्रकट करती है। यहाँ यह स्मरणीय है कि वसन्त ऋतु की रातो का श्रद्धा पर क्रोध प्रकट करने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा की सुखद संयोगावस्था के समय वसन्त ऋतु की रातें सर्वत्र प्रसन्नता बिखेरती थीं पर अब उसकी वियोगावस्था मे यही रातें दु:खदायी जान पड़ती हैं। श्रद्धा का कहना है कि रात्रि के बीत जाने पर पुन: दिन आता है और आकाश मे इस तरह छा जाता है जिस तरह प्रेम व्यापार से पूर्ण मधुर बातों की कहानियाँ जीवन मे छा जाती हैं और दिन के बाद जब पुन: रात्रि आती है तब आकाश में चमकते हुए तारे मुझे ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे मेरे मधुर सपने ही दिवा स्वप्न बनकर आकाश मे मुस्करा रहे हो।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एवं समासोक्ति अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

वनबालाओं के निकुंज .... कण बरसे।

शब्दार्थ—वन-बालाएँ=वन-देवियाँ। वेणु=वंशी, बाँसुरी। तुहिन बिन्दु =ओस की बूँदें।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की वियोग दशा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि सन्ध्या का आगमन होते ही सब वन देवियो के कुंजो से बाँसुरी के मधुर स्वर सुनाई देने लगे और सभी के प्रियतम अपने-अपने घरो की याद कर अपने-अपने घर लौट आये परन्तु प्रवासी मनु लौट कर नही आये और उनकी प्रतीक्षा करते-करते श्रद्धा को एक युग सा व्यतीत हो गया। कवि का कहना है कि श्रद्धा की दीन दशा से करुणार्द्र होकर रात्रि की पलकें भी भीगने लगीं और उसके नेत्रो से ओस की बूँदो के रूप मे आँसू के कण गिरने लगे।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियो मे प्रकृति का संवेदना पूर्ण चित्रण किया गया है।

(२) यहाँ मानवीकरण अलंकार है और 'युग छिप गया' मे लक्षण-लक्षणा है।

मानस का स्मृति .... जग रचने।

शब्दार्थ—मानस=हृदय, मान सरोवर। शतदल=सौ पंखुड़ियो वाला

कमल । मरन्द=मकरन्द । मोती के समान उज्ज्वल आँसू । पारदर्शी=जिनके पार देखा जा सकता है, शीशे के समान स्वच्छ । विद्युत्कण=विजली के कण । नयनालोक=नेत्रो की ज्योति । प्राण पथिक=प्राणरूपी यात्री । सम्बल= पाथेय, मार्ग का व्यय ।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा की दशा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि जिस प्रकार तालाब मे कमल खिलते ही उसमे से मकरन्द के बिन्दु झरने लगते हैं उसी प्रकार श्रद्धा के हृदय मे सुखद स्मृतियो के उत्पन्न होते ही अर्थात् मनु के साथ व्यतीत हुई घटनाओ की याद जागृत होने पर श्रद्धा के नेत्रो से मोतियो के समान आँसू बहने लगते थे पर ये आँसू मोतियो के समान सुन्दर होते हुए भी कठोर नही थे बल्कि पारदर्शी थे जिनके माध्यम से श्रद्धा के हृदय की अथाह वेदना स्पष्ट हो जाती थी । कवि का कहना है कि श्रद्धा के ये भोले एव सुकुमार आँसू बिजली के कणो के सदृश ज्योतिपूर्ण थे, जो न केवल उसके जीवन मे छाए हुए विरहरूपी अन्धकार के मध्य उसी आँखों के लिए ज्योति बने हुए थे, बल्कि इन्ही अश्रुओं का सहारा लेकर श्रद्धा उसी प्रकार अनेक कल्पना लोको की रचना करती थी जिस प्रकार कोई पथिक अपने पास के पाथेय के सहारे अपने मार्ग की अनेक कल्पनाएँ किया करता है ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे श्रद्धा के विरह व्यथित हृदय का अत्यत मर्मस्पर्शी चित्र अकित किया गया है ।

(२) यहाँ श्लेष, रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

अरुण जलज • ••• जुगनू डरे डरे ।

शब्दार्थ—अरुण जलज=लाल कमल, रोती हुई लाल आँखें । शोण= लाल - तुषार के बिन्दु=ओस की बूँद, आँसू । मुकुर=दर्पण, हृदय । प्रतिच्छवि=प्रतिबिम्ब । कुहू=अमावस्या की रात्रि ।

व्याख्या—कवि रोती हुई विरहिणी श्रद्धा का चित्र अकित करते हुए कहता है कि जिस प्रकार लाल कमल की पखुडियो के कोने नवीन ओस की बूँदों से भर जाते हैं उसी प्रकार लगातार रोते रहने के कारण श्रद्धा के लाल-लाल नेत्र भी अश्रुओ से भरे रहते थे और इन अश्रुओ को देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो किसी दर्पण की भाँति श्रद्धा का हृदय भी मनु के वियोग मे टुकडे टुकडे हो गया है और जैसे किसी दर्पण के टूट जाने पर उसके छोटे-छोटे

चमकीले टुकड़े धरती पर बिखरे हुए दिखाई देते हैं उस प्रकार विरहिणी श्रद्धा के हृदय मे अनेक स्मृतियाँ जाग्रत हो उठती थी। कवि का कहना है कि अब श्रद्धा के जीवन मे न तो पहले के समान प्रेम शेष रह गया था और न उसके मुख पर हँसी दिखाई देती और न उसमे दुलार ही था। कवि कहता है कि अब विरहिणी श्रद्धा का जीवन वर्षा काल की अमावस्या बना हुआ था और जिस प्रकार वर्षाकालीन अधकारमयी अमावस्या की रात्रि मे उस अन्धकार से भयभीत जुगनू इधर-उधर चमकते रहते हैं उसी प्रकार श्रद्धा के जीवन में भी विरह के कारण निराशा का अन्धकार छाया हुआ था और अतीत की की स्मृतियाँ जुगनू के समान चमकती हुई उसे व्याकुल कर रही थीं।

टिप्पणी—यहाँ प्रयोजनवती साध्यवसान लक्षणलक्षणा के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

सूने गिरिपथ ··· ··· ···· ज्वाला जलती।

शब्दार्थ—गिरिपथ=पर्वत का मार्ग। गुंजारित=गूँजती हुई। शृंगनाद =सींग के बाजे की आवाज। आकांक्षा=इच्छा, कामना। दुख तटिनी= दुःख रूपी नदी। पुलिन=किनारा। अंक=गोद। दीप नभ के=तारे। शलभ=पतगे।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की विरह दशा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जिस प्रकार एक पहाड़ी नदी पर्वत के सूने मार्ग से निकल कर गूँजती हुई और शृगी बाजे की आवाज के समान ध्वनि करती हुई बहती रहती है तथा उसमे उठने वाली छोटी-छोटी लहरें बार-बार किनारो की गोद में छिपती रहती हैं उसी प्रकार विरहिणी श्रद्धा भी हिमालय पर्वत की शून्यता मे अपना दुखी जीवन बिता रही थी और उसके हृदय मे इच्छाओ की लहरें बार-बार उठकर निराशा के किनारे पर पहुँच कर विलीन हो जाती थी। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा की सभी अभिलाषाएँ बार-बार उसके हृदय मे बेकार ही उठकर नदी की लहरो के समान स्वय ही समाप्त हो जाती थी। कवि श्रद्धा की विरह दशा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जिस तरह आकाश मे चमकते हुए तारो को प्रज्वलित दीप समझकर पतगे उनकी ओर उडकर चलने लगते हैं उसी तरह विरहिणी श्रद्धा भी उन तारो की ओर देखने लगी और उसके नेत्रो मे हमेशा आँसुओ रूपी जल विद्यमान होते हुए भी उसके हृदय की विरहाग्नि नहीं बुझती थी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, विशेषोक्ति एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

मॉं फिर एक . बुझती घूनी।

शब्दार्थ—किलक=बालक की हर्ष ध्वनि। दूरागत=दूर से आई हुई। छुटरी=लटें। उत्कठा=उत्सुकता। अलक=घुँघराले बाल। रजधूसर=धूल में सनी हुई। निशातापसी=रात मे तपस्या करने वाली नारी अर्थात् वियोगिनी श्रद्धा। घूनी=तप करने के लिए जलाई हुई आग, यहाँ विरहाग्नि।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मनु के विरह मे दुखी श्रद्धा अपने विगत जीवन की स्मृतियो को स्मरण कर रही थी तब दूर से उसे अपने पुत्र मानव की 'माँ' 'माँ' की हर्ष भरी किलकार सुनाई दी और उसकी वह सूनी कुटिया आनन्द एव उल्लास की मधुर गूँज से पूर्ण हो गई तथा उसका हृदय वात्सल्य से भर गया और वह दुगुनी उत्सुकता से पुत्र को गोद मे लेने के लिए उसकी ओर बढ़ी। कवि कह रहा है कि मानव के घुघराले बालो की लटें खुली हुई थी और धूल मे खेलने के कारण उसके हाथ पैर धूल से सने हुए थे तथा वह आते ही अपनी माँ से लिपट गया। कवि का कहना है कि जब मानव अपनी धूल से सनी हुई बाहो से अपनी माँ श्रद्धा से लिपट गया तब श्रद्धा की सोई हुई विरह व्यथा उसी प्रकार जाग उठी जिस प्रकार रात्रि के समय तप करने वाली किसी तपस्विनी की बुझती हुई घूनी पुन धधकने लगती है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे कवि ने श्रद्धा के हृदय मे उठने वाले वात्सल्य एव शोक नामक मनोभावो का एक साथ चित्रण किया है।

(२) यहाँ 'निशातापसती' और 'घूनी' आदि मे जहत्स्वार्थ लक्षणा के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति अलकार की भी योजना हुई है।

कहाँ रहा नटखट .... .. तुझे मना।

शब्दार्थ—प्रतिनिधि=प्रतिरूप प्रतिमूर्ति। वनचर=वन मे घूमने वाला। मृग=हिरन।

श्रद्धा ने अपने पुत्र मानव से कहा कि अरे नटखट, जिस प्रकार मेरा भाग्य आजकल चक्कर काट रहा है उसी प्रकार तू भी अब तक कहाँ चक्कर काटता रहा और तू वास्तव मे अपने पिता का प्रतिरूप है तथा जिस प्रकार तेरे पिता ने मुझे सुख-दुख दोनो ही पर्याप्त मात्रा में दिये हैं उसी प्रकार तू भी मुझे पास रहकर बहुत अधिक सुख और दूर जाकर बहुत अधिक दुख देता

है। श्रद्धा अपने पुत्र मानव से कहती है कि तू बहुत चचल है और पता नहीं तू हिरण के समान कहाँ कहाँ चौकडी भरता रहता है तथा मैं तुझे मना करने की इच्छा करते हुए भी नही रोक पाती क्योकि मुझे यह डर है कि कही तू भी अपने पिता की भाँति मुझसे रूठकर कही चल दे और इसी डर से मे तुझे बाहर जाने से नही रोकती।

टिप्पणी—यहाँ भाग्य वना और मृग वन कर मे रूपक अलकार है।

मैं रूठूँ माँ .. ... विषाद से भरी रही।

शब्दार्थ—विषाद=दु ख पीडा।

व्याख्या—अपनी माता श्रद्धा के वात्सल्यपूर्ण उद्‌गार सुनकर मानव ने उससे कहा कि माँ, तू ने बहुत अच्छी बात कही है और मैं रूठजाऊँ तथा तू मुझे मनाए तो कितना अधिक आनन्द होगा पर आज मैं तुमसे अधिक देर बातचीत नही करूँगा और अब जाकर सो जाऊँगा। मानव अपनी माँ श्रद्धा से कह रहा है कि मैंने उठकर पके हुए फल खाए हैं अत. अब मेरी नीद जल्दी नही खुलेगी। कवि का कहना है कि पुत्र की ये वातें सुनकर श्रद्धा ने उसका मुख चूम लिया और वह उस समय पुत्र प्रेम के कारण बहुत कुछ प्रसन्न थी तो पति वियोग से बहुत कुछ उदास और दुखी भी थी।

टिप्पणी—यहाँ अभिधामूला शाब्दी व्यजना है।

जल उठते हैं .... गल के।

शब्दार्थ—लघु=छोटा। हलके=धूमिल, सुखमय। उर=हृदय। विश्रांत=दिन भर के कार्य से थकी हुई। आलोक रश्मियाँ=प्रकाश की किरणें। नील निलय=नीला घर अर्थात् आकाश। संसृति=सृष्टि, ससार।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की विरहावस्था का वर्णन करते हुए कह रहा है कि व्यक्ति के छोटे से जीवन मे जो सुख के क्षण व्यतीत होते हैं वे ही वियोग की दशा मे व्यक्ति को स्मरण होते ही उसका हृदय जलने लगता है और बीते दिनो की सुखद स्मृतियाँ दाहक बन जाती हैं इस प्रकार विरहिणी श्रद्धा भी सर्वत्र विषाद की छाया देख रही थी और उसे आकाश भी दुखी दिखाई देता था और व्यापक आकाश मे चमकते हुए तारे उसे ऐसे प्रतीत होते थे मानो आकाश के शोकपूर्ण हृदय मे छाले पड़ गये हो। कवि का कहना है कि वियोगिनी श्रद्धा को सर्वत्र अधकार ही दिखाई देता था क्योकि सूर्य की किरणें भी दिन भर के कार्य से थक कर इस विस्तृत नीले आकाश के अपने नीले घर मे

छिप गई थी और श्रद्धा इस समय मौन अवश्य थी परन्तु उसका करुण स्वर चारों ओर छाया हुआ था और वह रात्रि के उस सूने संसार में अश्रुओं के रूप में परिवर्तित होकर बह रहा था।

टिप्पणी—(१) यहाँ प्रकृति का चित्रण उद्दीपन विभाव के रूप में किया गया है।

(२) इस पद में असंगति, रूपकातिशयोक्ति एवं मानवीकरण अलंकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—उर्दू के एक शेर में भी इसी प्रकार कहा गया है—

सितारे जो समझते हैं गलतफहमी है यह उनकी,
फलक पर आह पहुँची है मेरी चिनगारियाँ होकर।

प्रणय किरण .... चित्र बना जाता।

शब्दार्थ—प्रणय किरण=प्रेम की किरण। प्रतिपल=प्रतिक्षण। तंद्रा=आलस्य, ऊँघने की दशा।
मानस=हृदय। प्रेमास्पद=प्रेमी या प्रणयी।

व्याख्या—विरहिणी श्रद्धा की दशा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि यद्यपि मनु के रूठ कर चले जाने से श्रद्धा के हृदय को बाँधने वाला मनु के प्रेम का बन्धन खुल गया था और वह उससे मुक्त हो गयी थी पर वह खुलकर भी दिन प्रतिदिन और अधिक बढ़ता चला जा रहा था। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु अपने प्रेम बन्धन को तोड़कर और श्रद्धा से विमुख होकर चले गये थे लेकिन श्रद्धा दिन प्रतिदिन उनके प्रेमबन्धन में अधिकाधिक बँधती चली जा रही थी और मनु भले ही श्रद्धा का परित्याग कर उससे दूर चले गये थे पर स्वयं श्रद्धा निरन्तर उनकी याद करती रहती थी और इस तरह मनु उसके हृदय के समीप रहते थे। कवि का कहना है कि जिस प्रकार शांत सरोवर पर मधुर चाँदनी फैल जाती है उसी प्रकार विरहिणी श्रद्धा के बेसुध हृदय पर भी आलस्य का प्रसार होने से वह झपकी लेने लगी और अधिक रात बीत जाने पर उसे नींद आने लगी। इस प्रकार श्रद्धा को नींद आने पर उसे अपने अभिन्न प्रमी मनु के चित्र दिखाई देने लगे अर्थात् वह अब मनु के सपने देखने लगी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, उपमा, विरोधाभास एवम् श्लेष आदि अलंकारों की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—रत्नाकर जी ने भी 'उद्धवशतक' के छन्द मे भी यही कहा है कि प्रेमी दूर रह कर भी विरहिणी प्रेमिका के समीप रहता है—

ज्यौं ज्यौं बसे जात दूरि-दूरि प्रिय प्रान-मूरि,
त्यौं त्यौं धँसे जात मन मुकुर हमारे मे।

कामायनी सकल .... खिचती रेख रही।

शब्दार्थ—श्रद्धा। कामायनी=श्रद्धा। प्रसारित=वचित, छली हुई, ठगी हुई। लेख=लिखावट। कोमल दल=सुकुमार पखुडियाँ। अकित=लिखा हुआ, चित्रित। रेख=रेखा, पक्ति।

व्याख्या—कवि श्रद्धा की विरह व्यथा का वर्णन करते हुए कह रहा है कि मनु द्वारा श्रद्धा का परित्याग किए जाने पर, श्रद्धा के अधिकाश सुख वैसे ही समाप्त हो चुके थे परन्तु अब स्वप्न मे उसने अपने शेष सुखो को भी नष्ट होते देखा। इस प्रकार उसने स्वप्न मे देखा कि वह मनु द्वारा युगो से छली और ठगी जाकर बेचैन बना दी जाती रही है और वह अब केवल मिटी हुई लिखावट के समान हो गई है। कवि का कहना है कि एक दिन वह भी था जब श्रद्धा फूलों की सुकुमार पखुडियो पर पवन द्वारा अकित भव्य एव मनोहर लिखावट के समान थी लेकिन आज वह अपनी वियोग वेदना के कारण इतनी क्षीण हो गयी है कि मानो वह पपीहे की व्यथापूर्ण ध्वनि को अकित करती हुई आकाश मे खिची हुई कोई क्षीण रेखा हो।

टिप्पणी—यहाँ उपचार वक्रता से पूर्ण लाक्षणिक पदावली है और रूपक एव उत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

इड़ा अग्नि ज्वाला ... . उत्साह भरी।

शब्दार्थ—उल्लास=उमग, उत्साह। आलोकित=प्रकाशित। विपद नदी=विपत्ति रूपी नदी। तरी=नौका, नाव। आरोहण=सीढ़ी, सोपान, चढ़ना। शैल शृंग=पर्वत की चोटी। श्रान्ति=थकावट।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि मनु के आगे-आगे इडा नामक कोई युवती उत्साहपूर्वक आग की ज्वाला के समान चल रही है और जिस प्रकार मशाल से मार्ग प्रकाशित होता है उसी प्रकार इडा भी मनु का मार्ग प्रकाशित कर रही है अर्थात् वह उन्हें मार्ग दिखा रही है तथा वह मनु के लिए विपत्ति रूपी नदी को पार करने की नौका के समान है अर्थात् जिस प्रकार नाव के सहारे मनुष्य नदी को पार करने मे सफल होता है उसी प्रकार इडा की

सहायता से मनु भी समस्त विघ्न-बाधाओं को पार करने मे सफल हो रहे हैं। साथ ही मनु लगातार उन्नति की ओर बढते जा रहे हैं और इडा उन्हें उन्नति की ओर अग्रसर करने वाली सीढ़ी के समान है तथा पर्वत की ऊँची चोटियों के समान वह उन्नति गौरव की प्रतिमा बनी हुई है। इसी प्रकार निरन्तर कार्य करते रहने पर भी इडा कभी थकती नहीं है और वह उत्साह से परिपूर्ण है तथा प्रेरणा की तीव्र धारा के समान प्रवाहित हो रही है।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों मे कवि ने वैदिक साहित्य के अनुरूप ही इडा का चरित्र-चित्रण किया है और वैदिक ग्रंथों ने भी इडा को शिक्षक रूपी, अग्निस्वरूपा, दीप्तिवती, मनुष्यों को बुद्धि या चेतना प्रदान करने वाली तथा अपार तेजमयी कहा गया है।

(२) यहाँ पूर्णोपमा, रूपक एव मालोपमा अलकार की योजना हुई है।

वह सुन्दर आलोक • •••• •••• उपहार दिये।

शब्दार्थ—आलोक किरन=प्रकाश की किरण, ज्ञान की ज्योति। हृदय भेदिनी=मर्म तक पहुँचने वाली, सम्पूर्ण रहस्यों को जानने वाली। तम=अधकार, अज्ञान। सतत=निरन्तर, लगातार। विजयिनी तारा=विजय प्रदान करने वाला नक्षत्र। उपहार=भेंट।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देखती है कि मनु इडा नामक एक युवती द्वारा प्रेरित होकर ही कार्य कर रहे है और स्वय इडा ज्ञान की ज्योति से युक्त प्रकाश की किरण के समान दिखाई दे रही थी तथा उसकी दृष्टि सम्पूर्ण रहस्यों को जानने वाली थी और वह जिधर देखती थी उधर ही प्रकाश फैल जाता था। और अधकार या अज्ञान द्वारा बद किये हुए द्वार तुरन्त खुल जाते थे। साथ ही इडा मनु की लगातार होने वाली सफलता के लिए उदित विजय के नक्षत्र के समान थी अर्थात् मनु की सफलताओं मे उसका महत्वपूर्ण योग था और जब आश्रय पाने के लिए लालायित सारस्वत प्रदेश की निराश्रित जनता को मनु एव इडा का सहारा प्राप्त हुआ तब जनता ने अपनी मेहनत के उपहार उन्हे दिये अर्थात् मनु का आश्रय पाकर सारस्वत प्रदेश की जनता अत्यधिक परिश्रम करने मे जुट गयी।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा, रूपकातिशयोक्ति एव रूपक अलकार है।

मनु का नगर बसा •• • •••• स्वेद सने।

शब्दार्थ—दृढ़=मजबूत। प्राचीर=परकोटा, चारो ओर से घेरने वाली

बाध्य होंगे। काम मनु से कह रहा है कि तुम हमेशा दुःखों के विषय में सोचते हुए दुःखों की प्रतिमा बन जाओगे और श्रद्धाविहीन होकर अत्यन्त अधीर बने रहोगे तथा तुम्हारी यह मानव-सृष्टि भी नक्षत्रों की किरणरूपी रस्सी से अपने भाग्य को बाँधकर लकीर पीटती हुई आगे बढ़ेगी अर्थात् सभी मनुष्य भाग्यवादी होकर प्राचीन परम्पराओं का अंधानुसरण करते हुए अपना जीवन व्यतीत करेंगे। काम का कहना है कि एक श्रद्धालु व्यक्ति ही यह रहस्य जानता है कि यह संसार कल्याण की भूमि है परन्तु आगामी प्रजा श्रद्धाविहीन होकर इस ज्ञान से वंचित रहेगी और वह स्वेच्छाचारी बनकर इस संसार को मिथ्या मानेगी तथा परलोक के सुख की आशा में स्वयं को धोखा देती रहेगी। इस प्रकार आगामी प्रजा अपना बौद्धिक विकास होने के कारण बुद्धि के नियंत्रण में आशाओं को भी निराशाओं में परिणत कर हमेशा भटकती रहेगी और उसे कभी शांति न प्राप्त होगी तथा वह थककर भी हमेशा अपने मार्ग पर आगे बढ़ती रहेगी अर्थात् आगामी प्रजा के जीवन में आशा एवं उत्साह की उमंग न होगी।

टिप्पणी—यहाँ 'चिर चिंतन के प्रतीक' एवं 'ग्रह रश्मि रज्जु' में रूपक और 'आशाओं में निराश' मे विरोधाभास अलंकार की योजना हुई है।

अभिशाप प्रतिध्वनि .... उपाय भी न।

शब्दार्थ—अभिशाप प्रतिध्वनि=कामदेव के शाप की गूँज। लीन=शांत। नभ सागर=आकाश रूपी सागर। अंतस्तल=हृदय, आंतरिक भाग। महामीन=बड़ी मछली। मृदु=कोमल। मरुत=पवन, वायु। फेनोपम=फेन या झाग के समान। निस्तब्ध=शांत। अखिल=सारा, सम्पूर्ण। तंद्रालस=आलस्य से ऊँघता हुआ। विजन प्रांत=निर्जन सारस्वत प्रदेश। रजनी तम=रात का अंधकार। पुंजीभूत सदृश=पूंजी के समान। अशांत=बेचैन। अदृष्ट=भाग्य। काली छाया=अशुभ प्रभाव। यातना=दुःख। अवशिष्ट=शेष।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि कामदेव के शाप की वह तीक्ष्ण वाणी अचानक आकाश में इस तरह लीन हो गई जिस प्रकार कोई बड़ी मछली समुद्र के ऊपर प्रकट होकर तुरन्त उसी समुद्र के तल में जाकर छिप जाती है और जैसे बड़ी मछली के डुबकी लगाने पर समुद्र में लहरों के साथ-साथ झाग उठने लगते हैं उसी प्रकार आकाश में पवन के कोमल झोंकों के साथ-साथ

देश काल का · ·· · · वसुधा तल से ।

शब्दार्थ—देश=स्थान । काल=समय । लाघव=छोटा करना, अंतर मिटा देना । सम्बल=जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक सामग्री । व्यवसाय=उद्योग । वसुधा तल=पृथ्वी के अन्दर ।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देखती है कि मनु द्वारा बसाये गये नगर मे सभी प्राणी शीघ्रता से अपना-अपना कार्य कर रहे हैं और वे स्थान एव समय का अन्तर मिटाने के लिए प्रयत्नशील हैं तथा वे ऐसे यन्त्र बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं जिनके द्वारा वे कम से कम समय मे अधिक कार्य कर सकें और अधिक दूरी की यात्रा करने मे सफल हो । साथ ही वे दिन रात जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक सामग्री एकत्र करने मे लगे रहते हैं और उनके सतत परिश्रम एव सगठित शक्ति द्वारा ज्ञान और उद्योग धन्धो की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है तथा उस नगर मे सभी इस प्रयत्न मे हैं कि धरती के अन्दर जो कुछ छिपा हुआ है वह मनुष्यो के परिश्रम से, जनता के लिए, बाहर आना चाहिए ।

टिप्पणी—यहाँ 'विस्तृत छाया' में लक्षण लक्षणा या जहत्स्वार्था लक्षणा है ।

सृष्टि बीज अकुरित ·· · ·· ··· ·· अब रहा डर ।

शब्दार्थ—प्रफुल्लित=फूला हुआ । प्रफुल्लित=फूला हुआ । स्वचेतन=अपनी शक्ति से परिचित, चेतनायुक्त । स्वावलम्ब=अपना सहारा । धरणी=पृथ्वी, धरती ।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देख रही है कि यद्यपि प्रलय मे सम्पूर्ण देव सृष्टि का नाश हो गया था पर मनु के रूप मे जो उसका बीज शेष रह गया था, वह आज इस नगर अर्थात् सारस्वत प्रदेश के पुनर्निर्माण मे सहायक होकर अकुरित, फूला हुआ और हरा भरा दिखाई दे रहा है । कहने का अभिप्राय यह है कि मनु द्वारा मानवसृष्टि का सर्वागीण विकास हो रहा है । इस प्रकार अब मनुष्य अपनी शक्ति को पहचानता है और उसने ऐसी कल्पनाएँ की हैं, जो साध्य हैं तथा वह अब अपने पैरो पर खडे होकर अपनी शक्ति के बल पर आगे बढ़ रहा है तथा उसे अब किसी अन्य शक्ति का कोई भय नही रहा है ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

श्रद्धा उस आश्चर्य··· · · · शिखा जलती ।

शब्दार्थ—आश्चर्य लोक=वह अचम्भे मे डालने वाला मनु का नगर । मलय बालिका=मलय पर्वत से आने वाली पवन । सिंह द्वार=नगर का

प्रमुख द्वार। प्रहरियो को छलती=पहरेदारो को धोखा देती हुई। वलभी=छत के ऊपर का कमरा। रम्य=सुन्दर। प्रासाद=महल। धूप धूम=धूप का धुआँ। सुरभित=सुगन्धित। आलोक शिखा=प्रकाश की ज्योति।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि वह उस अचम्भे मे डालने वाले मनु के नगर मे इस तरह पहुँच गयी जिस तरह वसन्त ऋतु मे मलय पवन मद मद गति बहती हुई पहुच जाती है और वह अर्थात् श्रद्धा मनु के उस नगर के मुख्य द्वार पर पहुँचकर पहरेदारो की दृष्टि बचाकर नगर के अन्दर जाकर उसने देखा कि ऊँचे-ऊँचे खम्भो पर सुन्दर महल बने हुए हैं और उनमे छत पर भी कमरे बने हुए है तथा सभी धूप के धुएँ मे सुगन्धित हैं और सभी मे प्रकाश की ज्योति चमक रही है।

स्वर्णकलश शोभित ··· ··· ······· ·· पराग सने।

शब्दार्थ—उद्यान=बगीचा। ऋजु=सीधा। प्रशस्त=चौडे और साफ सुथरे। दम्पति=पति पत्नी। समुद=हर्षपूर्वक, प्रसन्नता के साथ। गलबाँही=गले मे बाँहें डालकर। मधुप=भ्रमर, भँवरा। रसीले=रसयुक्त। मदिरा=शराब। मोद=प्रसन्नता, आनन्द।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देखती है कि वह स्वय मनु द्वारा बसाये गये नगर मे पहुँच गयी और उसने वहाँ पहुँचकर देखा कि सभी भवन सोने के कलशो से सुशोभित हैं और उन भवनो के समीप ही सुन्दर बगीचे बने हैं तथा उन बगीचो के मध्य मे सीधे चौडे और स्वच्छ मार्ग बने हुए हैं। साथ ही कही-कही लताओ के घने कुज भी हैं जिनमे पति-पत्नी प्रेमपूर्वक एक दूसरे के गले मे बाहे डालकर हर्षपूर्वक घूम रहे है और फूलो के रस का पान कर भँवरे इस प्रकार मस्त होकर गूँज रहे हैं जिस प्रकार शराब के नशे मे मतवाले व्यक्ति गुनगुनाया करते हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'मदिरा मोद पराग सने' मे रूपक अलकार है।

देवदारु के वे···· ··· · ····   ······ थे बहुरंग।

शब्दार्थ—देवदारु=एक प्रकार का पहाडी वृक्ष। प्रलम्ब=लम्बी-लम्बी। भुज=बाँहे, शाखाएँ। मुखरित=ध्वनित। कलरव=मधुर ध्वनि। बाल-विहंग=नन्हे पक्षी। नागकेसर=एक प्रकार का सुगन्धित फूलोवाला वृक्ष। बहुरंग=रंग-बिरगे, अनेक रगवाले।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि वह मनु द्वारा बसाये गये नगर में

पहुँच कर देखती है कि वहाँ कहीं-कहीं देवदारु के वृक्ष हैं और उनकी लम्बी-लम्बी शाखाएँ भुजाओ के सदृश्य दूर तक फैली हुई हैं तथा वृक्ष शान्त होने के कारण यही प्रतीत होता था कि मानो वायु की लहरें उन लम्बी-लम्बी शाखाओ से लिपट रही हो। साथ ही वहाँ नन्हे-नन्हे पक्षियो की गुजार आभूषणों की झकार के समान थी और वन की ओर से आने-वाली स्वर लहरी जब बांसो के झुरमुट मे आकर रुक जाती थी तब वहाँ से वह और भी अधिक तीव्र ध्वनि करती हुई निकलती थी तथा उस नगर के बगीचो मे नाग केसर की सुन्दर क्यारियाँ भी थी जिनमे कई प्रकार के रग बिरगे फूल खिले हुए थे।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा, मानवीकरण एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

नव मडप मे सिंहासन ······ · गयी कहाँ ?

शब्दार्थ—मडप=शामियाना, चँदोवा। चर्म=चमडा। शैलेय=पहाडी, पर्वत का। अगरु=अगर वृक्ष की सुगधित लकडी। आमोद=प्रसन्नता।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न में देखती है कि उस नगर मे विशाल भवनो के मध्य एक नवीन मडप की रचना की गई है जिसमे एक सिंहासन है और उसके सामने सुन्दर एव कोमल चमडे से मढे हुए सुखदायी छोटे-छोटे मच भी बैठने के लिए रखे हुए हैं। उस नगर मे श्रद्धा के चारो ओर पहाडी अगर की मधुर गन्ध भी फैली हुई जान पडी तथा वह आश्चर्य पूर्वक कहने लगी कि मैं कहाँ पहुँच गयी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता के विकास की ओर सकेत किया गया।

और सामने देखा ··· · ·· सौ बार जिये।

शब्दार्थ—निज=अपने। दृढ़कर=शक्तिशाली हाथ। चषक=प्याला। ऋतुमय=यज्ञ करने वाला। मादक भाव=मस्ती। संध्या की लालिमा=यहाँ रग की शराब से अभिप्राय है।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि वह स्वय मनु के उस अचम्भे मे डालने वाले नगर म पहुँच गयी और उसने अपने सामने ही यज्ञ प्रेमी मनु को अपने शक्तिशाली हाथो मे प्याला लिये सुन्दर सिंहासन पर बैठे हुए देखा। मदिरा पीने के कारण मनु का वही मुख सध्या की लालिमा के सदृश्य लाल था

और मनु के समीप बैठी हुई सुन्दरी इडा को देख यही प्रतीत होता था कि मनु की मस्ती ही साकार हो गयी है। इस प्रकार वह सोचने लगी कि किसी सुन्दर चित्र के समान यह युवती कौन है जिसे देखने के लिए यह प्राणी मनु मर-मर कर भी सौ बार जीने की अभिलाषा करेगा।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, रूपक एव उपमा अलकार है।

इडा ढालती थी .... कुछ भास नहीं।

शब्दार्थ—आसव=मदिरा। तृषित=प्यासा। वैश्वानर=आग। मच-वेदिका=यज्ञ वेदी के रूप मे बने हुए मच। सौमनस्य=प्रसन्नता, शाति। जड़ता=अविवेक, अज्ञान। भास=चिन्ह, सकेत।

व्याख्या—मनु के समीप बैठी हुई सुन्दर युवती इडा मनु के प्याले मे वह मदिरा डाल रही थी जिससे कभी प्यास शात न होती थी और जिसे अधिकाधिक पीने पर भी मनुष्य का प्यासा कठ यही सोचता था कि उसने अभी कुछ नही पिया। वह युवती इडा यज्ञवेदी के समान मच पर बैठी हुई आग की ज्वाला के समान देदीप्यमान जान पडती थी और वह वहाँ न केवल शान्तिपूर्ण शिष्टता एव विवेक का वातावरण निर्माण कर रही थी बल्कि उसकी उपस्थिति से वहाँ अकर्मण्यता और आलस्य का चिन्ह तक नही दिखाई देता था।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

मनु ने पूछा .... मानस देश यहाँ।

शब्दार्थ—सविशेष=असाधारण विशेष रूप से। साधन=उपमा। स्ववश=अपने अधिकार मे। रिक्त=शून्य, खाली। मानस=मन, हृदय।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देख रही है कि मदिरा पान करते हुए मनु ने युवती इडा से पूछा कि 'क्या अब यहाँ और कुछ करना शेष रह गया है' तथा इडा ने उनसे कहा कि 'तुमने अभी तक जो कुछ किया, उसे भला असाधारण कार्यों की सफलता क्यो समझते हो? क्या तुमने सभी साधनो पर अधिकार कर लिया है?' इडा की यह बात सुनकर मनु कहने लगे 'नही मैं अभी अभावो से ही भरा हुआ हूँ? यद्यपि मैंने इस सारस्वत प्रदेश को बसा दिया है परन्तु मेरे मन का देश अभी भी सूना ही पडा है।'

टिप्पणी—यहाँ अन्तिम पक्ति मे विरोधाभास अलकार है।

सुन्दर मुख .... ये किसके हैं?

शब्दार्थ—आँखो की आशा=आँखो के स्वप्न, आँखो मे झलकने वाली

इच्छाएँ। बाँकपन=तिरछापन। प्रतिपद शशी=प्रारम्भिक या प्रतिपदा का चन्द्रमा। रिस=क्रोध। अनुरोध=आग्रह। मानमोचन=नायिका के रूठने पर नायक का उसे मनाना। चेतनते=स्फूर्ति प्रदान करने वाली, प्रेरक शक्ति।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि मनु इडा पर आसक्त होकर उससे कहने लगे कि 'तुम्हारा मुख सुन्दर है और तुम्हारी आँखों मे अनेक इच्छाएँ भरी हुई हैं परन्तु इन पर किसी का अधिकार नही है। तुम्हारी यह तिरछी चितवन प्रतिपदा के चन्द्र के सदृश्य बाकी है और जब तुम मेरी ओर देखती हो तब मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम मुझसे कुछ रूठी हुई हो और मुझे मनाने के लिए आग्रह कर रही हो। अतएव हे मेरी प्रेरणा शक्ति, तुम मुझे यह बतलाओ कि तुम किसी की हो और तुम्हारे इन नेत्रों तथा सुन्दर मुख पर किसका अधिकार है।

टिप्पणी—यहाँ 'एक बाँकपन प्रतिपद शशि का' मे उपमा और 'चेतनते' मे परिकर अलकार की योजना हुई है।

प्रजा तुम्हारी .. . चुनती हूँ मैं।

शब्दार्थ—प्रजा=जनता, किसी देश या राष्ट्र मे रहने वाला जन समूह। प्रजापति=राष्ट्र या देश का स्वामी। मराली=हसिनी। प्रणय=प्रेम।

व्याख्या—मनु के उद्गार सुनकर श्रद्धा ने कहा कि मैं तो यही समझती हूँ कि मैं तुम्हारी प्रजा हूँ और तुम हमारे प्रजापति हो अत यह आज सशय से युक्त नया प्रश्न तुम क्यो कर रहे हो?' इडा का यह उत्तर सुनकर मनु कहने लगे कि 'हे इडा, तुम प्रजा नही हो बल्कि मेरे हृदय की रानी हो और प्रजा कहकर तुम मुझे भ्रम मे मत डालो। हे मधुर हसिनी, तुम मेरे प्रेम को स्वीकार करलो और मुझसे कहो कि मैं अब तुम्हारे प्रेम के मोती चुगने के लिए तैयार हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'मधुर मराली' मे परिकर और 'प्रणय के मोती' मे रूपक अलकार है।

मेरा भाग्य गगन .... रस मे।

शब्दार्थ—भाग्यगगन=भाग्यरूपी आकाश। प्राची=पूर्व दिशा। पट=अचल। प्रभापूर्ण=आलोक से भरी कातिमान। अतृप्त=अभावो से परिपूर्ण, प्यासा। आलोक भिखारी=प्रेम से प्रकाश को मागने वाला। प्रकाश बालिके=निराशा के अधकार को दूर करने वाली।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि मेरा भाग्यरूपी आकाश असफलताओ एव निराशाओ से पूर्ण होने के कारण धुधला सा है और जिस प्रकार प्रभात के समय पूर्व दिशा मे प्रकाश बिखर जाता है उसी प्रकार तुम भी मेरे भाग्य के धुधले आकाश पर शोभा और यश की चमक उद्दीप्त होकर अचानक ही खिल पडी तथा मेरा सारा अधकार दूर हो गया। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि इडा ने उनके जीवन मे प्रवेश कर उसके भाग्य के धुधले पर्दे को हटा दिया है और उसकी प्रेरणा से ही उनका यश फैल सका। मनु इडा से कहते हैं कि मै अभी तक अभावो से पूर्ण हूँ और प्रेम के प्रकाश का भिखारी हूँ अत. हे मेरे निराशा के अधकार को दूर करने वाली, तुम मुझे यह बताओ कि कब मेरी प्यास तुम्हारे अधरों के रस से बुझेगी अर्थात् तुम मेरा प्रणय स्वीकार करोगी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, उपमा, परिकर एवं रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

ये सुख साधन .... घन माया।

शब्दार्थ—सुख साधन=आनन्दोपभोग की सामग्री। रुपहली=चाँदी के समान सफेद, चाँदनी। उन्मद=उन्मत्त। नर-पशु=मनुष्य रूपी पशु। मदिर घटा=मस्ती की घटा।

व्याख्या—मनु ने इडा से कहा कि अब आनन्दोपभोग की सारी सामग्री हमारे पास है और चाँदी के समान चमकती हुई चाँदनी रात भी अपनी शीतल छाया डाल रही है तथा सभी दिशाएँ मधुर स्वरो से पूर्ण है और मेरा मन उन्मत्त हो रहा है तथा मेरा शरीर तुम्हारे प्रेम मे शिथिल हो रहा है। अतएव हे मेरी रानी, इस रमणीय वातावरण मे तुम मेरी प्रजा मत बनो। कवि का कहना है कि यह बात कहते ही मनु के मन मे पशु के सदृश्य वासना हुंकार करने लगी और उसी समय आकाश मे घनघोर घटा छाने लगी।

टिप्पणी—यहाँ 'नर-पशु' मे रूपक और 'मदिर घटा सी' मे पूर्णोपमा अलकार है।

आलिगन .... बन शाप उठी।

शब्दार्थ—क्रन्दन=चिल्लाना, विलाप करना। वसुधा=पृथ्वी। अति-=अत्याचारी, अनैतिक आचरण करने वाला। परित्राण=रक्षा।

नाप उठी=खोजने लगी। रुद्र हुंकार=शिव का भयकर गर्जन। आत्मजा=पुत्री। शाप बन उठी=अमगलकारी सिद्ध हुई।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब मनु ने बलात इडा का आलिगन किया तब वह भयभीत होकर चिल्लाने लगी और उस समय ऐसा प्रतीत हुआ मानो पृथ्वी काँपने लगी हो। कवि का कहना है कि मनु इडा के साथ अनैतिक आचरण करने के लिए आतुर हो उठे अत वह दुर्बल नारी अपनी रक्षा के लिए मार्ग खोजने लगी और यह दृश्य देख कर अतरिक्ष मे हलचल मच गयी तथा भगवान शिव भयानक हुकार करने लगे। कवि कह रहा है कि इडा प्रजा होने के कारण प्रजापति मनु की पुत्री के समान थी और उसके साथ किसी भी प्रकार का अनैतिक आचरण करना निश्चित रूप से पाप कर्म होने के कारण अमगलकारी ही सिद्ध हुआ।

टिप्पणी—(१) प्रजापति मनु द्वारा अपनी पुत्री के साथ अनैतिक आचरण करने का उल्लेख शतपथ ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण, एव मत्स्य पुराण आदि मे भी मिलता है।

(२) यहाँ 'वसुधा जैसे काँप उठी' मे पूर्णोपमा अलकार है।

उधर गगन .... . प्रतिशोध भरी।

शब्दार्थ—गगन=आकाश। क्षुब्ध=विचलित,। रुद्र=शिव। रुद्र-नयन=शिव या शकर का तीसरा नेत्र। शिव=कल्याणकारी। शिंजनी=प्रत्यचा, धनुष की डोरी। अजगव=शिव का धनुष। प्रतिशोध=बदला।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि जब मनु ने इडा के साथ बलात्कार करना चाहा तब आकाश मे स्थित समस्त देव शक्तियाँ क्रोधित होकर विचलित हो उठी और शिव का तीसरा नेत्र अचानक खुल गया तथा इस दैवी क्रोध को देखकर सम्पूर्ण सारस्वत नगर भय से काँपने लगा। जब स्वय प्रजापति ही पापी बन गया था तब फिर देवता भला किस प्रकार कल्याणकारी बने रह सकते थे और यही कारण है कि शिव ने मनु के अनैतिक आचरण का बदला लेने के लिए क्रुद्ध होकर अपने 'अजगव' नामक धनुष पर प्रत्यचा चढा ली।

टिप्पणी—देवो के क्रुद्ध होने और शिव को प्रजापति पर प्रहार करने के लिए उद्यत करने का प्रसग शतपथ ब्राह्मण मे भी अकित हुआ है।

प्रकृति त्रस्त थी .... थर-थर काँपना।

शब्दार्थ—त्रस्त=भयभीत। भूतनाथ=शिव, शकर। नृत्य विकम्पित=

प्रलयकारी नाच करने के लिए चचल । भूत सृष्टि=पृथ्वी, जल, आकाश, वायु एव आग अचानक पाँच तत्वो से बना हुआ ससार । कलुष=पाप । सदिग्ध=सदेह मे पडे हुए ।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न मे देखती है कि जब मनु ने इडा के साथ बलात्कार करना चाहा तब शिव ने मनु को दण्ड देने के लिए अपना धनुष उठा लिया और यह देखकर सम्पूण प्रकृति भयभीत हो गयी साथ ही शिव ने जब सम्पूर्ण सृष्टि का सहार करने वाले भयकर ताण्डव नृत्य के लिए अपन चचल गति से भरे हुए चरण उठाये तब सम्पूर्ण सृष्टि काँप उठी और सभी प्राणी अपनी-अपनी रक्षा के लिए आश्रय प्राप्त करने के हेतु व्याकुल हो उठे । स्वय मनु के मन में भी अब यह सदेह होने लगा कि उनसे कोई पाप हो गया है और पृथ्वी को थर-थर काँपते देखकर उन्हे यह आशका उत्पन्न हुई कि अब पुन सृष्टि मे कुछ न कुछ उपद्रव होने वाला है ।

टिप्पणी—यहाँ लक्षण लक्षणा है ।

काँप रहे थे .... चली थी किन्तु ।

शब्दार्थ—प्रलयमयी क्रीड़ा=विनाशकारी खेल । आशकित=भयभीत प्राणी । छिन्न=भग्न होना, टूटना । स्नेह का तन्तु ।=प्रेम का धागा अथवा स्नेह सम्बन्ध ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सृष्टि के सभी प्राणी प्रलय के विनाशकारी खेल से भयभीत होकर काँप रहे थे अर्थात् सभी को यह डर था कि अब शीघ्र ही सम्पूर्ण सृष्टि का पुन विनाश होने वाला है और सब को अपने-अपने प्राणो की रक्षा की चिंता थी तथा सबके प्रेम का कोमल धागा टूट जाने के कारण सभी ने पारस्परिक मोहममता को त्याग दिया था । साथ ही मनु की वह शासन व्यवस्था भी नष्ट हो गई थी जिसमे मनु ने समस्त प्रजा की रक्षा का भार अपने ऊपर ग्रहण किया था क्योंकि स्वय मनु अनाचारी हो गये थे और प्रकृति तथा नगर की यह दशा देख क्रोध और लज्जा से भरकर, इडा राजमहल से बाहर निकली ।

टिप्पणी—यहाँ 'स्नेह का कोमल तंतु' मे रूपक अलकार है ।

देखा उसने .... अविरुद्ध रही ।

शब्दार्थ—रुद्ध=रोकना, रुकावट । प्रहरी—पहरेदार । नियमन=शासन का नियन्त्रण । अविरुद्ध=जो विरुद्ध न हो, अनुकूल ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब इडा क्रोध और लज्जा से भरकर राजमहल से बाहर निकली तब उसने देखा कि जनता दुखी होकर राज द्वारा को रोके खडी है और पहरेदारो का समूह भी जनता को रोकने की अपेक्षा उसके साथ साथ राजमहल की ओर बढा चला आ रहा है तथा उनके भाव भी अब शुद्ध नही जान पडते अर्थात् जनता मे पहले के समान अब मनु के प्रति श्रद्धा भक्ति नही रही बल्कि जनता अब विद्रोह करने को आतुर जान पडती है। कवि का कहना है कि शासन का नियन्त्रण तो एक दबे हुए झुकाव के समान होता है और कोई भी कठोर शासन अधिक समय तक नही चल सकता क्योकि या तो वह स्वय ही टूट जाता है या उसे उलट दिया जाता है। इस प्रकार अब तक जो प्रजा मनु के अनुकूल थी और उनके आदेशो का हमेशा पालन करती थी वह आज मनु द्वारा निर्मित सम्पूर्ण राजत्र व्यवस्था को भग करने और मनु के प्रति विद्रोह करने के लिए आतुर थी।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

कोलाहल मे घिर .... उधर परे।

शब्दार्थ—कोलाहल=शोरगुल। लख=देखकर। त्रस्त=भयभीत। तरगो=लहरो। महानील लोहित ज्वाला=आग की नीली और लाल रग की लपटें।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि मनु के अनैतिक आचरण के कारण सारस्वत प्रदेश की प्रजा ने विद्रोह कर दिया और देवशक्तियो तथा शिव को भी मनु पर क्रोध उमड उठा और शिव ने अपने धनुष की प्रत्यचा चढा ली। इस प्रकार धरती और आकाश मे सर्वत्र कोलाहल छाया हुआ था और मनु सोच विचार करते हुए राजभवन मे छिप कर एक ओर बैठ गये तथा उन्होंने राज भवन का प्रमुख द्वार बद करवा दिया। भयभीत प्रजा जब राजभवन मे आश्रय लेने पहुँची तब वह द्वार बन्द देख कर और भी अधिक भयभीत हो गयी। वह भला अब किसके सहारे धैर्य धारण करती अत वह विद्रोही बन गयी और उधर आकाश मे शिव के अत्यधिक क्रोधित होने के कारण सभी देवशक्तियो मे उसी प्रकार हलचल मची हुई थी जिस प्रकार समुद्र के क्षुब्ध होने पर उसकी लहरें उमडने लगती हैं। साथ ही शिव का तीसरा नेत्र खुल जाने से आकाश मे भयकर आग की नीली और लाल रग की लपटें दिखाई दे रही थी।

टिप्पणी—यहाँ 'शक्ति तरंगो' मे रूपक अलकार है।

वह विज्ञानमयी ... . जुड़ने को।

शब्दार्थ—विज्ञानमयी=विज्ञान के आधार वाली। असीम=अनन्त। सृष्टि=निर्माण।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु ने इडा की प्रेरणा से विज्ञान की अद्भुत शक्ति के आधार पर, जो असभव कार्यों को भी समव करने की अनत अभिलाषा, सारस्वत प्रदेश की जनता के हृदय मे उत्पन्न कर दी थी उसका दु खद परिणाम अब स्पष्ट दिखाई दे रहा था और आज न तो वे अभिलाषाएँ ही समाप्त हो रही थी और न उनकी पूर्ति ही सभव थी। इस प्रकार आज उन्ही अभिलाषाओं, आशाओ एव अधिकारों के कारण सारस्वत प्रदेश की जनता में जो भेदभाव की खाई गहरी हो गयी थी उसे किसी भी प्रकार मिटाया नही जा सकता था।

टिप्पणी—यहाँ 'वर्गों की खाई' मे रूपक अलकार है।

असफल मनु .... कुचक्र जैसी।

शब्दार्थ—आकस्मिक बाधा=अचानक उत्पन्न होने वाली अडचन। जुटी=एकत्र हो गयी। परित्राण=रक्षा। कुचक्र=षडयन्त्र, किसी को हानि पहुँचाने की योजना।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अपने शासन की असफलता देखकर मनु क्रोध के कारण कुछ विचलित स हो गये और सोचने लगे कि आज यह बाधा अचानक किस प्रकार उत्पन्न हो गयी लेकिन बहुत कुछ सोचने पर भी वे यह नही समझ पाये कि यह सब किस प्रकार हुआ और क्यो जनता इस प्रकार विद्रोही होकर राजभवन के प्रमुख द्वार तक पहुँच गयी। कवि का कहना है कि पहले तो जनता ने राज द्वार पर पहुँचकर अपनी रक्षा के हेतु मनु से प्रार्थना की थी पर मनु ने इस प्रार्थना पर कोई ध्यान नही दिया और वे राज भवन के अन्दर ही बैठ रहे अत अब प्रार्थना करने वाली प्रजा बेचैन होकर देवशक्तियों के क्रोध से प्रेरणा लेती हुई मनु के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तैयार हो गयी। स्वय इडा भी विद्रोही प्रजा के पास खड़ी हो गयी और यह देखकर मनु ने यही समझा कि उनके विरुद्ध कोई षडयन्त्र रचा गया है।

टिप्पणी—'परित्राण विकल बनी थी' मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

द्वार बन्द कर .... लेना देना।

शब्दार्थ—शयन कक्ष मे—सोने के कमरे मे। जीवन का लेना देना=जीवन की लाभ हानि।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न मे देखा कि राजभवन के प्रमुख द्वार पर एकत्र भीड को देखकर मनु ने क्रुद्ध होकर सेवकों को आज्ञा दी कि 'द्वार बन्द कर दो और यहाँ किसी को भी मत आने देना। आज प्रकृति भी उत्पात मचा रही है और मैं सोने के लिए जा रहा हूँ तथा कोई भी आकर मुझे मत जगाना। कवि का कहना है कि इस प्रकार कहते हुए मनु बाहर से तो क्रोध प्रकट कर रहे थे लेकिन मन मे भयभीत से थे और वे सेवकों को सावधान करते हुए अपने जीवन की लाभ-हानि के सम्बन्ध मे विचार करते हुए अपने सोने के कमरे मे चले गये।

श्रद्धा काँप उठी .... बीत चली।

शब्दार्थ—सहसा=अचानक, एकाएक। छली=धोखा देने वाला, छलने वाला। स्वजन=निकट सम्बन्धी, आत्मीय व्यक्ति। आशकाएँ=सदेह से पूर्ण कल्पनाएँ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब श्रद्धा ने स्वप्न मे यह सब भयानक दृश्य देख तब वह सपने मे ही काँप उठी और अचानक उसकी आँखें खुल गयीं तथा वह सोचने लगी कि 'अरे मैंने यह कैसा स्वप्न देखा? वह मनु किस प्रकार इतना अधिक छली बन गया।' कवि का कहना है कि आत्मीय व्यक्तियों के प्रेम मे उनके अनिष्ट की कल्पनाओ से मन में अनेक प्रकार की आशकाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। अतएव श्रद्धा के मन मे मनु के सम्बन्ध मे अनेक प्रकार की चिन्ताएँ उठने लगी। इस प्रकार वह व्याकुल होकर यह सोचने लगी कि अब क्या होगा और यही सोचते-सोचते उसने सारी रात व्याकुलता पूर्वक व्यतीत की।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन हुआ है और समीक्षक श्रद्धा के इस स्वप्न का सम्बन्ध फ्रायड के स्वप्न सिद्धान्त से भी स्थापित करते हैं।

ग्यारहवाँ सर्ग

संघर्ष

कथानक—श्रद्धा ने जो स्वप्न देखा था वह पूर्णत. सत्य सिद्ध हुआ और एक ओर मनु के प्रेम प्रस्ताव से इडा झिझक रही थी तथा दूसरी ओर सारस्वत प्रदेश का जनता विद्रोही बन गयी। यद्यपि मनु अपने शयन कक्ष मे चले गए पर उन्हे नीद नही आयी और वे अपने पलग पर पड़े-पडे यह सोच रहे थे—"मैंने लगातार परिश्रम कर जिस सारस्वत प्रदेश का पुनर्निर्माण किया और सम्पूर्ण प्रजा को सर्व सुखो से सम्पन्न बनाना चाहा, उसी प्रजा ने मेरे विरुद्ध विद्रोह कर दिया? मैं शासक और नियामक हूँ अत मुझे क्या इतना भी अधिकार नही है कि मैं स्वतन्त्र रहूँ और अपने मन के अनुकूल कुछ भी करूँ तथा प्रजा से कभी भी न डरूँ? जब मैंने अपनी पत्नी श्रद्धा के समक्ष झुकना स्वीकार नही किया तब भला मैं इडा के सम्मुख कैसे झुक सकता हूँ? इडा मुझे बधन मे डालना चाहती है पर वह यह नही सोचती कि ससार का प्रत्येक पदार्थ बधनहीन है और रवि, चन्द्र, तारे सभी स्वतन्त्र विचरण करते हैं। यह पृथ्वी कभी समुद्र बन जाती है और कभी समुद्र मरुस्थल के रूप में बदल जाता है तथा सम्पूर्ण विश्व ही गतिशील दिखाई देता है और स्थिर कुछ भी नही है। न जाने क्यो आज प्रजा मे यह धारणा बलवती हो गयी है कि विश्व एक नियम से बँधा हुआ है अत नियामक को नियमो का पालन करते हुए बधन मे रहना चाहिए पर मैं किसी का भी बधन स्वीकार नहीं करता। मै तो चिर बधनहीन हूँ और मेरा यह दृढ निश्चय है कि मृत्यु पर्यन्त स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन व्यतीत करूँगा।'

कुछ क्षणो के लिए मनु की विचार-धारा रुक गयी और उन्होने करवट ली तो देखा, कि इडा उनके समीप अविचल भाव से खडी है। इडा ने उन्हें समझाते हुए कहा कि कि यदि नियमो को बनाने वाला ही नियमो को न मानेगा तो फिर अपने आप सब कुछ नष्ट हो जायगा पर मनु ने बीच मे ही उसे रोकते हुए कहा 'तुम फिर मेरे पास क्यो आ गयी? क्या अभी और कुछ

उपद्रव करने की इच्छा है ? अभी जो उत्पात हो रहा है, उससे तुम्हें क्या संतोष नहीं हुआ क्या अभी कुछ और उपद्रव होना बाकी है ?

मनु के इन लाञ्छना युक्त बातो से इडा विचलित नही हुई और उनसे कहने लगी—'एक ओर तुम यह चाहते हो कि तुम्हारे नियमो का सब लोग पालन करें और दूसरी ओर तुम स्वय अपने बनाये नियमो का उल्लघन कर उच्छृ खल बनना चाहते हो पर कोई भी अबाधित अधिकार का उपयोग नही कर सकता ? वास्तव मे ऐसा न तो कभी हुआ है और न कभी होगा कि राजा स्वय अपने नियमों का पालन न कर उच्छृ खल जीवन व्यतीत करे। यह सम्पूर्ण विश्व एक ही चेतना का विराट् शरीर है और मानव उस चेतना का विकसित रूप है तथा चेतना अखड होते हुए भी प्रत्येक प्राणी के शरीर मे बद्ध होकर खड-खड प्रतीत होती है। यही कारण है कि सृष्टि में प्राणी मात्र के अतगत सघर्ष चलता है और इस सघर्ष मे शक्तिशाली विजयी होते हैं तथा दुर्बल नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार राग एव द्वेष से पूर्ण इस ससार मे प्रत्येक प्राणी अपने लिए सुख की सामग्री एकत्र करने मे तल्लीन है लेकिन राष्ट्र का स्वामी होने के नाते तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम व्यक्तिगत सुख और स्वार्थ की अपेक्षा सामाजिक सुख को महत्व प्रदान करो। यदि तुम प्रजा के स्वार्थ एवं हित मे अपना हित समझते हुए प्रजा के अनुकूल होकर शासन करोगे तो तुम राष्ट्र के हृदय मे निवास करोगे।'

इडा की इन उपदेशपूर्ण बातो को सुनकर मनु कुछ उत्तेजित हो उठे और उन्होंने कहा—'अब तुम्हे और अधिक समझाने की आवश्यकता नहीं है ? समझ मे नही आता कि उन्हें यह सब कहने का साहस कैसे हुआ। क्या प्रजापति होने का मेरा यही अधिकार है कि मैं हमेशा अतृप्त रहूँ, और अपनी इच्छाएँ पूर्ण न करूँ ? क्या मैं सब को सुख देकर भी स्वय दुखी रहूँ और जो मैं चाहता हूँ वही यदि मुझे न मिले तो फिर मेरा प्रजापति होना व्यर्थ है। इस प्रकार मैं तुम पर अपना पूर्ण अधिकार चाहता हूँ और प्रकृति की यह हलचल भी मेरे हृदय के आवेग के समक्ष क्षुद्र है। मैं भयकर प्रलय से भी नही डरता और यही चाहता हूँ कि तुम मेरे पास ही रहो तथा मुझे अधिकार के धोखे मे डाल अपने प्रेम से वचित न करो।"

इडा ने मनु को पुन समझाया और कहा कि "तुम मेरी अच्छी बातों को क्यो नही समझते ? तुम्हे सावधान होकर विवेक से काम लेना चाहिये। मैं

अव अधिक कुछ नही कहना चाहती और अब मैं जाती हूँ।" पर मनु की उत्तेजना और अधिक बढ गयी तथा उन्होने इडा से कहा कि 'तुम इस प्रकार मुझे छोडकर नहीं जा सकतीं क्योंकि तुम्हीं ने मुझे इस संघर्ष मे डाला है। मैंने जो कुछ किया है, वह सब तुम्हारी प्रेरणा से ही किया है। अब तुम नियमो की बाधा पास मत आने दो और मेरे प्रणय को स्वीकार कर, इस दुखपूर्ण जीवन मे मुझे कुछ सुख प्राप्त करने दो यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगी तो यह सारस्वत प्रदेश नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा।'

मनु की इन बातो को सुनकर इडा ने उन्हें पुन. समझाने का प्रयत्न किया परन्तु मनु अपने मानसिक आवेग को न रोक सके और उन्होने उसे अपनी ओर खींचकर हृदय से लगा लिया। इसी बीच राजभवन का प्रमुख द्वार तोड़कर जनता भीतर घुस आई और 'हमारी रानी', 'हमारी रानी' का चीत्कार करने लगी। जनता को उत्तजित देख मनु ने राजदड हाथ में लेकर कहा 'मैं तुम्हारा प्रजापति हूँ और मैंने तुम्हें पशु से सभ्य बनाया है। तुम्हारे लिए समस्त सुख-सामग्रियाँ एकत्र की हैं अत. आज मेरे उपकारों को भूलने का प्रयत्न न करो।' यह सुनकर प्रजा का क्रोध और बढ गया तथा उसने मनु को सम्बोधित कर कहा—'पापी, तूने हमे सुख की बजाय दु:ख ही अधिक दिया है और हमें लोभी बनाकर काल्पनिक दु.खो मे दु:खी रहना सिखलाया। तूने न केवल हमारी सारी प्राकृतिक शक्ति छीन ली बल्कि हमारी रानी पर अत्याचार भी किया। तेरे पापो का दड अवश्य मिलेगा।

दोनों से बात बढ चली और मनु तथा प्रजा मे युद्ध प्रारम्भ हो गया। प्राकृतिक शक्तियाँ भी प्रजा की सहायक हो गयी और असुर पुरोहित किलात और आकुलि प्रजा का नेतृत्व कर रहे थे। भयकर युद्ध छिड गिया और मनु ने दोनो पुरोहितो को बाण से धराशायी कर दिया। इडा ने यह 'भीषण नर सहार रोकने का प्रयत्न किया पर कोई भी उसकी बात मानने को तैयार नहीं हुआ। यद्यपि मनु पूरी शक्ति से युद्ध कर रहे थे पर अचानक मनु के शरीर में एक तीर लगा और वे मूर्छित होकर गिर पडे।

श्रद्धा का था ···· ···· ···· करने को आने।

शब्दार्थ—संकुचित=लज्जित। क्षोभ=क्रोध। घना=बहुत अधिक। भौतिक विप्लव=दैवी प्रकोप। त्राण=रक्षा।

व्याख्या—कवि का कहना है श्रद्धा ने जो स्वप्न देखा, वह पूर्णतया सत्य

हुआ और एक ओर तो मनु के अनैतिक व्यवहार के कारण इडा लज्जित थी तथा दूसरी ओर प्रजा भी क्रुद्ध थी। समस्त जनता, दैवी प्रकोप के कारण दुःखी थी और घबराकर अपनी रक्षा की आशा से राजभवन पहुँची थी। कहने का अभिप्राय यह है कि मनु की अनैतिकता के कारण जनता व्याकुल थी और वह राज के आश्रय मे रक्षा प्राप्त करने के लिए राजभवन आई थी।

टिप्पणी — (१) 'भौतिक विप्लव' से अभिप्राय कुछ समीक्षक भगवान शिव के प्रकोप द्वारा उत्पन्न अन्तरिक्ष की हलचल से ग्रहण करते हैं।

(२) कामायनी के इस ग्यारहवें सर्ग मे ग्यारह और तेरह मात्रा की यति वाले रोला छन्द का प्रयोग किया गया है।

किन्तु मिला .. .. तांडव लीला।

शब्दार्थ—मनस्ताप=मानसिक कष्ट, मन का दुःख। रोष=क्रोध। वदन=मुख। ताडव लीला=भयकर उत्पात।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जनता रक्षा की इच्छा से राजभवन पहुंची थी पर उसे अपमान ही मिला और राज द्वार बन्द करवाकर मनु ने एक प्रकार से उसके साथ दुर्व्यवहार ही किया। इस प्रकार सभी व्यक्ति मन मे बहुत दुःखी थे और उस दुःख के कारण वे क्रोधित हो उठे। साथ ही जनता ने जब अपनी रानी इडा की ओर देखा तो उसका मुख भी उन्हे मनु के अनैतिक आचरण के कारण पीला दिखाई दिया और उधर प्रकृति की भयकर हलचल भी समाप्त नही हुई थी।

टिप्पणी—यहाँ 'तांडव लीला' से अभिप्राय दैवी प्रकोप से है और 'पीला पीला' मे पुनरुक्ति अलंकार है।

प्रागण मे थी भीड़ .... झुकी सी।

शब्दार्थ—प्रांगण=आँगन। प्रहरी गण=पहरेदार। कालिमा पर्दा=काला पर्दा अर्थात् रात्रि कालीन अन्धकार का आँचल। मेघ की ज्योति=बिजली की चमक।

व्याख्या—कवि का कहना है कि प्रजा धीरे-धीरे राजभवन के आँगन में एकत्र हो रही थी और वहाँ भीड बढ़ती जा रही थी। पहरेदारो ने राजभवन के द्वार बन्द कर दिए थे और वे ध्यान से जनता की गतिविधि देख रहे थे। कवि कह रहा है कि रात्रि गहरे अन्धकार के आँचल मे छिपी सी दिखाई देती थी और चारो ओर सघन अन्धकार छा गया था। पर उस अन्धकार

में बार-बार चमकती हुई बिजली आँख मिचौनी खेलती हुई सी जान पडती थी।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण और रूपक अलकार है।

मनु चिन्तित से पडे ... ... नियम बनाकर।

शब्दार्थ—शयन=शय्या, सेज, बिस्तर। श्वापद=हिंसक पशु। रुष्ट=क्रुद्ध, नाराज। तुष्ट=सन्तुष्ट। जव=तीव्रता, तेजी। चक्र=शासन का चक्र, कुम्भकार का चाक। नियमन=नियन्त्रण, अनुशासन।

व्याख्या—कवि कहता है कि मनु चिन्ता मे डूबे हुए से अपनी शय्या पर पडे हुए कुछ सोच रहे थे और जिस प्रकार हिंसक पशु अपने शिकार को पजा मार-मार कर नोचते रहते हैं उसी प्रकार क्रोध और शका आदि भावनाएँ मनु को नोचते हुए बेचैन कर रही थी। इस प्रकार मनु शय्या पर पडे-पडे यह सोच रहे थे—"मैं इस नगर के असगठित एव अनुशासनहीन व्यक्तियो को एक सुसगठित प्रजा का रूप देकर कितना सतुष्ट हुआ था और मैंने कभी भी उन पर क्रोध नही किया था।

मैंने कितनी तीव्रगति के साथ इस सारस्वत प्रदेश की बिखरी हुई और शासनहीन प्रजा को सगठित कर उनका शासन करते हुए सतोष का अनुभव किया था। जिस प्रकार कुम्हार तीव्र गति से अपना चाक घुमाकर बिखरी हुई मिट्टी को एकत्र कर उसे सुन्दर रूप प्रदान करता है उसी प्रकार मैंने भी इस नगर के व्यक्तियो मे एकता और सौंदर्य की भावना भर दी तथा यह मेरे ही परिश्रम का फल है कि अलग-अलग होते हुए भी इनका व्यक्तित्व एक हो गया तथा इनमे मिल जुलकर कार्य करने की भावना उत्पन्न हुई। मैंने इन्हे अनुशासन मे लाने के लिए और इनमे एकता उत्पन्न करने के लिए अपनी बुद्धि बल के आधार पर अत्यधिक प्रयत्न किया तथा ऐसे नियम बनाए जिनसे ये हमेशा सगठित रहकर अनुशासन का पालन करते रहे।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवं श्लेष अलकार है और छाया शब्द मे लक्षण लक्षणा है।

किन्तु स्वयं .... रहूँ मैं।

शब्दार्थ—स्वच्छन्द=स्वतंत्र। स्वर्ण=सोना। सृष्टि=प्रजा। भीत=डरा हुआ। अविनीत=उच्छृखल, नियम विरुद्ध चलने वाला।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि मैंने जो नियम प्रजा के लिए बनाए थे

क्या उन नियमो का पालन मुझे भी करना पडेगा और क्या मैं तनिक भी स्वतन्त्र नही रह सकता जिस प्रकार सोने को गलाकर अपनी इच्छानुसार ढाला जाता है उसी प्रकार क्या मुझे भी प्रजा की इच्छा के अनुसार कार्य करना होगा और मैं जिनका राजा हूं तथा जो मेरी प्रजा है क्या मुझे उससे भी डरकर रहना पडेगा ? क्या मुझे इतना अधिकार नही है कि मैं अपने मनमाने ढग से चल सकूं ?

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु के आतरिक सघर्ष का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है और 'स्वर्ण-सा' मे पूर्णोपमा अलकार है ।

श्रद्धा का अधिकार ... ... न माना ।

शब्दार्थ—समर्पण=अपना सर्वस्व अर्पित करना । परतत्र=पराधीन । निर्वाधित=बाधा रहित, स्वच्छद ।

व्याख्या— मनु सोच रहे हैं कि श्रद्धा मेरी पत्नी थी और उसने जब अपना सब कुछ मुझे दे दिया तब उसका यह अधिकार था कि मैं भी अपने आपको उसके प्रति समर्पित कर दूं परन्तु ऐसा नही हुआ । अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए ही मैं श्रद्धा के पास से भाग आया और अपने विचारो के अनुसार प्रतिक्षण बढता हुआ मैं यहाँ पहुँचा । मैं यहाँ आकर देखता हूँ कि अब इडा भी मेरी स्वतन्त्रता स्वीकार न कर मुझे नियमाधीन बनाना चाहती है और उसकी दृष्टि मे कोई भी अधिकार निर्बाध नही है तथा सभी को नियमों के आधीन रहना पडता है ।

टिप्पणी— यहाँ साकेतिक रूप मे श्रद्धा और इडा के विचारो की अत्यन्त सुन्दर तुलना की गयी है ।

विश्व एक ... . ज्वाला जलती ।

शब्दार्थ— बधन विहीन=स्वच्छद, उन्मुक्त । जलनिधि=समुद्र । उदधि= सागर । मरुभूमि=रेगिस्तान । जलधि=समुद्र ।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि मैं ही क्या, यह सम्पूर्ण जगत ही इतना परिवर्तनशील है कि यह किसी नियम को स्वीकार नही करता और सर्वथा स्वतन्त्र रहता है । तथा इसमे सूर्य, चन्द्र और तारे सभी स्वतन्त्रतापूर्वक नित्य अपने रूप बदलते रहते हैं । इस प्रकार पृथ्वी कभी सागर का रूप धारण कर लेती है और कभी समुद्र सूखकर मरुस्थल बन जाते हैं तथा उस अथाह जल समूह से पूर्ण समुद्र मे भी बडवाग्नि की ज्वाला जलती है । अतएव जब सम्पूर्ण सृष्टि बन्धनहीन है तो फिर मैं क्यो किसी बन्धन को स्वीकार करूं ?

टिप्पणी—इन पंक्तियों में विरोधाभास अलंकार है।

तरल अग्नि .. .... यहाँ सुभीता ?

शब्दार्थ—तरल=द्रवित। अग्नि=आग, शक्ति। तरल अग्नि=आग की धारा। हिम नग=बर्फ के पर्वत। सरिता लीला रच कर=नदी की क्रीडाओं का रूप धारण कर। स्फुलिंग=चिनगारी। स्फुलिंग का नृत्य—अग्नि की तीव्रधारा का प्रवाह। टिकना=ठहरना।

व्याख्या—मनु सोचते हैं कि इस संसार के सभी पदार्थों मे आग की धारा प्रवाहित हो रही है और बड़े-बड़े बर्फीले पर्वत भी संसार मे क्रीडा करने लिए नदी का रूप धारण कर बहते हुए दिखाई देते हैं। साथ ही आग की धारा का यह तीव्र प्रवाह लगातार चलता रहता है और एक क्षण भी नहीं ठहरता। इसीलिए जडचेतन पदार्थों के लगातार परिवर्तन के रूप मे आग का यह तीव्र प्रवाह प्रतिक्षण उनके रूप बदलता रहता है तथा इस सृष्टि मे कोई भी पदार्थ अधिक समय तक नहीं ठहर पाता क्योंकि इस लगातार प्रवाहित होने वाली आग की धारा ने किसी भी पदार्थ को स्थायी रूप से रहने की सुविधा नहीं प्रदान की है।

टिप्पणी—इस पद मे कवि ने तरल अग्नि का प्रयोग उस चेतन शक्ति के लिए किया है जो सम्पूर्ण जगत मे व्याप्त होकर उसे सदैव गति शील बनाती रहती है।

कोटि कोटि नक्षत्र .... परवशता इतनी।

शब्दार्थ—कोटि=करोड़ों। शून्य=आकाश। महाविवर=विशाल गुफा के समान अन्तरिक्ष। लास रास=कोमल नृत्य। अधर=निराधार, आकाश। स्तर=तह, परत। चीत्कार=चीख, करुण क्रन्दन। परवशता=पराधीनता, परतन्त्रता।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि इस नीरव आकाश के नीचे एक विशाल गुफा के समान फैले हुए विस्तृत अन्तरिक्ष में करोड़ों नक्षत्र निराधार से लटके हुए हमेशा चक्कर लगाने के कारण ऐसे प्रतीत होते हैं, मानो ये कोमलता के साथ नृत्य करते रहते हैं। साथ ही सागर की लहरों के सदृश्य इस अन्तरिक्ष में सर्वत्र फैली हुई पवन की परतों में भी हमेशा न जाने कितनी लहरें उठती रहती हैं—अर्थात् जिस प्रकार आकाश मे नक्षत्र स्वच्छंदता पूर्वक भ्रमण करते रहते हैं उसी प्रकार अन्तरिक्ष मे पवन भी स्वतन्त्र रूप से बहता रहता है तथा

न जाने कितने दु खी व्यक्तियो की चीखें और पराधीनता की भावनाएँ भी हमेशा उन्मुक्त होकर चक्कर काटती रहती हैं और उनकी गणना करना भी असमव है।

टिप्पणी—यहाँ शून्य का महाविवर मे रूपक और नक्षत्रो के लास रास करने मे मानवीकरण अलकार है।

यह नर्त्तन .... जिससे जीवन।

शब्दार्थ—नर्त्तन=नृत्य, चक्कर लगाना। उन्मुक्त=स्वच्छद। स्पन्दन= हलचल, कम्पन। द्रुततर=अधिक तीव्र। गतिमय=गतिशील। पुनरावर्तन =पुन लौट कर आना।

व्याख्या—मनु सोचते हैं कि यह सम्पूर्ण सृष्टि स्वतन्त्रता पूर्वक हमेशा चक्कर लगाती रहती है और जिस प्रकार एक नृत्य करने वाला विभिन्न वाद्ययन्त्रो की लय के साथ अपने चरणो की गति मिलाता हुआ स्वच्छदतापूर्वक नृत्य करता है तथा उन्ही वाद्ययन्त्रो की तीव्र लय के अनुसार उस नृत्य करने वाले के चरणो का स्पदन भी अधिक तीव्र हो जाता है उसी प्रकार यह विश्व भी अपनी गति के क्रम से स्वच्छद नृत्य करता हुआ सदैव चक्कर लगाता रहता है और ज्यो-ज्यो उसकी गति बढती जाती है त्यो-त्यो ससार की हलचल भी क्रमश तेज हो जाती है। इस प्रकार अपने गति क्रम के अनुसार यह हमेशा गतिशील रहता है और उसकी इस गतिशीलता मे हमें कभी-कभी यह भी अनुभव होता है कि कुछ दिनो पूर्व घटने वाली घटनाएँ पुन घट रही है और हम इसे प्रकृति का एक नियम मान सकते हैं तथा यह समझने लगते हैं कि इन्ही नियमो के अनुसार हमारा जीवन भी चल रहा है।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे मनु ने यह सकेत करना चाहा है कि जब इस सृष्टि के सभी कार्य स्वतन्त्रता पूर्वक होते हैं तब यह इडा मुझे ही क्यो परतन्त्र बनाना चाहती है।

रुदन हास .. .... हरा है।

शब्दार्थ—रुदन=रोना, विलाप। हास=हँसी। पलक में छलक रहे हैं= आँखो मे प्रकट हो रहे हैं। शतशत=सैकडो। विमुक्ति=स्वतन्त्रता। ललकना=इच्छा करना। अभिशाप=अमगल, अशुभ कार्य। ताप=दुख।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि इस ससार की दशा भी कितनी विचित्र है और यहाँ परतन्त्र रहने वाले व्यक्ति को यह स्वतन्त्रता भी नही है कि वह

अपनी भावनाओ को सही-सही प्रकट कर सके। इस प्रकार वह दुखी होते हुए भी अपनी पीडा छिपाकर अपने अधरो से मुस्कान ही प्रकट करता है और भले ही बाहर से वह दुखी न प्रतीत हो परन्तु पराधीनता के जाल मे फँसे हुए सैकडो प्राणी पराधीनता से मुक्ति पाने के लिए हमेशा इच्छुक रहते हैं क्योकि परतन्त्र जीवन अनेक प्रकार के शाप अमगल और कष्टों से पूर्ण होता है। इन दुखी प्राणियो का जीवन कुछ दिनो के लिए उसी प्रकार आनन्द एव उल्लास से पूर्ण ज्ञात पडता है जिस प्रकार पतझड़ से नष्ट होने वाला कोई कुंज कुछ दिनो पूर्व हरा भरा दिखाई देता हो।

टिप्पणी—यहाँ 'रुदन हास' मे विरोधाभास और 'सृष्टि कुंज' मे रूपक अलकार है।

विश्व बंधा .... मैंने माना।

शब्दार्थ—परखा=परीक्षा की, पहचाना। वशी=वश मे, परतन्त्र। नियामक=नियमो को बनाने वाला।

व्याख्या—मनु सोचते हैं कि अब इस सारस्वत प्रदेश के निवासियों के मन मे यह पुकार भली भाँति घर कर गई है कि सम्पूर्ण ससार एक नियम के अनुसार चल रहा है और संसार का कोई भी प्राणी स्वतन्त्र नहीं है। साथ ही इन नगर निवासियों ने मेरे द्वारा बनाए गए नियमो को भली भाँति परख लिया है और उन्होंने यह भी मान लिया है कि नियमों को मान कर चलने से ही सुख होता है परन्तु मैं यह कदापि स्वीकार नहीं कर सकता कि शासक होकर मैं अपने ही नियमो का पालन करूँ और प्रजाजनो की भाँति नियमों के बधन मे बँधकर रहूँ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनु एक स्वेच्छाचारी शासक के सदृश विचार प्रकट कर रहे हैं और 'पुकार सी' तथा 'दृढ प्रचार सी' मे उपमा अलकार है।

मैं चिर बधन हीन .... सब सपना।

शब्दार्थ—चिर बधनहीन=हमेशा बधनो से मुक्त रहने वाला। मृत्यु-सीमा उल्लंघन=मृत्यु तक सभी प्रकार के नियमो को न मानना। सतत=लगातार। महानाश की सृष्टि=विनाशशील जगत, नश्वर संसार। सपना=निस्सार, निरर्थक।

व्याख्या—मनु सोच रहे हैं कि मैंने यह दृढ निश्चय कर लिया है कि मैं हमेशा बधनो से मुक्त रहूँगा और जिस प्रकार मैंने अब तक कभी भी बधन

स्वीकार नही किए उसी प्रकार भविष्य में भी मैं बधनो मे बँध नहीं सकता। मेरी यह दृढ प्रतिज्ञा है कि मैं मृत्यु तक सभी प्रकार के नियमों का उल्लघन करता हुआ अपना जीवन व्यतीत करूँगा क्योंकि इस नश्वर ससार मे हम जितने क्षण स्वतन्त्रतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर लेंगे उसी में हमारी आत्मा को सतुष्टि मिलेगी अन्यथा सब कुछ सपना ही है। मनु के कथन का अभिप्राय यह है कि परतन्त्र जीवन तो पूर्णतया निरर्थक और निस्सार है।

टिप्पणी—यहाँ 'सपना' पद मे लक्षण-लक्षणा एव रूपकातिशयोक्ति अलकार और 'महानाश की सृष्टि' मे विरोधाभास तथा 'चेतनता की तुष्टि' मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

प्रगतिशील मन .... देकर।

शब्दार्थ—प्रगतिशील=अत्यन्त गतिवान, अत्यन्त चचल। अविचल=स्थिर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि अपने शयनागार में शय्या पर लेटे हुए मनु का अत्यन्त चचल मन अनेक प्रकार के विचारो मे उलझा हुआ था और ज्यो ही उन्होने कुछ क्षणों के लिए विश्राम करने के उद्देश्य से करवट ली तो सामने देखा कि अपना सब कुछ प्रदान करने पर भी इडा वहाँ स्थिर भाव से खडी है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्रीमद्भगवद्गीता मे भी कहा गया है कि चचल मन हमेशा अनेक प्रकार के विचारो मे उलझा रहता है—

> चचल हि मन. कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
> तस्याह निग्रह मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

और कह .... निश्चय जाने।

शब्दार्थ—नियामक=नियम बनाने वाला, शासक।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु ने जब इडा को देखा तब इडा उनसे कहने लगी कि यदि नियमो का बनाने वाला ही नियमों का पालन न करेगा तो यह निश्चित है कि उसकी सम्पूर्ण शासन व्यवस्था पूर्णतया नष्ट हो जायगी।

ऐ तुम फिर .... है अब कितना।

शब्दार्थ—उपद्रव=षड्यन्त्र, हलचल। तुष्टि=सतोष।

व्याख्या—मनु ने इडा की बात सुनकर आश्चर्यपूर्वक कहा—'अरे तुम

फिर यहां कैसे चली आई क्या तुम्हारा विचार अभी और कोई नवीन उपद्रव आरम्भ करने का है ? आज जो उपद्रव हुआ है, उतने से ही तुम्हें संतोष नहीं हुआ और क्या अभी और कुछ करने के लिए शेष रह गया है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि सारस्वत प्रदेश के नगर निवासियों ने विद्रोह के लिए मनु अपने को दोषी न मानकर इड़ा को ही दोषी समझते हैं।

मनु सब शासन .... किसने भोगा।

शब्दार्थ—स्वत्व=अधिकार। निवाहें=निर्वाह करते हैं, मानते हैं। तुष्टि=संतोष। निर्वासित अधिकार=वह अधिकार जो दूसरों के घर बार छीन ले, स्वेच्छाचारिता पर आधारित अधिकार।

व्याख्या—इडा कह रही है—'हे मनु; तुम तो यह चाहते हो कि सभी व्यक्ति हमेशा तुम्हारे शासन और अधिकार का चुपचाप पालन करने में ही संतोष का अनुभव करें तथा क्षण भर के लिए भी स्वतन्त्र रूप से कुछ भी न करें। दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि न तो आज तक कभी ऐसा हुआ है और न कभी होगा क्योंकि दूसरों का सब कुछ छीनकर, कोई भी अधिक दिनों तक सुखी नहीं रह सका।

तुलनात्मक दृष्टि—महाभारत के अनुशासन पर्व में भी कहा गया है कि राजा को पहले स्वयं नियमों का पालन करना चाहिए और जो राजा स्वयं नियमों का पालन नहीं करता वह उपहास का पात्र ही होता है—

आत्मानमेव प्रथम विनयैरुपचादयेत्।
अनुभृत्यान् प्रजा. पश्चादित्येष विनयक्रम.॥
स्वस्यात् पूर्वतरं राजा· विनयत्यैव वै प्रजा.।
अपहास्यो भवेत्ताहक् स्वदोपस्यानवेक्षणात्॥

यह मनुष्य आकार .... भरता है।

शब्दार्थ—आकार=स्वरूप, प्रतिमा, मूर्ति। आवरणों=रहस्यों, परदा। चिति केन्द्र=चेतना का केन्द्र रूपी मनुष्य। द्वयता=भिन्नता, पारस्परिक भेद या अन्तर।

व्याख्या—इड़ा का कहना है कि यह मनुष्य चेतना की ही विकसित मूर्ति है और उसकी उस चेतना के पर्दे में ही राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि मनोविकारों से युक्त विश्व के दर्शन होते हैं तथा यह प्रत्येक मनुष्य चेतना का केन्द्र जान

पडता है। इस प्रकार सभी मनुष्यो मे एक ही चेतना का विकास होते हुए भी मनुष्यों का परस्पर सघर्ष चलता रहता है और वे अपने मन मे यही समझते हैं कि चेतना के केन्द्र स्वरूप ही प्रत्येक मनुष्य परस्पर भिन्न-भिन्न है।

टिप्पणी – इन पक्तियो मे डार्विन के विकासवाद सम्बन्धी सिद्धान्तो के अनुसार हा मानव चेतना का क्रमिक विकास सिद्ध किया गया है।

ये विस्मृत पहचान .... मार्ग बतावें।

शब्दार्थ—विस्मृत=भूले हुए। स्पर्द्धा=होड, प्रतियोगिता। उत्तम=योग्य, सशक्त। ससृति=ससार।

व्याख्या—इडा मनु से कह रही है कि जब अपने स्वरूप को भूले हुए और परस्पर सघर्ष करने वाले व्यक्ति एक दूसरे को पहचान कर यह समझ जाते हैं कि हम सभी एक ही चेतन शक्ति के अश हैं तब उनका पारस्परिक भेद-भाव मिटने लगता है। इस प्रकार वे एक-दूसरे के समीप आने लगते हैं तथा उनके विचार ही हमेशा उन्हे समीप लाकर मिला देते हैं लेकिन आज तो शारीरिक और मानसिक शक्तियों मे होड लगी हुई है तथा योग्य या सशक्त व्यक्ति ही इस प्रतियोगिता मे ठहर पायेंगे और ससार का कल्याण करने के लिए सर्वसाधारण को कल्याण का मार्ग बता सकेंगे।

टिप्पणी—इस पद मे प्रत्यभिज्ञादर्शन के अनुसार अभेदवाद का निरूपण किया गया है और अन्तिम पक्तियो मे कवि डार्विन के Survival of the fittest वाले सिद्धान्त की ओर सकेत करता है।

व्यक्ति चेतना इसीलिए . ... चलती जाती।

शब्दार्थ—व्यक्ति चेतना=चेतनशील मानव। परतन्त्र=पराधीन। रागपूर्ण=प्रेम या स्नेह से पूर्ण। द्वेषपक=वैर भाव या ईर्ष्या रूपी कीचड। नियत=निश्चय, निश्चित। श्रांत=शिथिल, थकी हुई।

व्याख्या—इडा मनु से कहती है कि पारस्परिक होड के कारण ही यह चेतनशील मानव आज पराधीन जान पडता है और वह बाहर से भले ही सभी साथियो के साथ प्रसन्न रहता हो परन्तु उसका हृदय अपने प्रतिद्वन्द्वी के लिए वैर भाव की कीचड मे फसा रहता है। इस प्रकार वह पग-पग पर अपने निश्चित मार्ग से पथ भ्रष्ट होकर ठोकर खाता है और अत्यन्त शिथिल व हतोत्साह होकर अपने लक्ष्य की पूर्ति मे लगा रहता है।

टिप्पणी—यहाँ 'द्वेषपक' मे रूपक अलकार है।

यह जीवन उपयोग ... ... काया में।

शब्दार्थ—उपयोग=प्रयोजन। बुद्धि साधना=बुद्धि द्वारा किये गये प्रयत्न। श्रेय=कल्याण। सुख की आराधना=सुख प्राप्ति के लिए किये जाने वाले कार्य। प्राण सदृश=प्राणों के समान। रमो=विचरण करो। काया=शरीर।

व्याख्या—इडा मनु से कह रही है कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य यही है कि हम हमेशा कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहें और अपनी बुद्धि से हमेशा ऐसे कार्य करे जिनसे केवल स्वय को सुख प्राप्त हो बल्कि अन्य व्यक्तियो का भी कल्याण हो। इडा का कहना है कि हे मनु, तुम तभी सही अर्थो मे राजा कहलाओगे जब तुम्हारी राजसत्ता की छाया मे शरण लेने वाली प्रजा को तुमसे सुख प्राप्त होगा, अतएव जिस प्रकार शरीर मे प्राण रहते हैं उसी प्रकार तुम्हे इस सारस्वत प्रदेश मे विचरण कर इसके कल्याण मे सहायक बनना चाहिए।

टिप्पणी—यहाँ 'प्राण सदृश' मे उपमा और राष्ट्र की काया मे निरग रूपक अलकार है।

देश-कल्पना . ... विस्मृति मे।

शब्दार्थ—देश-कल्पना=देश या राष्ट्र की सीमाओ का विचार। काल परिधि=समय की सीमा। लय=विलीन। महाचेतना=विराट। शक्ति, ससार की मूल चेतना शक्ति। क्षय=विलीन। उन्मद गति=स्वतन्त्रतापूर्वक, स्वच्छन्द गति। द्वयता = भेद-भाव।

व्याख्या—इडा मनु को समझाती हुई कहती है कि यह ससार और इस ससार के सभी पदार्थ सीमित एव नाशवान है परन्तु इस ससार का निर्माण करने वाली विराट चेतना शक्ति अवश्य असीम एव सीमाहीन है और वह चेतन शक्ति देश एव काल से परे है। इडा का कहना है कि देश या राष्ट्र की कल्पना समय की सीमा मे लीन हो जाती है और समय उस विराट् चेतन शक्ति मे समा जाता है अतः वह विराट् शक्ति ही सीमाहीन है जो अपनी असीमित सत्ता के कारण स्वच्छद गति से सर्वत्र ही सभी कालो मे स्वच्छद रूप से विचरण करती है। इडा मनु से कह रही है कि तुम अपने भेद भाव की सीमित एव सकुचित भावना को विस्मरण कर असीम एव उदार बनकर' इस जगत मे निर्द्वन्द्वतापूर्वक विचरण करने का प्रयत्न करो।

टिप्पणी — यहाँ 'काल परिधि' मे रूपक अलकार है और प्रत्यभिज्ञा दर्शन के अनुसार ही कवि ने विराट चेतना शक्ति का महत्त्व अकित किया है।

क्षितिज पटी · ··· ··· अनजाने इसमे।

शब्दार्थ — क्षितिज पटी — क्षितिज रूपी पर्दा, माया का पर्दा। ब्रह्माड = विश्व। विवर — छिद्र, गुफा। घननाद — बादलो की गर्जना। कुहर = गुफा। लय = गाने और बजाने के स्वरो का मेल। विवादी स्वर — बेसुरी तान, प्रतिकूल बात।

व्याख्या — इडा मनु से कहती है कि यह सम्पूर्ण ससार एक गुफा के समान है और उस पर क्षितिज का परदा पडा हुआ है अत इन ससार के वास्तविक स्वरूप का परिचय प्राप्त करने के लिए तुम्हे उस परदे को उठा कर संसार का रूप देखना चाहिए और उसमे गूँजते हुई दुखी व्यक्ति रूपी बादलो की पीडामयी गर्जना सुननी चाहिए। इडा मनु से कह रही है कि जिस प्रकार कोई निपुण गायक अपने गीत मे ताल, लय एव स्वर का पूर्ण ध्यान रखता है, उसी प्रकार तुम्हे भी अपनी प्रजा के सुख-दुख का बराबर ध्यान रखते हुए कोई भी ऐसा कार्य न करना चाहिए जो जनता की भावनाओ के विपरीत हो और जिससे प्रजा मे किसी भी प्रकार का असतोष जाग्रत हो।

टिप्पणी — (१) इन पक्तियो मे छायावादी काव्य धारा की प्रतीकात्मक शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(२) यहाँ रूपक, रूपकातिशयोक्ति, पुनरुक्ति एव श्लेष अलकारो की योजना हुई है।

अच्छा ! यह ··· · · · ·· ···· बात समाई।

शब्दार्थ — प्रेरणामयी = उत्साहित करने वाली, कार्य मे प्रवृत्त करने वाली लेकिन यहाँ भूख बनाने वाली से अभिप्राय है। बात समाना = विचार करना।

व्याख्या — इडा की बाते सुनकर मनु ने कहा कि बस अब तुम्हे यह सब समझाने की आवश्यकता नहीं है क्योकि मैं भली-भाँति जानता हूँ कि तुम भूख बनाने मे कितनी चतुर हो ? मनु इडा से कह रहे हैं कि मुझे तो इस बात का आश्चर्य है कि तुम पहले तो अपने को अपमानित समझ कर क्रोधित हो बाहर चली गई थी परन्तु अब तुरन्त क्यो मेरे समीप लौट कर आ गयीं और तुम्हें इतना साहस कैसे हुआ ?

आह प्रजापति ... . सहूं क्या ?

शब्दार्थ—वितरित करता=बांटता । सतत=निरन्तर, हमेशा । प्रयास=प्रयत्न ।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि क्या प्रजापति होने का मुझे यही अधिकार मिला है कि मेरी इच्छाएँ हमेशा अपूर्ण रहें अर्थात् मुझे अपनी इच्छा पूर्ण करने का तनिक भी अधिकार न हो ? साथ ही मैं सम्पूर्ण प्रजा को तो सुख सुविधाएं प्रदान करता रहूँ परन्तु स्वयं कुछ प्राप्त करना चाहूँ तो वह पाप ही होगा और मुझे चुप रहकर वह पाप सहन करना होगा ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मनु के मन का क्षोभ एवं अतृप्तिपूर्ण मानस का सुन्दर चित्रण हुआ है ।

तुमने भी प्रतिदान ... . कहो है ।

शब्दार्थ—प्रतिदान किया—बदला चुकाया । व्यर्थ=बेकार ।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि तुम मुझे यह बतलाओ कि तुमने मेरे उपकारों का क्या बदला चुकाया है ? मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि तुम बस मुझे ज्ञान दे देकर ही जीवित रखना चाहती हो और मुझे अपना साधन बनाने के लिए प्रयत्नशील हो परन्तु जब मुझे वह वस्तु ही नहीं मिली, जिसे मैं चाहता हूँ; तब तुम्हारी सभी बातें व्यर्थ जान पड़ती हैं अतः तुम इन्हें वापिस ले लो ।

इड़े ! मुझे वह .... तनिक अब ।

शब्दार्थ—वृथा=व्यर्थ, बेकार । बन्धन=शरीर का संयम ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे इड़ा, मुझे तो वही वस्तु चाहिए जिसकी मैं इच्छा करता हूं और मैं तो तुम पर अपना अधिकार रखना चाहता हूँ तथा जब तक मेरी यह इच्छा पूर्ण न होगी तब तक मेरा प्रजापति होना बेकार है । मनु इडा से कहते हैं कि तुम्हें देखकर सभी नियमों के बन्धन टूट रहे हैं और मेरे मन में अब राज्य करने या अन्य किसी भी प्रकार के अधिकार की कोई इच्छा नहीं रही ।

टिप्पणी—मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि इडा का रूप सौन्दर्य देखकर उनके शरीर का संयम समाप्त हो गया है और इन्द्रियाँ चंचल हो उठी हैं तथा वे न तो इडा का राज्य चाहते हैं और न किसी प्रकार का अन्य अधिकार ? उन्हें तो एकमात्र इड़ा को प्राप्त करने की अभिलाषा हो रही है ।

देखो यह . रहा अकेला।

शब्दार्थ—दुर्धर्ष=उग्र, प्रबल, अजेय। समक्ष=सामने। क्षुद्र=तुच्छ। स्पन्दन=हलचल। प्रलय खेल=विनाशकारी कार्य।

व्याख्या—मनु इडा से कहते हैं कि देखो आज अजेय प्रकृति मे कितनी हलचल है परन्तु मेरे हृदय की तीव्र हलचल के सामने प्रकृति की तीव्र हलचल भी तुच्छ जान पडती है। मनु का कहना है कि मेरा यह हृदय बहुत कठोर है और इसने प्रलय के विनाशकारी खेल का भी हँसते हुए सामना किया है परन्तु आज मैं अकेला होकर बिलकुल कोमल हो रहा हूँ और मेरी सम्पूर्ण कठोरता नष्ट हो गई है।

टिप्पणी—यहाँ व्यतिरेक अलकार है।

तुम कहती हो ... तुमको पा लूं।

शब्दार्थ—क्रन्दन=विलाप करना। अट्टहास=तीव्र हँसी।

व्याख्या—इडा को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि तुम मुझसे कहती हो कि यह ससार एक लय के समान है और मुझे उसमे लीन हो जाना चाहिए परन्तु तुम मुझे यह तो बतलाओ कि मुझे उसमे किस सुख की प्राप्ति होगी? मनु का कहना है कि मेरी तो यही अभिलाषा है कि मैं अपने दुखी जीवन का एक स्वतन्त्र लोक बना लू क्योंकि मेरा जीवन शोक-सताप से पूर्ण है और यदि मुझे तुम्हारी प्राप्ति हो जायेगी तो मेरा यह दुखी जीवन तीव्र उल्लास से पूर्ण सुखमय जीवन मे परिवर्तित हो जायेगा।

टिप्पणी—यहाँ लक्षण लक्षणा है और 'विश्व एक लय' मे रूपक तथा क्रन्दन के आकाश मे रूपकातिशयोक्ति और 'रोदन मे अट्टहास हो' मे विरोधाभास अलकार है।

फिर से जलनिधि .. ... अब खेलो तुम?

शब्दार्थ—जलनिधि=समुद्र, सागर। मर्यादा=सीमा। झझा=आँधी-तूफान। वज्र प्रगति=बिजली की तीव्र गति। शशि=चन्द्रमा। खिलवाड=खेल, क्रीडा।

व्याख्या—मनु इडा से कहते हैं कि यदि तुम मुझे मिल जाओगी तो फिर मुझे कोई चिन्ता न रहेगी और चाहे सागर अपनी मर्यादा का उल्लघन कर उछल-उछल कर बहने लगे, चाहे आँधी और तूफान बिजली के समान तीव्र गति से आवें, चाहे पुन मेरी नाव सागर मे डगमगाती हुई इधर उधर भागने

लगे और चाहे सूर्य, चन्द्र एवम् तारे आदि विचलित होकर ऐसे दिखाई देने लगे मानो भय से चौंक कर नींद से जाग गये हो परन्तु हे बालिके; तुम हमेशा मेरे पास रहो। मनु इडा से कह रहे है कि तुम मेरी हो और मैं तुम्हें अपने पास से कहीं अन्यत्र नही जाने देना चाहता तथा मैं कोइ ऐसा खेल नहीं हूं जो तुम मेरे साथ खिलवाड करती रहो।

टिप्पणी—यहाँ 'रवि शशि तारा सावधान हो चौंकें जागे' मे मानवीकरण अलकार है।

आह न समझोगे .. ... रहूं क्या ?

शब्दार्थ—उत्तेजित=आवेशपूर्ण। प्राप्य=मिलने योग्य। क्षुब्ध=क्रोधित उत्तेजित। आतंक विकम्पित=भय से कांपती हुई। शुभाकांक्षिणी=भला चाहने वाली, हितैषिणी।

व्याख्या—मनु के उद्गार सुनकर इडा कहने लगी कि यह कितने दुख की बात है कि तुम मेरी इन अच्छी बातो को सुनना और समझना ही नहीं चाहते तथा यह भी नही सोचते कि मैं तुम्हारे कल्याण की बात ही कर रही हूँ। इड़ा मनु से कहती है कि तुम व्यर्थ ही आवेश मे आकर ऐसे कार्य करते हो कि जिनके कारण मिलने योग्य वस्तुओ को भी नही प्राप्त कर पाते और एक ओर तो प्रजा अत्यन्त उत्तेजित होकर तुम्हारी शरण मे आई है और राज द्वार पर खडी है तथा दूसरी ओर प्रकृति लगातार भय से प्रतिक्षण कांपती हुई दिखाई दे रही है। इडा मनु से कह रही है कि मैं तुम्हारा भला चाहती हूँ और इसीलिए तुम्हे सावधान करते हुए कह रही हूँ कि मैंने तुम्हें जो कहना था मैं कह चुकी और यदि तुम मेरी बातो को नहीं समझ पाते तो मेरा यहाँ रहना बेकार है।

टिप्पणी—यहाँ 'प्रकृति विकम्पित' मे मानवीकरण और 'घडी-घड़ी' में पुनरुक्ति अलकार है।

मायाविनि .... .. मुझे दिखाई।

शब्दार्थ—मायाविनि=जादूगरनी, छलने वाली। छुट्टी=अवकाश, छुटकारा। छुट्टी=परस्पर सम्बन्ध विच्छेद की बालको की एक विशेष प्रकार की क्रिया। मूर्तिमती=साकार प्रतिमा। अभिशाप=अनिष्ट, अहित कारिणी। संघर्ष भूमिका=विरोध या युद्ध का आरम्भ।

व्याख्या—इड़ा को सम्बोधित कर मनु कहते हैं कि हे मायाविनि; तुमने

तो बातें बनाकर अब मुझसे इस प्रकार सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है, जिस प्रकार छोटे-छोटे बच्चे साथ-साथ खेलते हुए जरा-सी बात पर रूठकर आपस मे एक-दूसरे से खुट्टी कर लेते हैं। मनु इडा से कह रहे हैं कि तुम मेरे सामने अनिष्ट की साकार प्रतिमा बनकर उपस्थित हुई और तुमने ही मुझे सघर्ष करना भी सिखाया है।

टिप्पणी—यहाँ 'मूर्तिमयी अभिशाप बनी सी' मे उपमा अलकार है।

रुधिर भरी . . .. जिनका सपना।

शब्दार्थ—रुधिर भरी वेदियाँ=रक्त से पूर्ण यज्ञ की वेदियाँ। विनयन =शासन। उपचार=साधन। श्रम=कार्य, कर्तव्य। शस्त्र=हथियार। यन्त्र=मशीन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे इडा, तुम्हारी प्रेरणा से ही मैंने अनेक यज्ञ किये और उनमे अग्नि तथा यज्ञ की वेदियो पर पशुओ की बलि दी जिससे सर्वत्र रक्त फैल गया। मनु इडा से कह रहे हैं कि तुम्ही ने मुझे प्रजा को अनुशासन मे लाने का ढग सिखाया और उसका प्रचार भी किया। मनु इडा से कहते हैं कि तुम्हारी प्रेरणा से ही अब इस सारस्वत नगर की समस्त प्रजा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामक चार वर्णों मे विभाजित कर दी गई तथा प्रत्येक वर्ण के कार्य भी निश्चित कर दिये गये। साथ ही ऐसे ऐसे हथियार और मशीनें बनने लगीं जिनका कभी मैंने सपना भी न देखा था।

आज शक्ति .. मिल जाने दो।

शब्दार्थ—शक्ति का खेल खेलना—शक्ति के आधार पर असभव कार्यों को भी सभव करने का प्रयत्न करना। आतुर=उतावला, उत्सुक। प्रकृति सग संघर्ष=प्रकृति पर अपना अधिकार करने की तैयारी। बाधा=रुकावट। हताश=निराश। वैभव=ऐश्वर्य। ध्वस=नष्ट।

व्याख्या—मनु का कहना है कि आज मनुष्य सभी साधनो से सम्पन्न होकर असभव कार्यों को भी करने का प्रयत्न कर रहा है और वह अब किसी से भी नही डरता और प्रकृति के साथ निरन्तर युद्ध कर उस पर अधिकार जमाना चाहता है। मनु इडा से कहते हैं कि तुम मुझे नियमो मे बाँधने का प्रयत्न मत करो और यह न भूलो कि मेरा जीवन निराशा से पूर्ण है तथा मेरी सभी

आशायें नष्ट हो चुकी हैं। इसलिए तुम मेरी बात मान लो और एक क्षण के लिए सुख से जीवन व्यतीत कर लेने दो।

राष्ट्र स्वामिनी .... धुआं सा ?

शब्दार्थ—वैभव=ऐश्वर्य, प्रजापति का पद आदि। ध्वंस=नष्ट-भ्रष्ट। अग्नि=जलाने वाली, नष्ट करने वाली। धुआं-सा=जलकर नष्टप्राय हुआ जैसा।

व्याख्या—इड़ा को सम्बोधित कर मनु ने कहा कि हे राष्ट्र की स्वामिनी तुम अपना सारा ऐश्वर्य ले लो और मैं यह प्रजापति का पद आदि कुछ भी नहीं चाहता और तुम यह सब वापिस ले सकती हो। मनु इडा से कहते हैं कि तुम्हें किसी प्रकार अपना कह सकूँ और यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगी तो समझ लो कि तुम्हारा यह सारस्वत प्रदेश पूर्णतया नष्ट-भ्रष्ट हो जाएगा तथा इसके नाश का उत्तरदायित्व तुम पर होगा। तुम्हीं इसे जलाने वाली अग्नि हो और यह सारस्वत प्रदेश धुएँ के समान बनने वाला है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलंकार है।

मैंने जो मनु .... न मैंने।

शब्दार्थ—मत फूलो=घमड मत करो, गर्व न करो। केन्द्र=प्रमुख व्यक्ति, मुख्य स्थान। अनहित=बुराई, अपकार।

व्याख्या—मनु की बातें सुनकर इडा कहने लगी कि मैंने तुम्हारी उन्नति के लिए जो कुछ किया उसको इस प्रकार मत भूल जाओ और तुम्हे जो राष्ट्र की ओर से वैभव या सम्मान प्राप्त हुआ है उस पर घमड मत करो। इडा मनु से कह रही है कि मैंने ही तुम्हें प्रकृति के साथ संघर्ष करना सिखाया और प्रकृति पर अधिकार करने की प्रेरणा दी तथा तुम्हे शक्ति का केन्द्र बनाकर मैंने तुम्हारे साथ कोई बुराई नही की।

मैंने इस बिखरी .... अपराध बड़ा है।

शब्दार्थ—बिखरी=फैली हुई। विभूति=ऐश्वर्य, सुख। सहज=स्वाभाविक ढग से। अन्तर्यामी=समस्त रहस्यो का जानने वाला। हाँ में हाँ न मिलाऊँ=पूर्णतया समर्थन करना, चापलूसी करना।

व्याख्या—इडा का कहना है कि हे मनु! मैंने स्वाभाविक रूप से ही तुम्हें

सृष्टि के विखरे हुए ऐश्वर्य का स्वामी बना दिया और तुम अब इस सारस्वत प्रदेश के सभी गुप्त से गुप्त रहस्यों को जानते हो। लेकिन अब दशा यह हो है कि यदि मैं तुम्हारी हाँ में हाँ न मिलाऊँ तो यह मेरा बहुत बड़ा अपराध समझा जाता है।

मनु ! देखो . ... धरो तो।

शब्दार्थ—भ्रान्त निशा=भ्रम में डालने वाली रात्रि। प्राची=पूर्व दिशा। नव ऊषा=प्रभात की लालिमा। तमस=अन्धकार, अज्ञान।

व्याख्या—इडा कह रही है कि हे मनु ! देखो तुम्हें भ्रम में डालने वाली यह रात अब समाप्त हो रही है और पूर्व दिशा में नवीन उषा की लालिमा फैलने लगी है तथा अन्धकार मिट रहा है अर्थात् तुम्हारी बुद्धि में भ्रम उत्पन्न करने वाली यह अज्ञानमयी रात्रि अब समाप्त हो रही है और ज्ञानरूपी शुभ्र प्रभात का आगमन हो रहा है। इडा मनु से कहती है कि अपने बुरे-भले का विचार करने के लिए अभी भी समय है और यदि तुम मुझ पर विश्वास करो तथा अपने हृदय में धैर्य धारण करो तो सब कुछ ठीक हो सकता है।

टिप्पणी—यहाँ 'तमस' में उपादान लक्षणा है और रूपकातिशयोक्ति अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

और एक क्षण ... ... देखती रही वह।

शब्दार्थ—प्रमाद=उन्माद। निस्सहाय=असहाय, निराश्रय। दीन=विवश, बेबस।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यद्यपि इडा ने मनु को समझाने की बहुत चेष्टा की पर मनु पर उसकी बातों का प्रभाव नहीं पड़ा और उनका हृदय वासना से चंचल हो उठा। इस प्रकार जब इडा ने द्वार की ओर पैर बढ़ाया तब मनु ने अपनी भुजाएँ फैलाकर उसे वहीं रोक लिया और वह बेचारी असहाय होकर विवशता पूर्ण करुण दृष्टि से मनु की ओर देखती रही।

यह सारस्वत देश ... अपने समझो।

शब्दार्थ—रानी=स्वामिनी। अस्त्र=प्रयोग का साधन। छल=कपट। पंगु=लंगड़ा, व्यर्थ।

व्याख्या—मनु इडा से कह रहे हैं कि यह सारस्वत प्रदेश तुम्हारा ही है और तुम इस प्रदेश की स्वामिनी हो तथा तुमने मुझे अपने उद्देश्यों की पूर्ति का साधन बनाकर जैसा चाहा, अब तक मेरा वैसा ही प्रयोग करती रही हो।

मनु इडा से कहते हैं कि अब तुम्हारा यह छल कपटपूर्ण व्यवहार अधिक नहीं चल सकेगा और तुम्हे यह समझ लेना चाहिए कि अब मैं तुम्हारे बंधन से स्वतन्त्र हो गया हूं।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव रूपकातिशयोक्ति अलंकार है और लक्षण लक्षणा का प्रयोग हुआ है।

शासन की यह .... डूबती अतल में।

शब्दार्थ - प्रगति=उन्नति। चिर स्वतन्त्र=सर्वथा उन्मुक्त, सदैव किसी के बंधन मे न रहने वाला। असीम=अनन्त। अतल=अत्यन्त गहराई मे, पाताल मे।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे इडा; अब मुझसे तुम्हारी गुलामी न हो सकेगी और तुम्हारे इस सारस्वत प्रदेश के शासन की उन्नति आप ही आप रुक जायगी क्योंकि मेरे ही कारण तुम्हारा राज्य सुचारु रूप से चल रहा था पर वह अब नष्ट हो जायगा। मनु इडा से कहते हैं कि मैं इस राज्य का शासक हूँ और सब प्रकार से स्वतन्त्र हूं तथा जिस प्रकार सम्पूर्ण प्रजा पर मेरा अधिकार है उसी प्रकार मैं चाहता हूं कि तुम पर भी मेरा अबाध अधिकार हो तथा तुम पर अधिकार पाकर ही मेरा जीवन सफल होगा। मनु इडा से कह रहे हैं कि यदि तुम मेरा अधिकार स्वीकार कर मेरे समक्ष आत्म समर्पण नही करोगी तो एक क्षण मे ही सारस्वत प्रदेश की यह शासन व्यवस्था नष्ट भ्रष्ट होकर रसातल को चली जायगी।

टिप्पणी—यहाँ लक्षणलक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

देख रहा हूँ .... बाहो मे।

शब्दार्थ—वसुधा=पृथ्वी, धरती। निर्मम क्रन्दन=कठोर गर्जना।

व्याख्या—मनु इडा से कहते हैं कि मैं भयकर हलचल के कारण भय से कांपती हुई पृथ्वी को स्पष्ट देख रहा हूँ और आकाश मे मेघो की कठोर गर्जना भी मुझे सुनाई दे रही है परन्तु तुम आज मेरी बाहो मे बन्दी हो और मेरे हृदय मे बसी हुई हो। कवि का कहना है कि इसके पश्चात् कुछ सुनाई नही दिया और सब कुछ इडा की बाहो मे डूब गया।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार है।

सिंह द्वार अरराया ... ... कांप रहे थे।

शब्दार्थ—सिंह द्वार=राजभवन का प्रमुख द्वार। अरराया=टूटकर

गिर पड़ा। चीत्कार=चीख, शोर। स्खलन की विकंपित=पथ भ्रष्ट होने के कारण कांपते हुए या मार्ग से विचलित होने के कारण कांपते हुए।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब मनु आवेश मे आकर इडा को अपनी बाहों मे बन्दी बनाये हुए थे तब जनता के प्रहार के कारण राजभवन का प्रमुख द्वार टूटकर गिर पड़ा और प्रजा राजभवन के अन्दर घुस आई तथा 'मेरी रानी' 'मेरी रानी' कहकर शोर मचाने लगी। कवि का कहना है कि उस समय मनु अपनी दुर्बलता प्रकट होने के कारण कांप रहे थे और इडा के साथ अनैतिक आचरण करने के कारण वह पथ भ्रष्ट हो गये थे अत अब उनके पैर बुरी तरह से कांप रहे थे।

सजग हुए मनु ... .. वर्ग बनाया।

शब्दार्थ—सजग=सावधान, सचेत। वज्र खचित=वज्र के चिन्ह से युक्त। तृप्ति कर=सतोष प्रदान कर। सकल=सम्पूर्ण, सभी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जन समूह को सामने देखकर मनु सावधान हुए और वज्र के चिन्ह से युक्त राजदण्ड हाथ मे लेकर जनता को पुकार कर कहने लगे—अब मैं जो कुछ तुमसे कहता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो। तुम्हें यह याद रखना चाहिए कि मैंने तुम्हे सुख के वे साधन बतलाए हैं जिनसे हृदय तृप्त होता है और समाज को सुचारु रूप से सचालित करने के लिए मैंने श्रम का विभाजन भी किया तथा इस श्रम विभाजन के आधार पर समाज मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र आदि चार वर्गों का निर्माण किया।

टिप्पणी—प्रारम्भिक दो पक्तियो मे उपमा अलकार है।

अत्याचार .... . आज हमारी।

शब्दार्थ—प्रकृति कृत=प्रकृति द्वारा किये गये। प्रतिकार=प्रतिशोध, बदला लेना। पशु=अज्ञानी, असभ्य। गूँगे=मूक, यहाँ भाषा विहीन। कानन चारी=वन मे रहने वाले, जगली जीव। उपकृति=उपकार, भलाई।

व्याख्या—मनु सारस्वत निवासियों के अचानक राजभवन मे घुस आने पर क्रुद्ध हो कहते हैं कि मेरे ही अथक परिश्रम के कारण तुम इतने अधिक सामर्थ्यवान हो सके कि प्रकृति द्वारा किये जाने वाले अत्याचारो को चुपचाप सहन न कर उनका विरोध करते हो और पहले के समान चुप नही बैठे रहते बल्कि उक्त अत्याचारो को दूर करने का उपाय भी करते हो। मनु सारस्वत नगर की जनता से कह रहे हैं कि आज तुम पहले के समान पशु अर्थात्

असभ्य नही हैं और न भाषा-विहीन, वन मे विचरण करने वाले जगली प्राणी ही हैं परन्तु तुम लोग मेरे द्वारा किये गये सब उपकारो को आज भूल गये हो।

टिप्पणी—(१) यहाँ प्रकृतिकृत अत्याचार से कवि का अभिप्राय अतिवृष्टि, बाढ, प्रलय, आँधी, तूफान और भूकम्प आदि से है।

(२) तीसरी पक्ति मे जहत्स्वार्था लक्षणा है।

वे बोले .... संकट मे डाला।

शब्दार्थ—सक्रोध=क्रोधपूर्वक, क्रोध के साथ। योगक्षेम=आवश्यक वस्तु की प्राप्ति और प्राप्त वस्तु की रक्षा। संचय=सग्रह।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु की बातें सुनकर सारस्वत नगरवासी अत्यधिक क्रोधित हो उठे और भयकर मानसिक पीडा स दु खी हो कहने लगे, 'देखो, आज यह पापी अपने ही मुख से अपने दोषो की चर्चा कर रहा है। हे मनु, तुमने हमे लोभ की शिक्षा दी है, जिससे हमने आवश्यक वस्तुओ मे अधिक सग्रह करना आरम्भ कर दिया और हम दिन-रात वस्तुओं के एकत्र करने की चिन्ता मे ही लगे रहते तथा एक क्षण के लिए इस विचार से मुक्त न हो पाते।

टिप्पणी—(१) यहाँ विचार-सकट से कवि का अभिप्राय यह है कि आज की समस्त विपत्तियाँ बुद्धि की अधिकता के फलस्वरूप ही उत्पन्न हुई हैं।

(२) 'पाप पुकार उठा' मे जहत्स्वार्था लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

हम सवेदनशील .... जर्जर झीनी।

शब्दार्थ—संवेदनशील=चेतनाशील, अनुभूतिमय। कृत्रिम=बनावटी। प्रकृत=स्वाभाविक। शोषण कर=चूम कर, सोखकर। जर्जर=क्षीण। झीनी=शक्तिहीन, दुर्बल।

व्याख्या—सारस्वत प्रदेश की जनता मनु से कह रही है कि तुम्हारे प्रयत्नो से हमे यही सुख मिला कि हम अधिक चेतनाशील होगये और जहाँ कि पहले हम प्राकृतिक दु खो से दु.खी होते थे, वहाँ अब कृत्रिम दु ख से दु खी होने लगे। सच तो यह है कि तुमने आज अनेक प्रकार के यन्त्रो का आविष्कार करके सभी प्राणियो की प्राकृतिक शक्ति छीन ली और हमे अत्यन्त क्षीण एवं दुर्बल बना दिया।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि गाधीजी के अनुसार यान्त्रिक सभ्यता का विरोधी जान पडता है।

और इडा .... निस्तार कहाँ है ?

शब्दार्थ—बंदिनी=कैदी। यायावर=इधर-उधर घूमने वाला व्यक्ति। निस्तार=छुटकारा।

व्याख्या—सारस्वत नगरवासी मनु को सम्बोधित कर कहते हैं कि तुमने इडा पर यह कैसा अत्याचार किया है और क्या इसी प्रकार का अत्याचार करने के लिए तुम हमारे बल पर जीवन व्यतीत कर रहे थे? आज तुमने हमारी रानी इडा को यहाँ कैदी बनाकर रखा है और हे इधर-उधर भटकने वाले व्यक्ति, अब हम देखते हैं कि तुम्हारा उद्धार यहाँ से किस प्रकार होता है ?

तो फिर मैं .... अपनी ज्वाला।

शब्दार्थ—पुतलो=मनुष्यो। भीषण=भयकर। साहसिक=साहस का कार्य करने वाले। पौरुष=तेज, पुरुषार्थ। लेखें=जानें, पहचाने, पता लगावें। वज्र बना सा=अत्यन्त भयकर बना हुआ। देव-आग=देवताओ का क्रोध।

व्याख्या—सारस्वत नगर की जनता के उद्गार सुनकर मनु कहने लगे कि यदि ऐसी बात है तो आज मैं जीवन के इस युद्ध मे प्रकृति के उत्पात और मनुष्यो के भयकर दल के मध्य अकेला ही खडा हूँ परन्तु मैं भयभीत नही हूँ ? मनु उपस्थित जन-समुदाय से कहते हैं कि तुम लोग अब मेरे साहस और तेज की परीक्षा अपने शरीर पर करोगे तथा मेरे इस राजदण्ड को भयकर रूप ग्रहण करते हुए देखोगे। कवि का कहना है कि इतना कहकर मनु ने अपने भयकर शस्त्र को सम्भाल लिया और उसी समय देवताओ का क्रोध भीषण हो उठा तथा देवता मनु को दण्ड देने के लिए उतारू होगए।

टिप्पणी—यहाँ 'जीवन रण' मे रूपक और 'वज्र बना सा' मे उपमा अलकार है।

छूट चले नाराच . ... जन प्राणों को।

शब्दार्थ—नाराच=तीर, बाण। तीक्ष्ण=तेज। धूमकेतु=पुच्छल तारा। अंधड=भयकर तूफान। क्रूर=कठोर एव निर्मम। रणवर्षा=युद्ध रूपी वर्षा। वारण करते=रक्षा करते, बचाते।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु के ऊपर दैवी धनुष से तीक्ष्ण और नुकीले बाण छूटने लगे तथा उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो आकाश से नीले और पीले पुच्छल तारे टूट रहे हो। साथ ही जिस प्रकार प्रजा की झुँझलाहट बढ़ती जा रही थी उसी प्रकार तूफान की भयकरता भी बढ

रही थी और शस्त्र उसी प्रकार चमक रहे थे जिस प्रकार वर्षा काल मे बिजली चमकती है। इतना होते हुए भी कठोर मनु जनता द्वारा चलाए गए बाणो को रोक रहे थे और वे स्वय अपने खड्ग से मनुष्यो को मारते हुए आगे बढने लगे।

टिप्पणी—इस पद की प्रथम पक्ति के सम्बन्ध मे व्याख्याकार एकमत नहीं हैं और एक ओर तो कुछ विचारको का कहना है कि मनु के धनुष के तेज एव नुकीले बाण छूट रहे थे तो दूसरी ओर कुछ विचारक कहते हैं कि प्रजाजनों के धनुषो से तीखे बाणो की वर्षा होने लगी पर उक्त दोनो ही अर्थ युक्तिसगत नही जान पडते। जब कवि ने इसके पूर्व देवताओ के क्रोध की ओर सकेत किया है तब यहाँ यही अर्थ ग्रहण करना उचित होगा कि 'मनु के ऊपर दैवी धनुष से तीक्ष्ण एव नुकीले बाण छूटने लगे।'

ताडव मे थी .... निर्मम में।

शब्दार्थ – ताडव=भगवान् शकर का प्रलयकारी या सहारकारी नृत्य। तीव्र प्रगति=भयकर तेजी। विकर्षणमयी=आकर्षण से रहित, क्रुद्ध। त्रास=भय। अलात चक्र=घूमती हुई मशाल। घन तम=सघन अधकार। रक्तिम उन्माद=खूनी पागलपन। कर=हाथ। निर्मम=निष्ठुर, निर्दय।

व्याख्या—कवि का कहना है कि आकाश मे भगवान् शकर का सहारकारी नृत्य अत्यन्त तीव्र गति से हो रहा था जिसके कारण सभी परमाणु इधर-उधर बिखर गये थे और समस्त दैवी-शक्तियाँ भी ससार की व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने मे लगी हुई थी अत सभी प्राणी भयभीत दिखाई देते थे। इतना ही नहीं ससार का नियमन करने वाली नियति नामक दैवी शक्ति भी सासारिक प्राणियो को दुखी कर रही थी। साथ ही चारो ओर घना अन्धकार छा गया था और उस सघन अन्धकार मे मनु चक्कर काटती हुई मशाल के समान घूम-घूमकर लड रहे थे तथा युद्ध के आवेश से पूर्ण निर्दयी मनु का हाथ प्रजा का खून बहाने के लिए चचलता से काम कर रहा था।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार है और युद्ध करते हुए मनु का चित्र अत्यन्त सजीव जान पडता है।

उठा तुमुल रणनाद ... . मनु ने।

शब्दार्थ—तुमुल रणनाद=भयकर युद्ध की तीव्र ध्वनि। विपक्ष=विरोधी। मौन=चुपचाप। आहत=घायल होकर। स्तम्भ=खम्भा।

टिककर=सहारा लेकर । श्वास लिया=दम लिया, रुके । टंकार=धनुष की तीव्र ध्वनि । दुर्लक्ष्यी=भयंकर निशाना लगाने वाला ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि भयंकर युद्ध ध्वनि होने लगी और स्थिति वहाँ भयानक होगई तथा मनु के विरोधियों का समूह बराबर उनके विरुद्ध आगे बढ़ता चला जा रहा था अर्थात् मनु के विरोधियों की जीत हो रही थी। इस प्रकार मनु की समस्त शासन-व्यवस्था विद्रोही प्रजा के पैरों से कुचलकर नष्ट-भ्रष्ट होती हुई उसी प्रकार शांत पड़ी थी जिस प्रकार कोई नारी पैरों तले कुचली जाने पर मृतप्राय होकर चुपचाप पड़ी हो। कवि का कहना है कि उस युद्ध में घायल होकर मनु कुछ पीछे की ओर हट गए और एक खम्भे का सहारा लेकर वे कुछ क्षणों के लिए दम लेने लगे अर्थात् शांत होगये तथा इसके पश्चात् मनु ने अपने धनुष से ऐसी टंकार की जो कठिनाई से दिखाई देने वाले लक्ष्यों को भी सरलतापूर्वक बेधने वाला था।

टिप्पणी—यहाँ गम्योत्प्रेक्षा एवं मानवीकरण अलंकार है।

यहते विकट .. . लेना लेना।

शब्दार्थ—विकट=भीषण, भयानक। वात=पवन। मरण पर्व=मृत्यु का उत्सव, प्रलय काल।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि विनाशकारी उनचास प्रकार की अत्यंत भयंकर पवन चलने लगी और यह समय एक दृष्टि से प्रलयकाल ही था। उस युद्ध में पुरोहित आकुलि और किलात प्रजा पक्ष के नेता थे और उन्होंने मनु को देखते ही ललकार कर कहा कि अब शासक मनु को कहीं जाने न देना लेकिन मनु पहले ही सावधान थे। वे यह कहते-कहते कि इन दुष्टों को पकड़ो पकड़ो' उन पुरोहितों के पास पहुँच गये।

टिप्पणी—यहाँ 'लेना-लेना' में वीप्सा अलंकार है।

कायर . . . .. रोको रण।

शब्दार्थ—उत्पात=ऊधम, हलचल। बलि=बलिदान। रण=युद्ध।

व्याख्या मनु आकुलि और किलात के पास पहुँचकर कहने लगे—'अरे कायरो! तुमने ही यह सारा उपद्रव खड़ा किया है। मैंने तुम्हें अपना समझकर अपनाया था परन्तु तुम दोनों मेरे लिए मुसीबत के कारण बने और तुम दोनों ने मुझे हिंसापूर्ण यज्ञ में प्रवृत्त कर पशुबलि के लिए बाध्य किया पर यह यज्ञ नहीं रणक्षेत्र है और अब तुम देखो कि यहाँ मनुष्यों की कैसे बलि होती है।

इतना कहकर मनु ने बाण चलाए और उसी क्षण आकुलि तथा किलात धरती पर गिर पड़े तथा इड़ा चिल्लाकर कहने लगी कि 'बस अब युद्ध बन्द करो'।

भीषण जनसंहार .... सुख से जी ले।

शब्दार्थ—जनसंहार=मनुष्यो का विनाश। खोता है=नष्ट करता है। आतंक=रोब, शक्ति।

व्याख्या—इड़ा मनु से कह रही है कि दैवी प्रकोप के कारण पहले ही मनुष्यो का विनाश होता चला जा रहा है और अब तुम पागल हुए प्राणियों के के समान परस्पर लड़कर अपना जीवन व्यर्थ मत गंवाओ। इड़ा कहती है कि अरे अहकारी मनु, तुम प्रजा पर अपनी शक्ति का आतक क्यों जमा रहे हो और उचित तो यही है कि तुम युद्ध बन्द कर दो तथा अन्य प्राणियो को सुख से जीवित रहने दो और अपना जीवन भी सुख से व्यतीत करो।

किन्तु सुन रहा . ... बहता बन पानी।

शब्दार्थ—धधकती वेदी ज्वाला=यज्ञ कुड के समान युद्ध की आग चारों ओर से धधक रही थी। सामूहिक बलि=असख्य व्यक्तियो का सहार। पथ=मार्ग। रक्तोन्माद=खून बहाने मे मतवाला। घर्षिता=रगड़ खाई हुई, अपमानित। वे=प्रजाजन। प्रतिशोध=बदला। अधीर=बेचैन।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यद्यपि इड़ा ने युद्ध रोकने के लिए कहा परन्तु इड़ा की बात पर किसी ने ध्यान नही दिया क्योकि वहाँ युद्ध की ज्वाला भड़क रही थी और वहाँ अनेक मनुष्यो की एक साथ बलि देने का निराला माग निकाला गया था। इस प्रकार जनता का सहार करने मे अनुरक्त मनु का हाथ रुकता नही था और उधर प्रजा का साहस भी कम नही हुआ था अत. वह भी पूर्ण उत्साह के साथ युद्ध कर रही थी। कवि कहता है कि वहीं पास मे ही सारस्वत प्रदेश की रानी इड़ा भी अपमानित सी खड़ी थी और प्रजा अपनी रानी के अपमान का बदला लेने के लिए बेचैन थी अत वहाँ रक्त पानी के समान बह रहा था।

टिप्पणी—यहाँ 'धधकती वेदी ज्वाला' मे रूपकातिशयोक्ति एव 'रक्त बहता बन पानी' मे रूपक अलकार है।

धूमकेतु सा .... उस भू पर।

शब्दार्थ—धूमकेतु=पुच्छल तारा। रुद्र=शकर। नाराच=तीर, लोहे का बाण। मुमूर्षु=मूर्च्छित।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु को दंड देने के लिए उसी समय भगवान शंकर का भयंकर लोहे का बाण अपने पिछले भाग में विनाशकारी आग की लपटें निकालता हुआ मनु की ओर इस प्रकार चला जिस प्रकार कोई पुच्छल तारा टूटकर धरती की ओर चलता है। कवि का कहना है कि अचानक आकाश में शंकर की भयंकर हुंकार भी सुनाई पड़ी और सभी प्रजा जनों के शस्त्र अत्यंत तेज गति के साथ मनु को लक्ष्य बनाकर चले और वे सभी शस्त्र मनु पर आकर एक साथ गिरे। इस प्रकार मनु मूर्च्छित होकर वहीं धरती पर गिर पड़े और वहाँ रक्त की नदी की बाढ़ सी आ गई तथा चारों ओर खून ही खून दिखाई देने लगा।

टिप्पणी—यहाँ 'धूमकेतु सा' में पूर्णोपमा अलंकार है।

बारहवाँ सर्ग

निर्वेद

कथानक—जब सारस्वत प्रदेश की प्रजा और मनु के बीच का घोर सग्राम समाप्त हुआ तब सारस्वत नगर मे सर्वत्र मलिनता छा गई और चारों ओर शोक एव विषाद का वातावरण ही दिखाई देता तथा बडे बडे भव्य भवन अब मृतको की समाधि जैसे दिखाई देते थे। स्वय मनु राजमहल मे मूर्च्छित अवस्था मे पडे हुए थे और उन्हीं के समीप बैठी हुई इडा विचारों में लीन थी। मनु के अनैतिक आचरण के कारण वह उनसे घृणा करती थी पर मनु की सहायता से ही वह अपने उजडे नगर को बसा पाई थी और वे दोनो न जाने कितने समय तक साथ रहे थे अत उसके हृदय मे मनु के प्रति स्नेह भी था। इस प्रकार कभी तो वह सोचती कि मनु को क्षमा कर देना चाहिए और कभी उसके मन मे प्रतिशोध लेने की भावना उत्पन्न होती थी। इड़ा को वह समय स्मरण आ रहा था जब मनु एक परदेशी के रूप मे उसे मिले थे और उन्होने घोर परिश्रम कर सारस्वत नगर को पुन बसाया और जिनके सुख के लिए उन्होने अथक प्रयत्न किया, वे ही उनके विरोधी बन गये तथा विषम आघातो से उन्हे मूर्च्छित कर चले गये। इड़ा स्वय अपने व्यवहार के सम्बन्ध मे विचार कर रही थी और वह सोचती थी कि आखिर मैं क्यो मनु के समीप बैठी हूँ? क्या मैं इनसे बदला लेना चाहती हूँ या इनकी रखवाली कर रही हूँ?

इडा यह सब सोच रही थी कि उसे किसी व्याकुल विरहिणी की यह ध्वनि सुनाई दी कि 'कोई कृपा कर मुझे यह बतला दे कि मेरा प्रवासी कहाँ है? मैं उसी से मिलने के लिए व्याकुल होकर घूम रही हूँ?' इड़ा ने उठकर देखा कि राजपथ पर कोई नारी किसी किशोर बालक का हाथ पकडे बढती चली आ रही है और दोनो ही अत्यधिक व्याकुल हैं। वास्तव मे यह नारी श्रद्धा थी और बालक उसका पुत्र मानव था। श्रद्धा की करुण पुकार सुनकर इड़ा द्रवित हो उसके समीप पहुंची और उसने दोनो को अपने समीप ठहरने

के लिए कहा। मानव को थका हुआ जानकर श्रद्धा ने इडा का अनुरोध स्वीकार कर लिया पर अचानक वेदी की ज्वाला तीव्र हो जाने से उसके प्रकाश मे श्रद्धा ने अपने प्राणप्रिय मनु को घायल होकर मूच्छित पडे हुए देखा। मनु को देखकर उसे आश्चर्य हुआ और उसका हृदय भर आया तथा उसने मनु को सहलाना आरम्भ किया। इस मधुर स्पर्श से मनु की मूर्च्छा दूर हो गई और उन्होने श्रद्धा को उसी प्रकार देखा जिस प्रकार कोई अपराधी अपने शुभ चिन्तक को देखता है। श्रद्धा ने कुमार मानव का भी उसके पिता मनु से परिचय कराया और पिता-पुत्र दोनो ही एक-दूसरे को देखकर प्रसन्न हुए। उसी समय श्रद्धा ने एक गीत गाया जिससे मनु की सम्पूर्ण व्यथा दूर हो गई।

प्रभात का सुखद समय आया और मनु स्नेह विभोर होकर श्रद्धा को अपने समीप रहने के लिए कहने लगे तथा इडा को देख वे विरक्त हो उठे। उन्होंने क्षोभ से अपनी आँखें बन्द कर ली और इडा को अपनी आँखों के आगे से हटने के लिए कहा तथा श्रद्धा से उन्हे कही दूर ले चलने के लिए कहा। श्रद्धा ने यह कहकर कि वे अभी चलने फिरने मे अधिक समर्थ नही हैं, वहीं रुकना उचित समझा पर मनु भावावेश मे कहने लगे—'मुझे अपने जीवन के वे दिन स्मरण आते हैं जब मैं तरुण था और मेरे मानस मे प्रम की तरगें उठ रही थी लेकिन मेरा कोई भी अपना न था। अचानक भीषण प्रलय आ गई और मैं उधर-उधर भटकता हुआ अपना जीवन व्यतीत करने लगा पर इसी बीच तुमने मेरे जीवन मे नव चेतना का सचार कर मेरे कष्टो को दूर किया। मैं तुम्हारा प्रेम पाकर धन्य हुआ पर मुझ तुच्छ हृदय को तुमने इतना अधिक स्नेह दिया कि मैं उसे सँभाल न सका और पुन अपने शापित जीवन को लेकर इधर-उधर भटकने लगा। हे देवि! तुम महान् हो पर मैं एक क्षुद्र व्यक्ति होने के कारण तुम्हारा महत्व समझ न सका और स्वार्थ मे अन्धा होकर तुम्हें त्याग कर चला आया। यह कुमार मेरे जीवन का उच्च अश था पर मैंने इसकी भी उपेक्षा की और मैं अब यही चाहता हूँ कि तुम सब सुखी रहो तथा मुझ अपराधी को भूल जाओ।'

श्रद्धा अपने प्राणप्रिय मनु के अन्तर की इस हलचल को पहचान गई पर वह शान्त रही और भरी आँखों से मनु की बातें चुपचाप सुनती रही। धीरे-धीरे दिन बीत गया और रात आ गई। इडा श्रद्धा के पुत्र मानव के समीप ही सो रही थी और लम्बे मार्ग की थकान तथा दिन भर के जागरण के कारण

श्रद्धा को भी नींद आ गई परन्तु मनु लेटे हुए सोच रहे थे— क्या इस जीवन मे सुख है ? नही-नही सम्पूर्ण जीवन दु खमय है ? मैं श्रद्धा को अपना यह मुख कैसे दिखाऊँगा ? क्या मैं अपने शत्रुओ से प्रतिरोध न लूं ? यदि श्रद्धा मेरे पास रही तो मैं अपने शत्रुओ से बदला नही ले सकूँगा । इसलिए अब जहाँ मुझे शान्ति मिलेगी वही जाऊँगा ।

जब प्रात काल होने पर सब उठे तो उन्होने देखा कि मनु वहाँ नही हैं । मानव अपने पिता मनु को वहाँ चारों ओर खोजने लगा और इड़ा को लज्जा आ रही थी क्योकि इस कार्य के लिए वह स्वय को दोषी समझती थी । श्रद्धा चुपचाप बैठी कुछ सोच रही थी ।

वह सारस्वत .... आवरण तना ।

शब्दार्थ—क्षुब्ध=विचलित, बेचैन । मलिन=उदास, दु.खी । मौन=नीरव, शात । विगत कर्म=बीती हुई दुर्घटना अर्थात् युद्ध । विष विषाद=जहरीला दु ख । आवरण=पर्दा ।

व्याख्या—कवि मनु और सारस्वत नगर की प्रजा के मध्य हुए युद्ध के पश्चात् की घटना का वर्णन करते हुए कह रहा है कि सारस्वत नगर विचलित, मलिन और कुछ शात सा दिखाई दे रहा था अर्थात् सम्पूर्ण नगर सुनसान जान पड़ता था । साथ ही उस नगर पर अभी तक बीते हुए भयकर युद्ध का जहरीला दु खपूर्ण पर्दा पड़ा हुआ था और उस युद्ध का ही यह प्रभाव था कि सारस्वत प्रदेश की जनता दु खी और व्याकुल थी ।

टिप्पणी—(१) यहाँ नगर के क्षुब्ध मलिन एव मौन होने मे रूढ़ि लक्षणा है और रूपक एवं मानवीकरण अलकार की भी योजना हुई है ।

(२) कामायनी के इस सर्ग मे केवल एक गीत को छोड़कर यहाँ तथा अन्यत्र भी ताटक छन्द का प्रयोग हुआ है ।

उल्काधारी ... ... मचल रहे ?

शब्दार्थ—उल्का=मशाल । प्रहरी=पहरेदार । टहल रहे=चक्कर काट रहे ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि समृद्धिशाली सारस्वत नगर आज बिलकुल शात और सुनसान पड़ा हुआ था और आकाश मे चमकते हुए तारे व ग्रह ऐसे प्रतीत होते थे मानो कि मशालो को लिए हुए पहरेदार इधर-उधर घूम रहे हो । कवि कहता है कि शायद ये ग्रह और तारे यह देखने के लिए ही आकाश

ने चक्कर लगा रहे हैं कि पृथ्वी पर क्या हो रहा है तथा क्यो इस धरती का प्रत्येक परमाणु व्याकुल है।

टिप्पणी—यहाँ प्रहरी से ग्रह मे पूर्णोपमा और 'अणु अणु' मे पुनरुक्ति अलकार की योजना हुई है।

जीवन मे जागरण .... भीमा है।

शब्दार्थ—जागरण=जाग्रत अवस्था, चेतना। सुषुप्ति=निद्रावस्था, सन्यास। भव रजनी=ससार रूपी रात्रि। भीमा=भयकर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सारस्वत नगर की दशा देखकर मन मे यह विचार उत्पन्न होता था कि क्या जीवन मे जागरण सत्य है या निद्रा ही एकमात्र सत्य है? यहाँ यह स्मरणीय है कि जागरण निर्माण का और निद्रा नाश का प्रतीक है अत यहाँ कवि ने यह सकेत करना चाहा है कि सारस्वत नगर की दशा को देखकर मन मे यह प्रश्न भी उठता था कि जीवन मे निर्माण सत्य है या नाश सत्य है और उस वातावरण मे बार-बार यह पुकार भी आ रही थी कि ससार रूपी रात्रि भयकर है।

टिप्पणी—(१) वस्तुत कवि ने इन पक्तियो मे यह स्पष्ट किया है कि सारस्वत नगर ने जाग्रत एव सचेत होकर पर्याप्त भौतिक उन्नति की थी और जीवन को सुखी बनाने के लिए अनेक साधनो का सचयन भी किया था पर अन्ततोगत्वा युद्ध के कारण उसे सुख न मिलकर भयकर दु ख प्राप्त हुआ अतः यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि ठीक ठीक नही कहा जा सकता कि जीवन को सुखी बनाने के लिए भौतिक विकास आवश्यक है या आलसियों के समान सोते हुए पडे रहने मे ही जीवन का आनन्द है?

(२) यहाँ रूपक अलकार है।

निशिचारी भीषण .. .... सन्नाटे।

शब्दार्थ—निशिचारी=रात्रि मे विचरण करने वाले। पंख भर रहे सर्राटे=रात्रि के समय विचार धारा तीव्रता से गतिमान थी। खींच रही थी सन्नाटे=चुपचाप बहती चली जा रही थी।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार रात मे राक्षस तीव्र गति से भागते दिखाई देते हैं उसी प्रकार उस भयकर रात्रि मे उठने वाले बुरे-बुरे विचार बहुत तेजी से दौड रहे थे। साथ ही उस नगर के समीप सरस्वती नदी चुपचाप बढती हुई चली जा रही थी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, मानवीकरण एव ध्वन्यर्थ व्यंजना अलकार है।

अभी घायलो ... ... करुण कथा।

शब्दार्थ—मर्म व्यथा=हार्दिक पीडा, गहरी वेदना। पुर लक्ष्मी=नगर की लक्ष्मी। खग रव के मिस=पक्षियो की बोली के बहाने से।

व्याख्या—कवि का कहना है कि अभी तक युद्ध मे घायल व्यक्ति सिसक रहे थे और उनकी सिसकियो मे उनकी गहरी वेदना का पता लग जाता था। साथ ही रात के इस सूने वातावरण मे जब कभी किसी पक्षी की आवाज सुनाई देती तब ऐसा प्रतीत होता था कि सारस्वत नगर की लक्ष्मी अब पक्षियों की दर्द भरी आवाज के बहाने अपनी दुख-कथा सुना रही हो।

टिप्पणी—यहाँ 'खग रव' मे कैतवापन्हुति और पुरलक्ष्मी द्वारा करुण कथा कहने मे रूपक, एव मानवीकरण अलकार है।

कुछ प्रकाश .... अवसाद रहा।

शब्दार्थ—धूमिल=धुंधला। अवसाद=दु.ख शोक।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि सारस्वत नगर में जहाँ-तहाँ दीप जल रहे थे और उनसे अत्यन्त धुंधला प्रकाश निकल रहा था। साथ ही वायु भी रुक-रुक कर धीरे-धीरे प्रवाहित होती थी और ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वायु भी किसी तीव्र दु ख से व्याकुल हो तथा इस दु ख के कारण ही वह तीव्र गति से न चल पाती हो।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भय मय मौन .... रहा बड़ा।

शब्दार्थ—भय मय=भय से पूर्ण। निरीक्षक=देखने वाला। सजग सतत=निरतर सचेष्ट। दृश्य जगत=दिखाई देने वाला भौतिक जगत।

व्याख्या—कवि कहता है कि सारस्वत नगर पर जो अधकार का नीला पर्दा सा छाया हुआ था वह इस दिखाई देने वाले भौतिक जगत की सीमाओं से भी विशाल प्रतीत होता था। साथ ही वह भय एव शून्यता से पूर्ण होने के कारण ऐसा प्रतीत होता था। जैसे कोई निरीक्षक चुपचाप पर अत्यन्त सचेष्ट होकर सारस्वत नगर का निरीक्षण कर रहा हो।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे शून्य वातावरण का अत्यन्त सजीव चित्रण किया गया है और उपमा अलकार का प्रयोग हुआ है।

मडप के सोपान .... धधक रही ।

शब्दार्थ—सोपान=सीढ़ी । अग्नि शिखा=आग की लपट ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मडप की सीढ़ियाँ सूनी पड़ी थी और वहाँ इडा के अतिरिक्त कोई भी न था । वह इडा भी सीढ़ी पर अकेली बैठी हुई आग की लपटों के समान धधक रही थी ।

टिप्पणी—कुछ व्याख्याकार इस पद की अतिम पक्ति का यह अर्थ भी करते है कि इडा के सामने यज्ञवेदी मे आग की लपटें धधककर ऊपर उठ रही थी ।

शून्य राज चिन्हों .... रहा पड़ा ।

शब्दार्थ—शून्य=रहित । राजचिन्ह=राजा के चिन्ह राजसी चिन्ह ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सारस्वत नगर का राजमहल अब ध्वजा पताका, चारण, प्रहरी एव सेना आदि राजसी चिन्हो मे रहित होकर एक सुनसान समाधि के समान दिखाई दे रहा था । साथ ही उस राजमहल मे एक ओर घायल मनु का मूर्च्छित शरीर पड़ा हुआ था ।

टिप्पणी—यहाँ 'समाधि-सा' मे उपमा अलकार है ।

इडा ग्लानि ... . कितनी रातें ।

शब्दार्थ—ग्लानि=दुख, घृणा । ममता=मोह, ममत्व ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस सुनसान राजमहल मे जहाँ मनु का मूर्च्छित शरीर पड़ा हुआ था, इडा ग्लानि से भरी बैठी थी और पिछली बीती हुई बातो को सोच-सोच कर दुखी हो रही थी । साथ ही उसके हृदय मे घृणा और ममता का अन्तर्द्वन्द्व चल रहा था और उसकी कई रातें इसी प्रकार के घृणा एव मोह से पूर्ण विचारो में लीन रहते हुए बीत चुकी थी ।

टिप्पणी—वस्तुत मनु ने सारस्वत नगर बसा कर इडा का उपकार किया था अत मनु के प्रति इडा के मन मे ममता थी पर मनु ने इडा के साथ अनुचित व्यवहार कर अत्याचार भी किया था अत उसके मन मे मनु के लिए घृणा भी थी । इस प्रकार इडा के हृदय मे घृणा एव ममता का अन्तर्द्वन्द्व विद्यमान रहना स्वाभाविक कहा जाएगा ।

नारी का वह .... .. रग देखा ।

शब्दार्थ—सुधा सिन्धु=अमृत का सागर, यहाँ दया, ममता, करुणा आदि सात्विक भावो से पूर्ण हृदय से अभिप्राय है । बाडव ज्वलन=सागर की आग, यहाँ क्षोभ, उद्वेग, सताप आदि भावनायें । कचन सा=सोने के समान ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इडा का हृदय एक नारी का कोमल हृदय था जिसमे दया, ममता, करुणा स्नेह आदि भाव अमृत सागर की तरगों के समान हिलोरें ले रहे थे। साथ ही उस कोमल हृदय मे जब मनु के अनैतिक आचरण एव नर सहार की स्मृतियाँ उत्पन्न होती थी तब उसका वह हृदय क्षोभ, उद्वेग, सताप आदि भावनाओं के कारण पीडा से सोने की भाँति पीला पड जाता।

टिप्पणी—(१) यहाँ इडा के अन्तर्द्वन्द्व का अत्यन्त सजीव चित्र अकित किया गया है।

(२) इन पक्तियों में सागरूपक एव उपमा अलकार की योजना हुई है।

मधु पिंगल .... माया नचती।

शब्दार्थ—पिंगल=पीली। संसृति रचती=ससार या सृष्टि का निर्माण करती। प्रतिशोध=बदला, प्रतिहिंसा। माया नचती=स्वरूप बनते-बिगडते दिखाई देते थे।

व्याख्या—कवि इडा के हृदय को सुकुमारता एव कठोरता से पूर्ण मानते हुए कह रहा है कि इडा के हृदय मे एक ओर तो क्षोभ एव उद्वेग आदि की तीव्र ज्वाला अपना मधुर पीला रग प्रकट करती हुई प्रज्वलित हो रही थी और दूसरी ओर नारी की स्वाभाविक कोमलता के कारण उसमे दया, ममता आदि के रूप मे शीतलता भी एक नवीन ससार का निर्माण कर रही थी। इस प्रकार इडा के हृदय मे क्षमा और प्रतिहिंसा की भावनायें एक साथ उठ रही थीं। कहने का अभिप्राय यह है कि इडा के मन मे एक ओर तो मनु के प्रति क्षमा की भावना उत्पन्न होती थी और दूसरी ओर मनु को बदला लेने की इच्छा भी तीव्र हो उठती थी।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे कवि ने नारी हृदय की आतरिक भावनाओं का मार्मिक चित्रण किया है।

(२) यहाँ मानवीकरण अलकार है।

उसने स्नेह .... जहाँ कहीं।

शब्दार्थ—अनन्य=एकनिष्ट, अटूट। सहज लब्ध=सरलता से प्राप्त।

व्याख्या—इडा सोच रही थी कि मनु ने निस्सदेह मुझसे प्रेम किया था परन्तु उस प्रेम मे एकनिष्ठता नही थी। यदि मनु चाहते तो वे प्रेम की अनन्यता को सरलता से प्राप्त कर सकते थे पर उन्होने ऐसा नही किया और

यह भूल गए कि प्रेम की अनन्यता कोई ऐसी वस्तु नही है जो जहाँ कहीं भी पडी रह सके।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे इडा मनु की वासनोन्मुखता की निन्दा कर रही है और उसका कहना है कि प्रेम की अनन्यता प्राप्त करने के लिए प्रेमी प्रेमिका दोनो के हृदय का समर्पण आवश्यक है।

बाधाओं का .. .. तोड चले।

शब्दार्थ—अतिक्रमण=उल्लघन, पार करके। अबाध=बाधा रहित, उच्छृखल।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि प्रेम पाप नही है परन्तु जो प्रेम सभी नियमो का उल्लघन कर उच्छृखल हो जाता है वह न केवल मर्यादा को तोड देता है बल्कि अपराध बन जाता है। इस प्रकार इडा ने मुझसे प्रेम अवश्य किया था परन्तु उन्होने अपने अनैतिक आचरण द्वारा मर्यादा का उल्लघन किया अत उनका वह प्रेम अपराध ही बन गया।

टिप्पणी—यहाँ उच्छृखल एव विलासपूर्ण प्रेम की निन्दा कर नैतिकता पर बल दिया गया है।

हाँ अपराध ... . असीम बना।

शब्दार्थ—भीम=भयकर, भीषण। असीम=अनन्त, सीमाहीन।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि यह ठीक है कि मनु ने अपने प्रेम में उच्छृखलता दिखाकर अपराध किया है परन्तु उनका यह एक अपराध ही इतना भीषण हो गया कि जीवन के एक कोने से बढकर उसने सर्वनाश का रूप धारण किया। इस प्रकार मनु ने अपराध मेरे साथ किया था लेकिन उनके उस अपराध के कारण मनु और जनता में भयकर युद्ध हुआ तथा उस युद्ध का परिणाम भी बहुत भयकर हुआ।

और प्रचुर ... . छल छाया।

शब्दार्थ—प्रचुर=अत्यधिक, असख्य। सहृदयता=स्नेह। शून्य=खोखला, सारहीन।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि मनु ने अपराध अवश्य किया है पर इस अपराध के अतिरिक्त उसने मेरे साथ और सारस्वत प्रदेश की प्रजा के साथ असख्य उपकार भी किए थे। इस प्रकार उसने हमेशा सहृदयतापूर्वक व्यवहार ही किया था परन्तु क्या वे सभी उपकार और सहृदयतापूर्ण व्यवहार आदि

सारहीन थे तथा उनके अदर भी मनु का छल-कपट ही समाया था। कहीं ऐसा तो नहीं कि मनु का प्रेम शून्य मात्र था और इस शून्यता के कारण वह छल से पूर्ण था।

कितना दुखी .... छाया था।

शब्दार्थ—एक परदेशी=मनु। नीचे धरा नहीं थी=कोई सहारा या आधार नही था। चतुर्दिक=चारों ओर।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि एक दिन वह था जबकि मनु एक दु:खी परदेशी के रूप मे हमारे यहाँ अर्थात् सारस्वत प्रदेश में आए थे। उस समय मनु के पास कही भी ठहरने का स्थान न था और न कोई सहारा था। साथ ही मनु के चारो ओर निराशा और सूनापन ही था।

वह शासन का . ... साकार बना।

शब्दार्थ—सूत्रधार=संचालक, नियामक। नियमन=नियन्त्रण, शासन। निर्मित=बनाए हुए। नवविधान=नवीन राज्य नियम।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि जो मनु किसी समय एक निराश्रित परदेशी के रूप मे सारस्वत प्रदेश मे आया था वह सारस्वत प्रदेश का नियामक बना और उसने यहाँ की बिखरी शक्ति को संगठित कर यहाँ का शासन आरम्भ किया तथा अपने राज्य मे सभी प्रकार से समुचित शासन व्यवस्था स्थापित की इस प्रकार मनु ने सारस्वत प्रदेश की उन्नति और सुव्यवस्था स्थापित करने के लिए जो अनेक नवीन राज्य नियम बनाये, उन्हीं नियमो से वे स्वयं दंड के भागी बने अर्थात् मनु को स्वयं उनके ही बनाये गये नियमों के आधार पर दंड मिला।

सागर की लहरों ... . सदा बढा।

शब्दार्थ—सागर की लहरो से उठकर=अनिश्चित एवं चंचल अवस्था से उठकर। शैल श्रृंग=पर्वत की चोटी परन्तु यहाँ उन्नति की सीमा। अप्रतिहत=वेरोकटोक। अबाध=जिसे रोका न जा सके। संस्थान=ठहरने का स्थान, जीवन का लक्ष्य, उन्नति की मंजिल।

व्याख्या—इड़ा सोच रही है कि मनु जब पहली बार मुझसे मिले थे उस समय उनकी अवस्था सागर की लहरो के समान अनिश्चित और चचल थी पर मनु सहज ही पर्वत की चोटी के समान उन्नति की उच्च शिखर तक पहुँचने मे सफल रहे क्योंकि उनमे अबाध गति थी। इस प्रकार वे सब बाधाओं को पार

करते हुए निरन्तर आगे बढते गए और उन्नति की मन्जिल पर हमेशा बढ़ते ही चले गये ।

टिप्पणी—यहाँ लक्षण लक्षणा एव रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

आज पडा है ... . अपना था ।

शब्दार्थ—मुमूर्षु=मूर्च्छित, घायल । अतीत=बीता हुआ समय ।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि जो मनु सरलतापूर्वक उन्नति की उच्च शिखर तक प हुँच गया था । और प्रत्येक साहसिक कार्य को सरलतापूर्वक पूर्ण करने की शक्ति रखता था । वही आज मूर्च्छित होकर यहाँ पडा हुआ है और उसके राज्य वैभव एव उन्नति सम्बन्धी सभी बीती हुई बातें आज स्वप्न के समान मिथ्या प्रतीत हो रही हैं । इतना ही नही जो मनु पहले सम्पूर्ण प्रजा को अपना समझता था और सबके हृदय मे जिसके प्रति अपनत्व की भावना थी वही मनु आज सबके लिए पराया हो गया तथा कोई भी उसे अपना नही समझता ।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार है ।

किन्तु वही .. . . गुणकारी था ।

शब्दार्थ—उपकारी=उपकार करनेवाला, भलाई करनेवाला । गुणकारी =गुण या अच्छे काम करनेवाला, हित करनेवाला ।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि जो मनु आज अपराधी कहे जाते हैं वे किसी समय इस सारस्वत नगर को जनता के लिए उपकारी थे और उन्होंने सारस्वत नगर का पुनर्निर्माण कर मेरा तथा सम्पूर्ण जनता का बहुत बडा उपकार किया था । इतना होते हुए भी मनु मेरे साथ अनैतिक व्यवहार करने के कारण मेरे अपराधी कहलाये और जो किसी समय हितकारी समझे जाते थे उसी मनु ने प्रकट रूप से दोष किया है ।

अरे सर्ग-अकुर . . .. प्यार करें ।

शब्दार्थ—सर्ग अकुर=ससार रूपी अकुर, सृष्टि बीज । पल्लव=पत्ते । युगल=दोनो ।

व्याख्या—मनु के गुण-दोषो का तुलनात्मक अनुशीलन करते हुए इडा सोचती है कि ससार रूपी अकुर के अच्छे और बुरे दो पत्ते हैं तथा इस सृष्टि में पाप-पुण्य दोनों हैं और दोनो एक दूसरे की सीमा निर्धारित करते हैं । यदि पाप न होता तो पुण्य भी निश्चय न होता और यदि पुण्य न होता तो फिर पाप

की पहचान कैसे होती । अतएव हमे दोनो को ही समान रूप से अपनाना चाहिए और हम न तो पाप से घृणा ही करें और न केवल पुण्य से प्रेम करें ।

टिप्पणी—यहाँ प्रथम दो पक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

अपना हो .... ज्ञात नहीं ।

शब्दार्थ—विन्दु=सीमा । ज्ञात=मालूम ।

व्याख्या—इडा सोच रही है कि चाहे व्यक्ति का अपना सुख हो या किसी दूसरे व्यक्ति का सुख हो पर जब वह सीमा से अधिक बढ जाता है तब यह दु ख बन जाता है और इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वय मनुष्य यह नहीं जानता कि उसे किस सीमा तक सुख प्राप्त करना चाहिए । यही कारण है कि जब सुख सीमा से बढ़ जाता है तब वह दु ख बन जाता है ।

प्राणी निज ... . पथ मे रोड़े ।

शब्दार्थ—भविष्य चिन्ता=अपने आगामी जीवन को सुखी बनाने के प्रयत्न । रोडे=बाधाएं ।

व्याख्या=इडा सोचती है कि आज मनुष्य-मात्र की यह दशा हो गयी है कि वह अपने भविष्य की सुख-चिन्ता मे इतना अधिक लीन है कि वह वर्तमान जीवन के सुख को भी त्याग देता है । इतना ही नही वह स्वयं अपने मार्ग मे बाधाएँ खडी करता हुआ सुख प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहता है अर्थात् वह अपने सहज प्राप्त सुखों का भी उपभोग नही कर पाता ।

टिप्पणी—यहाँ रोडे पद मे लक्षण-लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

इसे दंड .... उलझन वाली मैं ?

शब्दार्थ—विकट=कठिन, भयकर । पहेली=समस्या ।

व्याख्या—मूच्छित मनु के समीप बैठी हुई इडा सोच रही है कि मैं यह भी नही समझ पाती कि आज मैं यहाँ इस मनु को दड देने के लिए बैठी हूँ अथवा इसके घायल शरीर की रखवाली कर रही हूँ । यह वास्तव में एक बडी कठिन समस्या है और मैं स्वय कितनी उलझन वाली हूँ जो स्वय अपने कार्यों के सम्बन्ध मे कुछ भी निश्चय नही कर पाती ।

एक कल्पना .... वर देगा ।

शब्दार्थ—सुन्दर होगा=अच्छा परिणाम निकलेगा । वर=वरदान ।

व्याख्या—इड़ा सोचती है कि अब मेरे मन में एक मधुर कल्पना उठ रही

है और यह कल्पना यह है कि सम्भवत मेरे यहाँ बैठने से कोई अच्छा परिणाम नहीं निकल सकता है । वस्तुत मेरी यह कल्पना वास्तविकता से अच्छी है और मुझे यह विश्वास है कि मेरी कल्पना को सत्य भी अपना वरदान देगा अर्थात् मेरी यह कल्पना कोरी कल्पना न रहकर एक दिन अवश्य सत्य सिद्ध होगी ।

चौंक उठी ... . . मैं फेरा ।

शब्दार्थ—दूरागत=दूर से आती हुई । निस्तब्ध=सुनसान, नीरव, मूक । निशा=रात्रि । प्रवासी=परदेशी । डाल रही हूँ मैं फेर=मैं चक्कर काट रही हूँ ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मूर्च्छित मनु के समीप बैठी हुई इडा विचार मग्न थी तब वह दूर से आती हुई एक आवाज सुनकर स्वय ही सोचते-सोचते चौंक उठी । इडा ने सुना कि इस सुनसान रात मे कोई स्त्री यह कहते हुए चली आ रही है—'अरे मुझ पर दया कर यह बतला दो कि मेरा परदेशी कहाँ है ? मैं उसी बावले से मिलने के लिए इधर-उधर चक्कर काट रही हूँ ।'

रूठ गया .. .. कह दे रे ।

शब्दार्थ—अपनेपन=अहकार या अभिमान । शूल सदृश=काँटे के समान । साल रही=वेध रही ।

व्याख्या—इडा ने सुना कि कोई नारी उस सुनसान रात मे यह कहती हुई चली आ रही है—'मेरा प्रियतम अपने अभिमान के कारण ही मुझसे नाराज होकर कहीं चला गया पर मैं उसे समझा कर अपना न बना सकी । मैं यह समझती थी कि वह मेरा अपना ही है और मुझ मे तथा उसमे किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है, अत उसे मनाने का प्रश्न ही नही उठता था ? किन्तु आज मैं यह स्वीकार करती हूँ कि मुझसे भूल हो गयी और वही भूल अब काँटे के समान मेरे हृदय को वेध रही है अर्थात् मुझे बहुत अधिक पीडा पहुँचा रही है । इस प्रकार कोई मुझे वह उपाय बता दे कि मैं अब किस प्रकार अपने प्रियतम को प्राप्त कर सकती हूँ ।'

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है ।

इडा उठी .. .. जलती ।

शब्दार्थ—राजपथ=राज मार्ग । करुण वेदना=तीव्र पीडा ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि इडा ने जब किसी नारी की आवाज सुनी तब वह उठकर खडी हो गयी और उसने देखा कि राजमार्ग पर कोई

धुँधली सी छाया चली आ रही है। उस छाया की ध्वनि मे तीव्र पीड़ा है और उसकी पुकार ऐसी जान पडती है मानो यह विरह की आग से जलती हुई किसी विरहिणी की पुकार हो।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार प्रयुक्त हुआ है।

शिथिल शरीर .... कली।

शब्दार्थ—शिथिल शरीर=थकी हुई देह। वसन विशृंखल=अस्त व्यस्त कपडे। कबरी=वेणी, चोटी। छिन्न पत्र=जिसके पत्ते झड या गिर गए हो। मकरन्द=पुष्प रस।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इडा ने राजमार्ग पर आती हुई एक नारी-मूर्त्ति को देखा और उस नारी का शरीर थका हुआ था, उसके वस्त्र या कपडे अस्त-व्यस्त थे और अधीरता के कारण उसकी वेणी खुल गयी थी साथ ही वह नारी उस मुरझाई हुई कली के समान प्रतीत होती थी जिसके पत्ते झड गए हो और जिसका पुष्प रस लुट गया हो।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

नव कोमल .... जकड़े।

शब्दार्थ—नवकोमल अवलम्ब=नवीन और कोमल सहारा, यहाँ पुत्र मानव से अभिप्राय है। वय=अवस्था, उम्र।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि इडा ने जब राजमार्ग पर करुण ध्वनि से किसी की याद करते हुए एक नारी को देखा तब वह उसी ओर देखने लगी और उसने देखा कि उस नारी के साथ किशोर अवस्था का एक मधुर सहारा अर्थात् बालक भी था। वह बालक अपनी माता की उगली पकड़े चुपचाप धैर्य की प्रतिमा के समान चला आ रहा था।

टिप्पणी—यहाँ नव कोमल अवलम्ब मे रूपक एव परिकर अलकार है।

थके हुए थे .... होकर लेटे।

शब्दार्थ—बटोही=पथिक, यात्री।

व्याख्या—कवि का कहना है कि वे दोनो दु:खी पथिक अर्थात् माता और पुत्र लगातार यात्रा करने वाले पथिक के समान थके हुए थे। वे खोए हुए मनु को खोज रहे थे और मनु यहाँ घायल होकर लेटे हुए थे।

टिप्पणी—(१) कवि ने यहाँ यह सकेत करना चाहा है कि वे दोनो माता और पुत्र वास्तव मे श्रद्धा और उसका पुत्र मानव ही थे।

(२) यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

इडा आज .. . . विसराया किसने ?

शब्दार्थ—द्रवित=दयार्द्र, करुणा से पूर्ण। विसराया=भुलाया, त्याग दिया।

व्याख्या—कवि कह रहा है जब इडा ने उन दोनो दुखियो अर्थात् श्रद्धा और मानव को देखा तब उसका हृदय करुणा से पूर्ण हो उठा और वह उनके पास पहुँची तथा यह पूछने लगी कि तुम्हे किसने भुला दिया ?

टिप्पणी—कुछ व्याख्याकार पहली दो पक्ति का यह अर्थ भी करते हैं 'इडा का हृदय सारस्वत नगर के जनसहार तथा मनु की मूर्च्छित अवस्था के बारे मे विचार करने के कारण पहले से ही अत्यधिक कोमल हो रहा था' लेकिन यह अर्थ उचित नहीं प्रतीत होता।

इस रजनी . . ... खोलो तो।

शब्दार्थ—रजनी=रात्रि। व्यथा गाँठ निज खोलो=अपने हार्दिक दु ख को बतलाओ।

व्याख्या—कवि कहता है कि इडा ने श्रद्धा के पास जाकर कहा कि 'तुम मुझे यह बतलाओ कि इस रात मे भटकती हुई तुम कहाँ जाओगी ? आज मैं भी बहुत व्याकुल हूँ अत तुम मेरे पास बैठकर अपने हार्दिक दु ख का वर्णन मेरे समक्ष करो।

टिप्पणी—यहाँ 'व्यथा की गाँठ निज खोलो' मे रूपक अलकार है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्री मैथिली शरण गुप्त के 'साकेत' मे भी वियोगिनी उर्मिला अपनी सखी से कहती है—

प्रोषित पतिकाएँ हो जितनी भी सखि, उन्हें निमंत्रण दे आ।
समदु खिनी मिले तो दु ख बँटे, जा, प्रणय पुरस्सर ले आ॥

जीवन की .... दुख की रातें।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इडा ने श्रद्धा से कहा कि जीवन की लम्बी यात्रा मे खोए हुए भी मिल जाते हैं और यदि जीवन बना हुआ है तो कभी न कभी मिलन भी हो ही जायगा और दु ख की रातें भी व्यतीत हो जायँगी।

टिप्पणी—इडा के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा को धैर्य रखना चाहिए और उसका प्रिय उससे अवश्य भेंट करेगा।

तुलनात्मक दृष्टि—गोस्वामी तुलसीदास ने भी 'रामचरित मानस' में लिखा है—

जा पर जाकर सत्य सनेहू । सो तेहि मिलहि न कछु सदेहू ।।

श्रद्धा रुकी ... . प्रज्वलित रही ।

शब्दार्थ—श्रान्त=थका हुआ । वन्हि शिखा=आग की लपट । प्रज्वलित रही=जल रही थी ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि इडा की सहानुभूतिपूर्ण बातें सुनकर और यह जानकर कि कुमार बहुत थक गया है तथा यहाँ विश्राम मिल रहा है वह वहीं रुक गयी । इस प्रकार वह इडा के साथ वहाँ पहुँची जहाँ आग की लपटें जल रही थी ।

सहसा धधकी .... नीर बहा ।

शब्दार्थ—सहसा=अचानक, एकाएक । धधकी=तीव्र हो उठी । वेदी ज्वाला=यज्ञ कुण्ड की आग । आलोकित=प्रकाशित । कामायनी=श्रद्धा । डग भरती=तेजी से, तीव्र गति से । नीर बहा=आँसू बहने लगे ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब इडा के साथ श्रद्धा यज्ञकुण्ड के समीप पहुँची तब अचानक ही यज्ञ कुण्ड की आग अत्यन्त तीव्र होकर जलने लगी और उससे सम्पूर्ण मण्डप को प्रकाशित कर दिया अर्थात् सम्पूर्ण मण्डप मे प्रकाश फैल गया । साथ ही इस प्रकाश मे श्रद्धा ने जो कुछ देखा, उसे देख कर वह तेजी से कदम बढाती हुई उस ओर बढ़ी ।

कवि का कहना है कि श्रद्धा ने वहाँ सचमुच घायल मनु को देखा और वह सोचने लगी कि मेरा सपना सच हुआ । इसके पश्चात् उसने मनु को सम्बोधित कर कहा कि 'हाय प्राणप्रिय ! तुम्हे यह क्या हुआ है ? तुम्हारी यह दशा कैसे हुई ? और इतना कहते ही श्रद्धा का हृदय द्रवित हो गया तथा नेत्रो से आँसू बनकर बहने लगा ।

टिप्पणी—यहाँ विरोधाभास, रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

इडा चकित ... ... रह जाती ?

शब्दार्थ—चकित=आश्चर्य या अचरज होना । अनुलेपन=घाव पर लगाने का लेप ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा की बातें सुनकर इडा को आश्चर्य हुआ और स्वय श्रद्धा मनु के समीप बैठकर उनका शरीर सहलाने लगी तथा

श्रद्धा का वह मधुर स्पर्श मनु के लिए घाव पर लगाने वाला लेप सिद्ध हुआ। इस प्रकार उनके पीड़ित शरीर मे भला पीड़ा अधिक समय तक कहाँ ठहर सकती थी अर्थात् श्रद्धा के मधुर स्पर्श से मनु की पीड़ा दूर होगयी।

टिप्पणी—यहाँ 'अनुलेपन सा' मे उपमा और 'व्यथा भला क्यो रह जाती' मे काकु वक्रोक्ति अलकार है।

उस मूर्छित ... ... आकर छाये।

शब्दार्थ—स्पन्दन=गति, कम्पन। चारबिन्दु=आँसू की चार बूँदें।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा का मधुर स्पर्श पाकर मनु का मूर्च्छित शरीर, जो अभी तक चुपचाप पड़ा हुआ था, अब धीरे-धीरे गतिशील होने लगा और मनु की मूर्च्छा दूर हो गयी तथा उन्होने आँखें खोल दी। आँखें खोलते ही उन्होने अपने सामने श्रद्धा को देखा और उनके दोनो नेत्रो के चारो कोनो में आँसू की बूदें झलकने लगी।

टिप्पणी—यहाँ प्रारम्भिक दो पंक्तियो मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

उधर कुमार .... .. लगते जी को।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उधर कुमार मानव आश्चर्य चकित हो ऊँचे-ऊँचे भवन, मण्डप और बेदी को देख कर सोच रहा था कि ये सब नवीन आकर्षक वस्तुएँ क्या हैं तथा ये मन को कितनी अच्छी लग रही हैं।

टिप्पणी—हिमालय की एकान्त गुफा मे रहने वाले श्रद्धा के पुत्र मानव का सारस्वत प्रदेश के राजसी वैभव को देखकर आश्चर्य चकित होना स्वाभाविक ही कहा जाएगा।

माँ ने कहा .... खड़े हुए।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मानव सारस्वत प्रदेश के वैभव को देख, आश्चर्यचकित हो रहा था तब श्रद्धा ने उसे पुकार कहा कि 'अरे बेटा; तू भी यहाँ आकर अपने पिता को इस प्रकार पड़े हुए देख ले।' माँ की यह बात सुनकर कुमार मानव ने चकित होकर कहा—'पिताजी हैं ? लो मैं आ गया।' और यह कहते हुए उसका शरीर रोमाञ्चित हो गया।

टिप्पणी—रोएँ खड़े होने से कवि का अभिप्राय यह है कि भय और स्नेह की मिश्रित भावनाओ के कारण श्रद्धा के पुत्र मानव का सम्पूर्ण शरीर रोमांचित हो गया।

मां जल दे .. .. रही कहां।

शब्दार्थ—मुखर हो गया=ध्वनियों से पूर्ण हो गया।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि कुमार मानव ने श्रद्धा से कहा—हे माँ, तू यहाँ बैठी-बैठी क्या कर रही है? पिताजी प्यासे होंगे अत. इन्हे कुछ जल पीने के लिए दे।' कुमार की यह स्नेहपूर्ण आवाज उस सूने मण्डप में गूँज गयी और वहाँ पुन सजीवता छा गयी।

टिप्पणी—यहाँ 'मुखर हो गया सूना मण्डप' में उपादान लक्षणा और मानवीकरण अलकार है।

आत्मीयता ... . सगीत बना।

शब्दार्थ—आत्मीयता=घनिष्ठ अपनापन। घुली=व्याप्त हो गयी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु, श्रद्धा और कुमार के मिलन से वहाँ घनिष्ठ अपनेपन की भावना व्याप्त हो गयी और एक छोटा सा परिवार एकत्र हो गया। साथ ही श्रद्धा ने वहाँ एक मधुर गीत गाया जिसका मधुर सगीत सर्वत्र गूँज उठा।

तुमुल कोलाहल .... वात रे मन!

शब्दार्थ—तुमुल=भयकर, घोर। कोलाहल=गर्जन, शोर। कलह=विरोध, झगडा। हृदय की बात=विश्वास एव स्नेह की वाणी। विकल=व्याकुल, बेचैन। नींद के पल=विश्राम का समय। मलय की वात=मलय पर्वत से आने वाली सुगधित पवन।

व्याख्या—श्रद्धा गा रही है कि जिस ससार मे पारस्परिक झगडो के कारण अत्यधिक कोलाहल छा जाता है उस समय मे शाति देने वाली विश्वास एव स्नेहपूर्ण वाणी का रूप धारण कर पारस्परिक झगडो को दूर करती हूँ। साथ ही जब चेतना नित्य दु खी एव चचल होकर और थकी हुई सी नींद के क्षण खोजती है अर्थात् जब चेतना थककर विश्राम के लिए उत्सुक हो उठती है तब मैं मलय पर्वत से आने वाली सुगधित पवन के समान चलकर उसे अर्थात् चेतना को विश्राम प्रदान करती हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'हृदय की वात' और 'मलय की वात' मे निरग रूपक तथा 'चेतना' मे विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है।

चिर विषाद .... प्रात रे मन!

शब्दार्थ—चिर विषाद विलीन=हमेशा दुख मे डूबा हुआ। व्यथा=

दीवार। सम्पन्न हुए=तैयार हुए, जुटाये गये। श्रम स्वेद=परिश्रम के कारण आने वाला पसीना।

व्याख्या—श्रद्धा ने स्वप्न में देखा कि मनु ने एक सुन्दर नगर बसाया है, जिसमें सम्पूर्ण जनता मनु की सहायक बनी हुई है और इस नगर के चारों ओर मजबूत परकोटे बनाये गये हैं जिसके अन्दर सुन्दर-सुन्दर विशाल भवन बनवाये गये हैं जिनमें कई दरवाजे हैं और वर्षा, धूप तथा जाड़े से बचने के लिए विभिन्न प्रकार की उपयोगी सामग्रियाँ भी एकत्र की गयी हैं। इसी प्रकार उस नगर में किसान हर्षपूर्वक खेतों में हल चला रहे हैं और उनके शरीर से परिश्रम के कारण पसीना निकल रहा है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने मानव सभ्यता का क्रमिक विकास दिखाने के उद्देश्य से पर्वत की गुफा में रहने वाले मनु द्वारा नगर निर्माण एवं खेती आदि की उन्नति का चित्रण किया है।

उधर धातु गलते .... नवीन प्रसाधन ये।

शब्दार्थ—साहसी=शिकारी। मृगया=शिकार। पुष्प लावियाँ=फूल चुनने वाली स्त्रियाँ, मालिनें। अर्धविकच=आधी खिली हुई। लोध्र=लोध नामक वृक्ष। प्रसाधन=शृंगार की सामग्री।

व्याख्या—श्रद्धा स्वप्न में देखती है कि मनु ने एक नगर का निर्माण किया है जिसमें धातुओं को गलाकर आभूषण और नवीन अस्त्र बनाये जा रहे हैं तथा शिकारी नए-नए शिकार की भेंट मनु को उपहार में दे रहे हैं। इसी प्रकार फूल चुनने वाली स्त्रियाँ अर्थात् मालिनें वन-फूलों की आधी खिली हुई कलियों को चुन रही हैं तथा कहीं लोध्र वृक्ष के फूलों के पराग से चूर्ण बनाया जा सकता है।

घन के आघातों .... दिखती निखरी।

शब्दार्थ—घन=हथौड़ा। आघातों=प्रहारों, चोटों। प्रचंड—तेज, तीव्र। मूर्च्छना=संगीत। ढरी=व्यक्त हुई, निकली। मिलित=मिलकर।

व्याख्या—कवि श्रद्धा के स्वप्न का वर्णन करते हुए कहता है कि मनु द्वारा बसाये गये नगर में यदि एक ओर भारी हथौड़ों की चोटों से तीव्र एवं कर्कश ध्वनि निकल रही थी तो दूसरी ओर स्त्रियों के मधुर कंठ से हृदय को आकृष्ट कर देने वाली संगीत की मधुर तान भी निकल रही थी। सभी लोग अपने-अपने वर्ग बनाकर कठोर परिश्रम कर रहे थे और उनके मिलकर कार्य करने की प्रथा से उस नगर की शोभा निखरती हुई दिखाई दे रही थी।

समान है और जिस प्रकार गर्मी के दिनो मे भी सभी प्राणी लू से झुलस कर व्याकुल हो उठते हैं उसी प्रकार इस ससार मे सभी व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियो और सांसारिक बधनो के नियत्रण मे दबे हुए से जी रहे है। इस प्रकार जिस तरह वसत की रात गर्मी से झुलसे हुए व्यक्तियो को शीतल कर देती है उसी तरह मैं भी सासारिक तापो से दग्ध मानव जीवन को मधुर शीतलता प्रदान करती हूँ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति, विशेषण विपर्यय एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्रद्धा की ऐसी ही प्रशसा तैत्तिरीय ब्राह्मण मे भी की गयी है—

श्रद्धया देवो देवत्वमश्नुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्य देवी।... विश्वस्य भर्त्री जगत. प्रतिष्ठा।... सा नो लोकममृत दधातु।

चिर निराशा .... जलजात रे मन।

शब्दार्थ—चिर=हमेशा, स्थायी। नीरधर=बादल। प्रतिच्छायित=घिरे हुए, आच्छादित। अश्रुसर=आँसुओ का तालाब। मधुप=भ्रमर, भौरे। मुखर=ध्वनियुक्त, गुजार से युक्त। मरन्द=मकरद, फूलो का रस। मुकुलित=खिला हुआ, विकसित। जलजात=कमल।

व्याख्या—श्रद्धा गा रही है कि हे मन! मैं स्थायी निराशा रूपी बादलो से आच्छादित आँसुओ के तालाब मे एक ऐसे सरस कमल के समान हूँ जिस पर भ्रमर गुजार कर रहे है और फूलो के रस अर्थात् मकरद से पूर्ण हैं। साथ ही जिस प्रकार कमल तालाब की सुन्दरता बढ़ाता है उसी प्रकार मैं भी दुःखी व्यक्तियो को प्रेम और आनन्द से पूर्ण कर देती हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'निराशा नीरधर' एव 'अश्रुसर' मे रूपक तथा 'मधुपमुखर' एवं 'सजल जलजात' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

उस स्वर लहरी .... नयन खुले।

शब्दार्थ—स्वरलहरी=सुन्दरगीत। सजीवन=नवीन जीवन या चेतना प्रदान करने वाली शक्ति। प्राची=पूर्व दिशा। मुद्रित=बन्द, मुँदे हुए।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा के उस सुन्दर गीत के समस्त स्वर जीवनदायिनी शक्ति के समान सर्व व्याप्त हो गए और उधर पूर्व दिशा मे

वेदना। तिमिर=अंधकार। ज्योति रेखा=प्रकाश की किरण। कुसुम विकसित प्रात=खिले हुए फूलों से युक्त प्रभात।

व्याख्या—श्रद्धा गा रही है कि हे मन; मैं हमेशा दुःख में डूबे हुए मन के लिए और वेदना के अधंकारपूर्ण वन के लिए उषा की प्रकाश किरण तथा खिले हुए फूलों से युक्त प्रभात के समान हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'व्यथा के तिमिर वन' में रूपक, 'उषा सी' में उपमा और कुसुम विकसित प्रात' में वाचक लुप्तोपमा अलंकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—त्रिपुरा रहस्य के ज्ञान खंड में भी श्रद्धा का वर्णन करते हुए कहा गया है—

> श्रद्धा माता प्रपन्न स वत्सलेव सुने सदा।
> रक्षति प्रौढ़ भीतिम्यः सर्वथा न हि संशयः॥
> श्रद्धा हि जगतां धात्री श्रद्धा सर्वस्य जीवनम्।
> अश्रद्धो मातृ विषये बालो जीवेत् कथं वद॥

जहाँ मरु .... बरसात रे मन।

शब्दार्थ—मरु ज्वाला=रेगिस्तान की गर्मी। कन=पानी या जल की बूंद। जीवन घाटियों=जीवन रूपी पर्वत की घाटियों। सरस=रसमयी जलसहित।

व्याख्या—श्रद्धा गा रही है कि हे मन; जिस प्रकार पर्वत की घाटियों में वर्षा न होने के कारण रेगिस्तान की सी गर्मी फैल जाती है तथा चातकी जल की एक-एक बूंद के लिए दिन रात तरसती है उसी प्रकार जब प्राणियों के जीवन में वेदना की तीव्र ज्वाला भड़क उठती है और वे आनन्द के एक-एक कण के लिए तरस उठते हैं तब मैं उनके जीवन में उसी समय आनन्द की वर्षा करती हूँ जिस तरह पर्वत की घाटियों में वर्षा ऋतु जल बरसाती है। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा सांसारिक तापों से दग्ध जीवन को शीतलता प्रदान करती है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, श्लेष एवं रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

पवन की प्राचीर .... रात रे मन।

शब्दार्थ—प्राचीर=चहारदीवारी, दीवार, परकोटा। कुसुम ऋतु=वसन्त ऋतु।

व्याख्या—श्रद्धा गा रही कि यह जगत गर्मी में झुलसते हुए दिन के

चलोगी, मै तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।' इसके उपरान्त मनु का ध्यान इडा की ओर गया और वे कहने लगे 'अरे तू कौन है! मेरे सामने से दूर हो जा।' इतना कहकर मनु का ध्यान पुन श्रद्धा की ओर गया और उन्होने उससे कहा कि श्रद्धा! तुम मेरे पास आओ जिससे मेरे हृदय का फूल खिल उठे अर्थात् मुझे आनन्द मिले।

टिप्पणी— यहाँ 'हृदय का कुसुम' मे रूपक अलकार है।

श्रद्धा नीरव .... वृथा डरे?

शब्दार्थ—नीरव=चुपचाप। वृथा=बेकार, व्यर्थ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा ने मनु की बातो का कुछ भी उत्तर नही दिया और वह चुपचाप मनु का सिर सहलाती रही तथा उसके नेत्रो मे विश्वास भरा हुआ था। इस प्रकार श्रद्धा उस विश्वास द्वारा मनु से कह रही थी जब तुम मेरे हो तो तुम्हे इस प्रकार के भय से अब व्यर्थ डरने की कोई आवश्यकता नही है?

जल पीकर ... . यहाँ रहने।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा ने मनु को थोडा-सा जल पिलाया और जल पीकर मनु स्वस्थ हुए तथा बहुत धीरे से श्रद्धा से कहने लगे कि 'तुम मुझे यहाँ अब मत रहने दो और मुझे इस वातावरण से कही दूर ले चलो।' मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि इस सारस्वत प्रदेश से उन्हे अब बहुत अधिक घृणा हो गई और यहाँ वे एक क्षण भी नही ठहरना चाहते।

टिप्पणी—यहाँ 'छाया' शब्द मे लक्षणलक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

मुक्त नील .... सह लेंगे।

शब्दार्थ—मुक्त=व्यापक, स्वतन्त्र, खुला हुआ। नील नभ=नीला आकाश। गुहा=पर्वत की गुफा। झेलता=सहता।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि हम दोनो इस स्वतन्त्र नीले आकाश के नीचे या फिर कही किसी गुफा मे अपना निवास-स्थान बनाकर अपना जीवन व्यतीत कर लेंगे।'मनु का कहना है कि मैंने तो जीवन भर कष्ट सहन किये हैं अत. अब यहाँ से कही और जाकर पुन. हमे कष्ट सहने पडें तो हम प्रसन्नता के साथ उन कष्टों को सहन कर लेंगे।

ठहरो कुछ .. .. क्या न हमें ?

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु की बातें सुनकर श्रद्धा ने कहा कि 'अभी कुछ दिन यहीं ठहर जाओ और जब तुम्हारे शरीर की दुर्बलता दूर हो जायगी तथा कुछ बल आ जायगा तब तुम्हें मैं अपने साथ यहाँ से कहीं और ले चलूँगी ? क्या इतने दिनों तक इडा हमे यहाँ और ठहरने नहीं देगी ?'

टिप्पणी—श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि इडा को उन दोनों के यहाँ कुछ दिन और रखने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

इड़ा सकुचित .... वाणी नहीं रुकी।

शब्दार्थ—सकुचित=सकोच मे भरकर, लज्जा युक्त होकर। अविचल= स्थिर, शा त। वाणी नहीं रुकी=बराबर या लगातार बोलते गये।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब श्रद्धा मनु से मधुर वार्तालाप कर रही थी तब इडा लज्जित होकर एक किनारे खडी हुई थी। वह श्रद्धा के इस अधिकार को, कि कुछ दिन राजभवन मे रहकर मनु के स्वस्थ होने पर वह उन्हे कही दूर ले जायेगी, न छीन सकी। यद्यपि श्रद्धा शान्त बैठी थी परन्तु मनु चुप न रह न सके और वे लगातार बोलते गये।

जब जीवन ... . बोध भरा।

शब्दार्थ—साध=कामना, इच्छा, लालसा। उच्छृखल=अबाध, स्वच्छद। अनुरोध=आग्रह। अपने पन का बोध=अपनत्व या निजत्व का ज्ञान, अहम् का होना।

व्याख्या—मनु अपने विगत जीवन की घटनाओ का स्मरण करते हुए कह रहे है कि एक समय वह था जब मेरा जीवन इच्छाओ से पूर्ण था और हृदय मे अबाध आग्रह था अर्थात् मैं युवतियों से निरन्तर प्रणयानुरोध किया करता था। साथ ही मेरे हृदय मे अनेक इच्छाएँ लहराया करती थी और मुझे अपने आप पर अभिमान भी था।

टिप्पणी—इस पद मे मनु के यौवन की अत्यन्त सजीव एव मार्मिक झाँकी अंकित हुई है।

मैं था .. .. माया थी।

शब्दार्थ—सुन्दर कुसुमों=सुकुमार फूलो, मनोहर भावनाओ। सघन= गहरी। उल्लासों की=उमगों की, हर्ष या आनन्द की।

व्याख्या—मनु अपने युवा जीवन की ओर सकेत करते हुए कह रहे हैं कि

उस समय मैं अपने को ही सब कुछ समझता था और फूलों की गहरी तथा सुनहली छाया के समान मनोहर भाव मेरे मस्तिष्क मे विद्यमान रहते थे। साथ ही मलय पर्वत से आने वाली शीतल एव सुगधित पवन के समान मधुर भावनाओ की लहरे लगातार मेरे हृदय मे उठती रहती थी और मेरे चारों ओर आनन्दमय सजीव वातावरण छाया रहता था।

टिप्पणी—कुसुमों की छाया और मलयानिल की लहर मे प्रतीकात्मकता, उपचार वक्रता एव लक्षणलक्षणा के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति अलंकार भी है और उल्लासो की माया मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

उषा अरुण .... आँखें मीचे।

शब्दार्थ—अरुण=लाल। सुरभित=सुगधित। अलसाई=आलस्य या मादकता से पूर्ण।

व्याख्या—अपने यौवन की स्मृति करते हुए मनु कह रहे हैं कि उन दिनों उषाकाल मे जो लाल सूर्य उदय होता था वह ऐसा प्रतीत होता था कि मानो उषा लाल मदिरा का प्याला भर लायी हो। साथ ही उस प्याले की मदिरा को मेरा यौवन सुगधित फूलों के किसी झुरमुट मे बैठकर मादकता से पूर्ण नेत्रों को बन्द करके पीता था। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि प्रकृति भी उन्हे हमेशा मादकता प्रदान करती थी।

टिप्पणी—यहाँ 'अरुण प्याला' मे उपादान लक्षणा के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति अलकार और 'यौवन के पीने' मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

ले मकरन्द .... घुंघराली।

शब्दार्थ—मकरंद=फूलो का रस। शरद प्रात=शरद ऋतु का प्रभात।

व्याख्या—अपनी युवावस्था के सुखद क्षणो की स्मृति करते हुए मनु कह रहे हैं कि उस समय शरद् कालीन प्रभात काल में शेफाली के फूल नवीन फूलों के रस मे पूर्ण होकर धरती पर झड पड़ते थे और मुझे अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता था। साथ ही सध्या के सुन्दर और घुंघराले बाल मेरे जीवन में नवीन सुख का सचार करते थे। कहने का अभिप्राय यह है कि साध्यकालीन अधकार भी मनु के यौवनावस्था में अपूर्व सुख प्रदान करता था और उन्हे ऐसा प्रतीत होता था कि मानो सध्या एक सुन्दरी नायिका हो, जिसकी घुंघराली अलकें ही काले अन्धकार के रूप में छाई हो।

टिप्पणी—यहाँ 'शेफाली के चू पडने में मानवीकरण और 'सन्ध्या की घु घराली अलकें' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

सहसा अधकार ... . लहरी।

शब्दार्थ—अधकार की आँधी=भयकर तूफान, प्रलयकालीन तेज पवन। क्षितिज=धरती और आकाश के मिलन का स्थान विक्षुब्ध=बेचैन, व्याकुल। उद्वेलित=आकुल, चचल। मानस लहरी=मान सरोवर की लहरें, हृदय के भाव।

व्याख्या—मनु अपने यौवन काल की सुखद स्मृतियो का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि जब मेरे जीवन मे सुख का साम्राज्य छाया हुआ था तब अचानक एक दिन क्षितिज से तीव्र गति से अन्धकारमय आँधी उठी और उस भयकर तूफान के कारण सम्पूर्ण ससार काँपने लगा तथा व्याकुल सा हो गया और मेरे हृदय मे भावनाओ की उच्च लहरें उठने लगी तथा मेरा सुखमय जीवन पुन विषाद और अशाति की ओर मुड गया।

टिप्पणी—यहाँ मानस लहरी मे श्लेष एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

व्यथित हृदय ... . जभी।

शब्दार्थ—व्यथित=दु खी। छायापथ=आकाश गगा। मंगलमयी=कल्याण कारिणी। मधुर स्थिति=आनन्ददायक मुस्कराहट या हँसी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि हे देवि। जिस प्रकार नीले आकाश मे आकाश गगा तारो से पूर्ण हो जाती है उसी प्रकार जब मेरा हृदय दु ख से भर गया था तब तुमने मेरे जीवन में प्रवेश कर और अपनी मधुर मुस्कान बिखेर कर मेरा सारा दु ख दूर कर दिया था।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा अलकार है।

दिव्य तुम्हारी .... खिची भली।

शब्दार्थ—दिव्य=महान, अलौकिक सौन्दर्यपूर्ण। अमिट छवि=अनन्त सौन्दर्य कभी न मिटने वाली शोभा। लगी खेलने रंग रली=क्रीडाएँ करने लगी। नवल=नवीन। हेमलेखा=सोने की रेखा। निकष=कसौटी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा को सम्बोधित कर रहे हैं कि तुम्हारे अलौकिक सौन्दर्य से पूर्ण अनन्त सुषमा हमेशा मेरे नेत्रों के समक्ष क्रीडा करती रहती थी और तुम्हारी छवि मेरे हृदय की कसौटी पर नवीन सोने की रेखा के समान

खिच गई अर्थात् श्रद्धा के सौन्दर्य ने मनु के हृदय को भी सुशोभित कर दिया ।

टिप्पणी—यहाँ 'हेम लेखा सी' मे उपमा अलकार है ।

अरुणाचल ... . मृदु महिमा ।

शब्दार्थ—अरुणाचल=पूर्व दिशा मे सूर्य के उदय होने का स्थान जिसे उदयाचल भी कहा जाता है । मुग्ध=मोह लेने वाली, मोहित करने वाली । माधुरी=सरस, मधुरता से भरी हुई । नव प्रतिमा=नई मूर्ति, यहाँ श्रद्धा से अभिप्राय है ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मेरे मन रूपी मन्दिर मे बसी हुई तुम्हारी वह आकर्षक नई मूर्ति मुझे उसी प्रकार मोह लेने वाली और मधुरता से भरी हुई जान पडती थी जिस प्रकार पूर्व दिशा से उदित होने वाली उषा होती है । साथ ही तुमने मुझे प्रेम पूर्वक सौन्दर्य का सूक्ष्म महत्व समझाना आरम्भ किया ।

टिप्पणी—यहाँ 'अरुणाचल मन मन्दिर' मे रूपक एव प्रथम दो पंक्तियो मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

उस दिन तो ... . सहते ।

शब्दार्थ—किसके हित=किसके लिए ।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि जब तुमने मुझे प्रेमपूर्वक सौन्दय का सूक्ष्म महत्व समझाया तभी मैं यह जान सका कि सौन्दर्य क्या है और हमे यह भी ज्ञात हुआ कि मानवप्राणी किसके लिए जीवन मे सुख-दु ख सहन करते हैं।

जीवन कहता .... सम्बल पाले ।

शब्दार्थ—साँस लिए चल=आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करता रह। सम्बल=सहारा, प्रेम का आश्रय या प्रिय पात्र ।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कहते हैं कि जब मैं तुम्हारी छवि पर मुग्ध हो गया था तब मेरा जीवन मेरे यौवन से यही पूछता रहता था कि 'हे मतवाले, तूने इस ससार मे क्या देखा है ? अभी तक तो अपनी मस्ती मे बहा जा रहा था पर क्या तू अब अपना सही माग पहचान सका है ?' उस समय यौवन मेरे जीवन को सही उत्तर देता था कि 'तू अपना विकास करता चल और किसी प्रिय पात्र का सहारा लेकर अर्थात् किसी से प्रेम करके अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करे ।'

टिप्पणी—कवि ने यहाँ जीवन और यौवन के वार्तालाप द्वारा युवा हृदय के रहस्य का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है।

हृदय बन ... ... मकरन्द बनीं।

शब्दार्थ—स्वाती की बूँद=स्वाति नक्षत्र में बरसने वाले जल की बूँद, यहाँ प्रेम रस। मानस शतदल=मन या हृदय रूपी कमल।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि जिस प्रकार सीपी स्वाति नक्षत्र में बरसने वाले जल की बूँद के लिए लालायित रहती है उसी प्रकार मेरा हृदय भी किसी का प्रेम प्राप्त करने के लिए इच्छुक था और तुम अपने प्रेम का उपहार प्रदान कर मुझे उस स्वाति की बूँद के सदृश्य सिद्ध हुई अर्थात् तुम्हारा प्रेम प्राप्त कर मैं धन्य हो गया। साथ ही मेरा मन तुम्हारा प्रेम प्राप्त कर उसी प्रकार आनन्द विभोर होकर झूमने लगा जिस प्रकार भ्रमर मकरंद प्राप्त कर कमल सरोवर में मस्ती से झूमने लगता है।

टिप्पणी—यहाँ 'सीपी सा' में उपमा और 'स्वाति की बूँद' तथा 'तुम उसमें मकरन्द बनीं' में रूपक अलकार है।

तुमने इस . .. ... वह इतनी!

शब्दार्थ—सूखे पतझड़ में=पतझड़ के समान व्यथित एवं नीरस हृदय में। हरियाली=हरा-भरा, प्रसन्नतायुक्त। मादकता=नशा, मस्ती। तृप्ति=तुष्टि, संतोष।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुमने अपना प्रेम प्रदान कर मेरे पतझड़ के समान व्यथित एवं नीरस हृदय को हरियाली रूपी आनन्द से पूर्ण कर दिया और यह आनन्द मेरे लिए मादक सिद्ध हुआ तथा जिस प्रकार नशे से मतवाला व्यक्ति कभी संतोष का अनुभव नहीं करता उसी प्रकार मेरी तृप्ति की भी कोई सीमा नहीं रही। मनु के कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा ने जितना अधिक प्रेम प्रदान किया मैं उसके लिए उतना ही अधिक और लालायित हो उठा तथा श्रद्धा का का अपार प्रेम पाकर भी मेरी प्रेमभावना तृप्त न हुई।

टिप्पणी—यहाँ 'सूखे पतझड़' में लक्षण-लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

विश्व कि जिसमें .. . माया नचती।

शब्दार्थ—दुख की आँधी=आँधी के समान दुख का तीव्र आवेग।

लहरी=लहर। मरण=मृत्यु के समान दु खदायी। बुद्‌बुद्‌ की माया=पानी के बुलबुले के समान आशा निराशा से पूर्ण क्षणिक जीवन।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि तुम्हरा प्रेम प्राप्त होने से पूर्व मुझे संपूर्ण ससार दु ख की आँधियों से व्याकुल दिखाई देता था अर्थात्‌ सारा ससार दु खमय प्रतीत होता था और मैंने न केवल जीवन को मृत्यु समझ लिया था बल्कि यह ससार मुझे पानी के बुलबुले के समान क्षण भगुर जान पडता था।

टिप्पणी—यहाँ 'दु ख की आँधी' और 'पीडा की लहरी' मे रूपक तथा 'जिसमे जीवन मरण बनाया था' मे विरोवाभास अलंकार की योजना हुई है।

वही शान्त उज्जवल .... उठा हरा।

शब्दार्थ—मगल सा=कल्याणकारी। कदम्ब कानन सा=कदम्ब के वन के समान। सृष्टि विभव=ससार का वैभव। हो उठा हरा=प्रसन्नता से पूर्ण हो गया।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धा! तुम्हारे आगमन के पश्चात्‌ मुझे वही अपना नीरस एव दु खी ससार शान्त, पवित्र और कल्याणकारी प्रतीत हुआ तथा मुझे उस पर विश्वास हो गया और जिस प्रकार वर्षा में कदम्ब का वन हरा भरा हो जाता है उसी प्रकार तुम्हारा प्रेम पाकर मेरे लिए सम्पूर्ण ससार सुखमय हो गया।

टिप्पणी—यहाँ 'मगल सा' और 'कदम्ब कानन सा' मे पूर्णोपमा अलकार है।

भगवति! वह .... धुल जाए।

शब्दार्थ—भगवति=देवि श्रद्धा। पावन=पवित्र। मधु धारा=प्रेम का प्रवाह। रम्य=सुन्दर। सौंदर्य्य शैल=सौन्दर्य रूपी पर्वत। धुल जाये=पवित्र एव शुद्ध हो जाय।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि हे देवि, तुम्हारे उस पवित्र प्रेम को देखकर अमृत भी उसे प्राप्त करने के लिए ललचा उठता था अर्थात्‌ तुम्हारे प्रेम के सामने अमृत भी तुच्छ था। साथ ही तुम्हारे प्रेम की धारा सौन्दर्य के सुन्दर पर्वत से निकलती थी और वह जीवन को पूर्णतया शुद्ध एवं पवित्र बना देती थी। कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा न केवल अलौकिक सौन्दर्य से युक्त थी अपितु उसके पवित्र प्रेम मे कलुषित हृदय की सम्पूर्ण कालिमा दूर करने की शक्ति भी भरी हुई थी।

टिप्पणी—इस पद मे 'मधुधारा' एव 'सौन्दर्य-शैल' मे रूपक तथा 'अमृत भी ललचाए' मे व्यतिरेक अलकार है।

सध्या अब .... विकल व्यथा।

शब्दार्थ—अकथ=जो कही न जा सके, जिसका वर्णन न हो सके। श्रम=थकान, थकावट। विकल व्यथा=व्याकुल पीडा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धा, तुम्हारा पवित्र प्रेम प्राप्त कर मेरा जीवन आनन्द और उल्लास से इस प्रकार पूर्ण हो गया कि अधकार से भरी हुई सध्या भी मुझ से ही तारों के रूप मे अपने आनन्द और उल्लास की प्रेरणा लिया करती थी। साथ ही मैं निश्चित होकर इतनी गहरी नीद मे सोता था कि वह निद्रा मेरी सम्पूर्ण थकान और उससे उत्पन्न व्याकुल कर देने वाली वेदना को स्वाभाविक रीति से नष्ट कर देती थी।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव रूपक अलकार योजना हुई है।

सकल कुतूहल .. .. धन्य घडी।

शब्दार्थ—सकल=सभी, समस्त। कुतूहल=जिज्ञासा आश्चर्य। उन चरणो से=श्रद्धा के चरणों से। कुसुम=फूल, कोमल भावनाएँ। धन्य=भाग्यवान।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मेरे जीवन की सभी जिज्ञासाएँ और आशाएँ तुम्हारे ही चरणो में उलझ गयीं थी अर्थात् तुम्हे प्राप्त कर मेरा जीवन निद्वन्द्व हो गया था और उसमें न तो किसी प्रकार का आश्चर्य ही था और न किसी मधुर कल्पना को करने का अवकाश। क्योकि तुमने मेरे जीवन के सभी प्रश्नो को सुलझा दिया तथा मेरी सम्पूर्ण आशाएँ भी पूण कर दी। इस प्रकार वह मेरे जीवन की भाग्यवान घडी थी।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

स्मिति मधुराका ... ... कहाँ मिलता।

शब्दार्थ—स्मिति=मन्द मुस्कान। मधुराका=वसन्त ऋतु की पूर्णिमा। पारिजात=देवताओ के नन्दन वन का एक वृक्ष जो हमेशा विकसित और सुगन्धित रहता है। मरन्द मथर=मकरन्द भार के कारण धीरे-धीरे प्रवाहित होने वाली। मलयज=मलयाचल पर्वत। वेणु=बाँसुरी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मुझे तुम्हारी मन्द मुस्कान ही वसत

ऋतु की पूर्णिमा के रूप में दिखाई देती थी और तुम्हारे सुगन्धित श्वासों से ही पारिजात का जगल विकसित हो उठता था। साथ ही तुम्हारी गति मकरद भार से लदी मलयाचल पवन के समान थी और तुम्हारे मधुर एवं सुरीले कंठ स्वर की समता बाँसुरी के स्वर भी नहीं कर सकते थे।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, प्रतीप, उपमा एवं व्यतिरेक अलंकार की योजना हुई है।

श्वास पवन .... अभिनव-सी।

शब्दार्थ—श्वास पवन=साँस रूपी वायु। दूरागत=दूर से आने वाली। वंशीरव=बाँसुरी की ध्वनि। विश्व कुहर=ससार रूपी गुफा। दिव्य रागिनी=अनुपम या अलौकिक गीत। अभिनव=नवीन।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धा; जिस प्रकार वायु पर चढ़कर दूर से आई हुई बाँसुरी की ध्वनि ससार की गुफाओं मे ध्वनि होती है उसी प्रकार तुम भी मेरे जीवन मे एक नवीन और अलौकिक गीत बनकर गूँज उठी।

टिप्पणी—यहाँ उपमा एवं रूपक अलंकार है।

जीवन जलनिधि .... रोम खड़े।

शब्दार्थ—जलनिधि=सागर। मुक्ता=मोती। जग मंगल=विश्व के लिए कल्याणकारी।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि जीवन रूपी सागर मे जो पवित्र भाव मोतियों के समान छिपे हुए थे वे तुम्हारा संसर्ग पाते ही उभर आए और मेरे हृदय मे प्रेम, ममता एवं सेवा आदि पवित्र भावनाएँ जाग उठीं। साथ ही जब मैं तुम्हारे विश्व के लिए कल्याणकारी संगीत की प्रशसा करता था तब मेरा रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठता था।

टिप्पणी—यहाँ 'जीवन जल निधि' मे रूपक और 'मुक्ता थे वे निकल पड़े' तथा 'जग मगल संगीत तुम्हारा गाते मेरे रोम खड़े' में रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

आशा की .... शशि लेखा घेरे।

शब्दार्थ—आलोक किरण=प्रकाश फैलाने वाली। सूर्य की किरण। मानस=हृदय, मान सरोवर। लघु=छोटा। जलधर=बादल, यहाँ पवित्र प्रेम। सृजन=निर्माण। शशिलेखा=चाँदनी, मधुर मुस्कान।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि जैसे सूर्य की किरण सरोवर से जल लेकर बादल का निर्माण करती है वैसे ही मेरे मन मे भी तुम्हारे प्रेम ने आशा का निर्माण किया था और मेरी आशा को तुम्हारी मधुर मुस्कान उसी तरह घेरे रहती थी जिस तरह बादल को चांदनी घेरे रहती है।

टिप्पणी—यहाँ 'आशा की आलोक किरन' मे रूपक और 'लघु जलधर' तथा 'शशिलेखा' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।'

उस पर बिजली . हुई हरी।

शब्दार्थ - प्रभा भरी=प्रकाश से पूर्ण होकर। जलद=बादल। वन-स्थली=वन प्रदेश।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि जिस प्रकार बिजली बादल मे चमक कर अपनी उज्ज्वल प्रभा प्रकट कर देती है उसी प्रकार तुमने अपने प्रेम मे सात्विक गुणो का प्रकाश भरकर मेरे हृदय को भी सात्विक गुणो से प्रकाशित कर दिया था। साथ ही जिस तरह बादल रिमझिम बरसकर ग्रीष्मकाल में सूखे हुए वन प्रदेश को हरा-भरा कर देते हैं उसी तरह तुम्हारे पवित्र प्रेम की सरस वर्षा के द्वारा मेरा नीरस मन भी हरा भरा हो गया था अर्थात् तुम्हारे पुनीत प्रेम के कारण ही मेरे निराश जीवन मे पुन आनन्द का सचार हुआ था।

टिप्पणी—यहाँ 'बिजली की माला सी' में पूर्णोपमा, मनवनस्थली में रूपक और 'जलद' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

तुमने हंस हंस .. ... मेल चलो।

शब्दार्थ—खेल है=हँसते हुए सामना करने की बात है। मेल=मित्रता।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुमने हँस-हँस कर मुझे यह सिखाया कि ससार तो एक खेल के समान है और प्रत्येक अवस्था मे समान भाव से इसमे अनुरक्त रहना चाहिए। साथ ही तुमने मुझे यह प्रेरणा भी दी कि इस ससार मे सबके साथ प्रेम-पूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे श्रद्धा द्वारा मनु को दी गयी उन सभी शिक्षाओं की ओर सकेत किया गया है जिनका उल्लेख विस्तारपूर्वक कामायनी के श्रद्धा सर्ग मे हुआ है।

यह भी अपने .... दान दिया।

शब्दार्थ—विभ्रम=हाव-भाव। सकेत=इशारा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुमने अपने बिजली के समान उज्ज्वल हाव-भावो से मुझे यह संकेत भी किया था कि व्यक्ति के मन पर सदैव अपना अधिकार रहता है और जब भी जिसे अपना मन प्रदान करने की इच्छा हो तो वह दिया जा सकता है।

टिप्पणी—यहाँ 'बिजली के से विभ्रम' मे उपमा अलकारहै।

तुम अजस्र .... संतोष बनीं।

शब्दार्थ—अजस्र=निरतर, लगातार। सुहाग=सौभाग्य। स्नेह=प्रेम। मधु रजनी=बसत की रात। अतृप्ति=असतोष।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि तुम सौभाग्य की निरन्तर होने वाली वर्षा के समान हो अर्थात् जब तुमने मेरे जीवन मे प्रवेश किया तब मेरा जीवन सुखमय हो गया और जब तक तुम्हारा साथ रहा मैं सुखी रहा। इस प्रकार तुम वसन्त की सुखमय रात्रि के समय आनन्द देने वाली हो और यदि मेरा जीवन सदैव से एक प्रकार की सनातन प्यास थी तो तुम उसमे सतोष बन गयी तथा तुमने मेरी सभी आशाओ को सतुष्ट कर दिया।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

कितना है .... हृदय हुआ।

शब्दार्थ—आश्रित=आधीन। प्रणय=प्रेम। आभारी=कृतज्ञ, अनुगृहीत।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुमने मुझ पर अनन्त उपकार किया है और मेरा प्रेम भी तुम्हारे आश्रित है अर्थात् तुमने मेरे प्रेम को स्वीकार किया है। इस प्रकार मैं तुम्हारा बहुत अधिक कृतज्ञ हूँ और तुम्हारे सयोग से ही मेरा हृदय इतना अधिक सहानुभूतिपूर्ण हुआ अर्थात् तुमने मेरे जीवन मे प्रवेश कर सहृदयता का सचार किया।

टिप्पणी—यहाँ 'आश्रित मेरा प्रणय हुआ' मे विशेषण विपर्यय अलकार है।

किन्तु अधम .... छाया को।

शब्दार्थ—अधम=नीच, पापी। मगल की माया = कल्याणकारी नारी।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे श्रद्धा, मैं इतना अधिक पापी हूँ कि तुम्हारे कल्याणकारी स्वरूप को ठीक से समझ न सका और आज भी तुम्हारे उस स्वरूप को न समझकर अज्ञान के कारण हर्ष शोक की भावनाओ मे जकड़ा हुआ हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'मगध की माया' और 'हर्ष शोक की छाया' में रूपक अलंकार है।

मेरा सब .... न हुआ।

शब्दार्थ—उपादान सत्व=वह पदार्थ जिससे कोई वस्तु बने। कठिन=निर्मित। किरण=ज्ञान का प्रकाश।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि मेरा तो सम्पूर्ण जीवन ही शोक और मोह के तत्वों से बना हुआ है तथा मुझे आज यह स्पष्ट अनुभव हो रहा है कि मैं अभी तक अज्ञान के अन्धकार में फँसा हुआ हूँ और मेरे हृदय को अभी तक ज्ञान के प्रकाश ने स्पर्श नहीं किया है।

टिप्पणी—यहाँ 'शोक मोह के उपादान' में निरंग रूपक अलंकार है और 'किरणों' में उपादान लक्षणा के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति अलंकार है तथा 'अधम' में [illegible] अलंकार है।

शापित सा . ... भटकता हूँ।

शब्दार्थ—शापित-सा=शापग्रस्त व्यक्ति के समान। कंकाल=हड्डियों का ढाँचा, निस्सार जीवन। खोखलेपन=शून्यता एवं अन्धकार से पूर्ण संसार।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि मैं एक शापग्रस्त व्यक्ति के समान अपने इस निस्सार जीवन को लिए इधर उधर भटक रहा हूँ और ऐसा जान पड़ता है कि मानो उसी खोखलेपन में कुछ ढूँढने का प्रयास करता हूँ लेकिन उसी में उलझ जाता हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'शापित सा' में पूर्णोपमा एवं 'कंकाल' में रूपकातिशयोक्ति अलंकार की योजना हुई है।

अधतमस है ... . . . खींच रहा।

शब्दार्थ—अधतमस=गहरा अन्धकार, घोर निराशा। झुंझलाता=क्रोध प्रकट करता हुआ। खींच रहा=[illegible] दिखा रहा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि यद्यपि मेरे जीवन में निराशा का गहरा अंधकार छाया हुआ है पर प्रकृति का आकर्षण मुझे अपनी ओर खींचता सा प्रतीत होता है और मैं अपनी इस दशा में सभी व्यक्तियों पर तथा स्वयं अपने पर भी झुंझलाकर रह जाता हूँ।

टिप्पणी—'अधतमस' में उपादान लक्षणा के साथ-साथ रूपक अलंकार है।

नहीं पा .. .. बास रहा।

शब्दार्थ—क्षुद्र पात्र=छोटा बर्तन, यहाँ तुच्छ व्यक्ति। [illegible]
या अमृत की धारा।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कहते हैं कि तुम मुझे जो कुछ प्रदान करना चाहती थी वह मैं आज तक नहीं प्राप्त कर सका और जिस प्रकार छोटे से बर्तन में कोई अमृत की धार उडेल कर उसमें अधिक अमृत भरना चाहे पर उस बर्तन में अधिक अमृत न ठहर पाता हो उसी प्रकार मैं भी अत्यन्त तुच्छ व्यक्ति हूँ और तुम एक मुझ पर जो दिव्य प्रेम की अमृतमयी धार डाल रही हो, उसे स्वीकार करने में तनिक भी योग्य नहीं हूँ।

सब बाहर . . . . न सका।

शब्दार्थ—स्वगत=अपने अंतर्गत हृदय में स्थान देना। बुद्धि तर्क के छिद्र=बुद्धि द्वारा दी गयी दलीलों से छिद्र हो जाना।

व्याख्या—श्रद्धा को सम्बोधित कर मनु कह रहे हैं कि तुम मुझे अपना प्रेम प्रदान करना चाहती थी परन्तु मैं अत्यन्त तुच्छ व्यक्ति होने के कारण तुम्हारे प्रेम को अपने हृदय रूपी पात्र में सर्वदा के लिए स्थान न दे सका क्योंकि उसमें बुद्धि द्वारा दी गयी दलीलों से अनेक छिद्र हो गये थे और वह समस्त प्रेम बाहर निकल जाता था।

टिप्पणी—इन पंक्तियों का यह अभिप्राय भी ग्रहण किया जा सकता है है कि श्रद्धा मनु को सद्ज्ञान प्रदान करना चाहती थी परन्तु मनु उसे अपने हृदय में स्थान न दे सके क्योंकि बुद्धि की दलीलों के कारण अनेक छिद्र हो जाने के कारण वह सारा ज्ञान बाहर निकल जाता था।

तुलनात्मक दृष्टि—इन पंक्तियों में कठोपनिषद् की इस उक्ति का प्रभाव स्पष्ट है—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।

अर्थात् आत्मा का ज्ञान तर्क द्वारा या बुद्धि के द्वारा अथवा अनेक शास्त्रों का श्रवण करने से नहीं हो सकता।

यह कुमार मेरे .... .. जहाँ ढला।

शब्दार्थ—उच्च अंश=उत्तम भाग। कल्याण कला=संसार का कल्याण करने वाली कला अर्थात् श्रद्धा।

व्याख्या—मनु का कहना है कि हे संसार का कल्याण करने वाली श्रद्धा; यह कुमार मेरे जीवन का उत्तम भाग है और यह मेरे लिए कितने प्रलोभन की वस्तु है क्योंकि हम दोनों के हृदय के सम्पूर्ण प्रेम ने ही इस कुमार के रूप में ढलकर साकार मूर्ति धारण की है। कहने का अभिप्राय यह है कि कुमार हम दोनों के स्नेह का प्रतीक है।

टिप्पणी—यहाँ 'उच्च अश' एव 'कल्याण कला' मे रूपक अलकार है।

सुखी रहें . . आंधी को।

शब्दार्थ—आंधी=विचारों का तीव्र आवेग।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मेरी यही अभिलाषा है कि अपना यह पुत्र मानव हमेशा सुखी रहे और इसके साथ-साथ तुम सब लोग भी सुखपूर्वक रहो। मैं अपराधी हूँ। अत तुम सब मुझे अकेला छोड दो। कवि का कहना है कि श्रद्धा चुपचाप बठी हुई मनु के हृदय मे उठते हुए विचारो के आवेग को देख रही थी।

टिप्पणी—यहाँ 'आंधी' शब्द में लक्षण लक्षणा एव रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

दिन बीता उमग लिये।

शब्दार्थ—रजनी=रात, रात्रि। तन्द्रा=आलस्य। उमग=उत्साह।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि बातो ही बातों मे दिन बीत गया और आलस्य तथा नींद को साथ लिए रात आ गई अत उसने सभी को आलस्य और नींद के लिए प्रेरित किया। यद्यपि इडा के मन में बहुत कुछ कहने का उत्साह था पर वह अपनी भावनाओं को छिपाये हुए कुमार के समीप लेटी थी।

श्रद्धा भी . . अभिशाप पिये।

शब्दार्थ—खिन्न=उदास। उपधान=तकिया। अभिशाप=अमगल, सकट।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा भी कुछ उदास और थकी हुई सी थी तथा वह मन ही मन कुछ सोचती हुई अपने हाथो को तकिया बनाए हुए लेटी थी और मनु अपने साथ घटित सकटो को चुपचाप सहन कर, कुछ सोचने लगे।

सोचते रहे .. .... न रूखेली है।

शब्दार्थ—विकट=जटिल। पहेली=समस्या। इन्द्रजाल=जगत का प्रपच, सासारिक उलझनें।

व्याख्या—मनु सोच रहे थे—'क्या इस जीवन मे सुख है? नहीं, नहीं यह तो एक विपद समस्या है। अरे मनु! तूने अब तक कितना दुख सहन किया है और अब क्यो यहाँ पडा हुआ है? इस अनेक प्रकार की उलझनो और आपत्तियो से पूर्ण ससार से कहीं दूर भाग जाना चाहिए।

यह प्रभात - . कलुषित काया।

शब्दार्थ—स्वर्ण किरण=सुनहली किरण। कलुषित काया=दूषित शरीर, अपराधी तन।

व्याख्या—मनु पडे-पडे सोच रहे थे कि श्रद्धा प्रभात की सुनहली किरण के समान उज्ज्वल और पवित्र है अत. उस श्रद्धा को मैं यह अपना मुख या दूषित शरीर कैसे दिखा पाऊँगा।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा अलकार है।

और शत्रु .... चुपचाप मरूँ।

शब्दार्थ—कृतघ्न=उपकार न मानने वाले। प्रतिहिंसा=बदला लेने के लिए की गयी हिंसा। प्रतिशोध=वैर।

व्याख्या—मनु पडे-पडे सोच रहे थे कि श्रद्धा और कुमार के अतिरिक्त इस सारस्वत नगर के सभी व्यक्ति मेरे शत्रु हैं और इन्होने मेरे उपकार भी भुला दिए हैं अत इनका विश्वास करना उचित नही है। इनके प्रति मेरे मन मे जो प्रतिहिंसा और प्रतिशोध की भावना है क्या उसे मन ही मन दबाकर मुझे मरना होगा।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे मनु के आंतरिक सघर्ष का सुन्दर निरूपण हुआ है।

श्रद्धा के रहते .... खोजते जाऊँगा।

व्याख्या—मनु पड-पडे सोच रहे थे कि श्रद्धा के रहते हुए यह समव नहीं है कि मैं अपने विरोधियो से बदला ले सकूँ अत अब मुझे जहाँ भी शान्ति प्राप्त होगी, वहीं उसे खोजता हुआ चला जाऊगा।

जगे सभी .... उलझ रही।

शब्दार्थ—शांत=चुपचाप, मौन। अपराधी=दोषी। उलझ रही=विचारो मे लीन थी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि रात्रि बीत गयी और नवीन प्रभात का प्रकाश चारो ओर फैल गया तथा सभी की नीद खुल गयी परन्तु उन्होने देखा कि मनु वहाँ नही है। पिता को वहाँ न देखकर कुमार बडा अशान्त हुआ और वह 'पिता कहाँ है' कह कर मनु को खोजने लगा।

कवि कह रहा है कि इडा आज अपने को सबसे अधिक अपराधी समझ रही थी और श्रद्धा चुपचाप बैठी हुई अपने विचारो मे लीन थी।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे अनुपम रमणीयता एवं गत्यात्मकता है।

तेरहवाँ सर्ग

दर्शन

कथानक—सारस्वत नगर से मनु के चुपचाप भाग जाने पर श्रद्धा और कुमार मानव कई दिनो तक इडा के राजभवन मे ही रहे पर श्रद्धा का मन हमेशा दु खी रहता था। एक दिन अमावस्या की सध्या के समय श्रद्धा अचानक राजभवन से दूर निकलकर सरस्वती नदी के किनारे आकर बैठ गई और सोचने लगी कि 'आखिर ऐसी क्या बात हो गई, जो मनु मुझे छोडकर अकेले कहीं चले गये ? अब उन्हें कहाँ खोजा जाय और कैसे उनका पता चलेगा ? वह इन्ही विचारो में लीन थी कि अचानक कुमार उसके पास आया और कहने लगा—'माँ ! तू इतनी दूर कहाँ आ गई ? देख, सध्या व्यतीत हो गई और चारो ओर घना अन्धकार छा गया। तुम यहाँ अकेली और उदास क्यो बैठी हो ? चलो, अब घर चलें।' पुत्र की स्नेह भरी बातों से श्रद्धा की विचार शृखला टूट गयी और उसने कुमार का मुख चूमते हुए कहा 'बेटा ! जिसे तुम अपना घर समझते हो, वह मेरा घर नहीं है। मेरा घर तो इस चहारदीवारी से घिरे हुए घर की अपेक्षा बहुत व्यापक और विशाल है तथा उसकी छत नीला आकाश है और मेघ उसकी परिक्रमा करते हैं। तथा तारे वहाँ झिलमिलाते रहते हैं और उसके द्वार हमेशा सबके लिए खुले रहते हैं।'

जब श्रद्धा यह कह रही थी तब किसी ने पीछे से आकर पूछा—'माँ ! जब तुम इतनी उदार हो तब मुझसे विरक्त क्यो हो ? तुमने मुझे अपने प्रेम का दान क्यो नही दिया ?' श्रद्धा ने पीछे देखा तो उसे इडा दिखाई दी। वह अत्यन्त मलिन एव कातिहीन दिखाई दे रही थी। श्रद्धा ने उसे सात्वना देते हुए कहा—'मैं तुमसे क्यों विरक्त हो सकती हूँ ? तुम प्रत्येक प्राणी को आश्रय देने वाली हो। तुमने मुझसे बिछुडे हुए मनु को भी आश्रय दिया ? मैं तुम्हारे उपकारो का बदला नही चुका सकती। मेरे पति ने यहाँ आश्रय पाकर भी अपराध किया है अत इसके लिए मैं तुमसे क्षमा याचना करती हूँ और मुझे

विश्वास है कि तुम मनु को क्षमा कर दोगी।' यह सुनकर इडा ने कहा—आप यह क्या कह रही हैं ? यहाँ कौन ऐसा है जो अपराधी नहीं है ? आज मेरे इस राज्य मे सघर्ष बढ चला है और श्रम के आधार पर जो वर्ग विभाजन किया गया था उनमे से प्रत्येक वर्ग मे अहकार भर गया है। प्रजा नियमो की चिन्ता नही करती और वह निरतर विनाश की ओर अग्रसर है। मेरी सम्पूर्ण शासन व्यवस्था ही छिन्न भिन्न हो गयी। इस प्रकार हे देवि ! तुम मुझे क्षमा कर मुझ कोई ऐसा मार्ग सुझाओ जिससे मेरी सोई हुई चेतना फिर जाग्रत हो उठे।

इडा की व्यथापूर्ण कहानी सुनकर श्रद्धा कहने लगी—'तुम्हारे राज्य पर अभी तक दैवी प्रकोप है। तुम्हारी शासन-व्यवस्था के छिन्न-भिन्न होने का कारण यह है कि तुमने कभी किसी के हृदय पर अधिकार पाने का प्रयत्न नहीं किया और हमेशा दूसरो के सिर पर चढ़ी रही। इसीलिए प्रजा मे विरोध की भावना व्यापक होती चली गयी। इसमे कोई सन्देह नहीं कि तुम्हारे पास तर्क और बुद्धि तो पर्याप्त है पर हृदय का अभाव है। यही कारण है कि तुम नारीत्व की कोमलता छोडकर सुख दुःख के मिथ्या आडम्बर मे फँस गयी पर तुम्हें सम्पूर्ण सृष्टि को एक ही चेतना का अश समझकर सबके साथ समान व्यवहार करना चाहिए। मैं तुम्हे क्षमा के अतिरिक्त अपनी यह अमूल्य निधि, अपना पुत्र तुम्हे सौंप रही हूँ। तुम तर्कमयी हो और यह श्रद्धामय है। इस प्रकार तुम दोनो मिलकर उचित रूप से राज्य का सचालन करना और शासक बनकर प्रजा मे कभी भय मत फैलाना। मैं अकेली मनु को खोजने जा रही हूँ और मुझे विश्वास है कि वे कहीं न कहीं मुझे मिल जायेंगे।

श्रद्धा की बातें सुनकर इडा ने कहा—'मैं तुम्हारे मधुर वचनो को सदैव स्मरण रखूँगी। 'तुम्हारा यह पवित्र प्रेम ही हमारे श्रेय का स्रोत बने और ससार मे सर्वत्र प्रेम का सचार करे जिससे कि सभी दुःख दूर हो जाँय।' यह कह कर इडा ने श्रद्धा के चरणो की धूल ली और कुमार का हाथ पकड लिया। तथा तीनो कुछ क्षणो तक शान्त रहे। इसके पश्चात् इडा और कुमार नगर की ओर लौट आए तथा श्रद्धा आगे बढ़ गयी। वह सरस्वती नदी के किनारे-किनारे चलती हुई एक ऐसे नीरव स्थान पर पहुँची जहाँ एक शिला पर बैठे हुए मनु तपस्या कर रहे थे। उसने मनु को पहचान लिया और वह मनु के पास पहुँच गयी। श्रद्धा को देखते ही उन्होने उसकी प्रशसा करते हुए कहा—

'तुम एक महान् देवी हो। मैं तुम जैसी महान् नारी को पाने के बाद पुन तुम्हें छोडकर भाग आया था लेकिन तुमने मुझ पुन ढूंढ लिया। लेकिन क्या इडा ने तुम्हारे साथ छल कर तुम्हारा पुत्र छीन लिया है? श्रद्धा ने उत्तर दिया कि मैं स्वय ही कुमार को इडा के पास छोड आई हूँ। वह तुम्हारे अपूर्ण कार्य को पूर्ण करेगा और तुम्हारा यश सर्वत्र फैलायेगा।

श्रद्धा की इस उदारता एव पवित्र प्रेम से पूर्ण बातो को सुनकर मनु के हृदय मे श्रद्धा के प्रति सच्चा अनुराग उत्पन्न हुआ और उन्हें कैलाश पर्वत पर भगवान शिव नृत्य करते दिखाई दिये। सम्पूर्ण वातावरण एक अलौकिक एव दिव्य प्रकाश से आलोकित हो उठा और उस दृश्य को देखकर मनु श्रद्धा से कहने लगे—'श्रद्धे! बस, अब तुम मुझे भगवान शिव के उन पवित्र चरणो तक ले चलो जिससे मेरे समस्त पाप और पुण्य उनकी तीव्र ज्वाला मे जलकर पवित्र बन जायें तथा सम्पूर्ण असत्य ज्ञान नष्ट हो जाय और मैं समरसता मे लीन होकर अखण्ड आनन्द को प्राप्त कर सकूँ।'

वह चन्द्रहीन .... निजी बात।

शब्दार्थ—चन्द्रहीन रात=अमावस्या की अन्धकारमयी रात्रि। स्वच्छ प्रात=प्रकाशपूर्ण सवेरा। तारक=तारे। झलमल=टिमटिमाते हुए। प्रतिबिम्बित=परछाई पड रही थी। वक्षस्थल=हृदय। बिम्ब=आकार। अटल=स्थिर। पवन पटल=पवन का पर्दा, वायु के झोके। द्रुमपात=वृक्षो की कतारें। निजी बात=अपने सम्बन्ध मे कही गयी बात।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जिस रात श्रद्धा सरस्वती नदी के किनारे आकर बैठ गयी थी वह अमावस्या की अन्धकारमयी रात थी और चन्द्रमा का प्रकाश कही भी नही दिखाई देता था। उस समय ऐसा प्रतीत होता था मानो प्रकाश देने वाला उज्ज्वल प्रभात भी रात्रि की गोद मे मुँह छिपाकर सो रहा हो। इतना अवश्य है कि नदी के वक्षस्थल अर्थात् पानी मे तारो के प्रतिबिम्ब टिमटिमाते से दिखाई दे रहे थे और नदी की धारा वह रही थी परन्तु झिलमिलाते हुए तारो का आकार अटल था। साथ ही वायु धीरे-धीरे चल रही थी और ऐसा जान पडता था कि मानो कोई पर्दा धीरे धीरे खुल रहा हो। इसी प्रकार नदी के तट पर वृक्षों की कतारें मौन खडी थी और उन्हे देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो वे कोई गुप्त बातें सुन रही हो।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियो मे नीरवता एव निर्जनता की अत्यन्त सजीव

प्रातःकाल हुआ तथा इधर मूर्च्छित मनु के बन्द नेत्र खुल गये अर्थात् उन्हें चेतना आ गयी ।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने संगीत के मधुर प्रभाव का उल्लेख करते हुए संगीत में संजीवनी शक्ति का होना स्वीकार किया है ।

श्रद्धा का .... अनुराग भरे ।

शब्दार्थ—अवलम्ब=सहारा । कृतज्ञता=आभार, एहसान, उपकार । अनुराग=प्रेम ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मनु को एक बार फिर श्रद्धा का सहारा मिला और वे श्रद्धा के प्रति आभार से भरा हुआ हृदय लेकर उठ बैठे तथा गद्गद् होकर प्रेममय वचन कहने लगे ।

श्रद्धा ! तू आ .... घृणा ।

शब्दार्थ—स्तम्भ=भवन के खंभे । वेदिका=यज्ञवेदी ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु श्रद्धा से कहने लगे—'हे श्रद्धा ! तू यहाँ आ गई ? यह बहुत अच्छा हुआ पर क्या मैं अभी तक यहीं पर मूर्च्छित पड़ा हुआ था ?' इतना कहकर मनु ने अपने चारों ओर देखा और उन्हें वही भवन, खंभे तथा वही यज्ञवेदी आदि दिखाई दिये और उनके चारों ओर अत्यन्त भयंकर घृणा फैली हुई थी अर्थात् उन्हें देखकर मनु के मन में घृणा जागृत हुई ।

आँख बन्द ... ... तुझको ।

शब्दार्थ—क्षोभ=व्याकुलता, दुःख । भयावना=डरावना । अन्धकार=अज्ञानतायुक्त निराशा की स्थिति ।

व्याख्या—कवि कह रहा है मनु ने अपने आस-पास के वातावरण में चारों ओर बिखरी हुई घृणा को देखकर व्याकुलता के कारण आँखें बन्द कर लीं और श्रद्धा से कहने लगे कि तुम मुझे यहाँ से कहीं दूर ले चलो क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि इस भयंकर अन्धकार में तुम्हें मैं फिर से खो दूं ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति अलंकार एवं अजहत्स्वार्था लक्षणा है ।

हाथ पकड़ .... कुसुम खिले ।

शब्दार्थ—परे हट=दूर हट । कुसुम=फूल ।

व्याख्या—कवि कहता है कि मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि 'श्रद्धा ! तुम मेरा हाथ पकड़ लो और यदि मुझे तुम्हारा सहारा मिले तो तुम जहाँ ले

कुछ तो बता कि यह तेरा कैसा असहनीय दु.ख है जो तेरे हृदय और शरीर दोनो को हमेशा जलाता रहता है और तू अत्यन्त शिथिलता के साथ लम्बी-लम्बी साँसें लेती है क्या ऐसा जान पड़ता है कि मानो तू निराश हो गयी हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियो में एक ओर तो कुमार मानव के मातृ स्नेह का सुन्दर चित्रण हुआ है और दूसरी ओर पति परित्यक्ता श्रद्धा की दु सह व्यथा भी अंकित हुई है।

यह बोली . उन्मुक्त द्वार।

शब्दार्थ—नील गगन=नीला आकाश। अपार=असीम। अवनत=झुके हुए। घन=मेघ, बादल। सजल=जल से पूर्ण। दिशि=दिशा। पल=क्षण, समय। अनिल=पवन, वायु। तारक दल=तारागण। अविरल=लगातार। उन्मुक्त=खुला हुआ।

व्याख्या—पुत्र कुमार की स्नेहपूर्ण बातें सुनकर श्रद्धा ने कहा—हे पुत्र! इस नीले अपार आकाश को देखो जिसमे जल के भार से बोझिल और घुमड़ते हुए बादल हमेशा झुके रहते हैं। इस आकाश के नीचे प्राणियों के जीवन मे सुख-दुख आते रहते हैं और दसों दिशाओं मे रहने वाले स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण करते हैं तथा समय का चक्र लगातार अपनी गति से चलता रहता है। साथ ही इस आकाश के नीचे वायु बच्चों के समान खेलते हुए इधर-उधर प्रवाहित होती है और झिलमिलाते सुन्दर तारों के समूह ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे रात मे जुगनू लगातार चमक रहे हों। इस प्रकार इस असीम नीले आकाश के नीचे फैला हुआ उदार और विस्तृत ससार ही मेरा घर है तथा इस घर का द्वार सभी लिए खुला हुआ है।'

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण, उपमा, हेतूत्प्रेक्षा एव परम्परित रूपक अलकार की योजना हुई है।

यह लोचन नोंक झोंक।

शब्दार्थ—लोचन=नेत्र, आँख। गोचर=दिखाई देने वाला। सकल लोक=सम्पूर्ण ब्रह्मांड। संसृति=ससार, जगत्। कल्पित=अवास्तविक, जिसकी कोई सत्ता न हो। हर्ष=प्रसन्नता। शोक=दुख। भावोदधि=भाव रूपी समुद्र। सजग=सतर्क, हमेशा बहने वाली। आलिंगित=स्पर्श करते हुए। नग=पर्वत। उलझन=अड़चन, बाधाएँ। रोक-टोक=मार्ग की रुकावटें। नोंक-झोंक=छेड़छाड़, क्रीड़ा।

व्याख्या—श्रद्धा अपने पुत्र कुमार को सम्बोधित कर कहती है—'यह आँखो के समक्ष दिखाई देने वाला सम्पूर्ण ब्रह्माड और ससार के सभी सुख-दुख आदि अपनी कुछ भी सत्ता नही रखते तथा ये सब भावो के समुद्र मे उसी प्रकार उत्पन्न होते हैं जिस प्रकार सूर्य की किरणें समुद्र के पानी को भाप बनाकर ऊपर ले जाती हैं। और वह जल बाद मे स्वाति नक्षत्र मे बरस कर सीपी मे मोती और सर्प के मुख मे गिरकर विष का रूप धारण करते हैं। साथ ही जिस प्रकार पर्वत से निकले हुए झरने पर्वत का स्पर्श करते हुए ऊँची-नीची भूमि पर लगातार बहते-रहते हैं उसी प्रकार मेरे इस घर मे भी निरन्तर उत्थान पतन होता रहता है और जैसे—उक्त झरने मार्ग मे आने वाली बाधाओ को हर्ष पूर्वक झेलते हैं उसी प्रकार सासारिक प्राणी भी सकटों को खेल समझकर उनका सामना करते हैं।

टिप्पणी—यहा स्वाति कन से' मे उपमा और भावोदधि एव उत्थान पतनमय झरने मे रूपक तथा 'किरनो' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

जग, जगता ... . कितना विशाल।

शब्दार्थ—जग=ससार। आँखे किये लाल=उषा की अरुणिमा के रूप मे लालिमा धारण किए हुए। तम=अधकार। सुर धनु=इन्द्र धनुष। रग बदल=विविध रूप धारण कर। मृति=मृत्यु, नाश। संसृति=सृष्टि, जीवन। नति=झुकाव, पतन। उन्नति=उत्थान। सुषमा=सुन्दरता। झलमल=चमकता हुआ। उडुदल=तारागण। अवकाश=शून्य, अतरिक्ष, आकाश। मराल=हस, चन्द्रमा।

व्याख्या—श्रद्धा मानव से कह रही है—'हे पुत्र! विशाल विश्व के रूप मे फैले हुए मेरे इस घर मे सम्पूर्ण सृष्टि प्रात.काल उषा की लालिमा के रूप मे लाल आँखें कर उसी तरह सोकर उठती है जिस तरह कोई प्राणी लाल आँखें सहित सोकर उठता है और रात्रि के समय यह सृष्टि अन्धकार का अवतार लेकर उसी प्रकार मीठ नींद सोती है जिस प्रकार कोई प्राणी चादर ओढकर मीठी नीद लेता हुआ सोता है। साथ ही जैसे वर्षाकालीन आकाश में रगीन इन्द्रधनुष अनेक प्रकार के रग बदलता है उसी प्रकार मेरा यह विश्व मृत्यु जीवन अवनति एव उत्थान आदि के द्वारा विविध रूप बदलता हुआ अपने सौन्दर्य से झिलमिलाता रहता है। इसी प्रकार मेरे इस विश्व के रूप

मे फैले हुए घर पर रात्रि के समय तारे-फूलों की तरह खिल उठते हैं और प्रभात होते ही वे फूलो के समान मुरझाकर झड जाते है । अर्थात् अस्त हो जाते हैं तथा जिस प्रकार नीले जल से पूण सरोवर मे हस सुन्दर प्रतीत होता है उसी प्रकार इस नीले आकाश के मध्य मेरा वह सुन्दर एव विशाल घर चन्द्रमा के रूप मे सुसोभित होता है ।

टिप्पणी—यहाँ 'जग के जागने' और 'सोने' मे उपादान लक्षणा है तथा सुरघनु सा मे पूर्णोपमा और उड्डुदल एव मराल मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है । इसी प्रकार अन्तिम दो पक्तियो मे परम्परित रूपक अलकार है ।

इसके स्तर ... सुखद-शांति ।

शब्दार्थ—स्तर-स्तर पर=प्रत्येक तह पर । अगाध=बहुत अधिक । ताप भ्रांति=दु ख से उत्पन्न भ्रम या मोह । चिरमगल=अनन्त कल्याण युक्त । अतस्तल=हृदय, आतरिक भाग । नीड=घौंसला ।

व्याख्या—श्रद्धा इस असीम नीले आकाश के नीचे विद्यमान उदार ससार को ही अपना घर मानती है और अपने इस घर का परिचय देती हुई वह अपने पुत्र मानव से कहती है—'मेरे इस घर की प्रत्येक तह मे अर्थात् सर्वत्र पूर्ण शाति विद्यमान है और वह अत्यधिक शीतल है तथा इसमे दु ख और मोह दोनो हैं अर्थात् यह उदार ससार सर्वदा सुखमय है पर जो भ्रम में हैं उन्हें यह ससार दु खमय दिखाई देता है । यद्यपि इस विशाल विश्व के रूप मे फैले हुए मेरे घर मे लगातार परिवर्तन होता रहता है पर यह हमेशा कल्याणकारी है और इसमे हर्ष विषाद सुख दु ख तथा रागद्वेष आदि सभी प्रकार के भाव भरे हुए हैं लेकिन ये भाव कभी किसी को दु खमय नही प्रतीत होते । मेरे इस घर मे कभी-कभी कोलाहल भी सुनाई पडता है लेकिन वह आनन्द से पूर्ण दिखाई देता है । इस प्रकार मेरा यह घर अत्यधिक माधुर्य से पूर्ण सौन्दर्य की साक्षात प्रतिमा है और वह सुख प्रदान करने वाली शांति से पूर्ण घोसले के समान है ।

टिप्पणी—यहा पुनरुक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय एव रूपक अलकार की योजना हुई है ।

अम्बे फिर ... ... भाग्य, जाग ।

शब्दार्थ—अम्बे=हे माता । विराग=विरक्ति, उदासीनता । सानुराग=प्रेम पूर्वक । मलिन छवि=फीकी आभा । शशि लेखा=चन्द्रमा की कला ।

विषाद=दुःख। विष रेखा—जहरीली रेखा। दीन त्याग=दैन्य के पूर्ण परित्याग।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब श्रद्धा अपने पुत्र के समक्ष इस उदार संसार को ही अपना घर मानकर अपने इस घर का परिचय दे रही थी तब किसी ने पीछे से कहा—हे माता, जब तुम्हारे हृदय में इतनी अधिक उदारता है तब अभी तक मुझसे क्यो इतनी विरक्त बनी हुई तो और मुझ पर अपना स्नेह क्यो नही प्रकट करती ?' यह सुनकर श्रद्धा ने पीछे मुड़कर देखा तो उसे वहाँ इडा खडी दिखाई दी और उसने देखा कि सारस्वत प्रदेश की उस रानी के अनुपम अगो की आभा अत्यन्त मलिन एव मन्द पड गयी थी और ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह रात से ग्रस्त चन्द्रमा हो तथा उस पर दुःख के जहर की रेखा छाई हो। इस प्रकार जिस इडा का भाग्य मनु के प्रयत्न से एक बार जाग कर पुन सो गया था वही वैभवशालिनी इडा अब दीन बनकर श्रद्धा के पास यह आशा लगाए खडी थी कि कोई कुछ त्याग करे तो मैं उसे स्वीकार करूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'मलिन छवि की रेखा' में रूपक, राहु ग्रस्त सी शशि लेखा मे उपमा दीन त्याग के ग्रहण करने मे विशेषण विपर्यय और 'सोया जिसका है भाग्य जाग' मे मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

बोली तुमसे .. .. चचला शक्ति।

शब्दार्थ—विरक्ति=उदासीनता। अन्धानुरक्ति=बिना सोचे समझे प्रेम। अवलम्बन=आश्रय, सहारा। चिर आकर्षण=हमेशा दूसरो को आकर्षित करने वाली। मादकता=मस्ती। अवनत घन=झुके हुए बादल। चिर अतृप्ति=अत्यधिक अशाति।

व्याख्या—इडा की दीनता पूर्ण बातें सुनकर श्रद्धा ने उससे कहा— भला मुझे तुमसे क्यो उदासीनता हो सकती है ? तुम तो जीवन की एक ऐसी अनुरागमयी प्रतिमा हो जिसे सभी प्राणी बिना कुछ सोचे समझे प्यार करते हैं ! तुमने मुझसे बिछुडे हुए मनु को अपने यहाँ आश्रय देकर उनके जीवन की रक्षा की। हे आशामयी, तुम तो हमेशा दूसरो के मन को आशा से पूर्ण कर देती हो और प्रत्येक प्राणी को अपनी ओर आकृष्ट करती हो तथा जल से पूर्ण बादलो के समान तुम मस्ती से भरी हुई हो। तुम प्राणिमात्र को चंचल करने

वाली एक ऐसी चचल शक्ति हो, जो मनु को भी हमेशा व्याकुल करती रहो और वे कभी सतोष का अनुभव नहीं कर सके।'

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार का प्रयोग हुआ है।

मैं क्या दे .... रही डोल।

शब्दार्थ—मोल=मूल्य, बदला। मधुर बोल=मीठी बातें। घोल=मिश्रण। चिर विस्मृतिसी=बहुत पुरानी भूल के समान।

व्याख्या—श्रद्धा इडा से कह रही है—'मैं तुम्हे दे ही क्या सकती हूँ? मेरे पास देने के लिए या तो मेरा हृदय है या दो मीठी बातें हैं अन्यथा मेरा जीवन तो बहुत विचित्र है। मैंने जीवन मे सुख और दुख दोनों ही प्राप्त किये पर मैंने जो कुछ प्राप्त किया उसे खो भी दिया और मेरे जीवन मे सुख दुख हमेशा मण्डराते रहे। मेरे पास अपना कुछ नहीं है और मैं जो कुछ किसी से लेती हू, दूसरे ही क्षण उसे दूसरो को दे देती हू तथा अपने पास कुछ भी नहीं रखती। इस प्रकार मैं अपना जीवन व्यतीत करती हुई दुखो को भी सुख मानकर हमेशा प्रत्येक स्थिति मे सतुष्ट रहती हूँ और अनुरागमयी होने के कारण मैं मीठे घोल के समान अवश्य हूँ पर एक पुरानी भूल के समान मैं इस ससार मे घूम रही हूँ और अनुराग एव माधुय से पूर्ण होने पर भी अपने प्रिय को प्राप्त नहीं कर पाती।

टिप्पणी—यहाँ 'मधुर घोल' मे रूपक और 'चिर विस्मृति सी' मे पूर्णोपमा अलकार है।

यह प्रभापूण .... साधिकार।

शब्दार्थ—प्रभापूर्ण=कातियुक्त, सौन्दर्य की आभा से भरा हुआ। निहार=देख कर। हतचेतन=मूढ, विवेक हीन। छाया शीतल=सुख और शाति प्रदान करने वाली। निश्छल=छलहीन, पावन, पवित्र। भूतल=धरती पृथ्वी। साधिकार=अधिकार सहित।

व्याख्या—श्रद्धा इडा से कहती है 'तुम्हारा यह कातियुक्त मुख देखकर एक बार मनु अपनी सुधबुध गँवाकर विवेकहीन हो गए थे। वास्तव में नारी को मोह एव ममता का असीम बल प्राप्त है और वह अपनी शक्ति से सब को शीतल छाया के समान सुख प्रदान करती है। फिर ऐसी छल-कपट से रहित और सम्पूर्ण विश्व को सुख प्रदान करने वाली नारी क्या कभी कोई अपराध कर सकती है, जिससे उसे क्षमा किया जाय! सच तो यह है कि नारी क

अस्तित्व से यह धरती ही धन्य हुई है और वह हमेशा दूसरो का अपराध क्षमाकर देती है तथा स्वय कोई अपराध नही करती अत क्षमा की बात सोचना ही अपराध है। मैं अवश्य मनु की पत्नी होने के नाते मनु की ओर से किए गये अपराध के लिए तुमसे क्षमा मांगने का अधिकार रखती हूँ और मुझे विश्वास है कि तुम अवश्य क्षमा करोगी।

टिप्पणी—यहाँ श्रद्धा के सौम्य एव उदार हृदय का सुन्दर चित्रण हुआ है।

अब मैं रह .... शत्रु हो न।

शब्दार्थ—मौन=चुप। पावस निर्झर=वर्षा ऋतु का झरना, बरसाती झरना।

व्याख्या—श्रद्धा के मधुर उद्गार सुनकर इडा ने कहा—'अब मैं चुप नहीं रह सकती? मेरा तो यही मत है कि यहाँ कौन ऐसा है जिसने अपराध नहीं किया अर्थात् केवल मनु को अपराधी समझना उचित न होगा और मैं अपने आपको भी कुछ कम दोषी नही समझती। इस ससार मे स्त्री और पुरुष सभी अपने जीवन मे सुख दु ख सहन करते हैं पर वे एक दूसरे से केवल सुखो की चर्चा करते हैं और दु खो को छिपाया करते हैं क्योकि दु खों की चर्चा करने से अपराध प्रकट हो जाते हैं। इसीलिए कुछ व्यक्ति छिप कर अपराध करते हैं और कुछ अपने अधिकार का दुरुपयोग करते हुए अपनी मर्यादा का उसी प्रकार उल्लघन करते हैं जिस प्रकार बरसाती झरने कभी-कभी तीव्र बाढ का रूप धारण कर हानि पहुँचाते हैं? अतएव मर्यादा का उल्लघन करने वाले इन व्यक्तियो को भला कौन रोक सकता है क्योकि वे तो अपनी भलाई करने वालो को अपना शत्रु समझते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे पूर्णोपमा अलकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

अग्रसर हो रही . . .. . गया छूट।

शब्दार्थ—अग्रसर होना—लगातार बढना। श्रम भाग वर्ग=श्रम या कार्य के आधार पर किया गया वर्ग विभाजन। गर्व=अहकार, घमड। विप्लव=विद्रोह, क्राति। वृष्टि=वर्षा। मत्त=मतवाला। लालसा=तृष्णा, प्यास, कामना। साहस छूटना=हिम्मत हारना।

व्याख्या—इडा श्रद्धा से कहती है—अब मेरे इस राज्य मे फूट बढती ही जा रही है और नियमो के अस्वाभाविक बन्धन टूट रहे हैं तथा जनता उच्छृ खल होती जा रही है। कोई भी व्यक्ति अपनी सीमा मे नही रहना चाहता और

मैंने जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र आदि चार वर्ग बनाकर उनके लिए कार्य निश्चित किये थे आज वह सामाजिक व्यवस्था टूटती जा रही है क्योंकि सभी अपने को श्रेष्ठ समझते हैं और दूसरों को हेय मानते हैं। सच तो यह है कि सभी वर्गों को अपनी-अपनी शक्ति का बहुत घमण्ड हो गया है और जो व्यक्ति शान्ति एव सुव्यवस्था स्थापित करने के लिए नियम बनाते हैं वे स्वय उन नियमो का उल्लघन कर देश मे क्रान्ति मचवाते हैं। इस प्रकार अब मेरे राज्य मे सभी मतवाले होकर इतना अधिक इच्छाओ के जाल मे जकड गये हैं कि मानो कोई शराबी व्यक्ति शराब के नशे मे चूर होकर अधिकाधिक शराब पीने की इच्छा कर रहा है। यह सब देखकर मैं भी अब हिम्मत हार बैठी हूँ।

टिप्पणी—यहाँ 'फूट के अग्रसर होने मे' मानवीकरण और लालसा घूँट में रूपक अलकार की योजना हुई है।

मैं जनपद कल्याणी .. .. रही समृद्ध।

शब्दार्थ—जनपद=प्रदेश, बस्ती, राष्ट्र, राज्य। कल्याणी=कल्याण करने वाली। अवनति कारण=पतन का कारण। निषिद्ध=त्याज्य, निषेध के योग्य, बुरी। सुविभाजन=समाज का विभिन्न जातियों मे वर्गीकरण। विषम=भयकर। जलधर=बादल। उपलोपम=ओले के समान। समिद्ध=धधकती हुई, प्रज्वलित। समृद्ध=घनी, बहुत बडी।

व्याख्या—इडा का कहना है—'पहले मैं अपने सारस्वत प्रदेश मे राष्ट्र का कल्याण करनेवाली मानी जाती थी पर आज मैं अपने उसी प्रदेश की अवनति का कारण बनकर सभी के लिए दूषित एव त्याज्य बन गयी हूँ अर्थात् जिस प्रजा के कल्याण का मैंने हमेशा ध्यान रखा वही प्रजा अब मुझे सारस्वत प्रदेश के पतन का कारण समझती है और मेरी उपेक्षा करती है। मैंने जनता के हित का ध्यान रखकर सभी मनुष्यो को अलग-अलग जातियो मे विभाजित कर समाज का जो सुन्दर विभाजन किया था आज वही विभाजन असमानता पैदा करता हुआ भयकर बन गया और आज मेरे राज्य मे रोज न जाने कितने नियम बनते है तथा उसी क्षण उन्हे भग कर दिया जाता है। जिस प्रकार ओलों की वर्षा करने वाले बादल स्थान-स्थान पर घिरकर वर्षा करते हैं और उनसे हरी भरी खेती नष्ट हो जाती है उसी प्रकार मेरे राज्य मे क्रान्ति की भयकर ज्वाला भडक रही है और ऐसा जान पडता है कि बहुत अधिक विनाश होकर ही रहेगा।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में उपमा, रूपकातिशयोक्ति एवं परम्परित रूपक अलकार की योजना हुई है।

तो क्या मैं .. .. छाया अशान्त।

शब्दार्थ—नितान्त=एकदम, पूर्णतया। संहार=विध्वंस, विनाश। वध्य =मार डालने योग्य। असहाय=अनाथ, बेसहारा। दान्त=दमन किया हुआ, पराधीन। अविरल=निरन्तर, लगातार। मिथ्या=झूठा। प्रणति=विनम्र। अनुशासन=नियमन, आज्ञा।

व्याख्या—इडा कह रही है—मैंने अपनी बुद्धि से सारस्वत प्रदेश की जनता की उन्नति के लिए जो कुछ करना चाहा वह क्या मेरी भूल थी और मैं क्या अब तक बिलकुल अंधकार मे थी ? यदि मैं यह सब न करती तो क्या अपनी प्रजा को असहाय होकर हमेशा प्रकृति से दबाई जाकर बलि के लिए लाए गए बलि के बकरे के समान चुपचाप नष्ट होने देती। मैंने अपनी प्रजा को नवीन आविष्कारो द्वारा प्रकृति के साथ संघर्ष करना सिखाया पर क्या हमारे सभी आविष्कार और प्रयत्न बेकार सिद्ध हुए तथा दैवी शक्तियो को प्रसन्न करने के लिए किए गए यज्ञ भी निष्फल सिद्ध हुए। इस प्रकार आज मेरी प्रजा निबल व्यक्तियों के सदृश्य भयभीत होकर प्रकृति की उपासना करती है और प्रकृति के कठोर अनुशासन मे परतंत्र प्राणी के समान सदैव अशान्त बनी रहती है।

टिप्पणी—यहाँ 'शक्ति चिन्ह' में रूपकातिशयोक्ति, 'भ्रान्त प्रणति' मे विशेषण विपर्यय और अनुशासन की छाया मे रूपक अलकार की योजना हुई है।

तिस पर मैंने .... उठे जाग।

शब्दार्थ—दिव्यराग=अलौकिक प्रेम। अकिंचन=दरिद्र, तुच्छ, साधारण। नहीं सुहाती हूँ=अच्छी नहीं लगती हूँ। विराग=विरक्ति, उदासीनता। चेतनता=चेतना शक्ति, स्फूर्ति, साहस।

व्याख्या—श्रद्धा के समक्ष आत्मग्लानि प्रकट करते हुए इडा कहती है—हे देवि ! इतना सब होने के पश्चात् मैंने मनु को सारस्वत नगर का शासक बना कर और उन्हें वैभव के भुलावे मे डालकर तुम्हारा सुहाग छीना तथा मनु को अपनी ओर आकर्षित कर तुम्हारे दिव्य प्रेम को छीनने का दुष्कर्म किया लेकिन मैं आज पूर्णतया दरिद्र हो गई हूँ। अब मैं दूसरों को तो क्या, स्वय अपने को अच्छी नही लगती और मैं जो भी कोई अच्छी बात करती हूँ, जब उसे स्वयं ही सुनना पसन्द नही करती तब भला अन्य व्यक्ति को सुनेंगे। इसलिए हे देवि !

तुम मुझसे उदासीन मत बनो और मुझे क्षमा प्रदान करो जिससे मेरी स्फूर्ति पुनः जागृत हो ।

है रुद्र रोष . . .. श्रान्त ।

शब्दार्थ—रुद्र रोष=शिव का क्रोध, दैवी प्रकोप । विषम ध्वात=भयकर या गहन अधकार । सिर चढ़ना=दूसरो पर बलपूर्वक अधिकार करना । विकल =व्याकुल । अभिनय=नाटक, कार्य । अपनापन=अपनत्व, आत्मीयता, ममत्व। आलोक=प्रकाश, ज्ञान। श्रान्त=थककर। भ्रान्त=भ्रमपूर्ण, दुखदायी।

व्याख्या—इडा के ग्लानियुक्त वचन सुनकर श्रद्धा ने कहा—'भगवान शिव के क्रोध के रूप मे प्रकट हुआ प्रकृति का भयकर प्रकोप अभी तक शात नही हुआ और वह भयकर अधकार के रूप में अभी तक विद्यमान है। तुम्हारी सबसे बडी भूल यह है कि तुम हमेशा दूसरो पर बलपूर्वक अधिकार करती रही हो और तुमने कभी उनके हृदय पर अधिकार करने का प्रयत्न नही किया अर्थात् तुम्हारे कार्यों मे हृदय की अपेक्षा बुद्धिबल को ही प्राथमिकता प्राप्त हुई। इसीलिए तुम आज तक व्याकुल होकर सभी कार्य करती रहीं और तुम्हे शांति प्राप्त न हो सकी तथा तुम्हारी इस भूल के कारण प्राणियो को सुख प्रदान करने वाली उनकी आत्मीयता की भावना भी नष्ट हो गयी । इस प्रकार तुम्हारी प्रजा के हृदय में अपनत्व के प्रकाश का उदय नही हुआ और वह थके हुए पथिक के समान अपने जीवन पथ पर चलती रही तथा तुम्हारे द्वारा किया गया सामाजिक वर्गीकरण भी भ्रमोत्पादक ही सिद्ध हुआ ।

टिप्पणी—यहाँ 'वन विषमध्वान्त' मे रूपक और 'आलोक' मे रूपकातिशयोक्ति अलंकार की योजना हुई है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाभारत के वन पर्व मे भी एक स्थल पर कहा गया है कि शासक को मदु या कोमल होना चाहिए—

मृदुना दारुण हन्ति, मृदुना हन्त्यदारुणम्,
नासाध्य मृदुना कश्चित् तस्माद् तीव्र तर मृदु ॥

जीवन धारा सुन्दर .... सरल राह ।

शब्दार्थ—सत=सत्य । सतत=लगातार, निरन्तर । सुखद=सुख देने वाला । अथाह=गभीर, अगाध । तर्कमयी=तर्क करने वाली । प्रतिबिम्बित तारा=तारो की परछाई के समान दिखाई देने वाले मिथ्या सुख दुख । आठ पहर=दिन-रात । जड़ता=अज्ञानता । मधुमय=आनददायक ।

व्याख्या—श्रद्धा इडा से कह रही है—'नदी की धारा के समान ही जीवन की धारा भी सुन्दर और प्रवाहयुक्त है तथा उसका प्रवाह सत्य, निरतर रहने वाल', ज्ञान युक्त, सुखदायक और अगाध भी है लेकिन तर्कमयी होने के कारण तुमने कभी भी इसके स्वरूप को समझना नही चाहा, बल्कि इसकी लहरों को ही गिनती रही और तारो के प्रतिबिम्ब की भाँति मिथ्या दिखाई देने वाले सुख दुखो को महत्व देती रही। सच तो यह है कि तुमने दिन-रात इस प्रवाह को खड खड करके ही देखा और इसके सम्पूर्ण रूप को कभी नही देखा। पर यह तुम्हारी बहुत बडी अज्ञानता थी। अब भविष्य मे तुम ऐसी भूल न करना क्योकि जीवन मे सुख दुख मधुर धूप-छाँह की भाँति आते रहते है और वे दोनो जीवन के अभिन्न अग हैं परन्तु तुमने जीवन को समझने वाले इस सरल मार्ग को छोड दिया और तर्कों के जाल मे ही तुम हमेशा फँसी रही।

टिप्पणी—यहाँ 'जीवन धारा' और 'सुख और दुख की धूप छाँह' मे रूपक तथा लहर और तारा मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

टिप्पणी—सुपरिचित कवि श्री सुमित्रानन्दन पत ने भी अपनी 'नौका विहार' कविता मे जीवन के अखड प्रवाह की तुलना नदी की अखड धारा से करते हुए कहा है—

इस धारा सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जगती का उद्गम
शाश्वत है गति, शाश्वत सगम।
शाश्वत नभ का नीला विकास, शाश्वत शशि का यह रजत हास
शाश्वत लघु लहरो का विलास।
हे जग जीवन के कर्णधार! चिर जन्म मरण के आर-पार
शाश्वत जीवन नौका विहार।

चेतनता का भौतिक .. जाग जाग।

शब्दार्थ—चेतनता=चेतन प्राणी। भौतिक विभाग=श्रम के आधार पर किया गया वर्णाश्रम विभाजन। चिति=चेतना शक्ति, विराट् चेतना।

व्याख्या—श्रद्धा इडा से कहती है=सभी प्राणियो के अन्दर एक ही चेतना का निवास है पर तुमने श्रम को आधार बनाकर सम्पूर्ण प्रजा को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र आदि चार वर्गों मे विभाजित कर, उनमे ऊँच नीच का भेद भाव उत्पन्न कर दिया। वास्तव मे यह ससार उस विराट चेतना शक्ति का ही नित्य स्वरूप है पर वह अनेक प्रकार के रूप बदलता रहता है क्योंकि

इस ससार की रचना जिन अणु परमाणुओ के योग से हुई है वे कभी परस्पर मिलते हैं और कभी अलग हो जाते हैं। इस प्रकार यह ससार परिवर्तनशील होते हुए भी सर्वदा उल्लास एव आनन्द से पूर्ण रहता है और यहाँ जाग जाग की रागिनी हमेशा गूँजती रहती है तथा प्राणी मात्र को ससार की वास्तविकता समझने के लिए प्रेरित करती है।

टिप्पणी—इन पक्तियो पर काश्मीरी प्रत्यभिज्ञा दर्शन का स्पष्ट प्रभाव पड़ा है।

मैं लोक अग्नि कर्म कान्त।

शब्दार्थ—लोक अग्नि=सासारिक सताप या दु ख। तप=जलती हुई। आहुति=बलिदान। प्रशान्त=अत्यधिक शाति के साथ। जलती छाती=धड़कता हृदय, व्यथापूर्ण हृदय। दाह=आग, ज्वाला, व्यथा। निधि=खजाना। सौम्य=शान्त स्वभाव वाला। विनिमय=आदान-प्रदान, प्रतिदान। कान्त=सुन्दर।

व्याख्या—श्रद्धा ने इडा को समझाते हुए कहा—'मैं सासारिक दुखो की ज्वाला मे पूरी तरह से तप चुकी हू और अब प्रसन्न होकर शान्त मन के साथ उसमे सब कुछ बलिदान करने को प्रस्तुत हूँ लेकिन तुम मुझे क्षमा जैसी तुच्छ वस्तु भी न दे सकी बल्कि तुम्हारे हृदय मे मुझसे ही कुछ लेने की आशा है। यही कारण है कि तुम्हारे हृदय मे मुझसे ही कुछ लेने की आशा है। यही कारण है कि तुम्हारे हृदय की जलन शान्त नही हुई है और तुम्हारी यह इच्छा देखकर मैं अपने पास का यह खजाना अर्थात् अपना पुत्र मानव ही तुम्हें सौंप रही हूँ मेरे लिए तो अपना मार्ग पड़ा है और उस मार्ग पर बढती हुई मैं मनु को खोज लूंगी।' कवि का कहना है कि इडा से इतना कहने के पश्चात् श्रद्धा ने अपने पुत्र मानव से कहा—'हे शान्त स्वभाव वाले मेरे पुत्र, तुम यही रहो और अपने सुखद कार्यों द्वारा इडा का बदला चुकाओ।'

टिप्पणी—यहाँ लोक अग्नि, आहुति एव निधि मे रूपकातिशयोक्ति, जलती छाती को दाह' मे निरगरूपक और सौम्य मे परिकरांकुर अलकार की योजना हुई है।

तुम दोनो .... . सुयश गीति।

शब्दार्थ—राष्ट्र नीति=राज्य व्यवस्था, राजकाज। भीति=भय, आतक। सरिता=नदी। नग=पर्वत। छली=धोखा देने वाला। सुयश गीति=सुन्दर यशोगान।

व्याख्या—श्रद्धा अपने पुत्र मानव और सारस्वत प्रदेश की रानी इडा को सम्बोधित कर रही है—'तुम दोनो मिलकर इस सारस्वत नगर का राज काज सँभालो पर शासक बनकर कभी भी अपनी प्रजा मे आतक मत फैलाना बल्कि प्रेमपूवक प्रजा के हृदय पर अपना शासन करने का प्रयत्न करना। मैं अपने मनु को खोजने जा रही हूँ और नदी, मरुस्थल, पर्वत व कुज गली आदि सभी स्थानो मे उन्हे खोजूंगी। मनु अत्यन्त सरल स्वभाव के हैं और वे इतने धोखा देने वाले नहीं है कि मुझे मिल ही न सके। मुझे विश्वास है कि वे मुझे अवश्य मिल जायेंगे क्योंकि मेरे हृदय मे उनके प्रति असीम प्रेम है। मैं अब यह देखूँगी कि तुम दोनो यहाँ कैसा शासन करते हो और हे पुत्र! मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ कि तुम्हारे सुन्दर यश के गीत सवत्र गाये जायें।

बोला बालक .... यही क्रोड़।

शब्दार्थ— ममता=मातृस्नेह। मुँह मोड़ना=बेरुखी दिखाना, अलग होना। क्रोड़=गोद।

व्याख्या—माता श्रद्धा के उद्‌गार सुनकर कुमार मानव कहने लगा—'हे माँ! तुम अपना स्नेह इस तरह मत तोडो और मुझसे इस प्रकार विमुख होकर मत जाओ। मैं हमेशा तुम्हारी आज्ञा का पालन करता रहा हूँ इसलिए आज भी यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम्हारे आशीर्वाद के सहारे मैं अपने कर्त्तव्य का पालन करूँगा और चाहे मैं मरूँ या जीवित रहूँ पर यह अपनी प्रतिज्ञा कभी नही तोड़ूँगा साथ ही मैं हमेशा यही प्रयत्न करूँगा कि मेरा यह तुच्छ जीवन तुम्हारे शुभ वरदान की भाँति मगलकारी हो और आज तुम उसे छोडकर जा रही हो पर मेरी यही अभिलाषा है कि कर्त्तव्य पूरा होने के पश्चात् मुझे तुम्हारी यही गोद प्राप्त हो।

टिप्पणी—यहाँ 'स्नेह सदा करता लालन' मे मानवीकरण अलकार है।

हे सौम्य . .... माँ की पुकार।

शब्दार्थ शुचि दुलार=पवित्र स्नेह। व्यथा भार=दुख का बोझ। श्रद्धामय=विश्वास से पूर्ण। मननशील=चिन्तन युक्त। अभय=भय रहित, निडर। निचय=समूह। समरसता=समत्व, एकरूपता, अभिन्नता। पुकार=आतरिक इच्छा।

व्याख्या—श्रद्धा कुमार मानव से कह रही है—हे शात स्वभाव वाले पुत्र! मुझसे अलग रहने पर तुझे जो दु:ख होगा वह इडा के पवित्र स्नेह से

दूर हो जाएगा। यदि इडा मे तर्क या बुद्धि की प्रधानता है तो तुमने मेरा अश होने के कारण विश्वास की अधिकता है अत तुम दोनो का मिलन विश्व-कल्याण मे सहायक होगा। इस प्रकार तू निडरतापूर्वक सोच विचार कर कर्म पथ पर अग्रसर हो और इडा के सभी दु खो को दूर कर दे अर्थात् अब तू सारस्वत प्रदेश का राजकाज सँभाल और इडा के इस अस्त व्यस्त राज्य की सुस्थिर शासन-व्यवस्था द्वारा इडा का दु ख दूर कर दे। मेरी यही अभिलाषा है कि तेरे कार्यों द्वारा प्रजा को अत्यधिक सुख-समृद्धि प्राप्त हो और तू मेरी इस हार्दिक इच्छा को हमेशा ध्यान मे रखना कि मैं चाहती हूँ कि तेरे द्वारा इस प्रदेश मे समरसता का प्रचार हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे कवि ने श्रद्धा के माध्यम से राज्य मे सुव्यवस्था एव समृद्धि की स्थापना के लिए समरसता, एकता या अभिन्नता की भावना का प्रसार आवश्यक माना है।

अति मधुर . मृदुल फूल।

शब्दार्थ—विश्वास मूल=विश्वास पर निर्भर। दिव्य=अलौकिक। श्रेयउद्गम=कल्याण को जन्म देने वाला। अविरल=निरतर, लगातार। घन=बादल। वितरे=वितरण करे, बाँटे। निर्वासित हों=दूर हो जाय। संताप=कष्ट। सकल=सभी। प्रणत=झुककर, विनम्र। कर=हाथ। मृदुल=कोमल।

व्याख्या—श्रद्धा के स्नेहपूर्ण उदगार सुनकर इडा ने कहा—'हे पद देवि! तुम्हारे इन मधुर एव अगाध विश्वास से पूर्ण वचनो को मैं अपने जीवन मे कभी नही भूल सकती और मैं चाहती हूँ कि तुम्हारा यह प्रबल स्नेह निरतर अलौकिक कल्याण का उद्गम बनकर मेरे इस प्रदेश मे सदैव सुख प्रदान करे। जिस प्रकार बादल जल बरसाकर गर्मी के सभी दु खो को दूर कर देते हैं उसी प्रकार तुम्हारा प्रेम भी परस्पर महत्त्व का प्रचार करे और प्रजा के सभी दु ख दूर हो जाँय।' कवि का कहना है कि इतना कहकर इडा ने झुककर श्रद्धा के चरणो की धूल लेकर अपने मस्तक पर चढ़ाई और अपने साथ ले जाने के लिए कुमार के कोमल फूल के समान हाथ को पकड लिया।

टिप्पणी—यहाँ 'आकर्षण घन' और 'कर मृदुल फूल' मे रूपक तथा 'जल' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

वे तीनो . ... रहे दो न।

शब्दार्थ—विस्मृत से=भूले से। विच्छेद=वियोग । बाह्य=बाहरी। आलिगन=गले मिलना, एक होना। आहत=चोट या आघात खाकर। परिणत=परिवर्तित।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि एक क्षण के लिए श्रद्धा, इडा और कुमार तीनो चुप रहे तथा वे यह भी भूल गए कि वे कौन हैं और इस समय कहाँ हैं। यद्यपि आज मानव और इडा श्रद्धा से अलग हो रहे थे परन्तु उनका यह वियोग बाहरी ही था क्योंकि उन तीनों के हृदय मिलकर उसी प्रकार एक हो गये थे जिस प्रकार जलकण आघात पडने पर विखर जाते हैं लेकिन शीघ्र ही लहरों मे परिवर्तित होकर एक रूप हो जाते हैं। यही दशा इन तीनो अर्थात् श्रद्धा, इडा और मानव के वियोग एव मिलन की थी। कवि कह रहा है कि इडा और मानव सारस्वत नगर की ओर लौट चले तथा जब वे कुछ दूर पहुच गये तब यह सोच कर कि अब हम दोनों को एकमत होकर शासन कार्य करना है, एक प्रकार की एकता या अभिन्नता का अनुभव करने लगे।

टिप्पणी—यहाँ सुन्दर भावानुकूल दृष्टान्त अलकार की योजना हुई है।

निस्तब्ध गगन ... दीन ध्वान्त।

शब्दार्थ—निस्तब्ध=नीरव, शात। कान्त=सुन्दर, रमणीय मनोहर। व्यथित=थकी हुई दुखिता। रजनी=रात। श्रम सीकर=पसीने की बूंद। मलिन छाया=अधकार। सरिता तट=सरस्वती नदी का किनारा। तरु=वृक्ष। दीन=दैन्य पूर्ण। ध्वान्त=अधकार।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मानव एव इडा श्रद्धा से पृथक हो सारस्वत नगर की ओर लौटे तब आकाश मे नीरवता छाई हुई थी और दिशाएँ शान्त थीं तथा असीम आकाश एक मनोहर चित्र के समान दिखाई दे रहा था। साथ ही आकाश के वक्षस्थल पर तारो के रूप मे शून्य के आकार की तुच्छ बूँदें दिखाई दे रही थीं जो थकी हुई रात्रि के शरीर पर पसीने की बूंदों के समान जान पडती थी और ये बूदे न जाने कितनी देर से दिखाई दे रही थी परन्तु झरकर धरती पर नीचे नहीं गिरती थी। इसी प्रकार पृथ्वी पर अधकार की अत्यन्त गभीर और मलिन छाया पड रही थी तथा सरस्वती नदी के किनारे जहाँ वृक्ष खडे हुए थे वहाँ केवल विषाद भरा अहकार ही दिखाई देता था।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है ।

शत शत .. जाती तुरन्त ।

शब्दार्थ—सैकडों । तारामडित=तारो से सुशोभित । अनन्त=आकाश । स्तबल=गुच्छा, गुलदस्ता । माया सरिता=आकाश गगा । दुरन्त छाया=घना और विस्तृत अन्धकार ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस समय मानव एवं इडा श्रद्धा से अलग हो सारस्वत नगर की ओर रवाना हुए उस समय आकाश सैकडो तारो से सुशोभित हो रहा था और वह वसन्त ऋतु मे खिले हुए फूलो के गुच्छे के समान दिखाई देता था । साथ ही इन छिटकते हुए तारों के ऊपर फैला हुआ आकाश लोक हसता हुआ दिखाई देता था और उसके हृदय मे हल्का प्रकाश भरा हुआ था । इसी प्रकार ऊपर आकाश मे एक अनोखी नदी के रूप मे आकाश गगा वह रही थी और उसमे तारो की किरणो के रूप में चचल लहरें उठती हुई दिखाई दे रही थी तथा धरती पर रात्रि के घने अन्धकार की छाया फैली हुई थी जो रात होते ही चुपचाप चारों ओर फैल जाती थी और सवेरा होते ही अचानक न जाने कहाँ चली जाती थी ।

टिप्पणी—यहाँ गम्योत्प्रेक्षा, मानवीकरण, रूपकातिशयोक्ति एव रूपक अलकार की योजना हुई है ।

सरिता का . . . अम्लान कूल ।

शब्दार्थ—एकान्त=निर्जन, सुनसान । कूल=किनारा । पवन हिंडोले=वायु के झूले पर । वल=समूह । दीप्ति=प्रकाश । तरल=चमकीला, उज्ज्वल । ससृति=जगत, ससार । गध विधुर=सुगधिहीन । अम्लान=मुरझाया हुआ ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सरस्वती नदी के किनारे-किनारे आगे बढ़ती हुई श्रद्धा नदी के उस निर्जन तट पर पहुची जहाँ पवन के झोके एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर इस प्रकार जाते थे जिस प्रकार वे हिंडोले पर झूल रहे हो और लहरें उठ कर नदी के किनारो से टकरा कर मिट रही थी अत कभी-कभी छक-छक, छप-छप की आवाज भी आ रही थी । साथ ही नदी के जल में तारो का प्रतिबिम्ब थर-थर कांपता हुआ दिखाई देता था और रात्रि के गहन अन्धकार में सारा ससार अपनी सुध-बुध खोकर सोया हुआ

साजान पडता था और वह एक मुरझाए हुए गंधहीन फूल के समान जान पडता था ।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मानवीकरण, ध्वन्यर्थ व्यंजना, गम्योत्प्रेक्षा एव पुनरुक्ति अलंकार की अभिव्यंजना हुई है ।

तब सरस्वती-सा .... रहा साँस ।

शब्दार्थ—शिलालग्न=पत्थर मे जडे हुए। अनगढ़े=बिना गढे या तराशे हुए । निस्वन=ध्वनि, आवाज । गुहा=गुफा । लतावृत्त=लताओ से ढकी हुई ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि सरस्वती नदी जिस प्रकार साँय-साँय करती बह रही थी उसी प्रकार गहरी साँस लेकर श्रद्धा ने जब अपनी दृष्टि चारो ओर दौडाई तब उसने देखा कि दो खुले हुए नेत्र चमक रहे हैं जो ऐसे जान पडते हैं मानो किसी पत्थर में जडे हुए दो रत्न हो । इसी बीच श्रद्धा को अंधकार मे 'सन सन' की ध्वनि सुनाई दी और वह सोचने लगी कि यह आवाज कहाँ से आ रही है तथा यहाँ कही सरस्वती नदी की धारा की आवाज तो नही है पर समीप जाने पर उसने देखा कि लताओं से ढकी हुई एक गुफा मे कोई जीवित प्राणी बैठा गहरी साँसें ले रहा था ।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा, वस्तूत्प्रेक्षा एव ध्वन्यर्थ व्यंजना अलंकार की योजना हुई है ।

यह निर्जन तट .... विश्वमित्र ।

शब्दार्थ—निर्जन=सुनसान, जन शून्य । उन्नत=ऊँचे । शैल=पर्वत । शिखर=चोटियाँ । लोक अग्नि=सासारिक दु खों की आग । गलकर=द्रवित होकर । विश्वमित्र=ससार की हितैषिणी ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि सरस्वती नदी का वह सुनसान किनारा एक सुन्दर एव पवित्र चित्र के समान जान पडता था और वहाँ पर्वत की ऊँची-ऊँची चोटियाँ भी दिखाई दे रही थी पर श्रद्धा का सिर उनसे अधिक ऊँचा जान पडता था । कहने का अभिप्राय यह है कि श्रद्धा मे क्षमा, दया, करुणा एव स्वाभिमान आदि गुण होने के कारण वह इन पर्वत की चोटियो की अपेक्षा अधिक उन्नति जान पडती थी । सच तो यह है कि श्रद्धा सासारिक दु खो को झेलती हुई दुःख की आग मे तपकर सोने की प्रतिमा बन गयी थी और उसमे महान नारी के सभी गुणो का समावेश हो गया था । इस प्रकार

श्रद्धा के दिव्य एव भव्य रूप को देखकर मनु सोचने लगे कि यह कभी अलौकिक नारी है और जग जननी के समान सबकी भलाई करने वाली है।

टिप्पणी– यहाँ 'लोक अग्नि' मे रूपकातिशयोक्ति, स्वर्ण प्रतिमा मे रूपक और विश्वमित्र में परिकर अलकार की योजना हुई है।

बोले रमणी • • ••• मन का प्रवाह।

शब्दार्थ—रमणी=सुन्दर स्त्री, भोग की वस्तु। चाह=तृष्णा, लालसा। वंचित=ठगी हुई। निर्दय=निष्ठुर, कठोर। प्रवाह=गति।

व्याख्या—श्रद्धा को अपने समक्ष देखकर मनु ने कहा—'तुम केवल वह तुच्छ नारी नही हो जो काम पिपासा या भोग लिप्सा से पूर्ण रहती है बल्कि एक महान स्त्री हो। तुमने अपना सब कुछ खोकर और दिन रात रो-रोकर जीवन व्यतीत करते हुए मुझे खोज निकाला था और मैं सारस्वत प्रदेश के जिन व्यक्तियों से प्राण बचाकर भाग आया था उन्हें ही तुम अपना एकमात्र पुत्र सौंप आयी। आश्चर्य इस बात से है कि क्या तुम्हारा मातृ हृदय इतना कठोर हो गया था कि अपने पुत्र को सारस्वत नगर म छोड़ते समय तुम्हे तनिक भी पीडा नही हुई? इस प्रकार तुम्हारे मन की गति निसदेह विचित्र है।

वे श्वापद • आह तीर।

शब्दार्थ—श्वापद=खूनी जगली जानवर, हिंसक पशु। कोमल शावक=सुकुमार बच्चा। तव हृत्तल=तुम्हारा हृदय। हाथ से तीर छूट जाना=अवसर निकल जाना।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि सारस्वत प्रदेश के निवासी खूनी जगली जानवर के समान है और कुमार मानव कोमल बच्चे के सदृश्य है। मैंने अपने उस पुत्र की शीतल वाणी सुनी थी और उसमे कितनी सरलता एव निष्कपट स्नेह भरा हुआ था पर तुम्हारा हृदय कितना कठोर है जो तुम मानव को सारस्वत नगर निवासियो के पास छोड आई हो। उस इडा ने तुम्हारे साथ छल किया है और तुम अभी तक धैर्य धारण किए हो। यह आश्चर्य की बात है परन्तु अब अवसर हाथ से निकल चुका है और हम दोनो कर ही क्या सकते हैं?

टिप्पणी—यहाँ उपमा एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

प्रिय! अब ••• • • स्पष्ट अंक।

शब्दार्थ—सशक=शकालु शकित। रक=गरीब, निर्धन। विनिमय=

आदान प्रदान लेन देन । स्वजन=आत्मीय जन, सम्बन्धी । निर्वासित=घर से बाहर या दूर रहने वाला । डक लगना=पीड़ा होना, कष्ट होना ।

व्याख्या—मनु की बातें सुनकर श्रद्धा ने कहा—हे प्रिय । तुम क्यो अभी तक शकाओ में लीन हो और यह क्यो भूल जाते हो कि कोई भी व्यक्ति किसी को कुछ देकर भिखारी नही हो जाता । इसे चाहे आदान-प्रदान कहा जाय अथवा परिवर्तन समझा जाय पर यह सत्य ही है और तुमने जो सारस्वत प्रदेश का अधिकार प्राप्त किया था वह एक प्रकार का ऋण ही था क्योंकि इडा ने तुम्हे वह अधिकार दिया था लेकिन अब कुमार उस प्रदेश का स्वामी है अत वह अब तुम्हारा ऋण न होकर धन ही है । साथ ही तुमने अपराध किया था और वह तुम्हारा बन्धन बना हुआ था परन्तु कुमार को सौंप देने से तुम अपने अपराध से मुक्त हो गए और तुम्हारा पुत्र सारस्वत प्रदेश मे शाति एव सुव्य-वस्था स्थापित कर वहाँ की प्रजा के हृदय से तुम्हारे अपराध को विस्मरण करा देगा । अब तुम अपने सम्बन्धियो को छोड़कर कहीं भी जाने के लिए स्वतन्त्र हो और तुम्हें इसमे दु खी न होकर यह सोचना चाहिए कि तुम्हारा हृदय अब निर्मल हो गया है तथा तुम्हे कोई भी दु खी न करेगा । यह तो स्पष्ट बात है कि जो कुछ तुम्हारे पास है उसे तुम्हें हर्ष पूर्वक दूसरो को देना चाहिए और दूसरे जो कुछ तुम्हें दें उसे प्रसन्नता से ग्रहण करना चाहिए ।

टिप्पणी—यहाँ 'बन्धन से मुक्ति बनने' मे विरोधाभास और 'डक' में रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

तुम देवि .. . . लघु विचार ।

शब्दार्थ—निर्विकार=विकारहीन, पवित्र । सर्व मंगले=सभी का कल्याण या भलाई चाहने वाली । महती=महान । निलय=स्थान, निवास । निहार =देखकर । लघु=तुच्छ, सकीर्ण ।

व्याख्या—श्रद्धा की उदारता मयी वाणी सुनकर मनु कहने लगे—हे देवि ! तुम कितनी उदार हो और तुम ससार के प्रति ममता प्रकट करने वाली पवित्र प्रतिमा हो तथा सब पर माँ के सदृश्य प्रेम करती हो । सच तो यह है कि तुम ससार का कल्याण करने वाली हो और वास्तव मे तुम महान हो तथा सबके दुःखों को स्वय सहन करती हो । तुम हमेशा ऐसे वचन कहती हो जो प्राणिमात्र के लिए कल्याणकारी होते हैं और तुम अपने विरोधियो को भी

क्षमा कर देती हो जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि तुम हमेशा क्षमा के घर मे रहती हो। मैंने तुम्हें स्त्री समझकर भारी भूल की है और तुम्हें स्त्री समझना तुच्छ विचार ही है क्योंकि तुम निर्विवाद रूप से महान हो।

टिप्पणी—यहाँ 'सर्व मगले' मे परिकर, क्षमा निलय में रूपक और नारी सा ही में उपमा अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—इन पक्तियो को 'त्रिपुरा रहस्य' से प्रभावित समझना चाहिए क्योकि 'त्रिपुरा रहस्य' के ज्ञान खण्ड, अध्याय ६ मे भी श्रद्धा को ऐसी ही महान् एव सर्व कल्याणकारी कहा गया है—

श्रद्धा माता प्रपन्न सा वत्सलेव सुत सदा।
रक्षति प्रौढ भीतिभ्य सर्वथा न हि सशय ॥
श्रद्धा हि जगता धात्री श्रद्धा सर्वस्य जीवनम्।
अश्रद्धे मातृ विषये वालो जीवेत् कथ वद ॥

मैं इस निर्जन . ... घुसा तीर।

शब्दार्थ—अधीर=व्याकुल, बेचैन। तीखा समीर=तीव्र या तेज हवा। भाव चक्र=भावों का आघात, अतर्द्वन्द्व। सत्ता=अपना अस्तित्व व्यक्तित्व। लघुता=हीनता। वक्ष=हृदय, छाती। अनुशय=पुराना वैर।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं—मैं इस सरस्वती नदी के सुनसान तट पर अत्यत बेचैन होकर भूख, पीडा और तेज हवा के झोको को सहन करता हुआ तथा अपने अन्तर्द्वन्द्व मे पिसता हुआ लगातार आगे बढता आया। जिस प्रकार मन मे उठने वाले मनोविकार आप ही आप नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार मैं भी आज अपना सम्पूर्ण व्यक्तित्व खोकर कुछ भी नही रहा हूँ और तुम यदि मेरे हृदय को चीर कर देखो तो तुम्हें ज्ञात हो जाएगा कि सारस्वत प्रदेश से चुपचाप यहाँ भाग आने मे मेरी क्षुद्रता नही थी वल्कि पुराने वैर अर्थात् शत्रुता का तीर ही मेरे मन में घुसा हुआ है।

टिप्पणी—यहाँ 'भाव चक्र' एव 'अनुशय' मे रूपक और 'विकार सा' मे उपमा अलकार की योजना हुई है।

प्रियतम .... .. साथ बात।

शब्दार्थ—नत=झुकी हुई, विनम्र। निस्तब्ध=नीरव, शात। विगत=बीती हुई। जीवन सबल=जीवन का सहारा या सब कुछ। निश्छल=पवित्र। दुर्बल=शक्तिहीन, कमजोर स्मृतिवाली। शाति प्रात=शातिरूपी प्रभात वेला।

व्याख्या—मनु के दु:ख पूर्ण वचन सुनकर श्रद्धा ने कहा—प्रियतम यह 'विनम्र एवं शातरात्रि मुझे बीती हुई उन बातों की स्मृति करा रही है जब देव सृष्टि का विनाश करने वाली भयकर प्रलय का तीव्र कोलाहल शात होने पर, मैं तुमसे मिली थी और मैं स्वेच्छा से अपना सब कुछ तुम्हारे चरणो में समर्पित कर, पवित्र भाव से तुम्हारी हो गयी थी। मैं इतनी कमजोर स्मृति वाली नही हूँ कि उन सब पुरानी बातो को भूल जाऊँ और मैं तो यही चाहती हूँ कि जिस प्रकार अन्धकार पूर्ण रात्रि के पश्चात् शांतिपूर्ण प्रभात का आगमन होता है उसी प्रकार तुम्हे भी इन सांसारिक कष्टो से जहाँ शान्ति मिलती हो, तुम वहीं चलो और मन मे यह विश्वास रखो कि मैं हमेशा तुम्हारी हूँ तथा तुम्हारा साथ हमेशा दूँगी।

टिप्पणी—यहाँ 'शाति प्रात' मे रूपक अलकार है।

इस देव द्वन्द्व .... पड़ी लीक।

शब्दार्थ—द्वन्द्व=युग्म, जोडा अर्थात् मनु और श्रद्धा। प्रतीक=चिन्ह, प्रतिनिधि। महाविषम=बहुत भयंकर। कर्मोन्नति=अपने सुन्दर एव उच्च कार्यों द्वारा प्राप्त उन्नति। सम=समान। मुक्त=बंधनहीन, स्वतत्र। रहस्य =जीवन की उन्नति का गूढ साधन। शुभसयम=पवित्र सयमित जीवन। अलीक=मिथ्या, असत्य। लीक=परम्परा।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है—हम दोनों का पुत्र मानव हमारा प्रतीक है और वह अगाध विश्वास एव मननशीलता द्वारा सारस्वत नगर मे हुई तुम्हारी सभी भूलो को ठीक कर लेगा। तुम्हारे द्वारा वर्णाश्रम का विभाजन किए जाने से सारस्वत नगर मे जो पारस्परिक कटुता और द्वेष का भयकर विष फैल गया है उसे भी कुमार मानव अपने शुभ कर्मों के द्वारा उन्नति करके तथा समानता की भावना का प्रचार करके दूर कर देगा। इस प्रकार सारस्वत नगर के निवासी सभी प्रकार के कष्टो से मुक्त हो जायेंगे और अपने-अपने भ्रमों को दूर कर यह रहस्य जान लेंगे कि जीवन मे उन्नति तभी संभव है जबकि शुभसयम से जीवन व्यतीत किया जाय। अतएव पुत्र मानव के प्रयत्न से सारस्वत नगर की प्रजा के मध्य फैला हुआ मिथ्या का प्रचार समाप्त हो जाएगा और एक परम्परा समाप्त होकर दूसरी परम्परा प्रारम्भ हो जाएगी अर्थात् वहाँ पारस्परिक प्रेम सौहार्द्र एव एकता की परम्परा स्थापित होगी।

टिप्पणी—यहाँ 'विष' शब्द मे रूपकातिशयोक्ति अलकार जहत्स्वार्था लक्षणा है।

वह शून्य असत .... परे पार।

शब्दार्थ—असत=असत्य, सत्वहीन। अवकाश पटल=अतरिक्ष। उन्मुक्त स्वतत्र। सघन=घना। अचल=सुस्थिर, अटल। स्निग्ध=चिकना, प्रममय, मधुर। मलिन=धूमिल, धुंधला। निर्निमेष=अपलक। लोचन=नेत्र। शून्य सार=सारभूत अधकार।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस समय सर्वत्र सत्वहीन सघन अधकार छाया हुआ था और सम्पूर्ण विश्व शून्य के सदृश्य जान पडता था। इस शून्य को चाहे अभाव कहा जाय अथवा अधकार पर वह सम्पूर्ण अतरिक्ष म व्याप्त दिखाई देता था और वह बाहर भीतर, सर्वत्र स्वतन्त्रतापूवक अत्यत घना होकर फैला हुआ था। अधकार की यह सघनता देखकर यही प्रतीत होता था कि विश्व म चारों ओर नीले रग का अजन अत्यधिक मात्रा में स्थिरता के साथ फैला हुआ है और यह सघन अधकार मनु को एक आगामी दृश्य की अत्य त चिकनी तथा धुंधली पृष्ठभूमि के रूप से दिखाई दिया। मधु इस अधकार को टकटकी लगाकर देख रहे थे, परन्तु यह अधकार सीमारहित होकर इतना अधिक फैला हुआ था कि उसके आर-पार कुछ भी दिखाई नहीं देता था।

टिप्पणी—यहाँ गम्योत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

सत्ता का स्पदन . ... लहर लोल।

शब्दाय सत्ता=विराट् शक्ति, परम शिव। स्पदन=गति, कम्पन। आवरण पटल=अधकार का परदा। तम जल निधि=अधकार रूपी सागर। ज्योत्स्ना सरिता=चाँदनी रूपी नदी। रजत गौर=चाँदी के समान श्वेत। उज्ज्वल=कातिमान। आलोक पुरुष=प्रकाशपूर्ण शिव। लहर लोल=चचल लहर।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस समय अधकार के परदे को चीरती हुई और प्रकाश में हलचल मचाती हुई एक विराट् शक्ति प्रकट हुई जिसम अधकार का उसी प्रकार मधुरता से मन्थन होने लगा जिस प्रकार समुद्र मथन हुआ था। साथ ही जिस प्रकार समुद्र मथन के उपरान्त समुद्र मे चौदह रत्न निकले थे। उसी प्रकार अधकार मे से चाँदी के समान श्वेत, कीतिमान और अनन्त कल्याणकारिणी शक्तियो से परिपूण शिव का आविर्भाव हुआ। वह विराट पुरुष अर्थात् शिव मगलमय और चिति स्वरूप था और उसमे चाँदनी

-की नदी का मिलन दिखाई देता था अत उसके प्रकट होते ही सर्वत्र केवल प्रकाश ही दिखाई पड रहा था और प्रकाश की किरणें चचल लहरो की भाँति तरगित हो रही थी।

टिप्पणी—यहाँ आवरण पटल मे रूपक एव रूपकातिशयोक्ति और सम जलनिधि तथा ज्योत्स्ना सरिता मे रूपक तथा प्रकाश के कलोल मे मानवीकरण अलकार है।

बन गया तमस ... . दिशाकाल।

शब्दार्थ—तमस=अन्धकार। अलकजाल=केशराशि या जटाओ का समूह। सर्वांग=सम्पूर्ण शरीर। ज्योतिर्मय—कातिपूर्ण, प्रकाशयुक्त। अन्तर्निनाद=अनहद नाद, हृदय के भीतर गूँजने वाली ध्वनि। शून्य भेदिनी=अन्धकार को फूट कर प्रकट होने वाली। नृत्य निरत=नाचने मे तल्लीन, यहाँ ताडव नृत्य मे लीन से अभिप्राय है। प्रहसित=हँसता हुआ। मुखरित=ध्वनित गुजित। दिशा काल=स्थान और समय।

व्याख्या—कवि का कहना है कि वह विस्तृत अन्धकार ही नटराज शिव की जटाओ का समूह प्रतीत हो रहा था और स्वय शिव का शरीर अत्यन्त विशाल और कातिमय दिखाई दे रहा था। सम्पूर्ण ब्रह्माड मे उस समय अनहद नाद सुनाई देता था और शिव अज्ञान के अन्धकार को भेदकर ज्ञान का प्रकाश करने वाली सत्ता के रूप मे ताडव नृत्य करने मे तल्लीन थे। नटराज शिव के इस ताडव नृत्य के कारण सम्पूर्ण नीरव अन्तरिक्ष प्रकाश और ध्वनि से परिपूर्ण हो गया तथा वह प्रकाश के रूप मे हँसता हुआ था और ध्वनि के रूप मे गुजित सा प्रतीत होता था। साथ ही उस समय उत्पन्न होने वाली सभी ध्वनियाँ एक ही लय मे बधकर ताल दे रही थी और स्थान तथा समय का ज्ञान भी नष्ट हो गया था।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है।

लीला का ... . हुआ नाद।

शब्दार्थ—लीला=नृत्य, क्रीडा। स्पदित=आदोलित, उत्पन्न होने वाला। आह्लाद=आनद। प्रभापुंज=ज्योति की राशि। चितिमय=चेतना से पूर्ण। प्रसाद=प्रसन्नता, हर्ष। श्रम सीकर=पसीने की बूँद। हिमकर=चन्द्रमा। दिनकर=सूर्य। भूधर=पर्वत। सहार=विनाश। सृजन=निर्माण, सृष्टि। युगल पाद=दोनो पैर।

व्याख्या—कवि नटराज शिव के ताडव नृत्य का वर्णन करते हुए कह रहा है कि शिव के इस नृत्य के कारण जो आनन्द उत्पन्न हो रहा था वह ज्योति की राशि भगवान शिव की चेतना से पूर्ण प्रसन्नता का द्योतक है। स्वय शिव आनन्दपूर्वक इस सुन्दर ताडव नृत्य मे तन्मय थे और उनके शरीर से पसीने की जो बूँदें झलक रही थी वे तारा, चन्द्र और सूर्य की भाँति चमक रही थी तथा उनके चरणो की गति से विचलित होकर पर्वत धूलिकणो के समान उडते हुए दिखाई दे रहे थे। साथ ही शिव के दोनो चरण क्रमश विनाश और निर्माण के प्रतीक से दिखाई देते थे अर्थात् उनके ताडव नृत्य के कारण यदि एक ओर तामसी पदार्थों का नाश हो रहा था तो दूसरी ओर सात्विक पदार्थों का निर्माण भी हो रहा था। साथ ही सर्वत्र अनाहत नाद तीव्रता के साथ गूँज रहा था।

टिप्पणी – यहाँ अतिशयोक्ति एव उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

बिखरे असख्य . रहा डोल।

शब्दार्थ—असख्य=अगणित। युग=सतयुग, त्रेता युग, द्वापर युग और कलियुग नामक चार युग। तोल=भार, सतुलन। विद्युत कटाक्ष=बिजली सी दृष्टि। ससृति=सृष्टि। चेतन परमाणु=अणु परमाणु। महा दोल=बडा झूला। पट=परदा।

व्याख्या—कवि नटराज शिव के ताडव नृत्य का वर्णन करते हुए कहता है कि शिव के उस ताडव से अगणित गोल-गोल ब्रह्माड बिखरे हुए दिखाई दे रहे थे और चारो युगो मे से क्रमश एक एक युग समाप्त हो रहा था और दूसरा युग अपने सतुलन को ग्रहण करता हुआ जान पडता था। साथ ही जिस ओर भगवान शिव की बिजली के समान चमकने वाली तिरछी दृष्टि जाती थी उसी ओर सृष्टि कापने लगती थी और उस समय असख्य अणु परमाणु बिखर रहे थे तथा वे कभी तो परस्पर मिलकर कोई रूप ग्रहण कर लेते और दूसरे ही क्षण अलग-अलग होकर फिर बिखर जाते थे। इसी प्रकार सम्पूर्ण ससार झूले मे झूलता दिखाई देता था और क्षण-क्षण मे परिवर्तन हो रहे थे।

टिप्पणी—यहाँ गम्योत्प्रेक्षा एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

उस शक्ति शरीरी ... ... धवल हास।

शब्दार्थ—शक्ति शरीरी=अनत शक्ति स्वरूप शिव। नर्तन—नृत्य। विरत=लीन, तन्मय। कांति सिंधु=सौन्दर्य या शोभा का सागर। कमनीय= सुन्दर, मधुर। भीषणतर=अधिक भयकर। हीरक गिरि=हीरे का पर्वत।

झाँकी अंकित हुई है और प्रकृति के सचेतन रूप का सुन्दर चित्रण किया गया है।

(२) यहाँ 'स्वच्छ प्रात के सोने' और वृक्षांत के चुपचाप खड़े होकर सुनने में मानवीकरण तथा 'धारा वह जाती विम्ब अटल' में विरोधाभास और 'पवन पटल' में रूपक अलंकार है।

(३) कामायनी के इस सर्ग में मिश्रित छन्द का प्रयोग हुआ है और इसके प्रत्येक पद में आठ पंक्तियाँ हैं जिनमें से प्रथम दो और अन्तिम दो पंक्तियों में पद्धरि छन्द है तथा बीच की चार पंक्तियों में पादाकुलक छन्द प्रयुक्त हुआ है।

धूमिल छायाएँ .... लिया चूम।

शब्दार्थ—धूमिल=धुंधली। लहरी=लहरें। निर्जन=एकांत, जनशून्य, सुनसान। गंध धूम=अगरु, चंदन आदि का सुगंधित धुआँ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अमावस्या के सघन अंधकार में धुंधली छायाएँ नदी के किनारे घूम रही थीं और लहरें श्रद्धा के पैरों को चूम रही थीं। कहने का अभिप्राय यह है कि अपनी माँ श्रद्धा को राजभवन में न देख कुमार उसे इधर-उधर ढूंढ रहा था और श्रद्धा व कुमार को भवन में न देख इड़ा उन दोनों को ढूंढ रही थी अतः दोनों के शरीर की धुंधली छायाएँ वहाँ घूमती दिखाई दे रही थीं। कुछ देर बाद कुमार अपनी माँ श्रद्धा को ढूंढ़ निकालने में सफल रहा और वह श्रद्धा से कहने लगा—'हे माँ! इतनी दूर तू कहाँ आ गयी। सन्ध्या को व्यतीत हुए बहुत समय हो गया है और रात घिर आई है। इस एकान्त में ऐसी कौन-सी सुन्दर वस्तु है, जिसे तू देख रही है! उठ, अब घर चल। देखो, हमारे घर में यज्ञ का सुगंधित धुआँ उठ रहा है।' पुत्र की इन बातों को सुनकर श्रद्धा ने उसका मुख चूम लिया।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एवं मानवीकरण अलंकार की योजना हुई है।

माँ! क्यों तू .... जाती हताश।

शब्दार्थ—दुसह=असहनीय। दह=जलन। ढीली सी=शिथिल सी। हताश=निराश।

व्याख्या—कुमार श्रद्धा से कह रहा है—हे माँ! तू क्यों इतनी उदास है? क्या मैं तेरे पास नहीं हूँ जो तेरी चिन्ताओं को दूर कर सकूँ? तू कई दिनों से चुपचाप रहकर पता नहीं क्या-क्या सोचा करती है? आखिर मुझे

चौदहवाँ सर्ग

रहस्य

कथानक—जब मनु ने नृत्य करते हुए नटराज शिव को देखा तब उन्होंने श्रद्धा से अनुरोध किया कि वह उन्हें अपना सहारा देकर भगवान शिव के चरणो तक ले चले और श्रद्धा ने मनु को लेकर हिमालय पर्वत पर चढ़ना आरम्भ किया। वे दोनो साहसपूर्वक आगे बढते चले जा रहे थे और श्रद्धा आगे-आगे चलकर मनु का पथ-प्रदर्शन कर रही थी। जैसे-जैसे आगे बढ़ते गये उन्हे अगणित रम्य एव भीषण दृश्यो के दर्शन हुए। कही सफेद बर्फ बिछी थी, कही पगडडियाँ थी, कही भयकर खड्ड-खाइयाँ थी, कही मधुर स्वर करती हुई नदियाँ बह रही थी, कही सूर्य की किरणें हिमखडो मे प्रतिबिम्बित होकर असख्य चन्द्रमाओ का भ्रम उत्पन्न कर रही थी, कही हाथी के सदृश्य काले बादल मतवाले हो झूम रहे थे, कही झरने झर रहे थे और कही हरियाली छाई थी। इन सबसे ऊपर पहाड की चोटियाँ आकाश का चुम्बन करती हुई अत्यन्त अद्भुत और मनोरम प्रतीत हो रही थी।

कुछ ऊँचाई पर चढने के उपरान्त मनु थक गये और उन्होने श्रद्धा से वापिस लौटने का आग्रह किया पर श्रद्धा ने व्याकुल मनु को सहारा देते हुए मधुर स्वर मे कहा—अब हम बहुत आगे बढ आये हैं और पीछे लौटने का समय नही रहा। अब तो साहस के साथ आगे बढना ही ठीक होगा और हम थोडी देर मे कही विश्राम योग्य स्थान पा लेगे। इस प्रकार बातो ही बातो मे दोनो एक समतल भूमि पर पहुँचे और इसी बीच सध्या आ गई। मनु ने स्वय को एक ऐसे स्थान पर खडे हुए देखा जहाँ एक नवीन चेतना उदित हो रही थी और तीन रगो के तीन गोलाकार बिन्दु दिखाई दे रहे थे। इन बिन्दुओ को देखकर मनु को बडा आश्चर्य हुआ और उन्होंने श्रद्धा से पूछा—'ये नवीन ग्रह कौन से हैं? हम लोग कहाँ पहुँच गये? यह सब कैसी माया है?'

मनु की जिज्ञासा का समाधान करते हुए श्रद्धा ने कहा—'ये इच्छा, ज्ञान और कर्म के लोक है। उषा की लालिमा लिए जो बिन्दु दिखाई देता है वह

इच्छा-लोक है और इसमे भावो की प्रतिमाएँ निवास करती हैं। इस लोक में शब्द, स्पर्श, रस, रूप एव गध की अप्सराएँ नृत्य करती हैं और माया यहाँ की शासिका है तथा वही सम्पूर्ण भावचक्र का सचालन करती है। यह लोक जीवन की प्रधान भूमि है, जो कि प्रेम रस से सिंचित होती है। इस लोक में कामना की तरगें उठती रहती हैं और यहाँ मधुर विश्वो का वैभव भी है। साथ ही यहाँ प्राणी मधुर सगीत सुनने की इच्छा करता है, कोमल शरीर का स्पर्श करने की कामना रखता है, जिह्वा से विभिन्न रसो का स्वाद लेने के लिए आतुर रहता है, नेत्रो से रम्य रस का दर्शन करना चाहता है और नासिका से सुगध ग्रहण कर मन को तृप्त करना चाहता है। इस लोक की भावभूमि से पाप एवं पुण्य का जन्म होता है और यहाँ नियम एव भावनाओ का सघर्ष चलता रहता है तथा यहाँ वसत और पतझर दोनो हैं। इसी प्रकार यहाँ अमृत और विष दोनो होने के कारण मनुष्य सुख भी पा सकता है और दुख भी।'

यह सुनकर मनु ने कहा—'वास्तव मे यह देश बहुत सुन्दर है परन्तु यह दूसरा श्याम लोक कौन-सा लोक है? इसका क्या रहस्य है।' मनु की जिज्ञासा का समाधान करते हुए श्रद्धा कहने लगी—'इसे कर्मलोक कहते हैं और यह एक पहेली सा उलझा है। यह धुँधला एव अन्धकारमय है क्योकि यह निश्चय-पूर्वक नही कहा जा सकता कि कर्तव्य क्या है और अकर्तव्य क्या है? यहाँ की शासिका नियति है और वही कर्मचक्र को घुमाती रहती है। यहाँ इच्छाओ से ही कर्मों का नवीन जन्म होता है, और कर्म करने वालों को विश्राम नहीं मिलता और वे सदैव सघर्ष मे लीन रहते हैं। जो विश्राम पसन्द नही करते, उनके नाम का जयघोष होता है परन्तु जो पराजित और दलित हैं वे हमेशा दुखी रहते है। यहाँ प्राणियो के मन मे तीव्र महत्वाकाक्षा विद्यमान है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही उन्नति के लिए मतवाला है तथा बडे से बड़ा पाप करने पर उतारू हो जाता है। इतना ही नही यहाँ प्राणियों को पर्याप्त वैभव प्राप्त करने के बाद भी सतोष नही होता और वे क्षणिक सुखो के पीछे पागल होकर दौडते हुए दिखाई देते हैं तथा अनेक प्रकार के अपराध करते हैं। इस प्रकार कर्मलोक मे प्राणी अपने ही सुख के लिए सतत प्रयत्नशील दिखाई देता है और कोई भी अपने उद्देश्य की पूर्ति से सतुष्ट नही जान पडता।

कर्मलोक का यह भयावना दृश्य देखकर मनु कहने लगे—'यह लोक तो

अत्यन्त भयावना है और इसकी चर्चा यहीं समाप्त कर तुम इस तीसरे उज्ज्वल लोक के सम्बन्ध में कुछ बतलाओ।' श्रद्धा ने कहा—'प्रियतम, यह चाँदी के सदृश्य श्वेत रंग का ज्ञानलोक है और यहाँ व्यक्ति सुख-दुःख दोनों से ही उदासीन रहकर केवल मुक्ति की ही अभिलाषा रखते हैं। इस लोक में कठोर अनुशासन का पालन होता है और हमेशा बुद्धि का चक्र चलता रहता है। इसीलिए यहाँ के प्राणी तर्कशील हैं और सूक्ष्म तर्क से अस्ति-नस्ति का भेद किया करते हैं तथा शास्त्र की प्रत्येक आज्ञा का पालन सतर्कतापूर्वक करते हैं। यहाँ धर्मानुसार अधिकारों की व्यवस्था है और इस लोक के प्राणी बाहर से शान्त दिखाई देते हैं लेकिन मन ही मन इस बात से डरते रहते हैं कि उनसे कहीं कोई पाप न हो जाय। यहाँ के प्राणी इच्छाओं का तिरस्कार करते हैं और किसी अलक्ष्य सत्ता में विश्वास रखते हैं तथा प्रकृति में क्षण-क्षण होने वाले परिवर्तनों के अनुसार अपने जीवन को ढाल लेते हैं।'

इस प्रकार इच्छा, कर्म एवं ज्ञान नामक तीन लोकों का परिचय देने के उपरान्त श्रद्धा ने मनु से कहा—'ये तीनों ज्योतिपूर्ण बिन्दु त्रिपुर कहलाते हैं और ये तीनों अपने आप में ही लीन हैं तथा एक-दूसरे से भिन्न हैं। इसीलिए इनमें से कोई भी लोक एक-दूसरे के सुख-दुःख में भाग न लेकर अपने-अपने सुख-दुःख का केन्द्र बना हुआ है। जब ज्ञान और क्रिया में ही सामंजस्य नहीं है तब मन की अभिलाषा कैसे पूर्ण हो सकती? वास्तव में इन तीनों लोकों का पार्थक्य ही मानव जीवन के दुःख का मूल कारण है।' इतना कहकर श्रद्धा मुस्करा दी और उसकी मुस्कान तीव्र प्रकाश की किरण के समान तीनों लोकों में फैल गई तथा वे तीनों मिलकर एक होगये। उनमें शक्ति की नवीन तरंग जाग्रत हो उठी और शृंग एवं डमरू की ध्वनि गूँज उठी तथा नटराज शिव ताण्डव नृत्य करते दिखाई देने लगे। यह दृश्य देखकर मनु की सांसारिक भावनाएँ नष्ट हो गयीं और वे श्रद्धा सहित एक अलौकिक आनन्द में मग्न होगये।

ऊर्ध्व देश . . .. .. गिरि अभिमानी।

शब्दार्थ—ऊर्ध्व देश=ऊँचा प्रदेश या स्थान। तमस=अन्धकार। स्तब्ध=शान्त। अचल हिमानी=अत्यधिक जमी हुई बर्फ। चतुर्दिक=चारों ओर। गिरि=हिमालय पर्वत।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मनु के कहने से श्रद्धा उनके साथ हिमालय पर्वत पर चढ़ने लगी तब मनु ने देखा कि उस ऊँचे प्रदेश और उसके

अन्धकार में अत्यधिक जमी हुई बर्फ बिल्कुल शांत थी। इस प्रकार वहाँ सर्वत्र नीरवता का साम्राज्य था और वहाँ तक पहुँचने वाला मार्ग भी समाप्त होगया था और ऐसा जान पड़ता था कि मानो मार्ग भी थककर बर्फ में विलीन होगया हो। इसी प्रकार ऊँची-ऊँची चोटियों वाला हिमालय पर्वत ऐसा जान पड़ता था मानो वह अपनी ऊँचाई के गर्व से चारों ओर देख रहा हो।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में हिमालय के उच्च शिखर का वर्णन करते हुए वहाँ की भौगोलिक स्थिति का सुन्दर चित्रण किया गया है।

(२) यहाँ उत्प्रेक्षा एवं मानवीकरण अलंकार की योजना हुई है।

(३) कामायनी के इस सर्ग में कवि प्रसाद ने ताटंक छंद में अंत में एक गुरु जोड़कर सोलह-सोलह मात्राओं की यति से बत्तीस मात्राओं के स्वनिर्मित नवीन छन्द का प्रयोग किया है।

दोनों पथिक .. .. से बढ़ते।

शब्दार्थ - दोनों पथिक=श्रद्धा और मनु।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा और मनु न जाने कब से हिमालय की ऊँची-ऊँची चोटियों पर चढ़ते चले जा रहे थे और उन दोनों में श्रद्धा आगे थी और मनु उसके पीछे-पीछे चल रहे थे। इस प्रकार उन दोनों यात्रियों को देखकर यही जान पड़ता था कि मानो साहस और उत्साह साथ-साथ चल रहे हों।

टिप्पणी—यहाँ अंतिम दो पंक्तियों में यथासंख्य और 'ऊँचे-ऊँचे चढ़ते-चढ़ते' में पुनरुक्ति अलंकार की योजना हुई है।

पवन वेग .... निर्मोही।

शब्दार्थ—पवन वेग=वायु की गति, हवा के झोंके। प्रतिकूल=विरुद्ध, विपरीत। बटोही=यात्री, मनु और श्रद्धा से अभिप्राय है। भेद कर=विदीर्ण करके, चीर कर। निर्मोही=निष्ठुर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब श्रद्धा और मनु हिमालय पर्वत पर काफी ऊँचे चढ़ गये तब उन्होंने यह अनुभव किया कि हवा के झोंके विपरीत दिशा से बड़ी तेजी से आ रहे हैं और वे उन्हें सम्बोधित कर कहते हैं—'अरे पथिक! तू वापिस चला जा। तू मुझे चीर कर कहाँ चला जा रहा है? क्या तू आज अपने प्राणों के प्रति इतना उदासीन हो गया है कि प्राणों की भी चिन्ता न कर आगे बढ़ता ही जा रहा है।

छूने को .. . . भयकरी खाँईं ।

शब्दार्थ—अम्बर=आकाश । मचली सी=आकुल सी । सतत=निरतर, लगातार । विक्षत=टूटे-फूटे, कटे-फटे । प्रगट थे=दिखाई दे रहे थे । भीषण=भयकर । भयकरी=डरावनी ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि हिमालय की ऊँचाई इतनी अधिक थी कि उसे देखकर ऐसा जान पडता था कि मानो वह आकाश को छूने के लिए व्याकुल सी हो और यही कारण है कि वह लगातार बढ़ रही थी । साथ ही हिमालय पर्वत मे भयकर गड्ढे और डरावनी खाईयाँ भी थी तथा उन्हें देखकर यही प्रतीत होता था कि मानो हिमालय पर्वत के अग क्षत-विक्षत होकर टूट-फूट गये हों ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव गम्योत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है ।

रविकर .... . लौट आ जाता ।

शब्दार्थ—रविकर=सूर्य की किरणें । हिमखडों=बर्फ की चट्टानो । हिमकर=चद्रमा । द्रुततर=अधिक या अत्यत तेज ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय की चोटियों पर पडी हुई बर्फ के टुकडों पर जब सूर्य की किरणें पडती थी तब वहाँ कितने ही नवीन चन्द्रमा दिखाई देने लगते थे और वायु भी अत्यन्त तेजी के साथ चक्कर काटकर वहीं लौट आती थी जहाँ से उसने चलना आरम्भ किया था ।

टिप्पणी—यहाँ परिकराकुर और विरोधाभास अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

नीचे जलधर .... गहने ।

शब्दार्थ—जलधर=बादल । सुर धनु=इन्द्र धनुष । कुंजर कलभ=हाथी का बच्चा । सदृश=समान । चपला=बिजली ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि हिमालय पर्वत के नीचे की ओर दौडते हुए बादलो मे इन्द्रधनुष सुशोभित था और बिजली चमक रही थी । यह देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि बादल इन्द्रधनुष की रग बिरगी माला और बिजली के चमकते हुए गहने पहनकर हाथी के बच्चे के समान इठलाते हुए घूम रहे हो ।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा एव रूपक अलकार की सुन्दर योजना हुई है ।

प्रवहमान . .. . . मधु धारायें जैसे ।

शब्दार्थ—प्रवहमान थे=बह रहे थे । निम्न देश=नीचे का भाग ।

विद्युत विलास=बिजली का प्रकाश । **उल्लसित**=प्रसन्न । **हिम धवल हास**=बर्फ के समान उज्ज्वल हँसी ।

व्याख्या—कवि नटराज शिव के तांडव नृत्य का वर्णन करते हुए कह रहा है कि जब अनंत शक्ति स्वरूप शिव ने इच्छा, क्रिया एवं ज्ञान आदि अनंत शक्तियों से मिश्रित स्वरूप धारण किया तब उनसे एक ऐसा अलौकिक प्रकाश निकलने लगा जो सभी प्रकार के दुःख और पापों को नष्ट कर रहा था । इस प्रकार शिव दुःख और पापों को नष्ट करके तांडव नृत्य में तल्लीन थे तथा शिव के शरीर से निकलने वाले तीव्र प्रकाश से यह संपूर्ण प्रकृति गल-गल कर शिव के उस शरीर में उसी प्रकार मिल रही थी जिस प्रकार नदियाँ समुद्र में गिरकर उसमें घुलमिल जाती हैं । अतएव शिव के उस सुन्दर शरीर में घुल मिलकर प्रकृति नवीन रूप धारण कर रही थी और उसका अत्यन्त भयंकर रूप भी सुन्दर जान पड़ता था । साथ ही तांडव नृत्य करते हुए नटराज शिव के मुख पर प्रसन्नता से उत्पन्न बर्फ के सदृश उज्ज्वल हँसी विद्यमान थी और वह ऐसी प्रतीत होती थी जैसे हीरे के पर्वत पर बिजली की प्रभा सुशोभित हो ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, विरोधाभास, गम्योत्प्रेक्षा एवं उपमा अलंकार की योजना हुई है ।

देखा मनु ... . आनन्द वेश ।

शब्दार्थ—नर्त्तित=नाचते हुए । नटेश=नटराज शिव । हतचेत=बेसुध । निज संबल=अपना सहारा । ज्ञान लेश=ज्ञान का सूक्ष्म अंश ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब मनु ने नाचते हुए नटराज शिव को देखा तो वे बेसुध से होकर श्रद्धा से कहने लगे—हे श्रद्धे ! यह क्या ही अपूर्व दृश्य है । अब तू मुझे अपना सहारा देकर नटराज शिव के उन चरणों तक ले चल जहाँ पहुँचने पर समस्त पाप और पुण्य शिव के तीव्र प्रकाश में जलकर, भस्म हो अपनी कालिमा दूर कर पवित्र और निर्मल हो जाते हैं साथ ही जहाँ पहुँचने पर असत्य से उत्पन्न मिथ्या ज्ञान का सूक्ष्म अंश भी नहीं रहता और जहाँ सम्पूर्ण सृष्टि समत्व से अनुप्राणित है तथा जहाँ केवल आनन्द ही आनन्द है ।

टिप्पणी—यहाँ कवि प्रसाद के आनन्दवादी दर्शन की अत्यन्त सरस एवं स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है ।

व्याख्या – पर्वत की ऊँची चोटी पर पहुच कर मनु ने श्रद्धा से कहा कि अब तुम मुझे कहाँ ले जा रही हो। मैं बहुत अधिक थक गया हूँ और मेरा साहस छूट गया है तथा मैं एक असहाय एव निराश यात्री के समान हूँ।

टिप्पणी —यहाँ रूपक अलकार है।

लौट चलो .... न सकूँगा।

शब्दार्थ—वातचक्र=वायु का तूफान, तीव्र आँधी, बवण्डर। श्वास=साँस। रुद्ध=बन्द। शीत=ठडी।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं—'अब तुम यहाँ से वापिस लौट चलो क्योंकि मेरे लिए आगे बढ़ना सम्भव नही है। मै बहुत कमजोर हूँ और वायु के इस तूफान से अब मैं लड नही सकता। साथ ही यहाँ हवा बहुत ठडी है और मेरी साँस भी रुँधी जाती है तथा मैं इस वायु को सहन भी नही कर सकता।'

टिप्पणी—यहाँ कवि की मुहावरेदार सुललित भाषा के दर्शन होते है।

मेरे, हाँ .... पाया हूँ।

शब्दार्थ—रूठकर=नाराज होकर। सुदूर=बहुत दूर।

व्याख्या—मनु श्रद्धा से कह रहे हैं कि मैं जिन लोगो से नाराज होकर यहाँ तक चला आया हूँ वे सब मेरे अपने सम्बन्धी थे। वे अब यहाँ इस हिमालय पर्वत की ऊँची चोटी से बहुत नीचे और बहुत दूर छूट गये हैं परन्तु मैं उन्हे भूल नही सकता और उनकी याद मुझे अभी भी व्याकुल कर देती है।

वह विश्वास .. ललक उठो थी।

शब्दार्थ—स्मिति=हँसी, मुस्कान। निश्छल=छल रहित, शुद्ध। कर पल्लव=कोमल पत्तो जैसे हाथ। ललक उठना=लालायित होना, ललचा उठना।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु की निराशापूर्ण बातें सुनकर श्रद्धा के मुख पर विश्वासपूर्ण शुद्ध मुस्कान झलकने लगी और उसके कोमल पत्तो जैसे हाथ मनु की सेवा करने के लिए लालायित हो उठे।

टिप्पणी—यहाँ कर पल्लव मे रूपक और सेवा के लिए कुछ करने को ललक उठने में विशेषण विपर्यय अलकार है।

वे अवलम्ब .... .. ठिठोली।

शब्दार्थ—अवलम्ब=सहारा। विकल=व्याकुल, बेचैन। ठिठोली=हँसी मजाक, परिहास।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि थके हुए और व्याकुल साथी मनु को सहारा देकर श्रद्धा ने मधुर वाणी मे कहा—अब हम लोग इतनी दूर आ गये हैं कि यहाँ से वापिस लौटना असम्भव है। इस प्रकार अब वापिस लौटने की बात सोचना तो मजाक करना ही है।

दिशा विकम्पित .... भूधर है।

शब्दार्थ—विकम्पित=काँपती हुई, अस्थिर। पल=क्षण, समय। अनन्त=विस्तृत आकाश। पद तल=पैरों के नीचे। भूधर=पर्वत।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है—'हम लोग इस समय ऐसे स्थान पर खडे हैं जहाँ से दिशाएँ काँपती हुई जान पडती हैं अर्थात् ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि कौन सी दिशा किस ओर है। साथ ही यहाँ समय भी सीमाहीन है अर्थात् समय का भी ठीक-ठीक ज्ञान नही हो पाता और यहाँ केवल विस्तृत आकाश ही ऊपर दिखाई देता है। ऐसी दशा मे, जब दिन एव समय का बोध समाप्त हो गया है तब क्या तुम वास्तव मे यह अनुभव करते हो कि तुम्हारे पैरो के नीचे पर्वत है ?

टिप्पणी—श्रद्धा के इन उद्गारो में कवि ने साधक की उस चरम स्थिति का वर्णन किया है जहाँ पहुँचकर वह दिशा एव काल की सीमा से दूर हो जाता है।

तुलनात्मक दृष्टि—कठोपनिषद् मे भी कहा गया है—

न तत्र सूर्यो भाति न चद्र तारक नेमा विद्युतो भाँति कुतोऽयमग्नि ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिद विभाति ॥

निराधार हैं .... नहीं है।

शब्दार्थ—निराधार=आधारहीन, वेसहारा, शून्य। नियति=ससार की नियामिका शक्ति।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को सम्बोधित कर कहती है कि हम दोनों इस समय शून्य मे चल रहे हैं पर आज हम दोनों को यहीं उतरना है और यहीं ठहरने पर हम ससार की नियामिका शक्ति के प्रभाव से वच सकते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई ऐसा उपाय नही है जिससे हम इस नियति नामक शक्ति के प्रभाव से वच सकें।

टिप्पणी—इन पक्तियो को शैव दर्शन से प्रभावित समझना चाहिए क्योकि शैवागम के प्रत्यभिज्ञा दर्शन मे 'नियतिर्योजना घत्ते विशिष्टे कार्यमडले'

कहकर नियति को सृष्टि के विशिष्ट कार्यों के लिए विशिष्ट कारणों की योजना करने वाली माना गया है।

झाँई लगती .... आ सहती।

शब्दार्थ—झाँई=आँखों के सामने अँधेरा छा जाना। प्रतिकूल=विरुद्ध, विपरीत।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है—तुम्हारे नेत्रो के सामने यह जो अन्धकार सा दिखाई दे रहा है वह तुम्हे कुछ और ऊपर उठने अर्थात् आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रहा है। इस प्रकार जब तुम कुछ और आगे बढ जाओगे तब विपरीत पवन के ये तीव्र झोंके तुम्हें विचलित न कर सकेंगे और तुम्हारे मन मे उत्साह जाग्रत होगा।

टिप्पणी—यहाँ 'झोंक दूसरे' मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

श्रान्त पक्ष ... . जम रहें।

शब्दार्थ—श्रान्त=थके हुए। पक्ष=पख। विहग=पक्षी। युगल=जोडा। शून्य=सूना प्रदेश।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि जिस प्रकार पक्षियों का जोडा पखों के थक जाने पर आकाश मे ही अपने पख फैलाकर और नेत्र बन्द कर अपनी थकान मिटा लेता है उसी प्रकार हम भी कुछ देर तक इस सूने प्रदेश मे ही विश्राम कर लें जिससे कि हमे आगे बढने के लिए नवीन स्फूर्ति मिल सके।

टिप्पणी—यहाँ उपमा एव रूपक अलकार की योजना हुई है।

घबराओ मत . त्राण पा गये।

शब्दार्थ—समतल=समभूमि। त्राण=रक्षा, बचाव।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि अब घबराने की कोई आवश्यकता नही है क्योकि हम समभूमि पर पहुच गये हैं और चढ़ाई समाप्त हो गई है। कवि का कहना है कि श्रद्धा की यह आशाभरी वाणी सुनकर जब थके हुए मनु ने अपने नेत्र खोलकर देखा तो उनकी व्याकुलता दूर हो गई और उन्हें सतोष हुआ।

ऊष्मा का अनुभव .. .... व्यस्त थे।

शब्दार्थ—ऊष्मा=गर्मी, चेतना। अभिनव=नवीन। अस्त थे=छिपे

थे। दिवा=दिन। संधिकाल=सवेरे और शाम के मिलन का समय अर्थात्, प्रभात एवं संध्या काल। व्यस्त=लीन।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस समतल भूमि में पहुंचकर मनु को एक प्रकार की नवीन चेतना का अनुभव हुआ। श्रद्धा और मनु जिस स्थान पर पहुचे थे वहाँ न तो दिन मे सूर्य ही उदय होता था और न रात्रि मे ग्रह एव तारे ही दिखाई देते थे। इतना ही नही वहाँ दिन और रात्रि के मिलन के समय दिखाई देने वाली प्रभातकालीन एव सध्याकालीन अवस्था का भी कोई चिन्ह शेष न था।

ऋतुओं के .... नवीन सी।

शब्दार्थ—स्तर=क्रम। तिरोहित=नष्ट होना, अस्त होना, छिप जाना। भूमंडल=धरती। विलीन=लुप्त, छिपी। उदित=प्रकाशित। सचेतनता=स्फूर्ति।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा और मनु जिस स्थान मे पहुँच गये थे वहाँ ऋतुओ का क्रम नष्ट हो चुका था अर्थात् वहाँ किसी भी ऋतु का आगमन नहीं होता था और रेखा के समान दिखाई देने वाली धरती भी आँखो से पूर्णतया ओझल हो गई थी। यद्यपि वह महाप्रदेश निराधार था परन्तु वहाँ सर्वत्र एक प्रकार की नवीन स्फूर्ति का अनुभव होता था।

त्रिदिक् विश्व ... . सजग थे।

शब्दार्थ—त्रिदिक्=तीन दिशाएं। आलोक बिन्दु=प्रकाश के पिंड या गोले। त्रिभुवन=स्वर्ग, मर्त्य और पाताल नामक तीन लोक। अनमिल=अलग-अलग। सजग=गतिशील।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस स्थान पर पहुँचकर मनु को ससार सामने की तीन दिशाओं मे विस्तृत दिखाई दे रहा था और प्रकाश के तीन पिण्ड या गोले भी अलग-अलग दिखाई दिये जो तीनों लोकों के प्रतिनिधि प्रतीत होते थे। यद्यपि वे तीनो पिण्ड या गोले अलग-अलग थे पर उनमे गतिशीलता अवश्य थी।

मनु ने ... ... बताओ।

शब्दार्थ—इन्द्रजाल=मायाजाल, उलझन।

व्याख्या—कवि कह रहे है कि तीन प्रकाशपूर्ण लोक देखकर मनु ने आश्चर्यचकित हो श्रद्धा से पूछा कि ये कौन से नवीन ग्रह हैं और तुम अब

इनके सम्बन्ध मे मुझे जानकारी प्रदान करो। मैं अब किस लोक के बीच पहुँच गया हूँ ? साथ ही मैं जिस मायाजाल में उलझ गया हूँ तुम मुझे उससे बचाओ।

इस त्रिकोण .... क्रिया वाले थे।

शब्दार्थ—त्रिकोण=तिकोन। मध्य बिन्दु=केन्द्र बिन्दु। विपुल=बहुत अधिक। क्षमता=सामर्थ्य।

व्याख्या—मनु की जिज्ञासाओ का समाधान करते हुए श्रद्धा ने कहा कि तीन बिन्दुओ के रूप में अलग-अलग स्थित इन तीन लोकों से जो एक तिकोन बन रहा है तुम उस त्रिकोण के मध्य मे खडे हुए हो। यदि तुम इनमे से प्रत्येक को ध्यान से देखो तो तुम्हें ज्ञात होगा कि ये इच्छा, ज्ञान और क्रिया के तीन लोक हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे मनु को त्रिकोण का मध्य बिन्दु कहने से कवि का अभिप्राय यह है कि मनु मन के प्रतीक हैं और उस मन के चारो ओर ही यह त्रिलोक विद्यमान है।

यह देखो . .. ... का मन्दिर।

शब्दार्थ—रागारुण=लाल रंग का, प्रेममय। कन्दुक=गेंद। उषा के कन्दुक सा=प्रभातकालीन सूर्य बिम्ब के समान। छायामय=छाया से युक्त, सूक्ष्म। कमनीय=सुन्दर, आकर्षक। कलेवर=शरीर। भावमयी=भावो से पूर्ण। प्रतिमा=मूर्त्ति।

व्याख्या—श्रद्धा तीनों लोको का परिचय देती हुई मनु से कह रही है कि आकाश के उक्त तीनो लोको मे से जो प्रेम के रंग की तरह लाल रंग का है और जो उषा की गेंद अर्थात् उदय होते हुए लाल सूर्य के समान सुन्दर दिखाई देता है तथा जिसका शरीर सूक्ष्म एवं सुन्दर है, वह भावो से पूर्ण मूर्त्ति अर्थात् इच्छा का मन्दिर है। कहने का अभिप्राय यह है कि लाल रंग वाला यह लोक भावलोक या इच्छालोक है।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा एवं रूपक अलंकार की योजना हुई है।

शब्द स्पर्श ... . रंगीन तितलियाँ।

शब्दार्थ—पारदर्शिनी=जिनके पार देखा जा सके, सूक्ष्म। सुघड=सुन्दर, सुगठित।

व्याख्या—श्रद्धा भावलोक का परिचय देती हुई मनु से कहती है कि

इस लोक मे सभी इन्द्रियाँ अपने-अपने कर्मों का पालन करती हैं। इस प्रकार श्रवणेन्द्रियाँ मधुर शब्द सुनने के लिए, त्वचा सुन्दर अगो का स्पर्श पाने के लिए, रसनेन्द्रिय मधुर रसों का स्वाद लेने के लिए, नेत्रेन्द्रिए सुन्दर वस्तुओं को देखने के लिए, नाक सुगंधित पदार्थों की गंध लेने के लिए, आर-पार देखने वाली पुतलियो का रूप धारण कर अपने-अपने विषय की खोज में उसी प्रकार घूमती हुई दिखाई देती हैं जिस प्रकार रूपवती और रंगीन तितलियाँ फूलों के चारों ओर नाचती हैं।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण और वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार की योजना हुई है।

इस कुसुमाकर .... भारी माया में।

शब्दार्थ—कुसुमाकर=वसंत, यौवन। कानन=वन। अरुण पराग=लाल रंग का पुष्प रस, प्रेम या अनुराग। ये=शब्द, स्पर्श, रस, रूप एवं गन्ध आदि की इन्द्रियाँ। माया=आकर्षण।

व्याख्या—मनु को भावलोक का परिचय देती हुई श्रद्धा कह रही है कि जैसे वसंत ऋतु मे लाल फूलो के पराग रस से पूर्ण वन में तितलियाँ भाव-विभोर होकर इठलाती, सोती एवं जागती मंडराती रहती हैं वैसे ही शब्द, स्पर्श, रस, रूप एव गन्ध को प्राप्त करने के लिए कान, त्वचा, जिह्वा, नेत्र एवं नाक नामक इन्द्रियाँ यौवन से परिपूर्ण और प्रेम की लालिमा से युक्त शरीरो के चारों ओर चक्कर काटती रहती हैं। इतना ही नहीं उक्त इंद्रियाँ कभी तो आनन्दोपभोग के कारण मतवाली हो जाती हैं, और कभी चेतना शून्य हो जाती हैं तथा कभी चेतनायुक्त हो जाती हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'कुसुमाकर के कानन' और 'अरुण पराग' में रूपकातिशयोक्ति अलंकार की योजना हुई है।

वह संगीतात्मक .... भर देती।

शब्दार्थ—संगीतात्मक ध्वनि=संगीत के स्वर एवं तान से पूर्ण शब्द ध्वनि। मादकता की लहर=मस्ती की तरंगें। अम्बर=आकाश, वातावरण। भर कर देती=आनंद से पूर्ण कर देती।

व्याख्या—श्रद्धा अब मनु को भावलोक मे व्याप्त 'शब्द' के प्रभाव का परिचय देती हुई कहती है कि यहाँ जो कोमल एव मस्ती से पूर्ण संगीत से युक्त शब्द ध्वनि होती है वह मादकता की लहर उत्पन्न कर सम्पूर्ण वातावरण को आनन्द से परिपूर्ण कर देती है।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव विशेषण विपर्यय अलकार की अभि-व्यक्ति हुई है।

आलिंगन ... ... मुंदती।

शब्दार्थ—प्रेरणा=इच्छा। सिहरन=रोमाच। अलम्बुषा=लाजवंत या छुई-मुई का पौधा। व्रीडा=लज्जा।

व्याख्या—श्रद्धा भाव लोक मे छाये हुए स्पर्श के प्रभाव का परिचय देती हुई कह रही है कि इस लोक में स्पश की मधुर भावना से पूर्ण इन्द्रियाँ जब कभी आलिंगन के समान मधुर इच्छा से पूण हो किसी का स्पर्श करती हैं तो उस नवीन स्पश के कारण उनके शरीर मे एक प्रकार की सिहरन सी उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार लज्जा के कारण शरीर की दशा लाजवती के पौधे की भाँति हो जाती है जो स्पश पाते ही मुरझा जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि यौवन से विकसित शरीर स्पश पाते ही लज्जा के कारण रोमांचित हो जाता है।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलंकार की योजना हुई है।

यह जीवन ... ... स्पदित होती।

शब्दार्थ—मध्यभूमि=मध्यावस्था अर्थात् युवावस्था। रस धारा=आनन्द की धारा। लालसा=इच्छा, कामना। प्रवाहिका=नदी। स्पदित=गति शील, प्रवाहित।

व्याख्या—भावलोक मे व्याप्त रस के प्रभाव का वर्णन करती हुई श्रद्धा ने मनु से कहा कि यह भावलोक जीवन की युवावस्था के सदृश है और जिस प्रकार युवावस्था में मधुर प्रेम की धारा प्रवाहित होकर जीवन को सींचती रहती है तथा यह युवावस्था रूपी नदी मधुर कामनाओं की तरगो से गतिशील बनती है उसी प्रकार इस भाव लोक मे भी मधुर रस से पूर्ण इन्द्रियों का जीवन प्रेम की आनन्दायिनी धारा से हमेशा पूर्ण रहता है और उनके हृदय मे हमेशा मधुर अभिलाषाओं की तरगें उटती रहती है तथा उनके कारण प्रेम की नदी भी प्रवाहित होती है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवम् रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

जिसके तट पर .... मतवाले।

शब्दार्थ—जिसके=प्रेममयी नदी के। मनोहारिणी=मधुर, मन को

आकर्षित करने वाली। छायामय=अपार्थिव या सूक्ष्म। सुषमा=सौन्दर्य, सुन्दरता। विह्वल=व्याकुल, विभोर, लीन।

व्याख्या—श्रद्धा भावलोक का वर्णन करते हुए मनु से कहती है कि इस लोक में जो प्रेममयी नदी, प्रवाहित होती है उसके किनारे पर बिजली के प्रकाश के समान मनोहर शरीर वाले सुन्दर एव मतवाले प्राणी सूक्ष्म सौन्दर्य मे लीन होकर विचरण करते हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'विद्युत कण से' मे उपमा अलकार की योजना हुई है।

सुमन संकुलित .... झीनी।

शब्दार्थ—सुमन सकुलित=फूलों से परिपूर्ण। भूमि रंध्र=धरती का छिद्र। रस भीनी=सरस, रस से ओतप्रोत। वाष्प=भाप।

व्याख्या—श्रद्धा भाव लोक मे स्थित गन्धतत्व का उल्लेख करती हुई कह रही है कि इस लोक की फूलो से परिपूर्ण धरती के छिद्रो से अत्यन्त सरस और मधुर गन्ध उठती रहती है तथा मधुर गन्ध के अनेक ऐसे फुहारे भी हमेशा चलते रहते हैं जो गन्ध की भाप के छाये रहने के कारण दिखाई नहीं देते पर जिनसे लगातार रस की झीनी-झीनी बूँदें टपकती रहती हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियों मे कवि प्रसाद की सूक्ष्म कल्पना शक्ति के दर्शन होते हैं।

घूम रही .... मुसक्याती माया।

शब्दार्थ—चतुर्दिक=चारो ओर। चलचित्रों सी=चचल दृश्यो के समान। संसृति छाया=इच्छा वाले भावलोक के प्राणियो के प्रतिबिम्ब। आलोक बिन्दु=प्रकाश के बिन्दु के समान भावलोक। माया=ससार का निर्माण करने वाली ईश्वर की शक्ति।

व्याख्या—श्रद्धा भाव लोक या इच्छा लोक का परिचय देती हुई कह रही है कि यहाँ चारो दिशाओ मे चचल दृश्यो का निर्माण होता रहता है और इस लोक का सचालन करने वाली माया शक्ति इस प्रकाश बिन्दु के समान भाव-लोक को चारो ओर से घेरकर बैठी हुई मुस्कराया करती है।

टिप्पणी—(१) कुछ व्याख्याकारों ने 'चलचित्रों सी ससृति छाया' का अर्थ सिनेमा की फिल्म मे घूमने वाले चचल चित्र माना है पर यह अर्थ युक्तिसगत नही प्रतीत होता क्योंकि श्रद्धा और मनु के समय मे सिनेमा के प्रचलन का कोई भी ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नही है।

(२) यहाँ उपमा अलकार की मधुर योजना हुई है।

भाव चक्र . .. घूमती।

शब्दार्थ—भाव चक्र=भावरूपी चक्र या विचारो का चक्र। यह=माया शक्ति। रथ नाभि=रथ के पहिए की धुरी। अराएँ=पहिए के बीच की लकड़ियाँ, तीलियाँ। अविरल=निरन्तर, सलग्न, जुडी हुई। चक्रवाल=पहिए का गोल घेरा।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि यह माया शक्ति भाव रूपी चक्र को उसी प्रकार चलाती रहती है जिस प्रकार रथ की धुरी रथ के पहिए को चलाती है। साथ ही जिस प्रकार रथ के चलते समय उसके पाहर की तीलियाँ उसके घेरे को घूमती हुई जान पडती हैं उसी प्रकार इस भावरूपी चक्र की इच्छा रूपी तीलियाँ शृगार, हास्य, करुण, वीर, रौद्र, भयानक, वीभत्स, अद्भुत एव शात नामक नव रसो को चकित होकर हमेशा स्पश करती हैं।

टिप्पणी—यहाँ सागरूपक अलकार की योजना हुई है।

यहाँ मनोमय . . ... भाँसना।

शब्दार्थ—मनोमय विश्व=इन्द्रियो और मन का ससार, मानसिक जगत। रागारुण चेतन=अनुराग या प्रेम के लाल रग से रगी हुई चेतना अर्थात् प्रेम भाव या अनुराग भावना। परिपाटी=परम्परा, पद्धति। पास=जाल।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को भाव लोक का परिचय देती हुई कह रही है कि इस भाव लोक मे सभी प्राणी अपने मन ही मन प्रेम या आसक्ति भाव की उपासना मे लीन रहते हैं अर्थात् यहाँ समस्त प्राणी प्रेम के उपासक हैं और यहाँ माया शक्ति का शासन है। अतएव जिस प्रकार बहेलिया जाल बिछाकर जीवो को फाँसा करता है उसी प्रकार यह माया शक्ति भी प्रेम या मोह का जाल फैलाकर यहाँ के प्राणियो को हमेशा अपने चगुल मे फँसाती रहती है और यही यहाँ की परम्परा भी है।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे दृष्टान्त अलकार है।

ये अशरीरी ... . . . सुन्दर झूले।

शब्दार्थ—अशरीरी=शरीर रहित, सूक्ष्म। वर्ण=रग, मनोविनोद। गंध=सुगधि, मधुर भावना। अप्सरियाँ=देवागनाओ, इच्छाओ।

व्याख्या—श्रद्धा भावलोक का उल्लेख करती हुई मनु से कहती है कि इस भावलोक मे रहने वाले प्राणी स्थूल शरीर के न होकर सूक्ष्म शरीर वाले हैं

और जिस प्रकार फूल अपने ही रग और गध मे झूमते रहते हैं उसी प्रकार ये प्राणी भी केवल अपने ही मनोविनोद और अपनी ही मधुर भावनाओ मे मस्त रहते हैं। साथ ही जिस प्रकार देवागनाओ के मधुर गीत सुनकर देवता मतवाले होकर फूलों के झूले पर झूलते से दिखाई देते हैं उसी प्रकार इस भावलोक के प्राणी इच्छाओ की मधुर ध्वनि सुनकर मचलते हुए भावो के सुन्दर झूलो पर झूलते हुए से दिखाई देते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपादान लक्षणा के साथ साथ रूपकातिशयोक्ति एवं विशेषण विपर्यय अलकार की योजना हुई है।

भावभूमिका .. .. ताप की।

शब्दार्थ—भाव भूमिका = भावों की पृष्ठभूमि। जननी = जन्म देने वाली। प्रतिकृति = प्रतिमा, मूर्ति।

व्याख्या—भावलोक का परिचय देती हुई श्रद्धा मनु से कह रही है कि इस लोक की रचना भावों की पृष्ठभूमि पर हुई है और यह भावो की पृष्ठभूमि ही सभी प्रकार के पुण्य एव पापो को जन्म देने वाली है। साथ ही इस लोक मे सभी प्राणियो के स्वभावो को मधुर ताप की आग मे गलाकर उनका निर्माण किया जाता है और उनके स्वभाव की प्रतिमायें ही उनके पाप या पुण्य की सूचक होती हैं।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे यह सकेत किया गया है कि प्राणियो के स्वभाव का निर्माण भावों के आधार पर ही होता है।

(२) यहाँ 'भावभूमिका' एवम् 'स्वभाव प्रतिकृति' में रूपक अलकार है।

नियममयी ... . खिलना।

शब्दार्थ—नियममयी उलझन = नियमो की या नियमों द्वारा उत्पन्न दुविधा या झझट। लतिका = लता, बेल। विटपि = वृक्ष। जीवन वन = जीवन रूपी जगल। नभ कुसुम = आकाश के फूल अर्थात् असभव बातें।

व्याख्या—श्रद्धा भाव लोक का वर्णन करती हुई कहती है कि जिस प्रकार लता वृक्ष से आकर लिपट जाती है और फिर छूट नही सकती उसी प्रकार इस भाव लोक या इच्छा लोक मे विभिन्न नियमो से उत्पन्न दुविधायें भावो से टकरा जाती हैं और जिस प्रकार लता तथा वृक्षो के उलझने से जगल दुर्गम हो जाता है उसी प्रकार नियम और भाव के उलझने से जीवन मे अनेक समस्यायें उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार मनुष्य का हृदय उसे एक ओर खींचता है और बुद्धि दूसरी ओर तथा वह ऐसी अवस्था मे कुछ भी निश्चित नही कर

पाता और मनुष्य की आशाएँ आकाश कुसुम के सदृश्य अपूर्ण ही रहती हैं अर्थात् इस भाव लोक के प्राणियो की इच्छाएँ पूर्ण नही हो पाती।

टिप्पणी—यहाँ सुन्दर सागरूपक अलकार की योजना हुई है।

चिर बसत . .... डोर हैं।

शब्दार्थ—चिर बसत=बहुत समय तक रहने वाली बसत ऋतु, यौवन अर्थात् जवानी की उद्दाम लालसा। उद्गम=उत्पन्न होने का स्थान, जन्म स्थान। पतझर=पतझड ऋतु, आशाओ का सफल न होना। अमृत=आनन्द या सुख। हलाहल=विष, शोक या दुख।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि यह भाव लोक या इच्छा लोक ही शाश्वत बसत के से सौन्दर्य और ऐश्वर्य को जन्म देता है और जिस प्रकार बसत ऋतु में फूल खिलते हैं उसी प्रकार यह भाव लोक मानव जीवन की उद्दाम लालसाओं को उत्पन्न करने वाला स्थान है। साथ ही यहाँ परस्पर विरोधी बातें पायी जाती हैं और यदि एक ओर पूर्ण इच्छाओ का वसन्त विद्यमान है तो दूसरी ओर अपूर्ण इच्छाओ का पतझड भी दिखाई देता है और इस लोक मे अमृत और विष अर्थात् सुख और दुख एक ही डोर से बँधे हुए हैं, कहने का अभिप्राय यह है कि इच्छाओ के कारण जीवन मे सुख और दुख दोनों उत्पन्न होते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे लाक्षणिकता एव प्रतीकात्मकता के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति एव यथासख्य या क्रम अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

सुन्दर यह . .. विशेष है।

शब्दार्थ - श्याम=काले रग का। रहस्य=मर्म, गूढ भेद।

व्याख्या—कवि का कहना है कि जब श्रद्धा ने मनु के समक्ष भावलोक का परिचय दिया तब मनु ने श्रद्धा से कहा कि तुमने यह जो भावलोक या इच्छा लोक दिखाया है वह सुन्दर है। परन्तु हे कामायनी, यह बताओ कि यह काले रग वाला लोक कौन-सा है और इसमे कौन-सा विशेष रहस्य छिपा हुआ है।

टिप्पणी—यहाँ 'कामायनी' शब्द मे परिकराकुर अलकार है।

मनु यह ... . धूम धार सा।

शब्दार्थ—श्यामल=काले रग का। अविज्ञात=अविदित, न जाना हुआ, अज्ञात। मलिन=मैला, धूमिल। धूम धार=धुएँ की धारा।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि यह काले रग का लोक कर्मलोक

कहलाता है और यह लोक कुछ कुछ धुँधले अन्धकार के समान है तथा यह इतना घना बसा हुआ है कि इसकी ठीक-ठीक जानकारी प्राप्त करना भी कठिन है। इसीलिए यह लोक अभी तक अज्ञात सा है। जिस प्रकार धुएँ की धारा अत्यन्त मलिन और धूमिल होती है उसी प्रकार यह लोक भी अत्यन्त मलिन एव धुधला सा है तथा यहाँ के रहस्य को भी ठीक-ठीक नही जाना जा सकता।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे उपमा अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कर्मचक्र ... . नई एषणा।

शब्दार्थ—गोलक=गोल आकार वाला। प्रेरणा=इच्छा, सकेत। एषणा =इच्छा।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को कर्म लोक का परिचय देती हुई कहती है कि यह गोल आकार वाला कर्म लोक नियति की इच्छानुसार कर्म चक्र के अनुसार घूम रहा है और इस लोक के सभी प्राणी किसी न किसी नवीन इच्छा के कारण व्याकुल रहते हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'कर्म चक्र सा' में पूर्णोपमा अलकार है।

श्रममय कोलाहल .... क्रियातंत्र का।

शब्दार्थ—श्रममय=परिश्रम या मेहनत से पूर्ण। कोलाहल=शोरगुल। पीड़न=दु खदायी। विकल=व्याकुल, बेचैन। प्रवर्तन=कार्य आरम्भ करना, चलाना। क्रियातंत्र=कर्म का विधान।

व्याख्या—श्रद्धा कर्मलोक का वर्णन करती हुई मनु से कहती है कि जिस प्रकार किसी कारखाने मे जब कोई बडी या भारी मशीन वस्तु को दबाती और कुचलती हुई तीव्र गति से चक्कर काटती है तब उस मशीन के साथ काम करने वाले मजदूरो को भी पर्याप्त परिश्रम करना पडता है और वहाँ मशीन का शोर-गुल तथा दु:खदायी एव व्याकुलता से पूर्ण वातावरण छाया रहता है उसी प्रकार इस कर्मलोक मे भी कर्म का चक्र प्राणियो से कठोर परिश्रम करवाता है। इस प्रकार कर्मलोक मे प्राणी दिन-रात परिश्रम, पीडा एव व्याकुलता से युक्त होते हुए कार्य मे लगे रहते हैं और विश्राम नही करना चाहते।

टिप्पणी—यहाँ साँगरूपक अलकार की योजना हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—श्रीमद्भगवद्गीता मे भी यही कहा गया है—

नहि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवश कर्म सर्व प्रकृतिजैर्गुणै ॥

भाव राज्य ... ... टहल रहे हैं।

शब्दार्थ—भाव राज्य=भावनाओं का संसार, कल्पना लोक। गर्वोन्नत=घमंड में अकड़े हुए।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब तक प्राणी कल्पना लोक में रहते हैं तब तक वे सुख और आनन्द का अनुभव करते हैं परन्तु जब वे कर्मलोक में आते हैं तब उनके सभी सुख दुःख में परिवर्तित हो जाते हैं। इतना होते हुए भी यह क्षुब्ध प्राणी अन्य प्राणियों को शारीरिक एवं मानसिक कष्ट पहुँचाकर, अभिमान से पूर्ण हो ऐसे अकड़कर घूमता है जैसे कोई अहंकारी गले में फूलों की माला डालकर इधर-उधर घूमता फिरता है।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति अलंकारों की योजना हुई है।

ये भौतिक .. सब कराहते।

शब्दार्थ—भौतिक=पंचभूतों से निर्मित प्राणी। सदेह=देहधारी। भाव राष्ट्र=भाव लोक, इच्छा लोक, भावों का संसार।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कहती है कि इस कर्मलोक के प्राणी पंच भूतों अर्थात् धरती, जल, पवन, आकाश एवं अग्नि नामक पंच भूतों या तत्वों से निर्मित शरीर को धारण कर किसी न किसी प्रकार के कार्य को करते हुए सदैव जीवित रहने की इच्छा करते हैं परन्तु भाव लोक में जो नियम प्राणियों के लिए हमेशा सुखदायी होते हैं वे ही नियम इस कर्मलोक में दुखदायी हो जाते हैं। यही कारण है कि कर्मलोक में सभी प्राणी किसी न किसी प्रकार की पीड़ा कराह रहे हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने भावलोक एवं कर्मलोक का अन्तर प्रस्तुत करते हुए भाव लोक को जीव के सूक्ष्म शरीर का प्रतीक और कर्मलोक को जीव के स्थूल शरीर का प्रतीक माना है।

करते हैं .... कम्पित से।

शब्दार्थ—कशाघात=कोड़े या चाबुक की मार। भीति विवश=डर या भय से लाचार होकर। कंपित=काँपते हुए।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस कर्म लोक के मनुष्य कर्म तो करते हैं परन्तु उन्हें जीवन में कभी भी सन्तोष नहीं रहता और उन्हें जीवन का आनन्द भी प्राप्त नहीं होता। जिस प्रकार घोड़ा जब थककर रुक जाता है तब उसे चाबुक मार कर आगे बढ़ने के लिए विवश किया जाता है और घोड़ा

चाबुक की मार से डरकर हांफता हुआ भागने लगता है उसी प्रकार की दशा इस कर्मलोक के प्राणियों के प्राणियों की भी है। ये भी भयभीत होकर, कांपते हुए और लाचार होकर कर्म करते ही रहते हैं और एक क्षण भर के लिए भी विश्राम नहीं लेते तथा ऐसा प्रतीत होता है कि मानो उन्हें भी कोई कोड़े मार-मारकर कर्म करने के लिए प्रेरित कर रहा हो।

टिप्पणी—(१) इन पंक्तियों में यह संकेत किया गया है कि मनुष्य के लिए उसकी उभरती हुई इच्छाएँ और अतृप्ति ही कोड़े के मार की पीड़ा है जो उन्हें एक क्षण भर के लिए भी शान्त नहीं बैठने देती।

(२) यहाँ उदाहरण अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

नियति चलाती .... वासना।

शब्दार्थ—तृष्णा जनित=हृदय की प्यास या उत्कट लालच से उत्पन्न। ममत्व वासना=मोह या ममता की भावना। पाणि पादमय=हाथ पैर वाले अर्थात् मानव प्राणी।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को कर्मलोक का परिचय देती हुई कहती है कि इस कर्मलोक को नियति नामक शक्ति ही गतिशील बनाए रखती है और यहाँ सभी प्राणियों के हृदय में उत्कट लालसा की अधिकता के कारण मन में मोह भावना भी बहुत बढ़ गयी है और प्राणी दिन रात व्यक्ति पूजा में ही लगे रहते हैं।

टिप्पणी—(१) यहाँ यह संकेत किया गया है कि कर्म में डूबा हुआ मनुष्य हमेशा अपने शरीर के सुखों को जुटाने में संलग्न रहता है।

(२) इन पंक्तियों में परिकरांकुर अलंकार है।

यहाँ सतत .... समाज है।

शब्दार्थ—सतत=निरंतर, लगातार। विफलता=असफलता। अंधकार में दौड़ लगाना=बिना सोचे समझे कोई काम करना।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस कर्मलोक में हमेशा संघर्ष चलता रहता है क्योंकि यहाँ सभी प्राणी अपना-अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए दिन रात प्रयत्न करते रहते हैं परन्तु अधिकांश व्यक्तियों को असफलता और अशांति ही प्राप्त होती है। साथ ही यहाँ सभी प्राणी बिना सोचे विवेक-शून्य होकर दिन-रात तीव्रता से अपने-अपने कार्य में लगे रहते हैं तथा उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो सम्पूर्ण समाज ही पागल हो गया हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में मानव जीवन का अत्यंत सजीव एवं मार्मिक चित्र अंकित किया गया है।

स्थूल हो .. ... . गति है।

शब्दार्थ—स्थूल=सूक्ष्मताहीन, पार्थिव । रूप=आकार । भीषण=भयंकर । परिणति=परिपाक, रूप में परिवर्तित होना । पिपासा=प्यास । निर्मम=निष्ठुर, कठोर ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को कर्मलोक का परिचय देती हुई कह रही है कि इस कर्मलोक के प्राणी अनेक-अनेक कर्मों के अनुसार ही स्थूल या पार्थिव शरीर ग्रहण करते हैं और जो अधिकांश प्राणी दुःखी और विवेक शून्य दिखाई देते हैं वह सब उनके कर्मों का ही भयंकर परिणाम है। इसीलिए इस लोक के प्राणियों के मन में आकांक्षाओं की तीव्र प्यास ललक उठती है और वैयक्तिक मोह के कारण उनकी निष्ठुर दशा भी दिखाई देती है।

टिप्पणी—यहाँ 'तीव्र पिपासा' में लक्षण-लक्षणा और 'आकांक्षा की तीव्र पिपासा' में रूपक अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाभारत के शांति पर्व में भी कहा गया है कि संसार में सभी मनुष्यों को शुभ कर्मों का शुभ फल और अशुभ कर्मों का अशुभ फल प्राप्त होता है—

तथापि लोके कर्माणि समावर्तन्ति भारत।
शुभाशुभ फलं धत्ते प्राप्नुवन्तीति मे मति॥

यहाँ शासनादेश ... . गिरवाती।

शब्दार्थ—शासनादेश=राज की आज्ञा । हुंकार=गर्वपूर्ण ध्वनि । दलित=शोषित, कुचला हुआ । पद तल=चरणों या पैरों के नीचे ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को समझाती हुई कहती है कि इन कर्म लोक में शक्तिशाली ही हमेशा विजयी होकर शासन करते हैं और उनकी शासन सम्बन्धी आज्ञाओं की घोषणा भी की जाती है तथा उन घोषणाओं में विजय की गर्व ध्वनि स्पष्ट सुनाई देती है। साथ ही इन घोषणाओं में शोषितों और पद दलितों के लिए सहानुभूति भी नहीं होती बल्कि भूख में तड़पते हुए शोषितों को बार-बार विजयी शासकों के चरणों में गिरने के लिए मजबूर किया जाता है।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

यहाँ लिये .... बहने वाले छाले।

शब्दार्थ— दायित्व—जिम्मेदारी। ढुलकर=नीचे की ओर गिरकर, ढलक कर।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को बतलाती है कि इस कर्मलोक मे प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी क्षेत्र मे उन्नति प्राप्त करने के लिए मतवाला हो रहा है और किसी न किसी कार्य की जिम्मेदारी लेकर आगे बढ़ता हुआ दिखाई देता है परन्तु कुछ ही दिनो के पश्चात् उसका अस्तित्व उसी प्रकार समाप्त हो जाता है जिस प्रकार शरीर पर पड़े हुए छाले, पहले तो शरीर को पीडा देते है लेकिन कुछ समय बाद फूटकर उनका पानी, ढुलक कर बह जाता है।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में दृष्टान्त अलंकार है।

यहाँ राशिकृत .... गड़ रहे।

शब्दार्थ—राशिकृत—सकलित, इकट्ठा किया हुआ। विपुल=अत्यधिक। विभव=ऐश्वर्य, वैभव। मरीचिका=मृगतृष्णा, मृगजल। गड़ रहे=लिप्त हो रहे, लीन हो रहे।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना कि इस कर्म लोक मे प्रत्येक व्यक्ति अधिक से अधिक ऐश्वर्य और आनन्दोपभोग की सामग्री इकट्ठा करने मे लगा हुआ है परन्तु ये सभी सामग्रियाँ मृगतृष्णा की भाँति झूठी और सारहीन हैं। इतना होते हुए भी लोग उक्त क्षणभंगुर अर्थात् शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाली सामग्रियो को एकत्र कर उनका उपभोग करने मे स्वयं को भाग्यशाली समझते हैं पर वे अपने नश्वर वैभव के साथ नष्ट हो जाते है लेकिन उनमे से जो बच रहते हैं वे पुनः उक्त सामग्री एकत्र करने मे जुट जाते हैं।

टिप्पणी—यहाँ 'मरीचिका-से' मे उपमा अलंकार की योजना हुई है।

बड़ी लालसा .... निज गिनती।

शब्दार्थ—लालसा=उत्कट इच्छा। सुयश=कीर्ति। अपराधो की स्वीकृति=अपराध या पाप करने को तैयार होना। अंध प्रेरणा=असत् प्रवृत्तियाँ, बुरी भावनाएँ। परिचालित=प्रेरित।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को कर्मलोक का परिचय देती हुई कहती है कि इस कर्मलोक मे सभी व्यक्तियो के हृदय मे कीर्ति प्राप्त करने की उत्कट इच्छा है और अपनी इस इच्छा के वशीभूत होकर वे किसी भी प्रकार का अपराध करने के लिए तैयार हो जाते हैं। इस प्रकार यहाँ के निवासी बुरी भावनाओं

से प्रेरित होकर कुछ न कुछ कार्य किया करते हैं और स्वय को उस कार्य का कर्त्ता समझकर घमड मे झूमते दिखाई देते हैं।

तुलनात्मक दृष्टि—इन पक्तियो पर गीता के तीसरे अध्याय के सत्ताइसवें श्लोक का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है—

प्रकृते क्रियमाणानि गुणै कर्माणि सर्वश ।
अहकार विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥

प्राण तत्त्व . ... ही बनता ।

शब्दार्थ—प्राण तत्त्व=जीवन, शक्ति। सघन साधना=घोर या गभीर उपासना। हिम=बर्फ। उपल=ओला। प्यासे=अभावो से दुःखी। घायल हो =वेदनाओं से व्याकुल होकर।

व्याख्या—मनु को कर्मलोक का परिचय देती हुई श्रद्धा ने कहा कि इस कर्मलोक के प्राणी जीवन के प्रति इतना अधिक मोह रखत हैं कि दिन रात उसी के लिए घोर उपासना मे लगे रहते है अर्थात् उसी की रक्षा के लिए चिंतित होकर दिन रात प्रयत्न करते रहते हैं। यही कारण है कि इस कमलोक के प्राणियो का जल के समान गतिशील जीवन भी बर्फ और ओले के समान स्थिर तथा जड बन गया है और सभी प्राणी अभावों की पीडा से इतने अधिक व्याकुल हैं कि वे भयकर कष्ट सहन करते हुए ही किसी प्रकार अपना जीवन व्यतीत करते है।

टिप्पणी—(१) यहाँ सघन साधना, जल, हिम एव उपल आदि मे लक्षण-लक्षणा और प्रतीकात्मकता है तथा प्यासे एव घायल आदि मे उपादान लक्षणा है।

यहाँ नील .... मृत्यु सालती ।

शब्दार्थ=नील लोहित ज्वाला=नीले और लाल रग की आग, कर्म की प्रचड अग्नि। सालती=पीडा देती, कष्ट पहुँचाती।

व्याख्या—श्रद्धा कर्मलोक का परिचय देती हुई मनु से कहती है कि जिस तरह लोहा, ताबा आदि किसी भी धातु को आग मे गलाते समय उसमे से नीली और लाल रग की लपटें निकला करती हैं तथा गल जाने के उपरान्त उस धातु को हथौड़े के प्रहारो से किसी एक रूप मे ढाला जाता है उसी प्रकार इस कर्मलोक मे प्रत्येक जीवात्मा को कर्म की भयकर ज्वाला मे तपने के पश्चात् ही उसके कर्मानुसार योनि प्राप्त होती है। इस प्रकार कुछ दिन

बधन मे रहकर वह जीवात्मा उस योनि से छुटकारा प्राप्त कर लेती है और उसे न तो कर्मों का आघात ही प्रभावित कर पाता है और न मृत्यु ही कोई कष्ट दे पाती है अर्थात् मृत्यु भी जीवात्मा को कष्ट नही कर पाती क्योंकि वह अजर-अमर होती है।

टिप्पणी—यहाँ ज्वाला एव धातु मे उपादान लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

वर्षा के ... . वह जाती।

शब्दार्थ—वर्षा के घन=पावस के बादल ; तीव्र इच्छाओं की घटाएँ। नाद=गर्जन, शोर। तट कूलो=किनारो को और उनके समीप के पदार्थों को, स्वय को और अपने आश्रितों को। प्लावित=डुबाती, लीन करती, वन कुंज= जगली कुज, आशाएँ। सरिता=नदी।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को कर्मलोक का परिचय देती हुई कहती है कि जिस प्रकार वर्षा ऋतु मे बादल गरजते हुए वर्षा करते हैं और नदियो मे बाढ आ जाने के कारण वे अपने किनारो तथा समीप के पदार्थो को नष्ट करती हुई वन प्रदेश के कुजो को जल मे डुबोती हुई सागर की ओर बढ़ती चली जाती हैं उसी प्रकार इस कर्मलोक के प्राणियो के मन मे अत्यन्त प्रबल इच्छाएँ उत्पन्न होने के कारण प्राणी अनेक प्रकार के अपराध या पाप करते हैं और वे स्वय को तथा अपने आश्रितो को भी कष्ट दिया करते हैं। इस प्रकार कर्मलोक का प्रत्येक निवासी यह चाहता है कि मेरा उद्देश्य सिद्ध होना चाहिए भले ही मुझे कितना ही पाप क्यो न करना पड़े और यही कारण है कि कर्मलोक के निवासी अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए अधम से अधम कार्य करने मे सकोच नही करते।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एव सागरूपक अलकार की योजना हुई है।

बस ! अब और .... रजत है।

शब्दार्थ—अतिभीषण=अत्यधिक भयकर। पुंजीभूत=सचित, इकट्ठी। रजत=चाँदी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि कर्मलोक का विवरण सुनकर मनु श्रद्धा से कहने लगे कि तुम अब इस कर्मलोक का वर्णन और अधिक न करो क्योकि यह लोक तो अत्यन्त भयकर है और मैं इसे अधिक नही देखना चाहता है

हे श्रद्धा ! तुम मुझे यह तो बताओ कि यह तीसरा अत्यन्त उज्ज्वल लोक कौन सा है जो चाँदी के ढेर के समान दिखाई दे रहा है ।

टिप्पणी—यहाँ अन्तिम पक्ति मे पूर्णोपमा अलकार है ।

प्रियतम ! यह तो .... . दीनता ।

शब्दार्थ—ज्ञानक्षेत्र=ज्ञान लोक । उदासीनता=तटस्थता । निर्मम=कठोर । दीनता=दुबलता, कमजोरी ।

व्याख्या—मनु की जिज्ञासा का समाधान करने के लिए श्रद्धा ने कहा कि "प्रियतम, यह चाँदी के समान उज्ज्वल दिखाई देने वाला ज्ञान लोक है और इसके निवासी सुख-दुख दोनो से तटस्थ रहते हैं अर्थात् ज्ञान लोक के निवासियो के मन मे न तो दुखो के प्रति उदासीनता है और न सुखो के प्रति किसी भी प्रकार का प्रेम है । इस ज्ञान लोक का न्याय अत्यन्त कठोर है और यहाँ किसी पर भी दया नही की जाती तथा प्रत्येक कार्य बुद्धि की कसौटी पर परखा जाता है और उस परीक्षण मे तनिक भी कमजोरी नही दिखाई जाती ।

टिप्पणी—यहाँ बुद्धि चक्र मे रूपक अलकार प्रयुक्त हुआ है ।

अस्ति नास्ति मुक्ति से ।

शब्दार्थ—अस्ति=है अर्थात् अस्तित्व है । नास्ति=नहीं है अर्थात् अस्तित्व नही है । निरकुश=पूर्ण स्वतत्र । तर्क युक्ति=दलीलो एव बुद्धि के आधार पर । निस्सग=निष्काम, निर्लिप्त । सम्बन्ध विधान=सम्बन्ध निश्चित करना । मुक्ति=मोक्ष, सासारिक बन्धनो से छुटकारा ।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को ज्ञान लोक का परिचय देती हुई कह रही है कि इस ज्ञान लोक मे बुद्धि की प्रधानता होने के कारण यहाँ के निवासी दिन रात पदार्थों के विश्लेषण मे मग्न रहते हैं और उनमे से कुछ अस्तित्व को मानते हैं तथा कुछ अस्तित्व को नही मानते । कहने का अभिप्राय यह है कि ब्रह्म और जगत के अस्तितत्व का विश्लेषण करते हुए ज्ञान लोक के कुछ प्राणी दोनो का अस्तित्व स्वीकार करते हैं और कुछ ब्रह्म एव जगत मे से एक का ही अस्तित्व मानते हैं । साथ ही अपने-अपने मत की पुष्टि के लिए ये अणु के समान दिखाई देने वाले प्राणी बुद्धिपूर्वक दलील देते हैं और और अपने आपको निर्लिप्त कह कर भी मन में मोक्ष की तीव्र इच्छा रखते हैं तथा उसके लिए कुछ न कुछ प्रयत्न भी करते हैं ।

टिप्पणी—यहाँ 'अणु' शब्द में रूपकातिशयोक्ति अलकार है ।

यहाँ प्राप्य .... ओस चाटती ।

शब्दार्थ—प्राप्य=प्राप्त करने योग्य । **तृप्ति**=सतोष, शाति । **विभूति**=ऐश्वर्य । **सिकता**=रेत ।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस ज्ञान लोक के सभी निवासियो पर बुद्धि का शासन है और यहाँ के सभी प्राणी प्राप्त करने योग्य पदार्थों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते रहते हैं लेकिन बुद्धि उन्हें प्रयत्नो के अनुसार ही फल देती है और उन्हें सतोष नही होता । इस ज्ञान लोक मे बुद्धि को ही समस्त ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली समझा जाता है पर उसके रेत के समान नीरस होने के कारण यहाँ के निवासी हमेशा अपने को अभावग्रस्त समझकर दु खी होते रहते हैं और बुद्धि द्वारा उन्हे जो कुछ प्राप्त होता है उससे उनकी तृप्ति उसी प्रकार नही होती जिस प्रकार ओस के चाटने से किसी भी व्यक्ति की प्यास नही बुझती ।

टिप्पणी—यहाँ 'सिकता-सी' मे उपमा अलकार है ।

न्याय तपस .. ... जैसे जगते ।

शब्दार्थ—न्याय=उचित अनुचित का निर्धारण । **तपस**=तपस्या । **चमकीले**=आकर्षक । **निदाघ**=गर्मी । **मरु**=रेगिस्तान, मरुस्थल । **स्रोत**=झरना ।

व्याख्या—श्रद्धा ज्ञान लोक का वर्णन करती हुई मनु से कहती है कि इस ज्ञान लोक के निवासी प्रतिदिन उचित अनुचित के निर्धारण, तपस्या एवम् सिद्धियो की प्राप्ति आदि बातो मे लीन रहते हैं और ये दूर से देखने पर अत्यन्त आकर्षक प्रतीत होते हैं पर उनका यह आकर्षण केवल दूर का ही है । जिस प्रकार गर्मी के दिनो मे रेगिस्तान के झरने सूख जाते हैं किन्तु उनके तट दिखाई देते हैं और कोई प्यासा व्यक्ति दूर से इन तटो को देखकर बहुत प्रसन्न होता है और यह समझता है कि वहाँ उसे जल मिलेगा लेकिन वहाँ, जल का अभाव ही रहता है उसी प्रकार ज्ञान लोक के निवासियो मे अनुभूति की गरिमा नही होती और उनसे सम्पर्क रखने के पश्चात् ही यह ज्ञात होता है कि भीतर से तो वे खोखले और सारहीन है ।

टिप्पणी—यहाँ उदाहरण अलकार प्रयुक्त हुआ है ।

मनोभाव . ... विष से ।

शब्दार्थ—मनोभाव=मन के भाव, मनोवृत्तियाँ । **कार्य**=करने योग्य ।

कर्म=कर्त्तव्य । समतोलन=ठीक-ठीक तोलना, अच्छी तरह समझना । दत्त-चित्त=तल्लीन होना, पूर्ण ध्यान देना । निस्पृह=निष्काम, आसक्तिरहित । वित्त=धन, लोभ, रिश्वत ।

व्याख्या—श्रद्धा ज्ञान लोक का परिचय देती हुई मनु से कह रही है कि इस ज्ञान लोक के सभी निवासी अपनी-अपनी मनोवृत्तियो के आधार पर अपने कर्त्तव्य का निश्चय करते हैं और अपने इस निश्चय को बुद्धि की तुला पर ध्यानपूर्वक ठीक ठीक तोलते भी हैं। जिस प्रकार कोई निर्लोभी या आसक्ति रहित न्यायाधीश ठीक-ठीक न्याय करता है और किसी भी प्रकार के लोभ से प्रभावित नही होता उसी प्रकार ज्ञान लोक के निवासी आसक्तिरहित होकर अपने-अपने कर्त्तव्यो का निश्चय करते हैं और अपने निश्चय मे तनिक भी लाभ या किसी आकर्षण के कारण भूल नही होते देते ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है ।

अपना परिमित .... अमर से ।

शब्दार्थ—परिमित=सीमित छोटा । पात्र=वर्तन, यहाँ वुद्धि । निर्झर=झरना, ज्ञान का स्रोत । अजर=वृद्धावस्था रहित अर्थात् जो कभी वूढा नही होता ।

व्याख्या—ज्ञान लोक का वर्णन करती हुई श्रद्धा ने मनु से कहा कि इस ज्ञान लोक के निवासी अपनी सीमित वुद्धि के आधार पर अत्यत कष्ट से प्राप्त होने वाले ज्ञान रूपी झरने से उसी प्रकार अजर एव अमर व्यक्तियो के सदृश्य मोक्ष-प्राप्ति को याचना करते हैं जिस प्रकार कोई व्यक्ति एक छोटा सा पात्र लेकर किसी बूँद-बूँद करके टपकने वाले झरने के पास बैठकर अपने पात्र को भरने के लिए अमृत की याचना करे ।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एव श्लेष अलकार की योजना हुई है ।

यहाँ विभाजन .... सासें भरता ।

शब्दार्थ—विभाजन=बँटवारा । धर्म तुला=धर्मरूपी तराजू । व्याख्या करता=ठीक-ठीक निर्णय करता । निरीह=असहाय, इच्छाओ से हीन । ढीली=शिथिल ।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस ज्ञान लोक मे जो व्यक्ति जितनी साधना करता है उसे उसी के अनुसार फल मिलता है अत यहाँ फल का बँटवारा धर्म की तराजू पर तौल कर किया जाता है और धर्म के अनुसार ही

यह निर्णय किया जाता है कि कौन-सा व्यक्ति किस प्रकार की सिद्धि का अधिकारी है। इस प्रकार ज्ञान लोक के निवासी किसी प्रकार की इच्छा नहीं रखते और उन्हें जो कुछ भी अपनी साधना के द्वारा प्राप्त होता है उसी मे वे संतोष की सांस लेने लगते हैं।

टिप्पणी—यहाँ धर्म तुला मे रूपक अलकार है।

उत्तमता इनका .... बस लेखो।

शब्दार्थ—उत्तमता=श्रेष्ठता। निजस्व=निजी धन, अपना अधिकार। अम्बुज=कमल। सर=तालाब, सरोवर। जीवन मधु=शहद के समान जीवन का रस। ममाखियाँ=मधुमक्खियाँ।

व्याख्या—ज्ञान लोक का परिचय देती हुई श्रद्धा मनु से कहती है कि इस लोक के प्राणी जीवन मे श्रेष्ठता प्राप्त करना अपना पूर्ण अधिकार समझते हैं पर वे स्वय उस श्रेष्ठता का उपभोग नहीं करते। जिस तरह कमल के सुन्दर फूलो से सुशोभित तालाब उन कमलो पर पूर्ण अधिकार रखते हुए स्वय उनका उपभोग नही करता और मधुमक्खियाँ, दूसरो के लिए ही शहद एकत्र करती हैं पर स्वय उस शहद का उपभोग नही करती उसी तरह ज्ञान लोक के निवासी जीवन का आनन्द तो एकत्र करते हैं पर वे स्वय उसका उपभोग नही करते।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलकार की योजना हुई है।

यहाँ शरद .. .. सदा बिखरती।

शब्दार्थ—शरद=शरदऋतु। धवल=सफेद, निर्मल। ज्योत्स्ना=चाँदनी, यहाँ ज्ञान का प्रकाश। अन्धकार=अज्ञान। निखरती=प्रकाशित होती। अनवस्था=अनियमितता, अव्यवस्था। युगल=ज्ञान और अज्ञान दोनों। विकल=क्षीण, विशृंखलित। बिखरती=छिन्न-भिन्न हो जाती।

व्याख्या—श्रद्धा ज्ञान लोक का वर्णन करती हुई मनु से कह रही है कि जिस प्रकार शरदऋतु की निर्मल चाँदनी अन्धकार को मिटाकर सम्पूर्ण सृष्टि मे उज्ज्वलता के साथ चमकती है उसी प्रकार इस ज्ञान लोक मे ज्ञान की ज्योति अज्ञान के अन्धकार को भेद कर प्रकाशित होती है लेकिन इस लोक में ज्ञान का पूर्ण प्रकाश न होने के कारण अज्ञान भी कुछ-न-कुछ मात्रा में अवश्य रहता है। इस प्रकार ज्ञान लोक में ज्ञान और अज्ञान दोनों के सयोग से एक प्रकार की अव्यवस्था फैली रहती है और इसी अव्यवस्था के कारण यहाँ जीवन मे हमेशा छिन्न भिन्न व्यवस्था ही दिखाई देती है।

टिप्पणी—यहाँ शरद की धवल ज्योत्स्ना और अन्धकार मे रूपकातिशयोक्ति अलकार तथा लक्षण-लक्षणा है।

देखो वे सब . ... परितोषों से।

शब्दार्थ—सौम्य=सरल स्वभाव वाले, भोले-भाले, सुशील। सशकित=शकायुक्त, भयभीत। सकेत=इशारा। दभ=अहकार। भ्रूचालन=भौंहो से सकेत करना। मिस=बहाने। परितोष=सतोप।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस ज्ञान लोक के निवासी देखने मे तो सुशील एव विनम्र हैं परन्तु सभी मन ही मन हमेशा इस बात से भयभीत रहते हैं कि कही उनसे कोई अपराध न हो जाय। इस प्रकार वे अपनी सफलता से प्राप्त सतोप को भी भौंहो के इशारे से प्रकट करते हैं जिनमे उनका अहकार छिपा हुआ होता है। कहने का अभिप्राय यह है कि यद्यपि इस ज्ञान लोक के प्राणी देखने मे सरल स्वभाव के है परन्तु उनका हृदय भय और अहकार से पूर्ण है।

टिप्पणी—यहाँ 'भ्रूचालन मिस परितोषो से' में कैतवापन्हुति अलकार है।'

यहाँ अछूत ... ... होने दो।

शब्दार्थ—अछूत=अस्पृश्य, बिना छुआ हुआ। जीवन रस=जीवन का आनन्द। सचित=एकत्र, इकट्ठा। तृषा=प्यास, तृष्णा, लालसा। मृषा=मिथ्या, असत्य, झूठ। वंचित होना=अलग होना।

व्याख्या—ज्ञान लोक का वर्णन करती हुई श्रद्धा मनु से कहती है कि इस ज्ञान लोक के निवासी जीवन का वास्तविक आनन्द प्राप्त नही कर पाते और वे जीवन तथा उसके कार्यों से प्राय उदासीन ही रहते हैं। इस प्रकार उनका यही मत है कि जीवन का आनन्द ग्रहण करने की अपेक्षा उस आनन्द को हमेशा एकत्र होने देना चाहिए क्योकि हम ज्ञान लोक के प्राणियो के भाग्य मे जीवन का आनन्द प्राप्त करना लिखा ही नहीं है। साथ ही इस ज्ञान लोक के निवासी लालसा को भी असत्य मानकर उससे हमेशा बचकर रहने की सलाह देते हैं।

टिप्पणी—इन पक्तियों मे रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

सामजस्य ... . झुठलाते हैं।

शब्दार्थ—सामजस्य=मेल, अनुकूलता। विषमता=वैर, प्रतिकूलता, भेदभाव। स्वत्व=अधिकार।

व्याख्या—श्रद्धा मनु को ज्ञान लोक का परिचय देती हुई कह रही है कि इस ज्ञान लोक के प्राणी प्रयत्न तो करते हैं मेल स्थापित करने का परन्तु उनके तर्कपूर्ण विचारो के कारण परस्पर विरोध ही फैलता है। इसका कारण यह है कि यहाँ के निवासी जीवन का वास्तविक उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति मानते हैं परन्तु हृदय मे उठने वाली इच्छाओ को ज्ञान विरोधी समझकर त्याज्य बतलाते हैं। इसी प्रकार ज्ञान लोक के निवासी दूसरो को तो निष्काम कर्म करते हुए जीवन का चरम लक्ष्य प्राप्त करने की शिक्षा देते हैं लेकिन स्वयं हृदय मे मोक्ष आदि की इच्छाएँ रखते हैं और यही कारण है कि उनके विचारो द्वारा विषमता फैलती है।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे निवृत्ति मार्ग का खण्डन किया गया है।

स्वयं व्यस्त .... ढलते।

शब्दार्थ—व्यस्त=लीन, कार्य मे लगे हुए। अनुशासन=आदेश, आज्ञा, नियम। ढलते=बदल जाते।

व्याख्या—श्रद्धा का कहना है कि इस ज्ञान लोक के निवासी यद्यपि अनेक प्रकार के योग-साधना सम्बन्धी कार्यों मे संलग्न रहते हैं परन्तु ऊपर से देखने मे वे अत्यन्त शांत दिखाई देते हैं और शास्त्रों मे लिखित विधि-विधान के अनुसार ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। यहाँ यह स्मरणीय है कि ये शास्त्र विशिष्ट ज्ञान से पूर्ण हैं और उनमे अनुशासित जीवन व्यतीत करने के लिए नियम भी दिये गये हैं। लेकिन सभी शास्त्रो मे एक सी बातें न होने के कारण इन शास्त्रो का अनुसरण करने वालो के कार्य भी प्रतिक्षण बदलते रहते हैं।

टिप्पणी—यहाँ विरोधाभास एवं पुनरुक्ति अलंकार की योजना हुई है।

यही त्रिपुर .... सब कितने।

शब्दार्थ—त्रिपुर=तीन लोक अर्थात् इच्छा लोक, कर्म लोक और ज्ञान लोक। ज्योतिर्मय=प्रकाश पूर्ण।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा ने मनु को इच्छा लोक, कर्म लोक और ज्ञान लोक नामक तीन लोको का परिचय देने के उपरान्त कहा कि हे मनु! तुमने जो अभी देखा है वही त्रिपुर है और इस त्रिपुर मे इतने अधिक प्रकाश से पूर्ण तीन बिन्दु दिखाई दे रहे हैं। ये तीन बिन्दु ही अलग-अलग इच्छा, क्रिया एवं ज्ञान के तीन लोक हैं जो अपने-अपने सुख और दुःख के

स्वय ही केन्द्र बने हुए हैं तथा उनमे कोई सामजस्य नहीं रह गया है अर्थात् ये तीनो लोक आपस मे एक दूसरे से बहुत भिन्न और अलग हो गये हैं।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने मानव की इच्छा, क्रिया एव ज्ञान मनोवृत्तियो की भिन्नता की ओर सकेत किया है।

ज्ञान दूर .... जीवन की।

शब्दार्थ—ज्ञान=विवेक। क्रिया=कर्म, मानसिक एव शारीरिक कर्म। विडम्बना=उपहास, दुर्भाग्य।

व्याख्या—श्रद्धा मनु से कह रही है कि जब ज्ञान और कर्म में सामजस्य नही है तब मन की इच्छा किस प्रकार पूर्ण हो सकती है अर्थात् यदि कर्म ज्ञान के अनुसार नही होगा तो सफलता का मिलना असमव ही है। सच तो यह है कि ज्ञान, कर्म और इच्छा मे समन्वय होने पर ही जीवन की समरसता, सिद्ध हो सकती है और इन तीनो का एक दूसरे से न मिलना ही जीवन का दुर्भाग्य है तथा जीवन मे अनेक प्रकार के दु ख भी सहन करने पडते हैं।

महाज्योति ... ... ज्वाला जिनमें।

शब्दार्थ—महाज्योति=अलौकिक प्रकाश, तीक्ष्ण या तीव्र प्रकाश। स्मिति=हँसी। सम्बद्ध=परस्पर मिल जाना। सहसा=अचानक। जाग उठी =प्रकट हो गयी। ज्वाला=ज्ञान की ज्योति।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु को त्रिपुर या तीन लोकों का परिचय देने के उपरान्त श्रद्धा मुस्कराई और उसकी यह मुस्कान एक प्रकार के अलौकिक या तीव्र प्रकाश की रेखा-सी बनकर उन लोको की ओर दौडी तथा वे तीनो अचानक परस्पर मिल गये और उनमे ज्ञान का तीव्र प्रकाश प्रकट होता हुआ दिखाई देने लगा।

टिप्पणी—इन पंक्तियो मे श्रद्धा का चित्रण नेत्रों में वर्णित त्रिपुर सुन्दरी के रूप मे किया गया है जो इच्छा, ज्ञान और कर्म मे सामजस्य स्थापित कर ससार मे समरसता स्थापित करती है।

नीचे ऊपर .... नहीं-नहीं सी।

शब्दार्थ—लचकीली=लचकती हुई। विषम=भयकर। महाशून्य=विशाल आकाश।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा की मुस्कान से उत्पन्न ज्ञान की सुनहली ज्योति सम्पूर्ण विशाल आकाश मे धधकती हुई दिखाई देने लगी।

इस प्रकार उसकी लचीली लपटें कभी ऊपर की ओर और कभी नीचे की ओर लपकती हुई दिखाई देती थी अर्थात् नीचे-ऊपर सर्वत्र व्याप्त हो गयी थी। साथ ही वे लपटें कभी तो भयंकर वायु के कारण तेजी से धधकने लगती थीं और उनमे से उठने वाली ध्वनि यह कहती हुई सी जान पड़ती थी कि ये तीनों लोक अलग-अलग नही हैं बल्कि ये तीनो एक ही हैं।

शक्ति तरंग .... बिखर उठा सा।

शब्दार्थ—शक्ति तरंग—शक्ति की लपटें। पावक=आग। त्रिकोण=त्रिपुर। निखर उठा=चमकने लगा। शृंग=सींगी बाजा। निनाद=ध्वनि।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा की मुस्कान से जो एक दिव्य ज्वाला निकली उससे इच्छा लोक, क्रिया लोक और ज्ञान लोक नामक तीन लोकों की अज्ञानता एव अविद्या का पूर्णतया विनाश करने वाली ज्ञानाग्नि की शक्तिमयी लपटें उस त्रिपुर मे चारों ओर फैल गयीं। साथ ही इस अग्नि मे सम्पूर्ण विषमता नष्ट हो गयी और सम्पूर्ण ससार मे सींगी बाजे तथा डमरू की ध्वनि सुनाई देने लगी।

टिप्पणी—इस पद मे कवि ने तीसरी पंक्ति में भगवान शंकर के ताडव नृत्य की ओर सकेत किया है।

चितिमय चिता .... कृत्य था।

शब्दार्थ—चितिमय=चेतना से युक्त। अविरल=लगातार। महाकाल=नटराज शिव। विषम नृत्य=ताडव नृत्य। विश्वरध्र=अतरिक्ष। ज्वाला=ज्ञानाग्नि। विषम कृत्य=अज्ञानता के विनाश का भयानक कार्य।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार कोई चिता तीव्रता के साथ धधकती हुई जलती है उसी प्रकार उस समय चेतनायुक्त ज्ञान की अग्नि लगातार धधक रही थी और नटराज शिव आनन्दपूर्वक तांडव नृत्य कर रहे थे। साथ ही उस ज्ञान की अग्नि से सम्पूर्ण अंतरिक्ष परिपूर्ण हो गया था और अज्ञानता के विनाश का भयानक कार्य हो रहा था अर्थात् इच्छा, क्रिया और ज्ञान नामक तीनों लोकों के निवासियों की सम्पूर्ण अज्ञानता नष्ट हो रही थी।

टिप्पणी—यहाँ 'चिता' शब्द में रूपकातिशयोक्ति और विश्वरध्र मे रूपक अलंकार की योजना हुई है।

स्वप्न .... तन्मय थे ।

शब्दार्थ—स्वाप=अज्ञान की अवस्था, सुपुप्ति की दशा । लय=लीन, विलीन । दिव्य=स्वर्गीय, अनुपम । अनाहत निनाद=अनहद नाद । तन्मय =तल्लीन ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस ज्ञानाग्नि के प्रज्वलित होते ही और नटराज शिव का ताडव नृत्य होने पर स्वप्न, निद्रा और जागरण नामक तीनों अवस्थाएँ नष्ट हो गयी अर्थात् जीवन एव जगत की मिथ्या कल्पनाएँ, सुषुप्ति अवस्था की अज्ञानता और जागरण की स्थिति आदि सभी उक्त ज्ञान की ज्वाला मे भस्म हो गयीं । साथ ही इच्छा लोक, क्रिया लोक और ज्ञान लोक अपनी पृथकता को त्यागकर एक दूसरे मे पूणत विलीन हो गये और सभी दिशाओ में अनुपम अनहद नाद गूंजने लगा, जिसमे श्रद्धा एव मनु पूर्णतया तल्लीन हो गये ।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे कवि ने इच्छा, क्रिया और ज्ञान को क्रमश स्वप्न, सुषुप्ति एव जागरण का प्रतीक माना है ।

(२) यहाँ यथासख्य या क्रम अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

पन्द्रहवाँ सर्ग

आनन्द

कथानक—अब श्रद्धा अपने पुत्र मानव को इडा के पास छोडकर चली गयी तब इडा ने मानव के सहयोग से सारस्वत प्रदेश की समुचित व्यवस्था की और सारस्वत नगर के सभी निवासी धन-धान्य से समृद्ध हो गये तथा पारस्परिक भेदभ व भुलाकर एक परिवार की भाँति रहने लगे। एक दिन सारस्वत नगर के निवासी इडा और मानव के साथ श्रद्धा और मनु का दर्शन करने के लिए कैलाश पर्वत की ओर रवाना हुए तथा यात्रियो का यह दल नदी के किनारे-किनारे पहाडी पथ से आगे बढ रहा था। इस दल के साथ धर्म का प्रतिनिधि एक बैल था जिस पर सोमलताएँ लदी हुई थी।

मानव ने बायें हाथ से उस बैल की रस्सी पकड रखी थी और दाहिने हाथ मे त्रिशूल धारण किया था। वह उस बैल को एक ओर चल रहा था और दूसरी ओर गेरुए वस्त्र धारण किये इडा चुपचाप चल रही थी। उसके पीछे जगली हिरणो की एक टोली थी जिन पर यात्रा का कुछ सामान लदा हुआ था और कुछ शिशु भी उन पर बैठे हुए थे और उनकी माताएँ उन्हे पकडे हुए थी। इसी प्रकार सारस्वत नगर के स्त्री पुरुष और बच्चे भी साथ-साथ चल रहे थे। सभी युवक अत्यधिक प्रसन्न थे और बालक भी आनन्द मग्न थे तथा महिलाये मगलगीत गा रही थी।

अचानक एक बालक मचलकर अपनी माँ से कहने लगा कि तू न जाने कब से यह कह रही है कि हम अब तीर्थ स्थान पहुँच रहे हैं पर चलते-चलते इतनी देर हो गयी और तू रुकने का नाम ही नहीं लेती। आखिर वह तीर्थ स्थान कितनी दूर है। माँ ने अपने पुत्र को समझाते हुए कहा कि बस अब अगले ढलान से उतरते ही हम उस तीर्थ स्थान पर पहुँच जावेंगे लेकिन बालक को सतोष नही न हुआ और वह इडा के पास पहुँच कर उससे अधिक

जानकारी प्राप्त करने का आग्रह करने लगा। बालक की उत्सुकता देखकर इडा ने कहा—'मैंने ऐसा सुना है कि मानसिक दुःख से दुःखी एक व्यक्ति कभी इधर आया था और उसने आते ही चारों ओर अशांति फैला दी। कुछ समय बाद उसे खोजती हुई उसकी पत्नी आई और उसके प्रयत्न से सभी स्थानों पर पूर्ववत् शांति छा गयी। आजकल वे दोनों प्राणी मानसरोवर के तट पर बैठे तपस्या करते हैं और अपने सुन्दर उपदेशों से मन का असंतोष दूर कर शांति प्रदान करते हैं। इस प्रकार वे संसार का कल्याण करने में अपने जीवन का सदुपयोग कर रहे हैं। हम सब अपने जीवन के सूने पात्र को वहाँ आनन्द के अमृत से भरने जा रहे हैं वहाँ पहुँच कर धर्म के प्रतीक इस बैल को मुक्त कर देंगे जिससे कि यह निर्भीक होकर वहाँ विचरण करे।'

इस बीच यात्रियों का यह दल उतराई पार कर एक समतल घाटी में पहुँचा और सभी सावधानीपूर्वक चलने लगे। उस घाटी में सर्वत्र हरियाली छाई हुई थी और सामने श्वेत बर्फ से ढका हुआ विराट् हिमालय खड़ा था। लता, कुंज, गुहा गृह एवं सरोवरों से पूर्ण वह स्थान अत्यन्त रमणीय प्रतीत होता था और वहाँ चारों ओर फूल खिले हुए थे। उस स्थान में पहुँचते ही यात्रियों की सम्पूर्ण थकावट और व्याकुलता क्षण भर में ही दूर हो गयी तथा यात्रियों का दल रुक कर मानसरोवर का अपूर्व दृश्य देखने लगा। उसी समय सन्ध्या हुई और चन्द्रमा आकाश में अपनी किरणें बिखेरने लगा तथा सन्ध्या के प्रकाश में कैलाश पर्वत चिर समाधि में लीन योगी की भाँति दिखाई दिया।

मानसरोवर के तट पर मनु ध्यानमग्न बैठे थे और श्रद्धा समीप ही अपनी अंजलि में फूल भरे हुए खड़ी थी। कुछ देर बाद उसने उन फूलों को मनु के चरणों में बिखेर दिया और आकाश में सैकड़ों भँवरों की मधुर गूँज सुनाई पड़ने लगी। यात्रियों ने मनु और श्रद्धा को झुककर प्रणाम किया। मानव अपनी माता श्रद्धा की गोद में जा बैठा और इडा ने अपना सिर श्रद्धा के चरणों में रखकर कहा कि 'मैं यहाँ पहुँच कर धन्य हो गयी। हे देवि, तुम्हारी ममता ही मुझे यहाँ तक ले आई। मैं अब मानती हूँ कि मैं अभी तक भूल में ही थी और सभी को भुलावे में डाले हुई थी पर अब हम सबने सारस्वत नगर की फूट समाप्त कर एक परिवार सा स्थापित कर लिया है। आज एक परिवार बनकर ही हम यात्रा करने के लिए इस तपोभूमि में आये हैं जिससे कि हमारे रहे सहे पाप भी दूर हो जायें।'

इडा की बातों का श्रद्धा ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया पर मनु ने कुछ-कुछ मुस्कराते हुए और कैलाश की ओर सकेत कर कहा—'यहाँ कोई भी पराया नहीं है और हम सब एक कुटुम्ब के ही व्यक्ति हैं। यहाँ न तो कोई दुखी है और न कोई पापी है अपितु सभी समान हैं। जैसे आकाश मे नक्षत्र चमकते हैं वैसे ही यह सृष्टि भी अभेद रूप से प्रकाशित होती है और यह सम्पूर्ण जगत उस चेतना शक्ति का ही विराट शरीर है। केवल 'मैं' और 'तुम' के भेद ने एक प्राणी को दूसरे प्राणी से पृथक कर रखा है और व्यक्ति जब मनोविकारों से ऊपर उठकर उनका खेल देखता है तब वह उस निर्विकार स्थिति में पहुँचता है जहाँ सुख ही सुख है। वास्तविक सुख संघर्ष मे नही सेवा मे है और अलकार सर्वथा त्याज्य है क्योंकि वह सबको मोहित कर देता है। इस प्रकार दूसरो की सेवा अपना ही आत्म विकास है और अपने ही सुख की वृद्धि है।'

मनु की बातें सुनते ही श्रद्धा के मधुर अधरो पर उषा की किरणों के समान मनोहर मुस्कान छा गयी और उसके साथ ही सम्पूर्ण सृष्टि मुस्कराने लगी। एक मधुर ध्वनि, चारों ओर सुनाई देने लगी, पवन मधुर गंधयुक्त हो प्रवाहित होने लगा, लताएँ झूमने लगीं, भ्रमर गूँजने लगे, कोयल कूक उठी, पुष्प अपनी सुगन्ध फैलाते हुए झरने लगे, हिमखण्डो पर चन्द्र किरणें प्रतिविम्बित होकर मणिदीपों का भ्रम उत्पन्न करने लगी और रश्मियाँ अप्सराओं के समान नृत्य करने लगीं। साथ ही हिमालय की गोद मे मानस की लहरियों की क्रीड़ा ऐसी प्रतीत हुई मानो नटराज शकर के समक्ष पार्वती नृत्य कर रही हो।

हिमालय का यह सुरम्य दृश्य देखकर सभी कृतकृत्य हो उठे और पारस्परिक विषमता, वैरभाव तथा ईर्ष्या द्वेष आदि को भुलाकर सभी एक दूसरे को अपने से पूर्णतया अभिन्न समझने लगे। इस प्रकार सभी समरसता का अनुभव करने लगे और सबको अखण्ड आनन्द की उपलब्धि हुई।

चलता था .... निज सबल।

शब्दार्थ—दल=समूह। रम्य=सुन्दर, मनोहर। पुलिन=किनारा। गिरिपथ=पर्वत का मार्ग। सम्बल=पाथेय, यात्रा के लिए आवश्यक सामग्री।

व्याख्या—कवि का कहना है कि यात्रियो का एक दल धीरे-धीरे नदी के सुन्दर किनारे पर पर्वत के मार्ग से चला जा रहा था। यात्रियों के इस दल के साथ मार्ग मे काम आने वाली सभी आवश्यक वस्तुयें भी थीं।

टिप्पणी—कामायनी को इन पंक्तियो मे, बल्कि सम्पूर्ण सर्ग मे कवि ने

स्वनिर्मित छन्द का प्रयोग किया है और इसमे चौदह-चौदह मात्राओ के विराम से अट्ठाइस मात्रायें हैं ।

था सोमलता .... गतिविधि ।

शब्दार्थ—आवृत=ढका हुआ । वृष धवल=सफेद बैल । प्रतिनिधि=प्रतीक । मथर=मन्द । गतिविधि=चाल ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यात्रियो के उस दल के साथ धर्म का प्रतीक एक सफेद बैल भी था और यह बैल सोमलताओं से ढका हुआ था अर्थात् उस पर सोमलताए लदी हुई थी । वह मन्द-मन्द गति से चल रहा था और उसकी चाल के साथ-साथ उसके गले मे बँधा हुआ घण्टा ताल मे बज रहा था ।

तुलनात्मक दृष्टि—श्री मैथिलीशरण गुप्त के 'साकेत' मे भी वृषारूढ शब्द का प्रयोग हुआ है—

गिरि हरि का हर वेश देख वृष मन मिला ।
उनसे पहले ही वृषारूढ का मन खिला ॥

वृष रज्जु .... अपरिमित ।

शब्दार्थ—रज्जु=रस्सी । वामकर=बाँया हाथ । दक्षिण=दाहिना हाथ । अपरिमित=असीम ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस दल के साथ-साथ मनु एव श्रद्धा का पुत्र मानव चल रहा था और वह बाएं हाथ मे बैल की रस्सी पकडे था । उसके दाहिने हाथ में त्रिशूल सुशोभित था और मुख पर असीम तेज झलक रहा था ।

केहरि किशोर भाव नए थे ।

शब्दार्थ—केहरि=सिंह । किशोर=बच्चा, बालक । अभिनव=नवीन । अवयव=अग । प्रस्फुटित=विकसित, खिलना । गम्भीर=गहन, घनीभूत । नये-भाव=यौवन की नवीन उमगें ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि मानव के नवीन अग सिंह के बच्चे के अगो के समान सुदृढ थे और उसके अग-प्रत्यग से यौवन की गम्भीरता स्पष्ट झलक रही थी तथा उसके हृदय मे यौवन की नवीन उमगें उदय हो रही थी ।

टिप्पणी—यहाँ उपमा एव मानवीकरण अलकार की योजना हुई है ।

चल रही .... कलरव ।

शब्दार्थ—वृक्ष=बेल । पार्श्व=बगल । नीरव=मौन, चुपचाप । गैरिक वसना=गेरुए रंग के वस्त्र वाली । कलरव=पक्षियों की मधुर ध्वनि, यहाँ मनोकामनाएँ ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि बैल के एक ओर इड़ा चुपचाप चली जा रही थी और उसने संध्या की लालिमा के समान गेरुए वस्त्र धारण किए थे तथा जिस प्रकार संध्या के समय पक्षियों की मधुर ध्वनि शांत हो जाती है उसी प्रकार इड़ा की मनोकामनाएँ भी शान्त थी ।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा एवं मानवीकरण अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

उल्लास रहा .... यात्री दल ।

शब्दार्थ—उल्लास=हर्ष । मृदु=कोमल । कल कल=शोर गुल । मुखरित=ध्वनित, शब्दायमान ।

व्याख्या—कवि कहता है कि यात्रियों के दल के सभी युवक हर्ष मग्न थे और बालक कोमलता के साथ शोरगुल कर रहे थे तथा स्त्रियाँ मंगल गीत गा रही थी । इस प्रकार यह दल शब्दायमान होकर यात्रा कर रहा था ।

चमरों पर .... विविध समझातीं ।

शब्दार्थ—चमर=सुरागाय नामक पशु, चमरीमृग । कुतूहल=आश्चर्य । विधिवत=ढंग से ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यात्रियों ने अपना सामान चमरी मृगो पर लाद दिया था और वे सब मिलकर निरन्तर चल रहे थे । कुछ चमरी मृगों पर बच्चे बैठकर चल रहे थे जो एक दूसरे के लिए आश्चर्य बने हुए थे । उन बच्चों को माताओं ने पकड़ रखा था और वे बड़े ही सुन्दर ढंग से उन्हें यह समझाती हुई जा रही थी कि हम कहाँ जा रहे हैं ।

टिप्पणी—यद्यपि सुरागाय भी एक प्रकार की गाय ही है, जो कि पहाड़ों पर पाई जाती है पर पहले वे सभी जानवर जो जंगल में घूमा करते थे मृग कहलाते थे । इसीलिए चमर का अर्थ चमरी मृग ग्रहण करना युक्तिसंगत होगा ।

कह रहा ... . दौड़ रही है ।

शब्दार्थ—वह भूमि=तीर्थ स्थान । हित=लिए ।

व्याख्या—एक बालक ने अपनी माँ से कहा कि तू कब से यह कह रही है कि हम जिस तीर्थ स्थान पर जा रहे हैं वह स्थान अब अधिक दूर नहीं है

और वह आगे की भूमि वही तीर्थस्थान है परन्तु तू अभी तक बराबर आगे ही बढ़ती चली जा रही है। इस प्रकार तू रुकने का नाम ही नही लेती और लगातार बढती ही जा रही है। तू मुझ ठीक-ठीक बतला कि वह तीर्थस्थान अब कितना दूर है जिसके लिए तू इतनी लम्बी यात्रा कर रही है।

वह अगला ... . पावन-तम।

शब्दार्थ—समतल=समभूमि। कानन=वन, जगल। घन=बादल, मेघ। हिमकन=ओस की बूँदें। ढालवें=ढालू भूमि। सहज=सरलता से। उज्ज्वल=कातिमान, निमल। पावनतम=अत्यन्त पवित्र।

व्याख्या—कवि का कहना है कि माँ अपने पुत्र की बातो का उत्तर देती हुई कहती है कि वह जो सामने समभूमि दिखाई देती है, जहाँ देवदारु के वृक्षो का वन है और जिनके पत्तो से ओस की बूँदें एकत्र कर बादल भी अपना कटोरा भरता है बस वही वह तीर्थ है। इस प्रकार जब यह इस ढालू भूमि को सरलता से उतर कर पार कर लेंगे तब हमे वह अत्यन्त निर्मल और पवित्र तीर्थस्थान दिखाई देगा।

टिप्पणी—यहाँ रूपकातिशयोक्ति एव हेतूत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

वह इड़ा .... सुनने को।

शब्दार्थ—समीप=निकट। मचल गया=हठ करने लगा।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि वह बालक चमरी मृग की पीठ से नीचे उतर कर इडा के निकट पहुँच गया और उससे वही रुक कर उम तीर्थस्थान के सम्बन्ध मे अधिक बातें बतलाने के लिए हठ करने लगा।

वह अपलक .... शांत तपोवन।

शब्दार्थ—अपलक लोचन=पलक बिना हटाये, टकटकी बाँध हुए। पादाग्र=पैरो का आगे का भाग अर्थात् अँगूठे, अगुलियाँ, नाखून आदि। विलोकन करती=देखती। पथ प्रदर्शिका=रास्ता दिखाने वाली। डग=कदम। जगती=ससार। पावन=पवित्र। साधना प्रदेश=उपासना करने का स्थान। तपोवन=तपस्या करने का स्थान, तपोभूमि।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इडा अपने पैरो की अगुलियों एव अगूठो को टकटकी बाँधकर देखती हुई, रास्ता दिखाने वाली के समान धीरे-धीरे, आगे चल रही थी। उस बालक को अपने पास आकर प्रश्न करते हुए देखकर

इडा ने कहा—'हम जहाँ जा रहे हैं वह स्थान सम्पूर्ण ससार का एक पवित्र स्थान है और वहाँ एक व्यक्ति ने तप करके सिद्धि प्राप्त की है तथा वह अत्यन्त शीतल और शांतिपूर्ण तपोभूमि है।'

टिप्पणी—यहाँ उपमा एवं परिकर अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कैसा .... कुछ सकुचाती।

शब्दार्थ—विस्तृत=विस्तार के साथ। सकुचाती=संकोच करती हुई।

व्याख्या—इडा की बातें सुनकर उस बालक ने फिर कहा कि वह कैसा स्थान है और वह क्यों शाव तपोभूमि कहलाता है। तुम मुझे विस्तारपूर्वक सभी बातें क्यों नहीं बतलातीं। उस बालक के इन प्रश्नो को सुनकर इडा कुछ सकोच सा करती हुई बोली।

सुनती हूँ . ... झुलसाया।

शब्दार्थ—मनस्वी=ऊँचे मनवाला, बुद्धिमान, मननशील। विकल=बेचैन, व्याकुल। झुलसाया=पीडित, जला हुआ, दग्ध।

व्याख्या—इड़ा कह रही है कि मैंने सुना है कि एक दिन वहाँ एक बुद्धिमान व्यक्ति आया था। वह ससार की पीडाओ ने अत्यन्त व्याकुल और दग्ध सा था।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे ज्वाला से अभिप्राय ससार के दैहिक, दैविक एव भौतिक तापो की आग से है।

(२) यहाँ उपादान लक्षणा और परिकर एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है।

उसकी वह .... अस्थिर।

शब्दार्थ—जलन=पीडा या वेदना की आग। गिरि अंचल=पर्वत की तलहटी। दावाग्नि=जंगल में लगने वाली आग। प्रखर=तेज, तीव्र। अस्थिर=व्याकुल, बेचैन।

व्याख्या—इड़ा का कहना है कि उस व्यक्ति के दु.खो की वह भयकर ज्वाला इस सम्पूर्ण पर्वत प्रदेश मे उसी प्रकार फैल गयी जिस प्रकार दावाग्नि तीव्र गति से सम्पूर्ण वन मे फैल जाती है अर्थात् उस व्यक्ति की पीड़ा की आग के कारण वहाँ के सभी प्राणी व्याकुल हो गए।

टिप्पणी—यहाँ प्रयोजनवती उपादान लक्षणा और रूपकातिशयोक्ति तथा मानवीकरण अलंकार है।

थी अर्धांगिनी .. .. भर लायी ।

शब्दार्थ—अर्धांगिनी=पत्नी । करुणा की वर्षा=करुणा के कारण नेत्रों से बरसने वाले आँसू । दृग=नेत्र ।

व्याख्या—उस मनस्वी व्यक्ति की पत्नी उसे खोजते हुए आयी और उसने जब अपने पति की दयनीय दशा देखी तब उसका हृदय करुणा से ओत-प्रोत हो गया और आँखों मे आँसु भर आने के कारण ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो करुणा के बादल वर्षा करने आ गए हो ।

टिप्पणी—यहाँ 'करुणा की वर्षा' में प्रतीकात्मकता के साथ-साथ रूपकातिशयोक्ति अलकार भी है ।

वरदान बने . .. .. सुख शीतल ।

शब्दार्थ—वरदान=मगलकारी, कल्याणकारी । जगमगल=ससार का कल्याण । हरित=हरा भरा । सुख शीतल=सुख और शाति देने वाला ।

व्याख्या—इडा कह रही है कि उस मनस्वी की पत्नी के नेत्रो से जो करुणा के अश्रुओ की वर्षा हो रही थी, वे आँसू ससार के लिए वरदान बन गए और उन्होंने ससार का कल्याण कर दिया । इस प्रकार ससार के सभी प्रकार के दु ख दूर हो गये और वह सूखा हुआ वन फिर से हरा भरा तथा सुख और शाति प्रदान करने वाला हो गया अर्थात् चारों ओर प्रसन्नता ही प्रसन्नता दिखाई देने लगी ।

टिप्पणी—यहाँ आँसुओ के वरदान बनने में विरोधाभास और हरित में रूपकातिशयोक्ति एव श्लेष अलकार है ।

गिरि निर्झर ... लाली ।

शब्दार्थ—गिरि निर्झर=पर्वत के झरने । तरु=वृक्ष । मुसक्याये=हरे भरे हो गए ।

व्याख्या—इडा का कहना है कि पहाडी झरने पुन तेजी से बहने लगे और चारो ओर हरियाली छा गयी तथा सूखे हुए वृक्ष पुन हरे भरे हो गये और उनमे नवीन लाल-लाल कोंपलें निकल आयी अर्थात् सर्वत्र प्रसन्नता फैल गयी ।

टिप्पणी—यहाँ 'तरु के मुस्कयाने' मे लक्षण-लक्षणा और मानवीकरण अलकार है ।

वे युगल .... .. जो है जाता।

शब्दार्थ—युगल=पति-पत्नी, मनु और श्रद्धा से अभिप्राय है। ससृति= ससार। दुख ज्वाला=दुख या कष्टो की आग। महाहृद=बडा सरोवर। मन की प्यास=मन का असतोष।

व्याख्या—इडा कह रही है कि वे दोनो पति पत्नी अर्थात् श्रद्धा और मनु अब उसी तीर्थस्थान मे रहकर सम्पूर्ण सृष्टि की सेवा करते हैं तथा सभी प्राणियो को सुख एव सन्तोष प्रदान करते हुए उनकी दुःख ज्वालाओं को अर्थात् कष्टो को दूर करते हैं। साथ ही उस तीर्थस्थान मे एक बहुत बडा स्वच्छ सरोवर है और वह प्राणियो की मानसिक अशाति उसी प्रकार दूर कर देता है जिस प्रकार शीतल जल पीने से प्यास बुझ जाती है। यह सरोवर मानसरोवर कहलाता है और जो भी उसके पास जाता है वह अत्यन्त सुख प्राप्त करता है।

टिप्पणी—यहाँ 'दुख ज्वाला' मे रूपक और 'मानस' मे श्लेष एव परिकराकुर अलकार की योजना हुई है।

तो यह . रही है।

व्याख्या—इडा की बातें सुनने के पश्चात बालक ने कहा—'इस बैल को तू क्यो यो ही अपने साथ खाली चला रही है? तू इस पर बैठ क्यो नही जाती? क्यो व्यर्थ ही पैदल चलकर अपने पैरो, को थका रही है।

टिप्पणी—ये पक्तियाँ शब्द शिल्पी प्रसाद की सरल कविता शैली की द्योतक हैं और इनमे बाल मनोविज्ञान का अच्छा चित्रण हुआ है।

सारस्वत नगर .. सुख पाकर।

शब्दार्थ—व्यर्थ=बेकार, नश्वर। रिक्त=खाली। जीवन घट=जीवन रूपी घडा। पीयूष=अमृत। सलिल=जल। उत्सर्ग=दान, छोडना। चिरमुक्त=सदैव के लिए स्वतन्त्र। स्वच्छन्द=बन्धनमुक्त।

व्याख्या=बालक की शकाओं का समाधान करती हुई इडा कहती है कि हम सारस्वत नगर के निवासी इस पवित्र तीर्थ स्थान की यात्रा करने आए हैं और इस यात्रा द्वारा हम अपने खाली एव बेकार जीवन रूपी घडे को आनन्द के अमृत-जल से भरना चाहते हैं। यह बैल धर्म का प्रतीक है और हम इसे वहाँ जाकर छोड देंगे जिससे यह हमेशा के लिए स्वतन्त्र और बन्धनमुक्त होकर सुख पूर्वक विचरण करता रहे।

टिप्पणी—यहाँ जीवन घट, पीयूष सलिल एवं वृषभ धम प्रतिनिधि में रूपक और पीयूष शब्द में रूपकातिशयोक्ति अलंकार की योजना हुई है।

सब सँभल ... छायी।

शब्दार्थ—सँभल गये=सावधान हो गये।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि अब सभी यात्री सावधान हो गए क्योंकि अब उन्हें पहाड़ से नीचे समतल घाटी मे उतरना था। साथ ही जिस समतल घाटी में यात्री उतर रहे थे वहाँ बहुत अधिक हरियाली छायी हुई थी।

श्रम ताप ... . विलसित।

शब्दार्थ— श्रम=थकान, थकावट। ताप=संताप, क्लेश। पथ पीड़ा=मार्ग का कष्ट। अंतर्हित=लुप्त, गायब। विराट=महान, विशाल। धवल नग=सफेद कैलाश पर्वत। विलसित=सुशोभित।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस समतल एवं हरी भरी घाटी में पहुँचते ही यात्रियों की थकावट पीड़ा और मार्ग का कष्ट आदि सभी क्षण भर मे दूर हो गए। यात्रियों के दल ने अपने सामने वह विशाल कैलाश पर्वत देखा जो बर्फ से ढका हुआ होने के कारण सफेद था और अपने अखण्ड गौरव मे सुशोभित था।

उसकी तलहटी .. .... रही निराली।

शब्दार्थ—तलहटी=घाटी। श्यामल=हरी-भरी। तृण=तिनका, घास। वीरुध=लता। गुहा ग्रह=गुफाओं मे बने हुए घर। ह्रद=तालाब, यहाँ मान सरोवर।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि कैलाश पर्वत की यह घाटी अत्यन्त आकर्षक प्रतीत हो रही थी और यह हरी घास तथा लताओं से युक्त होने के कारण सुन्दर लग रही थी। साथ ही उस घाटी मे नवीन कुंज और सुन्दर गुफाओं के घर थे तथा उसी मे मानसरोवर होने के कारण उस घाटी की शोभा अनुपम जान पड़ती थी।

वह मंजरियों .... उन्हीं में वालो।

शब्दार्थ—मंजरियों=पेड़ो पर आने वाला बौर। अरुण=लाल। पीत=पीला। प्रति पर्व=प्रत्येक खण्ड या भाग। सुमन संकुल=फूलों से भरे हुए।

व्याख्या—कवि का कहना है कि कैलाश पर्वत की इस घाटी मे सम्पूर्ण वन मंजरियों से लदा हुआ था और वह लालिमा एवं पीलिमा से युक्त हरियाली

से पूर्ण था। वहाँ वृक्ष और लताएँ फूलों से पूर्णतया लदी हुई होने के कारण डालें दिखाई नहीं देती थीं क्योंकि वे फूलों मे छिप गई थीं।

यात्री दल ... . जगत उजाला।

शब्दार्थ—मानस=मानसरोवर। खग=पक्षी। मृग=जगली जानवर। जगत उजाला=प्रकाश पूर्ण ससार।

व्याख्या—कवि कहता है कि यात्रियों के दल ने रुक कर मान सरोवर का वह अनुपम दृश्य देखा। वास्तव में वह दृश्य पक्षियों और पशुओं को भी अत्यन्त सुखदायक था और वह एक छोटा सा प्रकाश पूर्ण ससार जान पडता था।

टिप्पणी—यहाँ छोटा सा जगत उजाला मे उपमा अलकार की योजना हुई है।

मरकत .... राका रानी।

शब्दार्थ—मरकत=पन्ना नामक रत्न जिसका रंग हरा होता है। मुकुर=दर्पण। राकारानी=पूर्णिमा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस हरे-भरे वन के मध्य स्वच्छ जल से परिपूर्ण वह मानसरोवर ऐसा प्रतीत होता था मानो नीलम की चौकी पर हीरे का स्वच्छ जल रखा हुआ हो। इसी प्रकार वह सरोवर प्रकृति देवी के मुख देखने के लिए एक छोटे से दर्पण के समान था अथवा वह ऐसा प्रतीत होता था कि मानो इस मानसरोवर के रूप मे स्वय पूर्णिमा की रात्रि ही अपनी उज्ज्वल चाँदनी के साथ सो रही हो।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे अत्यन्त सुन्दर एव अभिनव कल्पनाओ के दर्शन होते हैं।

(२) यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा, उपमा एवं सदेह अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

दिनकर गिरि ... . लगन में।

शब्दार्थ—दिनकर=सूर्य। गिरि=कैलाश पर्वत। हिमकर=चन्द्रमा। प्रदोषप्रभा=सध्या की आभा। स्थिर=अविचल। लगन=ध्यान।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि सूर्य कैलाश पर्वत के पीछे छिप गया था और चन्द्रमा आकाश मे निकल आया था। सध्या की उस सुन्दर आभा में कैलाश पर्वत ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई योगी ध्यान मे लीन होकर अविचल भाव से बैठा हुआ हो।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

संध्या समीप .... रसना ।

शब्दार्थ—सर=मान सरोवर । वल्कल वसना=पेडो की छाल के वस्त्र पहने हुए । तारों=तारागण । अलक=चोटी, केशपाश । रसना=करधनी, किंकणी ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस मानसरोवर के निकट, सध्या की लालिमा चारों ओर फैल गयी थी और उसे देखकर यही जान पडता था कि मानो संध्या सुन्दरी गेरुये रग के वल्कल वस्त्र धारण किए हुए हो । साथ ही आकाश मे तारे चमक रहे थे और वे ऐसे प्रतीत होते थे मानो सध्या सुन्दरी की वेणी तारो के मोतियो से गुँथी हुई हो तथा कदम्ब के फूल जो अपनी अनुपम गध फैलाते हुए खिल रहे थे वे ऐसे जान पडते थे जैसे सध्या सुन्दरी ने कदम्ब के फूलो की करधनी धारण की हो ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव समासोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

तुलनात्मक दृष्टि—महाप्राण निराला ने भी सध्या सुन्दरी की परी के रूप में कल्पना करते हुए कहा है—

> दिवसावसान का समय
> मेघमय आसमान से उतर रही है
> वह सध्या सुन्दरी परी सी
> धीरे धीरे धीरे ।

खग कुल .... अभिनव ।

शब्दार्थ—खग कुल=पक्षियों का समूह । किलकार रहे थे=चहचहा रहे थे । कलहस=राजहस । किन्नरियाँ=देवों की किन्नर जाति की स्त्रियाँ जो सगीत एव नृत्य मे निपुण होती हैं । अभिनव=नवीन ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि सध्या सुन्दरी को मान सरोवर के समीप आया हुआ देखकर पक्षियों का समूह चहचहाते हुए हर्ष ध्वनि कर रहा था और उस सरोवर मे रहने वाले राजहस मधुर कलरव कर रहे थे । इस प्रकार उक्त चहचहाहट और कलरव के स्वर पर्वत से टकरा कर जो प्रतिध्वनियाँ उत्पन्न करते थे वे ऐसी प्रतीत होती थी मानो किन्नरियाँ नवीन तानें लेती हुई गा रही हो ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है ।

मनु बैठे ... . उन्मन ।

शब्दार्थ—ध्यान निरत=ध्यान मग्न, ध्यान मे लीन । मानस तट=मान सरोवर के किनारे । शत शत=सैंकडों, अनेक । मधुप=भ्रमर, भंवरा । तन्मय=तल्लीन । उन्मन=स्थिर चित्त ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस स्वच्छ मानसरोवर के समीप मनु ध्यानमग्न बैठे हुए थे और उनके पास ही श्रद्धा अपनी अञ्जलि में फूलो को लिए हुए खडी थी । श्रद्धा ने उन फूलो को मनु के चरणों पर बिखेर दिया और उस समय असख्य भ्रमर आकाश में गूंजने लगे परन्तु मनु स्थिर चित्त हो ध्यान मे लीन बैठे रहे ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे कवि ने मनु के हृदय की निर्मलता, मन की स्थिरता एव उनके आत्म साक्षात्कार का अत्यन्त सजीव चित्रण है ।

पहचान .... में झुकते ।

शब्दार्थ—देवद्वन्द्व=देवताओं का जोड़ा, देव दम्पत्ति अर्थात् मनु और श्रद्धा । द्युतिमय=तेजोमय । प्रणति=प्रणाम ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि यात्रियों के दल ने मनु और श्रद्धा को पहचान लिया था अतएव अब उनमे से कोई भी व्यक्ति उन दोनो के पास पहुँचने से कैसे रुक सकता था ! श्रद्धा और मनु दोनो अपनी कठोर तपस्या के प्रकाश से तेजोमय हो रहे थे अन सभी यात्री अनायस ही उन दोनो के चरणों मे झुकझुक कर प्रणाम करने लगे ।

तब वृषभ .... सराह रही थी ।

शब्दार्थ—सोमवाही=सोमलताओं को लादकर चलने वाला । डग भरना=जल्दी-जल्दी चलता । भूली=भेद भाव भूलना । दृग युगल=दोनो नेत्र । सराह रही थी=धन्य समझ रही थी ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस समय सोम लताओ को लाद कर चलने वाला बैल भी अपने गले मे बंधे घटे की ध्वनि करता हुआ वहाँ पहुँच गया और इड़ा के पीछे-पीछे मनु का पुत्र मानव भी तेजी से कदम बढाता हुआ बढा चला आ रहा था । साथ ही एक बात इस समय बडी अद्भुत हुई कि इडा अपने-पराये की भावना बिलकुल भूल गई थी लेकिन वह अपनी भूल .. लिए मनु और श्रद्धा से क्षमा मांगने की इच्छा नही रखती थी । इड़ा ने

जब मनु एव श्रद्धा का यह स्वरूप देखा तब वह इस दृश्य को देखने के लिए अपने नेत्रो को बार-बार धन्य समझने लगी ।

चिर मिलित . . शोभन ।

शब्दार्थ—चिर मिलित=सदैव सम्बद्ध रहने वाले, अनन्तकाल से परस्पर मिले हुए । प्रकृति=ईश्वर की शक्ति, श्रद्धा । पुलकित=आनंदित, रोमांचित । चेतन पुरुष पुरातन=शिव रूप मनु । निज शक्ति=अपनी श्रद्धा रूपिणी अनन्त शक्ति । तरगायित=तरंगित । आनन्द अम्बुनिधि=आनन्द का सागर । शोभन=शोभायमान, रमणीय ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि आनन्द-मग्न मनु श्रद्धा के साथ उसी प्रकार शोभा पा रहे थे जिस प्रकार आदिशक्ति के साथ अनन्तकाल तक रहने वाले पुरातन पुरुष भगवान शिव आनन्द विभोर दिखाई देते हैं । साथ ही जैसे विशाल सागर अपनी ऊँची-ऊँची लहरो से लहराता हुआ सुशोभित होता है वैसे ही शिव रूप मनु अपनी अनन्त शक्ति रूप श्रद्धा के साथ आनन्द से पुलकित दिखाई दे रहे थे ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है ।

भर रहा .... खींचती लाई ।

शब्दार्थ—अक=गोद । पुलक=रोमांच । ममता=स्नेह, अपनत्व ।

व्याख्या—कवि कहता है कि श्रद्धा के पास पहुँचते ही मानव ने उसका शरीर अपनी भुजाओ मे भर लिया और उससे लिपट गया तथा इडा ने अपना सिर श्रद्धा के चरणो मे झुकाकर रोमांचित हो गद्‌गद् स्वर मे कहा—हे देवि ! मैं आज सभी पुरानी बातें भूलकर यहाँ आई हूँ और यहाँ आकर अपने को धन्य समझती हूँ । हे माता, तुम्हारी ममता ही मुझे यहाँ तक खीच लाई है ।

भगवति . . छुट जाये ।

शब्दार्थ—भगवति=देवि । समझ=ज्ञान । अभ्यास=आदत । दिव्य=पवित्र, अनुपम । अघ=पाप ।

व्याख्या—इडा श्रद्धा से कहती है—हे देवि, मुझे आज यह समझ में आ गया कि पहले मुझे वास्तव मे कुछ भी ज्ञान नही था और यह मेरी आदत ही बन गई थी कि मैं सबको गलत रास्ते पर ले जाती थी । अब हम सभी सारस्वत नगर के निवासी पारस्परिक भेदभाव को मिटाकर एक परिवार के रूप मे यहाँ यात्रा करने आये हैं जिससे हमारे सारे पाप छूट जायें क्योकि हमने

यह सुन रखा है कि जो इस अनुपम तपोवन मे आता है वह सभी प्रकार के पापो से छुटकारा पा जाता है।

मनु ने कुछ .... नहीं कमी है।

शब्दार्थ—पराया=दूसरा, अपने से पृथक्। तभी है=हम हैं। अवयव =अग।

व्याख्या—कवि का कहना है कि इडा की बातें सुनकर मनु ने अपनी आँखें खोली और कुछ-कुछ मुस्कराकर सभी व्यक्तियो का ध्यान कैलाश पर्वत की ओर आकर्षित करते हुए कहा—देखो, यहां पर कोई भी व्यक्ति किसी से भिन्न नही है। हम सभी एक कुटुम्ब के व्यक्ति है और कोई भी दूसरा नही है बल्कि अब हम सब अभिन्न होकर एक हो गये हैं। इस प्रकार तुम सब उसी प्रकार मेरे ही अग हो जिस प्रकार हाथ पैर आदि अगो से मिलकर शरीर पूर्ण होता है तथा तुम्हारे सयोग से ही मैं पूर्ण हो सका हूँ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार की योजना हुई है।

शापित न .... जहाँ है।

शब्दार्थ—शापित=शापग्रस्त। तापित—दु खी। जीवन वसुधा=जीवन रूपी धरती। समतल=समान। समरस=समान रूप से आनन्दमय।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि इस कैलाश पर्वत एव यहाँ तपोवन मे कोई भी न तो किसी प्रकार के शाप से ग्रस्त है और न सतापो से ही दु.खी है तथा यहाँ कोई भी प्राणी किसी भी प्रकार का पाप भी नही करता। वास्तव मे यहाँ के प्राणियों का जीवन समतल भूमि के समान है और यहाँ ऊँच-नीच का भेदभाव भी नही है तथा यहाँ जो जिस स्थान पर है वह वहाँ समान रूप से आनन्द प्राप्त करता है।

टिप्पणी—(१) इन पक्तियों मे कवि ने समरसता के सिद्धान्त का निरूपण किया है।

(२) यहाँ 'जीवन वसुधा' मे रूपक अलकार है।

चेतन समुद्र ... . खड़ा है।

शब्दार्थ—चेतन समुद्र=चिद् शक्ति रूपी सागर, चेतना का सागर। निर्मित=बना हुआ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि इस चित् शक्ति रूपी सागर में जीवन लहरो की भाँति बिखरा हुआ पड़ा है और जैसे सागर मे लहरो की अलग

कोई सत्ता नही होती वैसे ही उस विराट चेतना शक्ति से अलग किसी भी जीव की कोई सत्ता नही है परन्तु प्रत्येक जीव जब तक कोई रूप या आकार प्राप्त किये रहता है तब तक वह अपनी अलग सत्ता समझता रहता है।

टिप्पणी—यहाँ चेतन समुद्र मे रूपक और लहरो सा मे पूर्णोपमा अलकार है।

इस ज्योत्स्ना ... . आभा चमकाये।

शब्दार्थ—ज्योत्स्ना=चाँदनी। जलनिधि=समुद्र, सागर। बुद्बुद्=बुलबुला। नक्षत्र=तारे। आभा=प्रकाश।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार सागर मे बुलबुले एक-सा ही रूप धारण कर प्रकट होते हैं उसी प्रकार चाँदनी मे तारे अपनी छवि बिखेरते दिखाई देते हैं।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलकार है।

वैसे अभेद .... भाव चरम है।

शब्दार्थ – अभेद सागर=अभिन्न चिति रूपी सागर। सृष्टि क्रम=उत्पन्न होने की स्थिति। रसमय=अखण्ड आनन्द से युक्त। यह भाव=विराट चिति की सत्ता। चरम=उत्कृष्ट, सर्वश्रेष्ठ।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि सर्वत्र अभिन्न रूप से व्याप्त और विशाल सागर के सदृश्य फैली हुई इस विराट चेतना शक्ति के अन्दर भी अनेक प्रकार के जीवधारी नित्य उत्पन्न अन्त मे मृत्यु को प्राप्त होकर उसी चेतना शक्ति मे इस तरह विलीन हो जाते हैं जिस तरह प्रकाश मे तारागण और समुद्र मे पानी के बुलबुले मिल जाते हैं। इतना अवश्य है कि जैसे तारागणों के प्रकाश से विलीन होने पर एक अखड प्रकाश और पानी के बुलबुलों के समुद्र मे विलीन हो जाने पर एक अनन्त समुद्र अन्त मे शेष रहता है वैसे ही समस्त प्राणियों के विराट् चेतना शक्ति से घुलमिल जाने पर अखड आनन्द से युक्त परम भावमय विराट् चिति अथवा अखड आनन्दमय भगवान शिव ही एकमात्र शेष रहते हैं।

टिप्पणी—यहाँ रूपक, उपमा एव दृष्टान्त अलकार की योजना हुई है।

अपने दुख .... चिर सुन्दर।

शब्दार्थ—पुलकित=प्रसन्न। भूत=पार्थिव या स्थूल। विश्व=जगत।

सचराचर=चेतन और जड वस्तुओ से युक्त। विराट=विशाल। वपु=शरीर। मगल=कल्याणकारी। चिर सुन्दर=अक्षय सौन्दय से युक्त।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि अनेक प्रकार के चेतन और जड पदार्थो से पूर्ण यह स्थूल ससार हमेशा अपने दुख से दुखी और अपने सुख से सुखी होता है परन्तु यह विशाल जगत वास्तव मे उस महान चेतना शक्ति का ही विशाल शरीर है जो सदैव सत्य एव अक्षय सौन्दय से युक्त रहता है।

सबकी सेवा ... . विस्मृति है।

शब्दार्थ—सुख ससृति=सुख का ससार। द्वयता=भेदभाव, भेदबुद्धि। विस्मृति=भूल।

व्याख्या—मनु का कहना है कि यह विश्व एक ही परम सत्ता का विशाल शरीर है अत यहाँ सबकी सेवा करना किसी दूसरे की सेवा करना नही है, बल्कि वह तो वास्तव मे अपनी ही सेवा है क्योकि उससे अपने ही सुख का ससार निर्मित होता है। सच तो यह है कि इस ससार का प्रत्येक अणु और प्रत्येक कण अपने से भिन्न नही है परन्तु इस ससार के प्राणी भेदभाव की भावना के कारण अपने वास्तविक रूप को भुलाकर अपने पराये के विचार से पूर्ण हो जाते है।

टिप्पणी—यहाँ पुनरुक्ति अलकार है।

मैं की . ... पिये सी।

शब्दार्थ—मैं की=अह की। चेतनता=ज्ञान। मादक घूँट=मतवाला बना देने वाली भावना।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि आज ससार के सभी प्राणियो को अह की भावना ने इतना अधिक प्रभावित कर रखा है कि सभी मैं और तू के विचारों से ओतप्रोत जान पडते है। जिस प्रकार शराब का मादक घूट पीने वाले अपनी सुध-बुध खोकर मतवाले हो सभी प्राणियो को अपने से अलग समझते हैं उसी प्रकार ससार के सभी प्राणी अह भावना के कारण अपने को एक दूसरे से अलग समझते हैं।

टिप्पणी—यहाँ मादक घूंट मे रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

जग ले . . .. अलकों मे।

शब्दार्थ—जगले=जगे, सोकर उठे। ऊषा के दृग=उषा के नेत्रो मे, प्रभात वेला मे। सो ले=सोये, नींद मे मग्न हो। निशि की पलकों मे=नेत्रों

को ढकने वाली पलकों की भाँति प्रकाश को ढकने वाली रात्रि मे । अलकों मे =बालो मे ।

व्याख्या—मनु का कहना है कि मनुष्य पारस्परिक भेदभाव भुलाकर आनदपूर्वक उषा का उदय होने पर सोकर उठे मन मे कोई भी बुरी भावना न रख, रात्रि मे आराम से सो जाय तथा निद्रा मे लीन हो आनद के साथ उसी प्रकार स्वप्न देखता हुआ विश्राम करे जिस प्रकार किसी भावुक का मन किसी रमणी के सुन्दर बालो मे आकृष्ट होकर आनन्द प्राप्त करता है ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

चेतन का साक्षी .... घॅसता सा ।

शब्दार्थ—चेतन का साक्षी=चेतना शक्ति को स्पष्ट देखने वाला, विराट् चेतना शक्ति का गवाह । निर्विकार=विकार अर्थात् राग द्वेष से रहित । गहरे गहरे धसता=अभिन्न भाव से मिलता ।

व्याख्या—मनु कहते हैं कि मनुष्य उस विराट् चेतना शक्ति का गवाह है और उसे राग-द्वेष एव ईर्ष्या मोह आदि विकारो से दूर होकर हमेशा हँसते रहना चाहिए तथा स्वय को दूसरों से इस प्रकार अभिन्न रूप मे मिला लेना चाहिए जिस प्रकार कोई छोटी नदी किसी गहरे सरोवर मे प्रवेश कर उसी का रूप धारण कर लेती है ।

टिप्पणी—इन पक्तियो मे मनुष्यों के पारस्परिक मिलन पर बल देते हुए प्रत्येक मनुष्य को यह प्रेरणा दी गयी है कि उसे भेदभाव मे फँसकर अपने को अन्य मनुष्यो से अलग नही समझना चाहिए ।

सब भेद-भाव ... .. बन जाता ।

शब्दार्थ—दृश्य=अभिनय जिसे मनुष्य तटस्थ रूप से देखे । विश्वनीड़= ससार रूपी घोसला ।

व्याख्या—मनु कह रहे हैं कि मनुष्य को पारस्परिक सभी प्रकार से भेद-भाव भुलाकर दुःख और सुख के पूर्ण इस ससार को किसी अभिनय की भाँति देखना चाहिए अर्थात अपने को केवल इन सबका एक दर्शक समझना चाहिए । यदि मनुष्य इस प्रकार अभिन्न और तटस्थ होकर ससार मे रहेगा तो वह अपने वास्तविक स्वरूप से परिचित हो जाएगा और यह ससार आनन्दपूर्ण एक घोंसले की भाँति बन जाएगा ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलंकार की योजना हुई है।

श्रद्धा के मधु .... स्मित लेखाएँ।

शब्दार्थ—मधु अधर—माधुर्यपूर्ण होंठ। रेखाएँ=मुसकान की किरणें। रागारुण=लाल सूर्य, प्रेम से लाल। स्मिति=हँसी, मुस्कान। लेखाएँ=रेखाएँ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मनु के हृदयोद्गारों को सुनकर श्रद्धा के माधुर्यपूर्ण लाल अधरों पर मुस्कान की किरणें प्रातःकालीन लाल सूर्य की किरणों के समान क्रीड़ा करती हुई दिखाई देने लगीं।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

वह कामायनी .... वन-बेली।

शब्दार्थ—कामायनी=श्रद्धा। मंगल कामना=कल्याणकारी इच्छा का साकार रूप। ज्योतिष्मती=कांतिमान, प्रकाशपूर्ण। मानस तट=मान सरोवर का किनारा। वन बेली=वन की लता।

व्याख्या—कवि कहता है कि वह श्रद्धा संसार की सम्पूर्ण इच्छाओं की पूर्ति करते हुए प्राणिमात्र का कल्याण करने वाली थी और वह अकेली ही संसार की कल्याणकारी इच्छा का साकार रूप थी। इसी प्रकार वह कैलाश पर्वत पर स्थित मानसरोवर के किनारे वैसी ही प्रकाशपूर्ण और प्रसन्न दिखाई दे रही थी जैसे कोई वन की लता फूलों से युक्त होकर अनुपम प्रकाश के साथ फूलती-फलती दिखाई देती है।

टिप्पणी—यहाँ परिकरांकुर एवं रूपक अलंकार की योजना हुई है।

वह विश्व चेतना .... जल-महिमा।

शब्दार्थ—वह=श्रद्धा। प्रतिमा=मूर्ति। महाह्रद=विशाल सरोवर। पूर्णकाम=इच्छाओं की पूर्ति। विमल=निर्मल, स्वच्छ। जल महिमा=अत्यधिक जल।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा विश्व की चेतना से पुलकित होने के कारण पूर्णकाम की साकार मूर्ति थी और जिस तरह एक गहरा और स्वच्छ जल से पूर्ण सरोवर अत्यधिक जल से पूर्ण होने के कारण सभी प्यासे प्राणियों की प्यास बुझाता है उसी तरह श्रद्धा भी सृष्टि के सभी दुःखी एवं संतप्त मनुष्यों की इच्छाओं को पूर्ण कर, उन्हें सुख पहुँचाने वाली थी।

टिप्पणी—यहाँ उदाहरण एवं उल्लेख की अभिव्यक्ति हुई है।

जिस मुरली . मुखरित होता ।

शब्दार्थ—निश्वन=ध्वनि, सुरीली तान । रागमय=रागिनी से युक्त, प्रेम से परिपूर्ण । अग जग=जड़ चेतन ससार । मुखरित=ध्वनित, गु जित ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जैसे मुरली की सुरीली तान से सूना अतरिक्ष मधुर रागिनी से पूर्ण हो जाता है वैसे ही जब श्रद्धा हँसती थी तब उसकी हसी की शोभा से सम्पूर्ण ससार आनन्द एव अनुराग की ध्वनि से गूँजने लगता था ।

टिप्पणी – यहाँ मुखरित शब्द में उपादान लक्षणा है और श्लेष एव दृष्टान्त अलकार की योजना हुई है ।

क्षण भर मे .. ... छलके ।

शब्दार्थ—परिवर्तित=बदल गए । विश्वकमल=ससार रूपी कमल । पिगली=पीला । आनन्द सुधा रस=आनन्दरूपी अमृत रस ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि श्रद्धा की मधुर मुस्कान को देखते ही कैलास पर्वत के सभी प्राणियो एव पदार्थों मे एक प्रकार का अद्भुत परिवर्तन हो गया और सभी प्राणियो के हृदय मे प्रेम उसी प्रकार झलकने लगा जिस प्रकार कमल के फूल मे पीला पुष्प रस झलकता है । साथ ही सभी के हृदय उस छलकते हुए पुष्प रस के समान आनन्दरूपी अमृत रस बरसाने लगे ।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एव रूपकातिशयोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है ।

अति मधुर ... रजित ।

शब्दार्थ—गधवत=सुगधित वायु । परिमल=मकरद । रज=पराग, पुष्प रस । रजित=सुशोभित ।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जब श्रद्धा मुस्कराई तब उसकी मधुर मुस्कान से कैलाश पर्वत पर अत्यन्त मनोरम दृश्य उपस्थित हो गया और वहाँ फूलो के रस की बूँदो से खिचकर तथा कमल केसर का अत्यधिक आनन्द से स्पर्श करता हुआ उसमें स्थित सुगधित पराग को ग्रहण कर पवन अत्यन्त मधुरता के साथ मद मद गति से बहने लगा ।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव समासोक्ति अलकार की योजना हुई है ।

जमे असख्य .... भर लाया ।

शब्दार्थ—मुकुल=कली । मादन विकास=मस्ती से पूर्ण विकसित अवस्था ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस सुगंधित पवन को स्पर्श कर यही जान पडता था कि मानो वह असख्य कलियो को मस्ती के साथ विकसित करके लौट रहा हो और उसने उन कलियो के अछूते अधरो का कई बार चुम्बन किया हो।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव समासोक्ति, अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

रुक रुक कर .. . जलद सा फूला।

शब्दार्थ—इठलाता=मस्ती के साथ चलता हुआ। नवकनक कुसुम=नवीन पलास का फूल। रज धूसर=पराग मे सना हुआ। जलद=बादल। फूला=उमडा।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि वह सुगधित पवन रुक रुक कर और मस्ती के साथ इस प्रकार चल रहा था जैसे वह कुछ भूल गया हो। साथ ही वह पवन नवीन पलास के फूल के पराग से सना हुआ होने के कारण ऐसा जान पडता था मानो कि पुष्प रस की बूँदो से पूर्ण कोई बादल उमड रहा हो।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण, पूर्णोपमा एव उत्प्रेक्षा अलकार की योजना हुई है।

जैसे वनलक्ष्मी निज।

शब्दार्थ—वनलक्ष्मी=वन की देवी। केसर रज=पराग की धूल। हेम-कूट=सुनहला सुमेरु पर्वत। हिम=बर्फ। परछाई=प्रतिबिम्ब।

व्याख्या—कवि कहता है कि उस सुगन्धित पवन को स्पर्श कर यही प्रतीत होता था कि मानो स्वय वनलक्ष्मी ने पराग की धूल बिखेर दी हो या सुनहला सुमेरु पर्वत ही बर्फ के पानी मे अपना प्रतिबिम्ब झलका रहा हो।

टिप्पणी—यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा एव सदेह अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

संसृति के ... ... मगल।

शब्दार्थ—संसृति=ससार, सृष्टि। गगन आँगन—आकाश रूपी आँगन। अभिनव=नवीन। मंगल=मागलिक या कल्याणकारी गीत।

व्याख्या—कवि का कहना है कि मधुर ध्वनि के साथ प्रवाहित होने वाला वह पवन ऐसा प्रतीत होता था जैसे किसी व्याकुल विरहिणी के समान यह सृष्टि मधुर मिलन की आशा में लम्बी साँसें भर रही हो और वे साँसें ही एकत्र होकर आकाश के आँगन मे नवीन माँगलिक गीत गा रही हो।

टिप्पणी—यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा, रूपक एव समासोक्ति अलकार की योजना हुई है।

वल्लरियाँ ... अब ठहरे।

शब्दार्थ—वल्लरियाँ=लतायें। नृत्य निरत=नृत्य में लीन। रेणु=बाँस। रध्र=छिद्र। मूर्छना=तान।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस सुगन्धित पवन का स्पर्श होते ही लताएँ नाचने लगी और चारो ओर सुगन्धि की लहरें फैल गयी तथा बाँस के छेदों मे उस पवन के भर जाने के कारण एक ऐसी मधुर ध्वनि उत्पन्न हो गयी जो सगीत की मधुर तान को भी चुनौती देने वाली थी।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण अलकार प्रयुक्त हुआ है।

तुलनात्मक दृष्टि—महाकवि हर्ष के 'नैषध चरित' महाकाव्य मे भी पवन आलिगन प्राप्त नवीन लता के काँपने और मद-मद गति से हसने का सुन्दर वर्णन किया गया है—

नवालता गन्धवहेन चुम्बिता करम्बिताङ्गी मकरन्दशीकरैः।
दृशा नृपेण स्मितशोभिकुड्मला दराद्दराम्यान्दरकम्पिनी पपे॥

गूँजते मधुर ... झिलकर।

शब्दार्थ—नूपुर—घु घरू। मदमाते=मस्त, मतवाले। मधुकर=भ्रमर। वाणी=सरस्वती। शून्य=अतरिक्ष। झिलकर=हठात् मिलकर, प्रवेश कर।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस मधुर वातावरण मे उस समय घु घरुओं की मधुर ध्वनि के समान गूँजते हुए मतवाले भ्रमर गूँज रहे थे और उनकी यह गूँज ऐसी प्रतीत होती थी जैसे सरस्वती की वीणा की मधुर ध्वनि अतरिक्ष मे प्रवेश कर गूँज उठी हो।

टिप्पणी—यहाँ पूर्णोपमा अलकार की योजना हुई है।

उन्मद माधव .. सजते।

शब्दार्थ—उन्मद=मस्त। माधव=वसत ऋतु। परिमल=सुगन्धि। काकली=कोयल की मधुर ध्वनि।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस समय कैलाश पर्वत पर मलय पर्वत से आने वाली शीतल एव सुगधित पवन मस्ती से पूर्ण हो मद-मद गति से प्रवाहित हो रही थी और वह ऐसी जान पड़ती थी जैसे गिरती पड़ती दौड़ रही हो। साथ ही वसत की सूचना देने वाली कोयल भी मधुर स्वर मे बोलने लगी और

उसकी मधुर ध्वनि फूलों के मध्य से आती हुई ऐसी जान पड़ती थी जैसे वह फूलो की सुगन्धि मे स्नान कर आ रही हो। इसी प्रकार वसंत ऋतु के आगमन के कारण सर्वत्र फूल विकसित होकर झड़ रहे थे।

टिप्पणी—यहाँ मानवीकरण एव समासोक्ति अलकार की अभिव्यक्ति हुई है।

सिकुड़न कौशेय .... .. सृजन पर।

शब्दार्थ—कौशेय वसन=रेशमी वस्त्र। मृदुतम=अत्यन्त कोमल। सृजन=सृष्टि।

व्याख्या—कवि कहता है कि कैलाश पर्वत पर छाये हुए वसन्त ऋतु के अनुपम विकास को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो विश्व सुन्दरी प्रकृति ने अपने शरीर पर रेशमी साडी धारण की हो और उसी साड़ी की सिकुडन के रूप में यह वासन्ती सुषमा दिखाई देती हो या फिर सम्पूर्ण सृष्टि मे मस्ती से पूर्ण अत्यन्त कोमल कम्पन छा गया हो।

टिप्पणी—यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा एव सन्देह अलकार की योजना हुई है।

सुख सहचर .... निर्भय।

शब्दार्थ—सहचर=साथी। विदूषक=हँसाने वाला पात्र। परिहासपूर्ण=हास्य से पूर्ण हँसी से भरा हुआ। अभिनय=खेल, क्रीड़ा। विस्मृति का पट=भूल रूपी पर्दा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि कैलाश पर्वत पर छाये हुए आनन्द एवं सुख से पूर्ण वातावरण को देखकर यही जान पड़ता था कि मानो यहाँ दुःख का नाम ही नही है और सुख का साथी दुःख रूपी विदूषक अपना हास्यपूर्ण खेल दिखाकर अब निर्भय होकर विस्मृति रूपी परदे के पीछे जा छिपा हो। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार किसी नाटक के अभिनय मे विदूषक सभी दर्शकों को हँसाने के पश्चात् परदे के पीछे छिप जाता है उसी प्रकार कैलाश पर्वत पर दुःख का अब लोप हो गया था।

टिप्पणी—यहाँ रूपक अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

ये शाल झाल .... बरसे।

शब्दार्थ—मधुमय=मकरंद से पूर्ण, रसीले। मृदु मुकुल=कोमल कलियाँ। झालर=क्रन्दन कर। रस=पुष्परस, पराग, मकरंद। प्रफुल्ल=विकसित, खिले हुए।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि उस समय कैलाश पर्वत पर वसंत की सुषमा छाई हुई थी और वृक्ष एवं लताओं की प्रत्येक डाल पर विकसित कोमल कलियाँ वन्दनवार की भाँति शोभायमान थीं। साथ ही सभी खिले हुए फूल मकरंद के भार से बोझिल होकर धीरे-धीरे धरती पर झड़ रहे थे।

टिप्पणी—यहाँ उपमा अलंकार की योजना हुई है।

हिम खंड ... . मृदंग बजाता।

शब्दार्थ—हिम खंड=कैलाश पर्वत पर जमी हुई बर्फ के टुकड़े। रश्मि मंडित=चन्द्रमा की किरणों से सुशोभित। मणि दीप=मणियों से बना हुआ दीपक। समीर=पवन। मृदंग=एक बाजा।

व्याख्या—कवि का कहना है कि कैलाश पर्वत पर जमी हुई बर्फ के टुकड़ों पर जब चन्द्रमा की किरणें पड़ती थीं तब ये टुकड़े इस प्रकार चमकते थे जैसे मणियों से बने हुए दीपक प्रकाश फैला रहे हों। इसी प्रकार उन टुकड़ों से टकराकर जब पवन प्रवाहित होता था तब यही प्रतीत होता था कि मानो मृदंग की मधुर ध्वनि हो रही हो।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार की योजना हुई।

संगीत मनोहर .... .. मिलन की।

शब्दार्थ—संकेत=इंगित, इशारा। कामना=इच्छा, अभिलाषा।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि जिस प्रकार मुरली की मधुर तान में अपूर्व आनन्द समाया रहता है उसी प्रकार कैलास पर्वत के उस रम्य वातावरण में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन आनन्दपूर्ण था। साथ ही कैलाश पर्वत के निवासियों का आनन्द एवं उल्लास देखकर उनके हृदय, की इच्छा यह संकेत करती हुई प्रतीत होती थी कि वे सभी प्राणी पारस्परिक भेद भाव भूल गये हैं और एक दूसरे से मिलने के लिए अत्यधिक उत्सुक हैं।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवं मानवीकरण अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

रश्मियाँ बनीं . .... रचती थीं।

शब्दार्थ—रश्मियाँ=किरणें। अप्सरियाँ=अप्सराएँ। परिमल=सुगंध।

व्याख्या—कवि कहता है कि कैलाश पर्वत पर रात्रि के समय चन्द्रमा की किरणें अप्सराओं के समान नृत्य करती हुई दिखाई देती थीं और वे (किरणें) फूलों की सुगन्धि का कण-कण लेकर अपने नृत्य के लिए रंगमंच तैयार करती थीं।

शतशत=सैकड़ों। निर्झर=झरना। श्वेत गजराज=सफेद हाथी, यहाँ इन्द्र के ऐरावत हाथी से अभिप्राय है। गण्ड=गण्डस्थल, कनपटी। मधु धाराएँ=मद की धाराएँ।

व्याख्या—कवि कहता है कि हिमालय पर्वत के नीचे के भाग में शीतल जल से पूर्ण सैकड़ों झरने बह रहे थे और उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो ऐरावत हाथी की कनपटी से मद की धाराएँ निकल रही हों।

टिप्पणी—यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

हरियाली जिनकी .... भगते।

शब्दार्थ—उभरी=उठी हुई। समतल=समान भूमि। चित्रपटी=चित्र बनाने का पर्दा, चित्रफलक। प्रतिकृति=आकृति, चित्र। वाह्य रेख=बाहरी रेखाएँ। नद=नदियाँ।

व्याख्या—कवि का कहना है कि हिमालय पर्वत की समतल धरती में उभरी हुई हरियाली ऐसी दिखाई देती थी जैसे यह कोई चित्रफलक हो और उस पर प्रतिक्षण बहती हुई नदियाँ ऐसी जान पड़ती थी जैसे कि उक्त चित्र-फलक पर चित्र बनाने के लिए वाह्य रेखाएँ खींची गयी हों।

टिप्पणी—यहाँ उपमा एवं विरोधाभास अलंकार की योजना हुई है।

लघुतम .... सवेरा।

शब्दार्थ—लघुतम=अत्यन्त छोटे। वसुधा=धरती। महाशून्य=अनन्त या विराट आकाश। रजनी का सवेरा होना=अपार परिश्रम से हुए किसी कार्य का पूर्ण होना।

व्याख्या—कवि कह रहा है कि श्रद्धा और मनु हिमालय पर्वत की उस ऊँची चोटी पर पहुँच गये थे जहाँ से धरती पर स्थित सभी पदार्थ अत्यन्त छोटे दिखाई देते थे और ऊपर अनन्त आकाशमण्डल छाया हुआ था। साथ ही जिस प्रकार रात्रि के उपरान्त सवेरा होते ही रात्रि का अन्धकार समाप्त हो जाता है उसी प्रकार अब इस ऊँची चोटी पर पहुँचने के उपरान्त श्रद्धा और मनु की थकान भी मिटने वाली थी।

टिप्पणी—यहाँ रूपक एवं रूपकातिशयोक्ति अलंकार की अभिव्यक्ति हुई है।

कहाँ ले चली .... पथिक हूँ।

शब्दार्थ—साहस छूटना=हिम्मत छूटना। निस्संबल=बेसहारा, असहाय। भग्नाश=हताश, निराश।

प्रभावित हुए और अपने को धन्य समझने लगे। इतना ही नहीं सभी व्यक्ति पारस्परिक भेद भाव को भूलकर अपने हृदय में उस विराट चेतना के प्रकाश की व्याप्ति देखते हुए एक दूसरे को परिचित प्रतीत होने लगे अर्थात् सभी एकात्म हो गये।

टिप्पणी—इन पंक्तियों में कवि ने भेद में अभेद की स्थिति का उल्लेख कर प्राणी मात्र की समानता, एकता एवं अभिन्नता की ओर संकेत किया है।

समरस थे .. .. घना था

शब्दार्थ—समरस=समान आनन्द में लीन। चेतनता=विराट चेतना शक्ति। विलसती=क्रीड़ा कर रही थी।

व्याख्या—कवि का कहना है कि उस समय प्रकृति के चेतन और जड़ आदि सभी पदार्थ पारस्परिक अभिन्नता एवं अभेदता का अनुभव करते हुए समान रूप से आनन्द मग्न थे और सर्वत्र इतनी अधिक सुन्दरता छाई थी कि यही प्रतीत होता था मानो सौन्दर्य ने आज साकार रूप धारण कर लिया हो। इतना ही नहीं आज सभी प्राणी एक ही विराट् चेतना शक्ति को सम्पूर्ण प्रकृति में क्रीड़ा करते हुए देख रहे थे और सर्वत्र अविच्छिन्न रूप से अत्यधिक सघन आनन्द छाया हुआ था।

टिप्पणी—वस्तुतः 'कामायनी' महाकाव्य का मूल लक्ष्य सामरस्य की स्थापना करना ही है और इसी लक्ष्य की यहाँ स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्ति हुई है।

प्रियंवदा प्रेस, नौबस्ता, आगरा-२ में मुद्रित।